

महामति श्री प्राणनाथजी प्रणीत

श्री स्तिष्ठापार



श्री राज श्यामाजी

प्रकाशक
श्री ५ नवतनपुरीधाम
जामनगर

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज

महामति श्री प्राणनाथजी महाराज

श्री सिनगार

मंगलाचरन

वरनन करो रे रुहजी, हकें तुम सिर दिया भार ।
अरस किया अपने दिल को, माहें बैठाओ कर सिनगार ॥ १

महामति कहते हैं, हे मेरी आत्मा ! श्रीराजजीने तुझे गुरुतर दायित्व सौंपा है. अब तू उनके शृङ्गारका वर्णन कर. उन्होंने ब्रह्मआत्माओंके हृदयको अपना धाम बनाया है. इसलिए तू सम्पूर्ण शृङ्गारसे सुसज्जित उनके स्वरूपको अपने हृदयमें अङ्कित कर.

रुह चाहे वरनन करूं, अखण्ड सरूप की इत ।
सुपने में सत सरूप की, किन कही न हक सूरत ॥ २

मेरी आत्मा इस नश्वर जगतमें रहकर अक्षरातीत धामधनीके अखण्ड स्वरूपका वर्णन करना चाहती है. किन्तु स्वप्नवत् जगतमें आज तक किसीने भी सत्य स्वरूप परब्रह्म परमात्माके (चिन्मय स्वरूप)का वर्णन नहीं किया है.

रात दिन बसें हक अरस में, मेरा दिल किया अरस सोए ।
क्यों न होए मोहे बुजरकियां, ऐसा हुआ न कोई होए ॥ ३

श्रीराजजी सर्वदा अखण्ड परमधाममें रहते हैं। अब उन्होंने मेरे हृदयको अपना परमधाम बनाया है। इसलिए मुझे श्रेष्ठतम् गौरव क्यों प्राप्त नहीं होगा ? यह विशेषता आज तक किसीको भी प्राप्त नहीं हुई है और भविष्यमें भी नहीं होगी।

किन कायम द्वार न खोलिया, अब्बल से आज दिन ।
जो कोई बोल्या सो फना मिने, किन पाया न बका वतन ॥ ४

सृष्टिके आरम्भसे लेकर आज तक किसीने भी अखण्ड धामके द्वार खोलकर उसे स्पष्ट नहीं किया है। जिन महापुरुषोंने वर्णन करनेका प्रयत्न किया वे भी नश्वर जगत तक ही सीमित रहे, उससे आगे अखण्डका अनुभव नहीं कर सके।

अरस बका हक वरनन, सो बीच फना जिमी क्यों होए ।
अब्बल से आज दिन लगे, बका सबद न बोल्या कोए ॥ ५

इस स्वप्नवत् जगतमें अखण्ड परमधाम तथा परब्रह्म परमात्माके स्वरूपका वर्णन कैसे हो सकता है ? क्योंकि सृष्टिके आरम्भसे लेकर आज तक अखण्डके विषयमें किसीने भी कुछ नहीं कहा है।

ए चेतन कहावे झूठी जिमी, सो सब जड तूं जान ।
जो थिर कहावें अरस में, सो चेतन सदा परवान ॥ ६

इस नश्वर जगतमें जो चेतन कहलाते हैं उनको भी वस्तुतः जड़ ही समझना चाहिए। जो वस्तुएँ अखण्ड परमधाममें शाश्वतरूपमें हैं वे ही सर्वदा चेतन हैं।

ए झूठी रक्षेमें और हैं, और अरस में और न्यामत ।

ए किया निमूना अरस जानने, पर बने ना तफावत ॥ ७

इस नश्वर जगतकी रीति भिन्न प्रकारकी है एवं अखण्ड परमधामकी सम्पदा कुछ और ही है. वस्तुतः अखण्ड परमधामकी पहचानके लिए ही उदाहरण स्वरूप नश्वर जगतकी ये वस्तुएँ हैं, किन्तु इन दोनोंमें अन्तर बताना भी सरल नहीं है.

सत्यलोक मृत्युलोक दो कहे, और स्वर्ग कहा अमृत ।

जो नीके किताबें देखिए, तो ए सब उडसी असत ॥ ८

इस जगतमें सत्यलोक एवं मृत्युलोक दोनोंका वर्णन क्रमशः अखण्ड तथा नश्वरके रूपमें किया गया है. साथ ही स्वर्गको भी अमर कहा गया है, किन्तु आस ग्रन्थों (धर्मशास्त्र) के तलस्पर्शी अध्ययनसे ज्ञात होता है कि ये सभी लोक मिटने वाले हैं.

इन झूठी जिमी में केहेत हों, सांच झूठ हैं दोए ।

जब आगू अरस के देखिए, तब इनमें न सांचा कोए ॥ ९

जब इस नश्वर जगतमें बैठकर देखते हैं तो यहाँ पर सत्य तथा मिथ्या दोनों वस्तुएँ दिखाई देती हैं. जब परमधामके समक्ष इनकी तुलना करते हैं तो ज्ञात होता है कि यहाँ पर कुछ भी सत्य नहीं है.

अरस हमेसा कायम, ए दुनी न तीनों काल ।

हुआ है ना होएसी, तो क्यों दीजे अरस मिसाल ॥ १०

परमधाम सर्वदा अखण्ड है एवं इस जगतका अस्तित्व तीनों काल (भूत, वर्तमान एवं भविष्य) में नहीं है. न कभी इसका अस्तित्व था और न ही रहेगा. इसलिए परमधामके साथ इसकी तुलना कैसे की जाए ?

ए बारीक बातें अरस की, इत दिल जुबां पोहोंचे नाहें ।

ए हुकम केहेवे हक का, इलम हुकम के माहें ॥ ११

परमधामका रहस्य अत्यन्त गूढ़ है. वह मन और वाणी दोनोंसे परे है. इतना भी श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही वर्णन हो रहा है. क्योंकि इसी आदेशके

अन्तर्गत उनका अलौकिक ज्ञान छिपा हुआ है।

सत सुख के सरूप में, कै आनंद आराम ।

कै खुसाली खूबियाँ, अंग छूटे न आठों जाम ॥ १२

श्रीराजजीके अखण्ड स्वरूपमें अनेक प्रकारके सुख, शान्ति, प्रसन्नता आदि विशेषताएँ हैं। इसलिए यह परमानन्द ब्रह्मआत्माओंके हृदयसे आठों प्रहर नहीं छूटता है।

अरस सबे हैं चेतन, हर चीज में सब गुन ।

सब न्यामतें एक चीज में, कमी न माहें किन ॥ १३

परमधामकी सभी सामग्रियाँ चेतन स्वरूप हैं। वहाँकी प्रत्येक वस्तुमें सभी गुण विद्यमान हैं। इस प्रकार परमधामकी प्रत्येक वस्तुमें सभी अमूल्य निधियाँ निहित हैं। कहीं भी किसी वस्तुका अभाव नहीं है।

इन झूठी जिमी में वरनन, सत सरूप को कहो न जाए ।

जो कबूं कानों ना सुनी, सो क्यों जीव हिरदे समाए ॥ १४

इस स्वप्नवत् जगतमें बैठकर अक्षरातीत परमात्माके अखण्ड स्वरूपका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिनके विषयमें आज तक किसीने कुछ भी नहीं सुना है, वह स्वरूप जीवके हृदयमें कैसे अङ्कित हो सकता है ?

ए लीला जानें सृष्टि ब्रह्म की, जाए पोहोंच्या होए तारतम ।

ए दृष्टि पूरन तब खुलें, जाए अव्वल आखर इलम ॥ १५

परमधामकी इस ब्राह्मी लीलाको ब्रह्मआत्माएँ ही जान सकती हैं जिनको तारतम ज्ञान प्राप्त हुआ है। उनकी दृष्टि तभी पूर्णरूपसे खुलेगी जब उन्हें आरम्भका (शास्त्र आदिका) एवं अन्तिम समयका (तारतम) ज्ञान प्राप्त हो जाएगा।

कहे वेद वैराट कछुए नहीं, जैसे आकास फूल ।

ए चौदे तबक जरा नहीं, ना कछू डाल न मूल ॥ १६

वैदिक ग्रन्थोंमें इस विराट ब्रह्माण्डके विषयमें इस प्रकार कहा है कि आकाश पुष्पकी भाँति इसका कोई अस्तित्व नहीं है। इस ब्रह्माण्डके चौदह लोकोंका

लेशमात्र भी अस्तित्व नहीं है. न इनका मूल है और न ही शाखाएँ.

कतेबें भी यों कहा, चौदे तबक ए जोए।

एक जरा नजरों न आवहीं, जाके टूक न होवें दोए ॥ १७

इसी प्रकार कतेब ग्रन्थोंमें भी कहा गया है कि चौदह लोकयुक्त ब्रह्माण्ड अस्तित्वहीन है. यह तो दृष्टिमें भी न आ सके ऐसे छोटेसे अणुके समान है. जिसको दो भागोंमें भी विभक्त नहीं किया जा सकता.

ऐसा चौदे तबक का निमूना, क्यों हक को दिया जाए।

ए सबद झूठी जिमी का, क्यों सकिए अरस पोहोंचाए ॥ १८

इसलिए परब्रह्म परमात्माके लिए ऐसे अस्तित्व हीन चौदह लोकोंका उदाहरण कैसे दिया जाए? वस्तुतः इस नश्वर भूमिके शब्दोंसे अखण्ड परमधामकी उपमा नहीं दी जा सकती है.

कही जाए न सोभा इन मुख, ना कछू दै जाए साख।

एक जरा हरफ न पोहोंचही, जो सबद कहिए कै लाख ॥ १९

इस नश्वर जिह्वाके द्वारा अखण्ड परमधामकी शोभा व्यक्त नहीं की जा सकती और न ही इन शब्दोंसे वहाँकी साक्षी दी जा सकती है. उसके लिए यहाँ पर लाखों शब्दोंका प्रयोग क्यों न करें. किन्तु यहाँका एक भी शब्द वहाँ तक नहीं पहुँच सकता है.

ना अरस बका किन देखिया, ना कछू सुनिया कान।

तरफ भी किन पाई नहीं, तो करे सो कौन बयान ॥ २०

अखण्ड परमधामको न किसीने देखा है और न ही किसीने इसके विषयमें सुना है. इसकी दिशा भी अभी तक किसीको प्राप्त नहीं हुई है तो उसके विषयमें किस प्रकार वर्णन हो सकता है?

एक कहा अरस अजीम, दूजा सदरतुल मुंतहा।

तीसरा कहा मलकूत, जो अरस फिरस्तों का ॥ २१

परब्रह्म परमात्माके दिव्य धामको परमधाम कहा गया है. दूसरा धाम

अक्षरधाम कहलाता है जहाँ पर अक्षरब्रह्म अधिष्ठित हैं। तीसरा स्थान सतलोक है, जो ब्रह्मा, विष्णु एवं महेशका स्थान है।

ए तीनों अरस मुख थे कहें, पर बेवरा न पासे किन ।

ए दुनियां क्यों समझे, हकीकत खोले बिन ॥ २२

इस जगतके लोग अपने मुखसे तो तीनों धामोंकी बात करते हैं, किन्तु किसीके पास भी उनका विवरण नहीं है। वस्तुतः इनकी यथार्थताको स्पष्ट किए बिना जगतके लोग इन्हें कैसे समझ पाएँगे ?

हक हुकम जाहेर हुआ, दोऊ हादी हुए मेहेरबान ।

खुली हकीकत मारफत, तो जाहेर करूं फुरमान ॥ २३

अब तो श्रीराजजीका आदेश, सदगुरु श्रीदेवचन्द्रजीकी असीम कृपा तथा रसूल मुहम्मदकी साक्षी प्रत्यक्ष हो गए हैं। इनके द्वारा परमधामकी यथार्थता (ज्ञान-हकीकत) एवं पूर्ण पहचान (विज्ञान-मारफत) हो जानेसे अब मैं कुरानके रहस्योंको स्पष्ट करता हूँ।

तीनों गिरोका बेवरा, एक रुहें और फिरस्ते ।

तीसरी खलक आम जो, कुन कहेते उपजे ॥ २४

कुरानमें तीन प्रकारकी सृष्टिका विवरण दिया है। उनमें सर्व प्रथम ब्रह्मसृष्टि (रुह) तथा दूसरी ईश्वरीसृष्टि (फरिस्ते) अखण्ड हैं एवं तीसरी जीव सृष्टि (आम खलक) परमात्माके द्वारा 'हो जा' (कुन) कहने मात्रसे उत्पन्न हुई हैं।

रुहें गिरो कही लाहूती, और फिरस्ते जबरुती ।

और गिरो जो तीसरी, जो कही मलकूती ॥ २५

उक्त तीनों समुदायोंमें ब्रह्मआत्माओंको लाहूती (परमधाममें रहने वाली), ईश्वरीसृष्टिको जबरुती (अक्षरधाममें रहने वाली) एवं तीसरी जीव सृष्टिको मलकूती (बैकुण्ठमें रहने वाली) कहा गया है।

अव्वल खासल खास रुहन की, गिरो फिरस्तों की खास कही ।

और कुन की तीसरी, ए जो आम खलक भई ॥ २६

इसी प्रकार ब्रह्मसृष्टिको खासलखास (सर्वश्रेष्ठ), ईश्वरीसृष्टिको खास (श्रेष्ठ)

एवं 'कुन' कहनेसे उत्पन्न तीसरी सृष्टिको आम खलक (सर्वसाधारण जीव) कहा गया है।

दुनियां सरीयत फरज बंदगी, और फिरस्तों बंदगी हकीकत ।

रुहों हकीकत इसक, और इनपें है मारफत ॥ २७

इन तीनोंमें सर्व साधारण जीव कर्मकाण्ड (सराअ) के द्वारा औपचारिक उपासना करते हैं एवं ईश्वरी सृष्टि ज्ञानके द्वारा उपासना करती हैं। ब्रह्मसृष्टि प्रेमके द्वारा उपासना करती हैं। इसलिए इन ब्रह्म-सृष्टियोंको ही परमात्माका यथार्थ ज्ञान (हकीकत) एवं पूर्ण पहचान (मारफत) है।

रुहें आसिक सोई लाहूती, जाके अरस अजीम में तन ।

कह्या हकें दोस्त रुहें कदीमी, जो उतरे अरस से मोमन ॥ २८

परब्रह्म परमात्माकी अनुरागिनी ब्रह्मआत्माएँ लाहूती कहलायीं हैं। इनके ही मूल स्वरूप (पर-आत्मा) परमधाममें हैं। इनको ही परब्रह्म परमात्माके अभिन्न मित्र कहा है। ये ही नश्वर जगतका खेल देखनेके लिए अवतरित हुई हैं।

अरस कह्या दिल मोमिन, जो मोमिन दिल आसक ।

सो मोमिन कछुए न राखहीं, बिना अरस बका हक ॥ २९

इसलिए इन ब्रह्मसृष्टियोंके हृदयको परमधाम कहा है। क्योंकि इनके पवित्र हृदयमें अक्षरातीत परमात्मा विराजमान हैं। इन ब्रह्म आत्माओंको परमधाम तथा परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य किसीसे कोई प्रयोजन नहीं है।

सोई मोमिन जानियो, जो उडावे चौदे तबक ।

एक अरस के साहेब बिना, और सब करे तरक ॥ ३०

वास्तवमें उन्हींको ब्रह्मआत्मा कहा जाता है जो चौदह लोकोंके सम्पूर्ण वैभवको नगण्य समझती हैं एवं परमधाम तथा परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य सबका परित्याग करनेमें समर्थ हैं।

उतरे हैं अरस से, वे कहे महंमद मेरे भाई ।

सो आखर को आवसी, ए जो एहेल इलाही ॥ ३१

ये ब्रह्मआत्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं। इनको ही रसूल मुहम्मदने अपने

भाई कहा है. उन्होंने कहा कि वे अन्तिम समयमें इस जगतपर अवतरित होंगी. वे ही ब्रह्मज्ञानकी उत्तराधिकारिणी हैं.

वे फकीर अतीम हैं, मुझे उठाइयो उनों में।

हक बरकत दुनियां मिने, होसी सब इनों सें ॥ ३२

संसारसे विरक्त एवं धामधनीके प्यारे इन्हीं ब्रह्मआत्माओंको उद्दिष्ट कर रसूल मुहम्मदने परमात्मासे प्रार्थना की थी, हे खुदा ! मुझे उस समय उठाना (जन्म देना) जब वे ब्रह्मसृष्टि (फकीर-यतीम) अवतरित होंगी. क्योंकि उनकी महत्तासे संसारके जीवों पर परमात्माकी कृपावृष्टि होगी एवं यह जगत अखण्ड हो जाएगा.

मोहे इलम दिया हकने, सो इनों को देसी इमाम ।

आखर बडाई इनों की, कहे मुसाफ हदीसें तमाम ॥ ३३

रसूल मुहम्मदने यह भी कहा, परमात्माने मुझे जो ज्ञान दिया है सद्गुरु इन्हें वही ज्ञान प्रदान करेंगे. अन्तिम (आत्मजागृतिके) समयमें इन्हीं ब्रह्मसृष्टियोंकी महिमाका यशोगान होगा. इस प्रकार कुरान तथा हदीस आदि तमाम धर्म ग्रन्थोंमें इन ब्रह्मआत्माओंकी महिमाका उल्लेख है.

ए मांग्या अलिएं हकपें, मुझे उठाइयो आखरत ।

मेहेदी के यारों मिने, मैं पाऊं ए निसबत ॥ ३४

इसी प्रकार रसूल मुहम्मदके मित्र हजरत अलीने भी खुदासे माँगा था कि मुझे भी अन्तिम समयमें उठाना ताकि इमाम महदी (अन्तिम समयके धर्मगुरु) के मित्रोंके साथ मेरा भी सम्बन्ध स्थापित हो.

इमाम जाफर सादिक, उनोंने मांग्या हकपें ।

मुझे उठाइयो आखरत, मेहेदी के यारों में ॥ ३५

जाफर, सादिक जैसे सत्यनिष्ठ धर्मगुरुओंने भी खुदासे यही माँग की थी कि हमें भी अन्तिम समयमें इमाम महदीके मित्रोंके बीच उठाना.

मूसा इबराहीम इस्माइल, जिकरिया एहिया सलेमान ।

दाऊदें मांग्या मेहेदी जमाना, उस बखत उठाइयो सुभान ॥ ३६

इसी प्रकार मूसा, इब्राहीम, इस्माइल, जिकरिया, एहिया, सुलेमान, दाऊद

आदि पैगम्बरोंने भी इमाम महदीके समयमें स्वयंको उठाने (पुनः जन्म) के लिए खुदासे प्रार्थना की थी।

लिख्या यों फुरमान में, सब आवेंगे पैगंमर ।

जासी जलती दुनियां सबपें, कोई सके न मदत कर ॥ ३७
कुरानमें यह भी उल्लेख है, उस समय सभी पैगम्बर पुनः अवतरित होंगे।
तब संसारके सभी जीव नरकाग्निमें जलते हुए उनके निकट पहुँचेंगे, किन्तु
उनमें-से कोई भी इनकी सहायता नहीं कर सकेगा।

आखर महंमद छुडावसी, और आग न छूटे किन सें ।

सब जलें आग दोजक की, ए लिख्या जाहेर फुरमान में ॥ ३८

इस प्रकार कुरानमें स्पष्ट उल्लेख है कि इस अन्तिम समयमें अन्तिम मुहम्मद ही सभी जीवोंके कष्टोंका निवारण करेंगे। उनके अतिरिक्त अन्य किसीसे भी यह अग्नि शान्त नहीं होगी। सभी लोग इसी नरकाग्निमें ही जलते रहेंगे。
[यहाँ पर अन्तिम मुहम्मदका तात्पर्य श्रीप्राणनाथजीसे है।]

सब पैगंमर सरमिंदे, होसी बीच आखरत ।

इत छिपी न रहे कछुए, खुले पट हकीकत मारफत ॥ ३९

उस समय सभी पैगम्बर लज्जित हो जाएँगे। क्योंकि तब कोई भी रहस्य गूढ़ (गुप्त) नहीं रहेगा। अज्ञानका आवरण दूर हो जाएगा एवं परमात्माका यथार्थ ज्ञान तथा पूर्ण पहचान हो जाएगी।

पीठ देवे दुनी को, सो मोमिन मुतलक ।

देखो कौल सबन के, सब बोले बुध माफक ॥ ४०

संसारकी नश्वरताको समझकर जो उससे विमुख हुई हैं वे ही वास्तवमें ब्रह्मआत्माएँ हैं। सभी धर्मग्रन्थोंके तात्पर्यको देखो, सभी आस जनोंने अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार इसी तथ्यकी पुष्टि की है।

माहें मैले बाहेर उजले, सो तो कहे मुनाफक ।

मासिवला छोड़े मोमिन, जामें कुफर नहीं रंचक ॥ ४१

जो अन्दरसे मलिन एवं बाहरसे निर्मल दिखाई देते हैं वे मिथ्याचारी

(मुनाफक) कहे गए हैं. वास्तवमें ब्रह्मआत्माएँ तो परमात्माके अतिरिक्त अन्य सभीको नगण्य समझती हैं. उनके हृदयमें लेशमात्र भी मिथ्याभिमान (कुफ) नहीं होता है.

पाक दिल पाक रूह, जामें जरा न सक ।

जाको ऊपर ना डिंभक, एक जरा न रखे बिना हक ॥ ४२

इन पवित्र आत्माओंका हृदय अत्यन्त निर्मल है, इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है. जिनके हृदयमें आडम्बर नहीं होता है वे ही परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य सभीको नगण्य समझती हैं.

सर भर एक मोमिन के, कै कोट मिलो खलक ।

जाको मेहर करें मोमिन, ताए सुपने नहीं दोजक ॥ ४३

एक ब्रह्मआत्माकी तुलनामें करोड़ों जीव सृष्टि भी नहीं आ सकती. जिसके ऊपर ब्रह्मआत्माकी कृपा होती है उसे स्वप्नमें भी नरकाग्नि नहीं जला सकती.

तुम सुनो मोमिनों बचन, जो धनिएं कहे मुझे आए ।

साथ आया अपना खेलमें, सो लीजो सबे बोलाए ॥ ४४

हे ब्रह्मआत्माओ ! तुम उन वचनोंको सुनो, जो स्वयं सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने आकर मुझे कहे हैं. उन्होंने मुझे इस प्रकार निर्देश दिया है, ‘जो ब्रह्मआत्माएँ खेल देखनेके लिए नश्वर जगतमें अवतरित हुईं हैं उन सभीको बुलाकर परमधाम ले आओ’.

मोहे कहा आप श्रीमुख, तेरी अरस से आई आत्म ।

तोकों दिया अपनाइत जानके, हक बका अरस इलम ॥ ४५

सद्गुरुने अपने श्रीमुखसे मुझे यह भी कहा कि तेरी आत्मा परमधामसे आई है. अपनी अङ्गना समझकर मैंने तुझे अखण्ड परमधाम तथा परब्रह्म परमात्माका ज्ञान दिया है.

निज हुकम आया सिर मोमिनों, जिनके ताले निज नूर ।

ऐसे ताले हमारी रूह के, हम क्यों न करें हक जहूर ॥ ४६

हे ब्रह्मआत्माओ ! जिनके भाग्यमें ब्रह्मज्ञानका प्रकाश है उनके लिए ही

धामधनीका निर्देश है. यह परम सौभाग्य हम सभी ब्रह्मआत्माओंको प्राप्त हुआ है. इसलिए अब हम पूर्णब्रह्म परमात्माके स्वरूप एवं दिव्य ज्ञानको क्यों प्रकाशित न करें ?

ब्रह्म सृष्टि हुती ब्रज रास में, प्रेम हुतो लछ बिन ।

सो लछ ल्याए अव्वलको रूहअल्ला, पर न था आखरी इलम पूर्न ॥ ४७

ब्रह्मसृष्टियाँ ब्रज तथा रासकी लीलामें सम्मिलित थीं. उस समय उनका प्रेम लक्ष विहीन था. वह लक्ष लेकर सर्व प्रथम श्री श्यामाजी सद्गुरुके रूपमें इस जागनी लीलामें अवतरित हुई. उस समय यह तारतम ज्ञान तारतम सागरके रूपमें परिणत नहीं हुआ था.

जोलों मुतलक इलम न आखरी, तोलों क्या करे खास उमत ।

पेहेचान करनी मुतलक, जो गैब हक खिलवत ॥ ४८

जब तक ब्रह्मज्ञान सर्वत्र प्रसारित नहीं हुआ था तब तक ब्रह्मआत्माएँ भी क्या कर सकतीं. उनको भी निश्चय ही परमधाम मूलमिलावाके गूढ़ रहस्योंकी पहचान करनी होती है.

लिख भेज्या फुरमान में, हक रमूजें इसारत ।

सो पाइए इलम हक के, जब खुलें हकीकत मारफत ॥ ४९

परमात्माने कुरानके द्वारा अपने सङ्केत भेजे हैं. जब परमात्माका यथार्थ ज्ञान तथा पूर्ण पहचान हो जाए तभी उनके ये सङ्केत स्पष्ट हो सकते हैं.

जो कीजे वरनन हक बका, होए जोस मेहर हुकम ।

निसबत हक हादीय सों, और आखर इसक इलम ॥ ५०

यदि श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन करना हो तो उनके जोश, कृपा एवं आदेशसे ही यह सम्भव होगा. इसके साथ-साथ श्रीराजजी एवं श्यामाजीके साथका सम्बन्ध, दिव्य प्रेम एवं ब्रह्मज्ञान भी आवश्यक है.

अरस अरवाहों को चाहिए, खोलें रूह की नजर ।

तब देखे आम खलक को, ज्यों खेल के कबूतर ॥ ५१

ब्रह्मआत्माओंके लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी आत्म दृष्टिको खोल लें. तभी उन्हें नश्वर जगतके जीव खेलके कबूतरकी भाँति प्रतीत होने लगेंगे.

तो न लेवें निमूना इनका, ना लेवें इन का रसम ।

हक बिना कछुए ना रखें, अरस अरवाहों ए इलम ॥ ५२

इसीलिए ब्रह्मआत्माएँ नश्वर जगतका उदाहरण स्वीकार नहीं करतीं एवं यहाँ कि रीति एवं परम्पराके बन्धनोंमें नहीं फँसतीं। इन ब्रह्मआत्माओंको ऐसा ज्ञान प्राप्त हुआ है कि वे परमात्माके अतिरिक्त अन्य सभीको नगण्य समझतीं हैं।

इत सब मुतलकियां चाहिए, वरनन करना मुतलक ।

लिख्या आखर जाहेर होएसी, सूरत बका जात हक ॥ ५३

कुरानमें इस प्रकारके उल्लेख हैं कि परमात्माके शाश्वत स्वरूपके वर्णनके लिए सन्देह रहित होना आवश्यक है। ऐसे सन्देह रहित दिव्य ज्ञानको लेकर अन्तिम (आत्म जागृतिके) समयमें परमात्माकी अङ्गस्वरूपा ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें अवतरित होंगी।

लिख्या अब्वल फुरमान में, जाहेर होसी क्यामत ।

जोलों होए इलम मुकैयद, तोलों जाहेर न हक मारफत ॥ ५४

कुरानमें पहलेसे ही यह उल्लेख हुआ है कि आत्मजागृतिके समयमें ब्रह्मआत्माएँ प्रकट होकर परमधामकी वास्तविकता प्रकट करेंगी। ज्ञान जब तक जगतकी सीमामें (अज्ञानके आवरणमें) ही सीमित रहेगा तब तक पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान नहीं हो सकेगी।

जेती चौंडे अरस में, सो सब मुतलक न्यामत ।

सो मुतलक इलम बिना, क्यों पाइए हक खिलवत ॥ ५५

परमधामकी यावत सामग्री निश्चय ही ब्रह्मआत्माओंकी अमूल्य निधि है। इसीलिए सन्देह रहित तारतम्ज्ञान के बिना परमात्माकी एकान्त-स्थली मूलमिलावाका अनुभव कैसे हो सकता है।

ए जो चौदे तबक का बातून, तिन बातून का बातून नूर ।

ताको भी बातून नूर बिलंद, केहेना तिन बिलंद का बातून जहूर ॥ ५६

इन चौदह लोकोंमें बैकुण्ठधाम श्रेष्ठ माना गया है। उससे भी श्रेष्ठ अक्षरधाम है। उस अक्षरसे भी श्रेष्ठ अक्षरातीत परमधाम है। ऐसे अक्षरातीत परमधामके

गूढ रहस्योंको यहाँ पर प्रकाशित करना है.

ए बातून अरस बारीकियां, सो होए मुतलकियों इलम ।

अरस बका करें जाहेर, सबों भिस्त देवे हुकम ॥ ५७

परमधामके ये सूक्ष्म (गूढ़) रहस्य ब्रह्मआत्माओंके निश्चयात्मक ज्ञानसे ही स्पष्ट हो सकते हैं. इन्हीं ब्रह्मआत्माओंने अखण्ड परमधामकी स्पष्टता की है एवं श्रीराजजीके आदेशसे वे सभी जीवोंको मुक्ति स्थलोंमें स्थान भी प्रदान करेंगी.

वरनन करें बका हक की, हम जो अरस अरवा ।

लेवें सब मुतलकियां, हमसें रहे न कछू छिपा ॥ ५८

हम परमधामकी आत्माएँ ही अखण्ड परमधाम तथा अक्षरातीतके स्वरूपका वर्णन कर सकेंगी. हम ही संशय रहित होकर परमधामके गूढ रहस्योंको ग्रहण कर सकेंगी. हमसे कुछ भी छिपा हुआ नहीं रहेगा.

और बात बारीक ए सुनो, अरस छोड न आए मोमिन ।

और बातें मुतलक खेल की, करसी अरस में देखे बिन ॥ ५९

इससे भी अधिक विशेष बात यह है, इसे सुनो ! हम ब्रह्मआत्माएँ परमधामको छोड़कर खेलमें नहीं आई हैं फिर भी हम देखे बिना ही इस जगतकी विभिन्न अनुभूतियोंकी बातें परमधाममें करेंगी.

हम झूठी जिमी में आए नहीं, झूठ रहे न हमारी नजर ।

ब्रह्मांड उडावे अरस कंकरी, तो रूहों आगे रहे क्यों कर ॥ ६०

हम इस नश्वर जगतमें आई ही नहीं हैं और न ही हमारी दृष्टि इस असत्यमें रही है. क्योंकि जब परमधामके मात्र एक कणके समक्ष यह सम्पूर्ण ब्रह्मांड अस्तित्वहीन हो जाता है तो ब्रह्मआत्माओंके समुख यह कैसे टिका रह सकता है ?

और माया देखाई हम को, करी वास्ते हमारे ए ।

होसी पूरन हमारी अरस में, रूहों उमेद करी दिल जे ॥ ६१

दूसरी ओर श्रीराजजीने ही हमारे लिए मायाका यह खेल बना कर हमें दिखाया है. हम ब्रह्मआत्माओंने हृदयमें जो चाहना रखी थी वह परमधाममें

बैठे हुए ही पूर्ण हो जाएगी।

हम रुहें न आइयां खेल में, हक अरस सुख लिए इत ।

हक हुकमें इलम या विध, सुख दिए कर हिकमत ॥ ६२

वस्तुतः हम ब्रह्मआत्माएँ इस जगतमें नहीं आई हैं तथापि हमने यहाँ पर धामधानी तथा परमधामके अपार सुखोंका अनुभव किया है। श्रीराजजीके आदेश एवं तारतम ज्ञानने इस प्रकार बड़ी कुशलताके साथ हमें परमधामके सुख प्रदान किए हैं।

हम तो हुए इत हुकम तलें, मैं न हमारी हममें ।

ऐ मैं बोले हक का हुकम, यों बारीक अरस माएने ॥ ६३

वस्तुतः हम सभी श्रीराजजीके आदेशके अधीन हैं। हममें हमारा अहंभाव कुछ भी नहीं है। मैं भी जो कुछ कह रहा हूँ वह श्रीराजजीके आदेशसे ही है। इस प्रकार परमधामके रहस्य अत्यन्त सूक्ष्म हैं।

हुकम किया चाहे वरनन, ले हक हुकम मुतलक ।

करना जाहेर बीच छूटी जिमी, जित छूटी न कबूँ किन सक ॥ ६४

श्रीराजजीके आदेशकी प्रेरणासे ही परमधामके वर्णन की चाहना उत्पन्न हुई है। इसलिए मुझे निश्चय ही उसी आदेशको हृदयमें धारण कर इस नश्वर जगतमें परब्रह्म परमात्माके स्वरूपको प्रकट करना है जहाँ पर कभी भी किसीका सद्देह दूर नहीं हुआ है।

दिन एते हक जस गाइया, लुदंनी का बेवरा कर ।

हकें हुकम हाथ अपने लिया, जो दिया था महंमद के सिर पर ॥ ६५

तारतम ज्ञानके बल पर मैंने आज तक श्रीराजजीका यशोगान किया है। उन्होंने श्रीश्यामाजी स्वरूप सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी को जो आदेश दिया था उसे अपने हाथ ले कर अब वे स्वयं मेरे हृदयमें विराजमान हो गए हैं।

प्रकरण १ चौपाई ६५

हुकमे इसक का द्वार खोल्या है

अब हुकमें द्वार खोलिया, लिया अपने हाथ हुकम ।
दिल मोमिन के आए के, अरस कर बैठे खसम ॥ १

अब श्री राजजीके आदेशने परमधामके द्वार खोल दिए हैं. स्वयं श्रीराजजीने अपना आदेश अपने हाथमें ले लिया है और वे ब्रह्मआत्माओंके हृदयको परमधाम बनाकर उसमें विराजमान हो गए हैं.

हक अरस दिल मोमिन, और अरस हक खिलवत ।
वाहेदत बीच अरस के, है अरस में अपार न्यामत ॥ २

अब ब्रह्मआत्माओंका हृदय परमधाम बन गया है. अद्वैत परमधाममें तो श्रीराजजीकी एकान्तस्थली मूलमिलावा भी है एवं अपार सम्पदा भी विद्यमान है.

ए साहेदी जाहेर सुनो, जो लिखी माहें फुरमान ।
अरस कह्या दिल मोमिन, अरस में सब पेहेचान ॥ ३

कुरानमें इसकी साक्षी स्पष्ट दी है, उसे सुनो ! जब ब्रह्मआत्माओंका हृदय ही परमधाम है तो ऐसे हृदयमें सब प्रकारकी पहचान सुनिश्चित है.

हक हादी रुहें अरस में, और इसक इलम बेसक ।
जोस हुकम मेहरबानगी, हकीकत मारफत मुतलक ॥ ४

दिव्य परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी, ब्रह्मआत्माएँ, प्रेम, ज्ञान, जोश, आदेश, कृपा आदि सभी विद्यमान हैं. इसलिए जब ब्रह्मआत्माओंका हृदय ही परमधाम है तो उसमें भी इन सभीका यथार्थ ज्ञान एवं पूर्ण पहचान सुनिश्चित है.

दिल मोमिन अरस कह्या, सब अरस में न्यामत ।
सो क्यों न करे दिल बरनन, जाकी हकसों निसबत ॥ ५

ब्रह्मआत्माओंके हृदयको परमधाम कहा है. परमधाममें तो ये सम्पूर्ण सम्पदाएँ विद्यमान हैं. इसलिए जिनका सम्बन्ध स्वयं अक्षरातीत धनीके साथ है ऐसी ब्रह्मआत्माओंके हृदयसे परमधामका वर्णन क्यों नहीं हो सकेगा ?

सब बातें हैं अरस में, और अरस में वाहेदत ।

हौज जोए बाग अरस में, अरस में हक खिलवत ॥ ६

यह सम्पूर्ण सम्पदा परमधाममें है. वहाँ पर एकात्मभाव (एकदिली) भी है. इतना ही नहीं हौज कौसर ताल, यमुनाजी, वन-उपवन तथा एकान्त स्थली मूलमिलावा भी वहाँ पर विद्यमान है.

सो अरस कहा दिल मोमिन, सो काहे न करे वरनन ।

जिन दिल में ए न्यामतें, सो मुतलक अरस रोसन ॥ ७

ब्रह्मआत्माओंके हृदयको सम्पूर्ण सम्पदायुक्त परमधामकी शोभा प्राप्त हुई है. इसलिए उनसे परमधामका वर्णन क्यों नहीं हो सकता है. जिनके हृदयमें ये सम्पूर्ण सम्पदा विद्यमान हैं, वे अवश्य ही परमधामको प्रकाशित कर सकतीं हैं.

हम सिर हुकम आइया, अरस हुआ दिल हम ।

ऐही काम हक इलम का, तो सुख काहे न लेवें खसम ॥ ८

जब हमारा हृदय ही परमधाम बन गया एवं श्रीराजजीका आदेश हमारे सिर पर है तो हम परमधामका वर्णन क्यों न करें ? वस्तुतः ब्रह्मज्ञानका कार्य ही यही है. इसलिए परमधामका वर्णन कर हम धामधनीका अखण्ड सुख क्यों प्राप्त न करें ?

कहा अरस हमारे दिल को, हैं हमहीं हक हुकम ।

क्यों न आवे इसक हक का, यों बेसक हैयाती इलम ॥ ९

जब हमारे हृदयको ही परमधाम कहा गया है और हम स्वयं श्रीराजजीके आदेशके अधीन हैं, तो हमारे हृदयमें उनका प्रेम क्यों प्रकट नहीं होगा ? यह अखण्ड तारतम ज्ञान तो अवश्य सन्देह निवारक है.

चरन वासा हमारे दिल में, रहें रुह के नैनों माहें ।

क्यों न्यारे हम से रहें, हम बसें हक हैं जाहें ॥ १०

श्रीराजजीके चरण कमल हमारे हृदयमें तथा आत्माके नयनोंमें समाए हुए हैं. ये हमसे दूर कैसे हो सकते हैं जब हम स्वयं श्रीराजजीके ही चरणोंमें बैठी हैं.

मेरे सब अंगों हक हुकम, बिना हुकम जरा नाहीं ।

सोई हुकम हक में, हक बसें अरस में तांहीं ॥ ११

मेरे रोम-रोममें श्रीराजजीका आदेश समाया हुआ है. उनके आदेशके बिना कोई भी क्षेत्र खाली नहीं है. वह आदेश स्वयं श्रीराजजीमें ही है एवं स्वयं वे हमारे हृदयरूपी परमधाममें विराजमान हैं.

हम अरस परस हैं हक के, ए देखो मोमिनों हिसाब ।

हम हकमें हक हममें, और हक बिना सब खाब ॥ १२

हम ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी अङ्ग स्वरूपा हैं एवं स्वयं श्रीराजजी हमारे अङ्गी हैं. हे ब्रह्मात्माओ ! इस प्रकार हमारे पारस्परिक सम्बन्धोंको समझो. हम स्वयं श्रीराजजीके अङ्गमें हैं एवं स्वयं श्रीराजजी हमारे अङ्ग (हृदय) में विराजमान हैं. वस्तुतः श्रीराजजीके अतिरिक्त अन्य सब स्वप्न मात्र है.

हक हुकमें सब मिलाइया, अरस मसाला पूरन ।

हादी रुहों जगावने, करावने हक वरनन ॥ १३

श्रीश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंको जागृत करनेके लिए एवं श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन करवानेके लिए ही श्रीराजजीके आदेशने यह सम्पूर्ण व्यवस्था की है, इतना ही नहीं परमधामकी सम्पूर्ण जानकारी भी उसीने प्रदान की है.

आखर मोमिन आकल, कह्या जिनका दिल अरस ।

तो हक दिल का जो इसक, सो मोमिन पीवें रस ॥ १४

इस प्रकार कहा गया है कि अन्तिम समयमें अवतरित होने वाली ब्रह्मात्माएँ बुद्धिशालिनी होंगी एवं उनका हृदय परमधाम होगा. इसलिए ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके हृदयके प्रेमरसका अवश्य पान करेंगी.

विचार करें दिल मोमिन, जो अरस मता दिल हम ।

तो हक दिल होसी कौन न्यामत, जो हक वाहेदत खसम ॥ १५

हे ब्रह्मात्माओ ! सभी मिलकर हृदयपूर्वक विचार करें. यदि परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदा हमारे हृदयमें है तो स्वयं अद्वैत स्वरूप श्रीराजजीका हृदय कैसी अतुलनीय सम्पदासे परिपूर्ण होगा !

देखो मोमिनों के दिलमें, कही केती अरस बरकत ।

विचार देखो हक दिल में, क्या होसी हक न्यामत ॥ १६

देखो, ब्रह्मआत्माओंके हृदयमें परमधामकी कितनी अपार सम्पदा भरी हुई है ? अब यह भी विचार करके देखो, स्वयं श्रीराजजीके हृदयमें ऐसी अपार सम्पदाओंका कितना बड़ा भण्डार होगा ?

हक हादी अरस मोमिन, सो तो पेहलें हक दिल माहें ।

जो चीज प्यारी रुह को, ताए हक पल छोड़ें नाहें ॥ १७

श्रीराजजीके हृदयमें वे स्वयं, श्यामाजी, ब्रह्मआत्माएँ तथा परमधाम तो पहले से ही अङ्कुरित हैं. इतना ही नहीं ब्रह्मआत्माओंको जो भी परमप्रिय होता है श्रीराजजी उसे पल भरके लिए भी स्वयंसे दूर नहीं करते हैं.

जो मता कह्या दिल मोमिन, सो मोमिन दिल समेत ।

सो बसत हक के दिल में, सो हक दिल मता रुह लेत ॥ १८

ब्रह्मआत्माओंके हृदयमें जिन सम्पदाओंका विद्यमान होना कहा गया है ऐसे विशाल हृदय सहित स्वयं ब्रह्मआत्माएँ श्रीराजजीके हृदयमें बैठी हैं और वे श्रीराजजीके हृदयमें विद्यमान अपार सम्पदाका आनन्द प्रेम पूर्वक प्राप्त करती हैं.

जो रुह पैठे हक दिल में, सो मगन माहें न्यामत ।

जो तित पड़ी कदी खोज में, तो छूटे ना लग क्यामत ॥ १९

जिन ब्रह्मआत्माओंने श्रीराजजीके हृदयमें अपना स्थान बनाया है वे तो वहाँ पर विद्यमान अपार सम्पदाके आनन्दमें ही मग्न हैं. यदि वे वहाँ पर उन सम्पदाओंकी थाह पानेके लिए खोज (प्रयत्न) करती हैं तो उनका प्रयत्न आजीवन नहीं छुटेगा.

जो सुराही हक की पीवना, सो इसक हक दिल मिने ।

सो मोमिन पीवें कोई पैठके, और पिया न जाए किने ॥ २०

श्रीराजजीसे जिस प्रेम सुधाका पान करना होता है वह तो उनके हृदयमें ही परिपूर्ण है. यदि कोई उसे पीना चाहे तो वह ब्रह्मआत्मा ही हो सकेंगी जो

उनके हृदयमें बैठी हुई हैं. उनके अतिरिक्त अन्य किसीसे भी यह प्रेम पीया नहीं जा सकता है.

कुलफ था एते दिन, द्वार इसक न खोल्या किन ।
सो खोल दिया हक्के मेहर कर, अपने हाथ मोमिन ॥ २१

आज तक प्रेमके इस द्वार पर ताला लगा हुआ था जिससे अभी तक इसे कोई भी खोल नहीं पाया. स्वयं श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके लिए यह द्वार अपने हाथोंसे कृपा पूर्वक खोल दिया है.

गंज खोलसी इसक का, मोहर हुती जिन पर ।
लेसी अछूत प्याले मोमिन, हक्के खोली मोहोर फजर ॥ २२

स्वयं श्रीराजजी अपने हृदयरूपी प्रेम पात्रको खोल रहे हैं, जिसपर आज तक मोहर लगी हुई थी. अब ब्रह्मात्माएँ आज तक अस्पर्शित (अछूते) इस प्रेमरसको प्याले भर-भरकर पान करेंगी. क्योंकि आत्म जागृतिके इस प्रभातमें स्वयं श्रीराजजीने यह मुहर खोल दी है.

ए पिएं प्याले मोमिन, हक सुराही सराब ।
लाड लजत लें अरस की, ए मस्ती माहें आब ॥ २३

इस प्रकार सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी प्रेम सुधाका प्याले भर-भर कर पान करती हैं एवं परमधामके सम्पूर्ण आनन्दका स्वाद लेती हुई प्रेमकी इस मस्तीमें निमग्न हो जाती हैं.

हक सुराही ले हाथ में, दें मोमिनों भर भर ।
सुख मस्ती देवें अपनी, और बात न इन बिगर ॥ २४

स्वयं श्रीराजजी अपने हृदयरूपी प्रेम पात्रसे ब्रह्मात्माओंको अपने ही हाथों प्रेमसुधाका पान करते हैं. इस प्रकार वे अपनी अङ्गनाओंको अद्वितीय आनन्द (मस्ती) प्रदान करते हैं. इसलिए ब्रह्मात्माओंको इसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं चाहिए.

अमल ऐसा इन मद का, अरस रूहें रही छकाए ।
छाके ऐसे नींद सुपन में, जानों अरस में दिए जगाए ॥ २५

प्रेमकी इस मस्तीमें ऐसा अमल (नशा) है कि ब्रह्मात्माएँ उससे तृप्त हो

जाती हैं. इस तृप्तिने उन्हें स्वप्नवत् जगतकी नीदमें होते हुए भी मानों दिव्य परमधाममें जागृत कर दिया है.

पेहले एक ए हक के दिल में, रुहों लाड कराऊं निस दिन ।

बेसुमार बातें हक दिल में, सब इसक वास्ते मोमिन ॥ २६

सर्व प्रथम श्रीराजजीके हृदयमें यही एक विचार उत्पन्न हुआ कि मैं अपनी आत्माओंको अहर्निश अपार प्रेम प्रदान करूँ. यद्यपि उनके हृदयमें ब्रह्मआत्माओंको आनन्दित करनेके लिए ऐसे असंख्य विचार प्रकट होते हैं.

ए खेल किया वास्ते इसक, वास्ते इसक पेहेचान ।

जुदे किए इसक वास्ते, देने इसक सुख रेहेमान ॥ २७

श्रीराजजीने अपनी आत्माओंको प्रेम प्रदान करनेके लिए एवं उन्हें प्रेमकी पहचान करवाने के लिए ही इस नश्वर जगतकी रचना की है. अपने प्रेमके आनन्दका अनुभव करवानेके लिए ही परम कृपालु श्रीराजजीने अपनी आत्माओंको स्वयंसे दूर किया है.

मोमिन उतरे इसक वास्ते, वास्ते इसक ल्याए ईमान ।

ईमान न ल्याए सो भी इसकें, इसकें न हुई पेहेचान ॥ २८

इसी प्रेमकी अनुभूतिके लिए ब्रह्मआत्माएँ इस जगतमें अवतरित हुईं एवं इसीके लिए वे श्रीराजजी पर विश्वास कर सकीं. जिनको उनपर विश्वास नहीं हुआ एवं जिनको उनकी पहचान नहीं हुई वह भी प्रेमकी अनुभूतिके लिए ही है.

कम ज्यादा सब इसकें, इसकें दोऊ दरम्यान ।

इसकें बंदगी या कुफर, सब वास्ते इसक सुभान ॥ २९

इन ब्रह्मआत्माओंमें किसीको प्रेमकी अधिक अनुभूति हुई तो किसीको कम अथवा किसीको न अधिक हुई और न ही कम. वस्तुतः श्रीराजजीके प्रति विश्वास व्यक्त कर उनकी उपासना करना अथवा उनके प्रति अविश्वास रखना ये सभी प्रेमकी अनुभूतिके लिए ही है.

छोटी बड़ी या जो कछू, ए जो चौदे तबक की जहान ।

ए भी हक इसक तो पाइए, जो होए बेसक पेहेचान ॥ ३०

इस चौदह लोकयुक्त ब्रह्माण्डमें छोटीसे लेकर बड़ी तक जो भी सामग्रियाँ हैं उन सबका अस्तित्व श्रीराजजीके प्रेमके कारण ही है. किन्तु इस प्रेमकी पहचान तभी हो सकती है जब निश्चय ही पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान हो जाती है.

जो न्यामत हक के दिलमें, तिन का क्योंए ना निकसे सुमार ।

सो सब इसक हक का, रुहों वास्ते इसक अपार ॥ ३१

श्रीराजजके हृदयमें जितनी भी अमूल्य निधियाँ हैं उनकी गणना किसी भी प्रकार नहीं हो सकती है. वे सभी श्रीराजजीकी प्रेम स्वरूपा हैं एवं ब्रह्मआत्माओंको अपार प्रेम प्रदान करनेके लिए ही हैं.

ए इलम आया जब रुहको, तब पेहेचान आई मुतलक ।

जो हरफ निकसे दुनी का, सो सब देखे हक इसक ॥ ३२

जब ब्रह्मआत्माओंको इतना ब्रह्मज्ञान हो जाता है तब उन्हें प्रेमकी पहचान भी अवश्य हो जाती है. यदि उनके द्वारा नश्वर जगतकी बात भी होती है तो उसमें भी वे सर्वत्र श्रीराजजीका ही प्रेम देखने लगती हैं.

जब ए इलम रुहों पाइया, इसक हो गया चौदे तबक ।

और देखे न कछुए नजरों, सब देखे इसक हक ॥ ३३

जब ब्रह्मआत्माओंको इतना ज्ञान हो जाएगा तब उन्हें इन चौदह लोकोंमें सर्वत्र प्रेम दिखाई देगा. इसके अतिरिक्त उनकी दृष्टिमें कुछ भी नहीं आएगा. उन्हें सर्वत्र श्रीराजजीका प्रेम ही दृष्टि गोचर होने लगेगा.

रुह देखे अपने इसकसों, होसी कैसा हक इसक ।

कैसा इलम तोकों भेजिया, जामे सक नहीं रंचक ॥ ३४

जब आत्मा अपने प्रेमसे देखेगी कि श्रीराजजीका प्रेम कितना महान है, तब उसे आश्चर्य पूर्वक ज्ञात होगा कि श्रीराजजीने उसे कैसा अध्यात्म ज्ञान भेजा है जिसमें लेशमात्र भी शङ्का नहीं है.

त्रैलोकी त्रैगुन में, कहूं नाहीं बेसक इलम ।
सों हकें भेज्या तुम ऊपर, ए देखों इसक खसम ॥ ३५

स्वर्ग, मृत्यु, पाताल आदि लोकोंमें तथा इनके अधिपति ब्रह्मा, विष्णु तथा
महेश आदि देवोंके पास भी सन्देह रहित ज्ञान नहीं है. उस दिव्य ज्ञानको
श्रीराजजीने तुम्हारे लिए भेजा है. हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीके इस प्रेमको
तो देखो.

किए चौदे तबक तुम वास्ते, इन में मता है जे ।
ए भी हक इसक तो पाइए, जो देखो हक इलम ले ॥ ३६
इन चौदह लोकोंकी रचना तुम्हारे लिए ही हुई है. इनमें यावत सामग्री हैं
वे तुम्हारे लिए ही हैं. श्रीराजजीका प्रेम तुम्हें तभी प्राप्त होगा जब तुम
तारतम ज्ञानके द्वारा उन्हें देखने लग जाओगी.

फुरमान भेज्या हकें इसकें, इसकें लिखी इसारत ।
तुमें कुंजी दै हकें इसकें, खोलने हक मारफत ॥ ३७
अपने प्रेमकी अनुभूति करवानेके लिए ही श्रीराजजीने यह कुरान भेजा है
एवं उसमें अपने सङ्केत भेजे हैं. उन सङ्केतोंको स्पष्ट कर अपने गूढ रहस्योंको
प्रकट करनेके लिए ही तुम्हें प्रेमपूर्वक यह तारतम ज्ञान प्रदान किया है.

फुरमान कोई न खोल सके, सो भी इसक कारन ।
खिताब दिया सिर एक के, सो भी वास्ते इसक मोमन ॥ ३८
कुरानके गूढ रहस्योंको आज तक कोई स्पष्ट नहीं कर सका. उसे स्पष्ट
करनेका अधिकार एक (मुझ) को ही प्रदान किया है. यह सब प्रेमकी
अनुभूतिके लिए ही है.

सब दुनियां हक इसक हुआ, तो देखो अरस में होसी कहा ।
ए आया इलम रुहन पर, हकें भेज्या ए तोफा ॥ ३९
इस प्रकार जब यह सम्पूर्ण जगत ही प्रेममय हो गया तो परमधाममें प्रेमका
कैसा स्वरूप होगा ? इसी रहस्यको समझानेके लिए श्रीराजजीने
ब्रह्मात्माओंके लिए यह तारतम ज्ञानरूपी उपहार भेजा है.

विचार किए इत पाइए, हुआ एही अरस सहूर ।
वाको लिख्या कुरान में, ए जो कह्या नूर का नूर ॥ ४०

इस तारतम ज्ञान द्वारा विचार करने पर यहीं बैठे-बैठे परमधामका अनुभव हो सकता है. ऐसी आत्माओंके लिए कुरानमें कहा है कि वे परमात्माकी तेजरूपा श्रीश्यामाजीकी तेज स्वरूपा हैं.

ए जाहेर कही हक वाहेदत, हक हादी उमत बातन ।
सो करूं जाहेर बरकत हादियों, पर अब्बल नफा लेसी मोमन ॥ ४१
कुरानमें यह भी स्पष्ट कहा है कि परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी एवं ब्रह्मआत्माओंमें अद्वैत भाव है. इस रहस्यको भी मैं सदगुरु श्री देवचन्द्रजीकी अपार कृपासे स्पष्ट कर रहा हूँ. अब ब्रह्मआत्माएँ ही सर्वप्रथम इसका लाभ प्राप्त करेंगी.

चरन ग्रहों नूर जमाल के, जिनने अरस किया मेरा दिल ।
सो बयान करत है हुक्म, हक सुख लेसी मोमिन मिल ॥ ४२
मैं श्रीराजजीके चरण कमलोंको ग्रहण करता हूँ जिन्होंने मेरे हृदयको परमधाम बनाया है. श्रीराजजीके आदेशसे ही मैं परमधामका वर्णन कर रहा हूँ. जिससे सभी ब्रह्मआत्माएँ मिलकर उनके अलौकिक आनन्दका अनुभव कर सकेंगी.

अरस हमेसा कायम, जो हक का हुआ तख्त ।
सो कायम दिल मोमिनका, जित है हक खिलवत ॥ ४३
दिव्य परमधाम सर्वदा अखण्ड है, श्रीराजजी वहीं पर सिंहासनमें विराजमान हैं. उन्होंने ब्रह्मआत्माओंके हृदयमें ऐसे परमधामको स्थिर कर दिया जहाँ पर एकान्त स्थली मूलमिलावा भी सुशोभित है.

कदमों लागूं करूं सेजदा, पकड के दोऊ पाए ।
हुक्म करत हैं मासूक, बीच आसिक के दिल आए ॥ ४४
अब मैं श्रीराजजीके दोनों चरणोंको ग्रहण कर उन्हें प्रणाम करता हूँ. प्रियतम धनी श्रीराजजी अपनी अनुरागिनी (मेरी) आत्माके हृदयमें आसीन होकर (मुझे) आदेश प्रदान करते हैं.

मासूक तुमारी अंगना, तुम अंगना के मासूक ।

ए हुकमें इलम दृढ़ किया, अजूँ रुह क्यों न होत टूक टूक ॥ ४५
हे प्रियतम धनी ! मैं आपकी अङ्गना हूँ आप इस अङ्गनाके प्रियतम हैं.
आपके आदेश एवं तारतमज्जानने यह सम्बन्ध दृढ़ कर दिया है, तदुपरान्त
भी यह आत्मा क्यों समर्पित नहीं होती है ?

इतहीं सेजदा बंदगी, इतहीं जारत जगात ।

इतहीं जिकर हक दोस्ती, इतहीं रोजा खोलात ॥ ४६
हे धामधनी ! आप जहाँ पर विराजमान हैं, वहीं पर हमारा नमन है, वहीं
वन्दना है, वहीं हमारी यात्राका विराम स्थल है, वहीं पर हमारा सर्वस्व
समर्पण है, वहीं पर आपकी मैत्रीपूर्ण चर्चा है, वहीं पर हमारे उपवासकी
समाप्ति पर आत्माको आहार प्राप्त होता है.

दिलको तुम अरस किया, तुम आए बैठे दिल माहें ।

हम अरस समेत तुम दिल में, अजूँ क्यों जोस आवत नाहें ॥ ४७
हे धामधनी ! आपने हमारे हृदयको परमधाम बनाया एवं आप ही हृदय पर
आकर विराजमान हुए हैं. हम स्वयं परमधाम सहित आपके हृदयमें हैं तथापि
अभी तक हमें क्यों जोश नहीं आता है ?

दिल अरस हुआ हुकमें, तुम आए अपने हुकम ।

इसक इलम सब हुकमें, कहूँ जरा न बिना खसम ॥ ४८
हे धामधनी ! आपके आदेशके प्रतापसे ही हमारा हृदय परमधाम बन गया
है एवं आप अपने आदेश सहित इस पर विराजमान हैं. आपके आदेशके
द्वारा ही हमारे हृदयमें प्रेम एवं ज्ञानका प्रादुर्भाव हुआ है. आपके अतिरिक्त
कहीं भी कुछ भी नहीं है.

बुध जागृत इलम हक का, और हकै का हुकम ।

जोस अरस का दिल में, ए सब मिल दिल में हम ॥ ४९
हे धनी ! यह जागृत बुद्धिका ज्ञान भी आपका ही है और यह आदेश भी
आपका ही है, आपका आवेश भी मेरे हृदय धाममें है. इन सबके साथ
(मिलकर) हम आपके हृदयमें हैं.

अब दिल में ऐसा आवत, ए सब करत चतुराए ।

फेर देखूँ इन चतुराई को, तो हक बिन हरफ न काढ्यो जाए ॥ ५०

यह सब देखकर अब मेरे हृदयमें ऐसा विचार प्रकट होता है कि कहीं यह मेरी चतुराई तो नहीं है ? पुनः इस चतुराई पर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे ज्ञात होता है कि आपके बिना एक शब्दका भी उच्चारण होना सम्भव नहीं है.

हक चतुराई ना चौदे तबकों, हक बका कही न किन तरफ ।

ला मकान सुन छोड के, किन सीधा कह्या न एक हरफ ॥ ५१

इन चौदह लोकोंमें किसीने भी अपनी चतुराईसे परब्रह्म परमात्मा तथा अखण्ड परमधामकी दिशा नहीं बताई है. शून्य निराकारको छोड़कर उससे आगेकी बात कहनेका साहस किसीने भी नहीं किया है.

हक चतुराई हक इलम, और हकै का हुक्म ।

ए तीनों मिल केहेत हैं, है बात बड़ी खस्म ॥ ५२

चातुर्थ, ज्ञान एवं आदेश ये तीनों श्रीराजजीके हैं तथा तीनों मिलकर एक ही उद्घोष करते हैं कि उनकी महिमा अपरम्पार है.

ला मकान सुन के परे, हुआ नूर अक्षर ।

कोट ब्रह्मांड उपजे खपे, एक पाउ पल की नजर ॥ ५३

शून्य निराकारसे परे अक्षरब्रह्मका अक्षरधाम है, अक्षरब्रह्मके द्वारा एक पलके चतुर्थ अंश मात्रमें करोड़ों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होकर लय हो जाते हैं.

अक्षरातीत नूर जमाल, ए तरफ जाने अक्षर नूर ।

एक या बिना त्रैलोक को, इन तरफ की न काहूँ सहूर ॥ ५४

अक्षरब्रह्मसे भी परे अनन्त शोभायुक्त अक्षरातीत परब्रह्म परमात्मा हैं. केवल अक्षरब्रह्म ही उनकी दिशाको जानते हैं. उनके अतिरिक्त तीनों लोकोंमें किसीको भी परमात्माकी दिशाका ज्ञान नहीं है.

तो कह्या आगूँ हक बुध के, चौदे तबकों सुध नाहें ।

सो बुध जागृत महंमद रूहअल्ला, दई मेरे हिरदे माहें ॥ ५५

इसीलिए धर्मग्रन्थोंमें पहलेसे ही कह दिया था कि परब्रह्म परमात्माकी जागृत

बुद्धिके विषयमें चौदह लोकोंमें किसीको भी सुधि नहीं है. उन्हीं अक्षरातीत परब्रह्म परमात्मा द्वारा प्रशंसित श्यामाजीने सदगुरुके रूपमें आकर मुझे यह जागृत बुद्धि प्रदान की है.

पातसाही एक खावंद की, बीच साहेबियां दोए ।

ए वाहेदत की हकीकत, बिना मारफत न जाने कोए ॥ ५६

दिव्य परमधाममें केवल (एक) परब्रह्म परमात्माका ही स्वामित्व है तथापि अक्षरधाम तथा परमधाममें लीलामात्रके लिए दो अलग-अलग प्रभुता है. अद्वैत परमधामकी इस वास्तविकताको ब्रह्मज्ञानके बिना कोई भी नहीं जान सकता.

सो बुध दोऊ अरसों की, दोऊ सरूप थे जो गुङ्ग ।

ए सुख कायम अरस रूहन के, सो कायम कुंजी दई मुङ्ग ॥ ५७

अभी तक किसीको भी दोनों धामों (अक्षरधाम एवं परमधाम) के दोनों स्वरूपों (अक्षरब्रह्म एवं अक्षरातीत परब्रह्म) की जानकारी भी प्राप्त नहीं थी. जागृत बुद्धिके तारतम ज्ञानके द्वारा ही यह रहस्य स्पष्ट हुआ है. परमधामकी ब्रह्मात्माओंको अखण्ड सुख प्रदान करनेवाली तारतमज्ञान रूपी कुञ्जी सदगुरुने मुझे प्रदान की है.

और सुख बारीक ए सुनो, कहे नूर नूरतजल्ला दोए ।

नूरतजल्ला के अंदर की, सुध नहीं नूर को सोए ॥ ५८

अक्षर तथा अक्षरातीतके अन्य गूढ रहस्यको भी सुनो, स्वयं अक्षरब्रह्मको भी अक्षरातीतके धामके अन्दरकी लीलाकी सुधि नहीं है.

जित चल न सके जबराईल, कहे आगूं जलत मेरे पर ।

जलावत नूर तजल्ली, मैं चल सकों क्यों कर ॥ ५९

जिस अक्षरातीत परमधाममें जिब्रील फरिशता भी प्रवेश नहीं कर सका और कहने लगा, आगे बढ़ते हुए अक्षरातीतके तेजसे मेरे पंख जलने लगते हैं. इसलिए अब मैं आगे कैसे बढ़ सकता हूँ ?

सो सुध बातून नूरजमाल की, अरस अजीम के अंदर ।

दोऊ हादियों मेहर कर, पट खोल दिए अंतर ॥ ६०

सदगुरु श्री देवचन्द्रजी महाराजने मेरे हृदयके अन्तर पट खोलकर मुझे अक्षरातीत धनीकी धामके अन्दरके लीलाके गूढ़ रहस्यकी सुधि प्रदान की है. रसूलने भी उसीकी साक्षी दी थी.

जो सुध नहीं नूर जागृत, नूर जमालका बातन ।

सो बेसक सुध हक्के मोहे दई, सो मैं पाई वजूद सुपन ॥ ६१

अक्षरब्रह्मको जागृत अवस्थामें भी अक्षरातीत ब्रह्मकी लीलाओंके गूढ़ रहस्यकी सुधि नहीं है. स्वयं धामधनीने मुझपर कृपा करते हुए मेरे नश्वर तनको यह सुधि प्रदान की है.

रुहें अंदर अरस अजीम के, जो अरवा बारे हजार ।

हक ऊपर बैठे देखावत, ए जो खेल कुफार ॥ ६२

अक्षरातीत धामधनी अपनी बारह हजार ब्रह्मआत्माओंको परमधाम मूलमिलावामें बैठाकर स्वयं सिंहासन पर विराजमान होकर यह स्वप्नवत् खेल दिखा रहे हैं.

सो भिस्त दई हम सबन को, कर जाहेर बका अरस इत ।

करें त्रैलोकी त्रैगुन कायम, ब्रह्म सृष्टि की बरकत ॥ ६३

इस स्वप्नवत् जगतमें भी धामधनीने हम सभी ब्रह्मआत्माओंको परमधामका अनुभव करवाकर अखण्ड सुख प्रदान किया. जिसके कारण हम ब्रह्मसृष्टियोंके प्रतापसे चौदह लोकोंके जीवों सहित त्रिगुणाधिपतियोंको भी अखण्ड मुक्ति स्थल (बहिश्त)का सुख प्राप्त हुआ.

ए बात बारीक अति बुजरक, दोऊ सरूपों सुख बातन ।

करी परीछा इसक साहेबी, सुख होसी नूर रुहन ॥ ६४

अक्षर तथा ब्रह्मात्माएँ इन दोनों स्वरूपोंको प्राप्त होने वाले सुखका रहस्य अत्यन्त गूढ़ है. अपने प्रेम और प्रभुताका अनुभव करवानेके लिए ही धामधनीने इस खेलकी रचना कर हमारी परीक्षा की है जिससे अक्षरब्रह्म

और हम ब्रह्मआत्माओंको अपार सुख प्राप्त होगा.

करसी कायम खाकी बुतको, करके नूर सनमुख ।

इस से अक्षर और मोमिन, लेसी कायम इसक के सुख ॥ ६५

इतना ही नहीं स्वप्नवत् जगतके जीवोंको भी अक्षरब्रह्मके हृदयमें अङ्गित कर अखण्ड कर दिया. इससे अक्षरब्रह्म तथा ब्रह्मआत्माओंको शाश्वत प्रेमका आनन्द प्राप्त होगा.

ए सुख जाने नूरजमाल, या जाने नूर अक्षर ।

या हम रुहें जानहीं, कहे महामत हुक्में यों कर ॥ ६६

महामति श्रीराजजीके आदेशसे इस प्रकार कहते हैं, इस परम सुखको स्वयं अक्षरातीत श्रीराजजी जानते हैं या अक्षरब्रह्म या तो हम ब्रह्मआत्माएँ जानती हैं.

प्रकरण २ चौपाई १३१

श्रीराजजी के चरन

आसिक इन चरन की, आसिक की रुह चरन ।

एह जुदागी क्यों सहें, रुह बिना अपने तन ॥ १

सभी ब्रह्मआत्माएँ श्रीराजजीके इन चरणोंकी अनुरागिनी हैं. इतना ही नहीं वे तो इन्हीं चरणोंकी अङ्गनाएँ हैं, इसलिए ये आत्माएँ अपने अङ्गीका वियोग कैसे सहन कर सकतीं हैं ?

जो रुहें अरस की मोमिन, तिन सब की ए निसबत ।

दिल मोमिन अरस इन माएनों, इन दिल में हक सूरत ॥ २

परमधामकी इन सभी ब्रह्मआत्माओंका सम्बन्ध श्रीराजजीके इन चरणोंसे है. इसलिए इनके हृदयको परमधाम कहा है क्योंकि इनके हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप विराजमान है.

हक सूरत रुहें मोमिन, निसबत एह असल ।

मोमिन रुहें कही अरस की, तो अरस कह्हा मोमिन दिल ॥ ३

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप अङ्गित है, यही तो उनका

वास्तविक सम्बन्ध है। क्योंकि ब्रह्मात्माएँ परमधामकी हैं और उनके हृदयमें परमधाम है।

ए चरन दोऊ हक के, आए धरे मेरे दिल माहें ।

तो अरस कह्या दिल मोमिन, आई न्यामत हक हैं जाहें ॥ ४

श्रीराजजीने अपने दोनों चरणकमल मेरे हृदयमें स्थापित किए हैं। ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा गया है कि जहाँ पर स्वयं श्रीराजजी विराजमान होते हैं वहाँ पर परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदा स्वतः आ जाती है।

ए चरन हुए अरस मासूक, हुआ अरस चरन दिल एक ।

ए वाहेदत जुदागी क्यों होए, जो ताले लिखी ए नेक ॥ ५

अपने प्रियतम धनी श्रीराजजीके चरणकमल ही हम ब्रह्मात्माओंका परमधाम है। श्रीराजजीने अपने चरणकमल स्थापित कर हमारे हृदयको परमधाम बनाया है। इसलिए उनके चरण कमल एवं हमारा हृदय दोनों एक समान (परमधाम) हो गए हैं। इन दोनोंका वियोग कैसे हो सकता है ? यही तो ब्रह्मात्माओंका परम सौभाग्य है।

अरस अरवाहें जो वाहेदत में, सो सब तलें हक नजर ।

इसक सुराई हाथ हक के, रुहों पिलावें भर भर ॥ ६

सभी ब्रह्मात्माएँ अद्वैत परमधाममें श्रीराजजीकी कृपादृष्टिके अन्तर्गत एकात्मभावसे बैठी हैं। श्री राजजी उन्हें अपने ही करकमलोंसे प्याले भर-भरकर प्रेम सुधाका पान करवाते हैं।

इसक हक के दिल में, सो दिल पूरन गंज अपार ।

असल तन इत जिनों, सो ए रस पीवनहार ॥ ७

श्रीराजजीके हृदयमें प्रेमका अक्षय भण्डार है। जिनकी पर आत्मा इस दिव्य परमधाममें है वे आत्माएँ ही श्रीराजजीकी प्रेम-सुधाका पान करनेकी अधिकारिणी हैं।

सराब हक सुराही का, पिया अरवाहों जिन ।
आठों जाम चौसठ घड़ी, क्यों उतरे मस्ती तिन ॥ ८

जिन ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजीके हृदयरूपी प्रेमपात्रसे प्रेमसुधाका पान कर लिया है वे आठों प्रहर तथा चौसठ घड़ी प्रेमकी मस्तीमें मस्त बनी रहती हैं.

असल अरवाहों अरस की, जो हैं रुह मोमन ।
एक निसबत जाने हक की, जिन मासूक प्यारे चरन ॥ ९
ये ब्रह्मात्माएँ ही दिव्य परमधामकी हैं. इसलिए ये ही श्रीराजजीके सम्बन्धको जान सकती हैं. इनको ही अपने प्रियतम धनीके चरणकमल अत्यन्त प्रिय हैं.

मोमिन बासा चरन तले, अरस अरवाहों का मूल ।
मोमिन आए इत अरस से, तो फुरमान ल्याए रसूल ॥ १०
परमधामकी इन ब्रह्मात्माओंका आश्रयस्थान श्रीराजजीके चरणकमल हैं. वे ही परमधामसे इस नश्वर जगतमें अवतरित हुई हैं. इसलिए रसूल मुहम्मद उनके लिए ही सन्देश लेकर यहाँ पर आए हैं.

तो कह्या मोमिन खाना दीदार, पानी पीवना दोस्ती हक ।
तवाफ सेजदा इतहीं, करें रुह कुरबानी मुतलक ॥ ११
इसीलिए अपने प्रियतम धनीके दर्शन ही ब्रह्मात्माओंका आहार कहा गया है एवं उनके मैत्रीपूर्ण स्नेहसिक्त जलसे ही वे अपनी तृष्णाको शान्त करती हैं. इन ब्रह्मात्माओंकी परिक्रमा तथा बन्दना ही श्रीराजजीके चरणकमल कहे गए हैं और वे निश्चय ही इन चरणोंमें समर्पित हैं.

रुहें अव्वल आखर इतहीं, मोमिन ना दूजा ठौर ।
कहे चौदे तबक जरा नहीं, बिना वाहेदत ना कछू और ॥ १२
ब्रह्मात्माएँ आरम्भसे लेकर अन्त तक श्रीराजजीके चरणोंमें ही रहती हैं. उनके अतिरिक्त इनके लिए अन्य कोई स्थान ही नहीं है. इन चौदह लोकोंका कोई अस्तित्व ही नहीं है ऐसा कहा गया है. इसलिए अद्वैत परमधामके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है.

जो अब भी जाहेर ना होती, बका हक सूरत ।
तो क्यों होती दुनी हैयाती, क्यों भिस्त द्वार खोलत ॥ १३
यदि श्रीराजजीका दिव्य स्वरूप इस जगतमें अभी तक प्रकट नहीं होता तो
यहाँके जीवोंको अखण्डता कैसे प्राप्त होती एवं उनके लिए मुक्तिस्थलोंके द्वार
कैसे खुल सकते ?

जो दीदार न होता दुनी को, तो क्यों करते इमाम इमामत ।
क्यों जानते क्यामत को, जो जाहेर न होती निसबत ॥ १४
यदि इस जगतके लोगोंको अन्तिम समयमें प्रकट हुए परमात्माके दर्शन नहीं
हुए होते तो उन्हें इमाम महदी कैसे उपदेश दे सकते ? यदि ब्रह्मआत्माएँ
भी प्रकट हुई नहीं होतीं तो ये लोग आत्म जागृतिके समयको कैसे
पहचानते ?

अरस बका द्वार न खोलते, तो क्यों होती सिफायत महमद ।
हक के कौल सबे मिले, जो काफर करते थे रद ॥ १५
आत्मजागृतिकी इस पावन वेलामें यदि परमधामके द्वार नहीं खोले जाते तो
अन्य पैगम्बरोंकी अपेक्षा रसूल मुहम्मदकी विशेषता कैसे मानी जाती (अभी
उनकी भविष्यवाणी चरितार्थ हुई है). रसूल मुहम्मदके द्वारा कहे गए
परमात्माके सभी वचन अभी सत्य हो रहे हैं जिनको अविश्वासी लोग निरस्त
करते थे.

कहा अब्बल महमद ने, हक अमरद सूरत ।
मैं देखी अरस अजीम में, पोहोंचा बका बीच खिलवत ॥ १६
रसूल मुहम्मदने पहले यह भी कहा है कि परमात्माका चिन्मय स्वरूप
किशोर अवस्थाका है, मैंने परमधामके अन्दर एकान्त स्थली मूलमिलावामें
पहुँचकर इस स्वरूपके दर्शन किए हैं.

हौज जोए बाग जानवर, जल जिमी अरस मोहोलात ।
और अनेक देखी न्यामतें, गुङ्गा जाहेर करी कै बात ॥ १७
मैंने परमधाममें हौजकौसर ताल, यमुनाजी, वन-उपवन, पशु, पक्षी, भूमि,

जल, प्रासाद आदि अनेक सम्पदाएँ देखीं हैं और उनमें-से अनेक रहस्यपूर्ण बातोंको भी प्रकट किया है.

सो वरनन हुई हक सूरत, जासों महंमदें करी मजकूर ।

नबे हजार हरफ सुने, नूर पार पोहोच हजूर ॥ १८

उन्हीं परब्रह्म परमात्माके चिन्मय स्वरूपका वर्णन हुआ है जिनके साथ रसूल मुहम्मदने चर्चा की है, अक्षरसे परे अक्षरातीत परमधारमें उनके चरणोंमें पहुँचकर उन्होंने नबे हजार शब्द भी सुने थे.

हक हुकमें कछू जाहेर किए, और छिपे रखे हुकम ।

सो हुकमें अब्बल आखर को, अब जाहेर किए खसम ॥ १९

श्रीराजजीके आदेशसे उन शब्दोंमें-से कुछ शब्द प्रकट किए और कुछ गुप्त रखे. अब इस अन्तिम समयमें स्वयं परमात्माने प्रकट होकर उन अप्रकट (गुप्त) शब्दोंको स्पष्ट किया है.

सब कोई कहे खुदा एक है, दूजा कहे न कोए ।

कलाम अल्ला कहे एक खुदा, दूजा बरहक महंमद सोए ॥ २०

आज तक सभी लोग यही कहते आए हैं कि परमात्मा एक है, वे ही सत्य हैं और उनके अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं है. कुरानमें भी यही कहा है कि एक परमात्मा ही सत्य हैं एवं उनके सन्देश वाहक रसूल मुहम्मदके वचन सत्य हैं.

सो महंमद कहे मैं उमत से, मुझसे है उमत ।

मैं उमत बिना न पी सकों, हक हजूर सरबत ॥ २१

मुहम्मद भी कहते हैं, मैं ब्रह्मसृष्टियोंके समुदायमें-से हूँ एवं सभी ब्रह्मआत्माएँ मुझमें हैं. इसलिए मैं ब्रह्मआत्माओंके बिना श्रीराजजीकी प्रेम सुधाका पान नहीं कर सकता.

खुदा एक महंमद साहेद, मसहूद है उमत ।

ए तीनों अरस अजीम में, ए वाहेदत बीच हकीकत ॥ २२

परमात्मा एक हैं, मुहम्मद उनके साक्षी हैं एवं इस तथ्यको ग्रहण करनेवाली

ब्रह्मआत्माएँ हैं. ये तीनों ही अद्वैत परमधारमें एकात्म भावसे विराजमान हैं.

ए उपले माएने तीन कहे, और चौथा नूर मकान ।

ए बातें मारफत की, सब मिल एक सुभान ॥ २३

बाह्य दृष्टिसे ही मैंने उक्त तीन स्वरूप कहे हैं. चौथा स्वरूप अक्षरब्रह्म अक्षरधारमें विराजमान हैं. ये सभी मिलकर एक ही परब्रह्म परमात्माके अङ्ग स्वरूप हैं. ये ही पूर्ण पहचानकी रहस्यपूर्ण बात है.

रसूलों एता इत जाहेर किया, और हरफ रखे छिपाए ।

हक मेला बड़ा होएसी, सो करसी जाहेर खिलवत आए ॥ २४

रसूल मुहम्मदने जगतमें आकर यही बात स्पष्ट की, उसमें कुछ रहस्य गुप्त रखे. जब आत्म जागृतिके समयमें श्रीराजजीकी इन अङ्गनाओंका विशेष मिलन होगा तभी वे स्वयं प्रकट होकर इस गूढ़ रहस्यको स्पष्ट करेंगी.

बसरी मलकी और हक्की, कही महंमद तीन सूरत ।

तामें दो देसी हक साहेदी, हक्की खोले सब हकीकत ॥ २५

रसूल मुहम्मदने बशरी, मलकी एवं हक्की इन तीन स्वरूपोंकी बातें की है. उनमें-से दो स्वरूप परमात्माकी साक्षी देंगे एवं हक्की स्वरूप उनकी यथार्थताको स्पष्ट करेंगे.

हक्की हक अरस करे जाहेर, ऊर्ध्वा कायम सूरज फजर ।

होसी सब हैयाती, देख कायम खिलवत नजर ॥ २६

हक्की स्वरूप परमधारम तथा परब्रह्म परमात्माकी लीलाको प्रकट करेंगे. उन्हींके द्वारा ब्रह्मज्ञानका सूर्योदय होगा. जिसके प्रकाशमें सभी जीवोंको अखण्ड मुक्ति मिलेगी.

ले हक्की सूरत हक इलम, करसी जाहेर हक बिसात ।

खिलवत भी छिपी ना रहे, करे जाहेर वाहेदत हक जात ॥ २७

ये हक्की स्वरूप ब्रह्मज्ञानके द्वारा परमात्माका सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्रकट करेंगे. तब ब्रह्मआत्माओंका एकात्मभाव एवं उनकी अद्वैत लीला प्रकट हो जाएगी.

फजर कही जो फुरमाने, सो अरस बका हक दिन ।
जोलों बका तरफ पाई नहीं, तोलों सबों ना रोसन ॥ २८

कुरानमें जिसे ज्ञानका प्रभात कहा है वह दिव्य परमधामके अधिष्ठाता अक्षरातीतके प्रकट होनेका दिन है. जब तक जगतके जीवोंको परमात्माकी दिशा प्राप्त नहीं हुई थी तब तक जगतमें अज्ञानरूपी अन्धकार ही व्यास था.

अब दिन कायम जाहेर हुआ, सबों रोसनी पोहोंची बका हक ।
कायम किए सब हुकमें, वरस्या हक इसक मुतलक ॥ २९

अब ब्रह्मज्ञानका उदय हो गया है जिससे पूर्णब्रह्म परमात्मा तथा परमधामका दिव्य ज्ञान चारों ओर प्रकाशित हो गया. श्रीराजजीके आदेशने जगतके जीवोंको अखण्ड किया गया. इस प्रकार निश्चय ही ब्राह्मी प्रेमकी वर्षा हो गई है.

रुह अल्ला चौथे आसमान से, आए खोली सब हकीकत ।
ल्याए इलम लुंदनी, कही सब हक मारफत ॥ ३०

श्रीश्यामाजीने परमधामसे सदगुरुके रूपमें अवतरित होकर परमधामकी सम्पूर्ण यथार्थता प्रकट कर दी एवं जागृत बुद्धिका तारतम ज्ञान लाकर अक्षरातीत परब्रह्म परमात्माकी पहचान करवा दी.

जो कही महंमद ने, हक जात सूरत ।
सोई कही रुहअल्ला ने, यामें जरा न तफावत ॥ ३१

रसूल मुहम्मदने परमात्माके जिस स्वरूपकी चर्चा की थी, श्रीश्यामाजीने भी प्रकट होकर उसी स्वरूपका वर्णन किया है. इसमें कोई भी अन्तर नहीं है.

जो अमरद कहा महंमदें, सोई कही ईसें किसोर सूरत ।
और सब चीजें कही बराबर, दोऊ मकान हादी उमत ॥ ३२

रसूल मुहम्मदने परमात्माको अमरद सूरत कहा था. सदगुरु श्री देवचन्द्रजीने परमात्माको किशोर स्वरूप कहा है. इतना ही नहीं अक्षरधाम, परमधाम, श्रीश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओं सहित परमधामका सम्पूर्ण वैभव समान रूपसे व्यक्त किया है.

हौज जोए बाग अरस के, जो कछू अरस बिसात ।

कहूं केती अरस साहेदियां, इन जुबां कही न जात ॥ ३३

इस प्रकार हौजकौसर ताल, यमुनाजी, वन-उपवन आदि परमधामकी अपार सम्पदाओंका वर्णन किया है. उन्होंने परमधामकी अनेक साक्षियाँ दीं हैं जो जिहाके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकतीं.

बरकत कुंजी रुहअल्ला, हुआ बेवरा तीन उमत ।

पूरी उमेंदे सबन की, जाहेर होते हक सूरत ॥ ३४

इस प्रकार सदगुरु श्री देवचन्द्रजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके प्रकाशसे ब्रह्मसृष्टि, ईश्वरीसृष्टि तथा जीवसृष्टिका विवरण दिया गया है. श्रीराजजीके स्वरूपके प्रकट होनेसे सभीकी मनोकामनाएँ पूर्ण हो गई हैं.

ले गवाही दोऊ हादियों की, किया हक वरनन ।

सब कौल किताबों के, हक हुकमें किए पूरन ॥ ३५

सदगुरु श्रीदेवचन्द्रजी एवं रसूल मुहम्मद दोनोंकी साक्षी लेकर मैंने परमात्माके स्वरूपका वर्णन किया है. श्रीराजजीके आदेशने ही सभी आस ग्रन्थोंमें दिए गए वचन पूर्ण किए हैं.

वाहेदत अरस अखण्ड, असल नकल नहीं दोए ।

घट बढ अरस में है नहीं, न नया पुराना होए ॥ ३६

अखण्ड परमधाम अद्वैत स्वरूप है. वहाँ पर कृति या अनुकृति (असल एवं नकल) होती ही नहीं. वहाँ पर न न्यून अथवा अधिक है और न ही नूतन अथवा पुरातन है.

रंग नंग रेसम मिलाए के, हेम जवेर कुंदन ।

इन विध बनावे दुनियां, वस्तर और भूषन ॥ ३७

जगतके लोग विभिन्न रङ्गोंके रत्न हेम, जवाहरात तथा कुन्दन आदिको रेशम आदिमें जड़ कर अपने वस्त्र तथा आभूषण बनाते हैं.

अरस सरूप जो अखंड, याको होए कैसे वरन्न ।

एक उतार दूजा पेहरना, ए होए सुपन के तन ॥ ३८

किन्तु परमधामके स्वरूप अखण्ड होनेसे उनके वस्त्र तथा आभूषणोंका वर्णन कैसे किया जाए ? किसी एकको उतार कर दूसरेको धारण करना यह तो स्वप्नके शरीरोंमें ही सम्भव होता है.

ए विध अरस में है नहीं, जो करत हैं नकल ।

ज्यों अंग त्यों बस्तर भूषन, अरस में एकै असल ॥ ३९

नश्वर जगतमें जिस प्रकार अनुकरण (नकल) किया जाता है वैसी रीति परमधाममें नहीं है. परमधाममें तो जैसे अङ्ग-प्रत्यङ्ग अखण्ड हैं उसी प्रकार उनमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषण भी अखण्ड हैं.

ज्यों अंग त्यों बस्तर भूषन, अखंड सरूप के एह ।

इत नहीं भांत सुपन ज्यों, दुनी पेहेन उतारत जेह ॥ ४०

परमधामके स्वरूपोंके अङ्ग जिस प्रकार अखण्ड हैं उसी प्रकार उनके वस्त्र तथा आभूषण भी अखण्ड हैं. वहाँ पर स्वप्न जगतकी भाँति वस्त्र तथा आभूषणोंको धारण करना तथा उतारना नहीं होता है.

सब चीजें रुह के हुकमें, करत चाहा पूरन ।

रुह कछुए चित में चितवे, सो होत सबें माहें छिन ॥ ४१

परमधामके सभी कार्य ब्रह्मात्माओंकी इच्छानुसार उनके आदेशमात्रसे ही पूर्ण होते हैं. ब्रह्मात्माएँ अपने हृदयमें जो इच्छा करतीं हैं वह तत्काल पूर्ण हो जाती है.

ज्यों अंग त्यों बस्तर भूषन, तिन सब अंगों सुख दायक ।

सोभा भी तैसी धरे, जैसा अंग तैसा तिन लायक ॥ ४२

जैसे इन स्वरूपोंके अङ्ग सुखदायी हैं उसी प्रकार उनके वस्त्र तथा आभूषण भी उन सभी अङ्गोंके लिए सुखदायी हैं. जिस प्रकार इन अङ्गोंकी सुन्दर शोभा है उसी प्रकार वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभा भी अति सुन्दर है.

हर एक में अनेक रंग, हर एक में सब सलूक ।
कै जुगतें हर एक में, सुख उपजत रूप अनूप ॥ ४३

इन वस्त्र तथा आभूषणोंमें प्रत्येकमें अनेक प्रकारके रङ्ग तथा अनुपम संरचना
सुशोभित है. इस प्रकार प्रत्येककी चित्रकारीसे अपार सुखका अनुभव होता
है.

सब नंग में गुन चेतन, मुख थें केहेना पडे न किन ।
दिलमें जैसा उपजे, सो आगूं होत रोसन ॥ ४४

वस्त्र तथा आभूषणोंके रत्नोंमें भी चेतन गुण हैं इसलिए उनको निर्देशन देना
ही नहीं पड़ता. हृदयमें जैसी इच्छा उत्पन्न होती है उससे पूर्व ही वे तदनुरूप
प्रकाशित हो जाते हैं.

अरस सुख जो बारीक, सो जानत अरवा अरस के ।
ए झूठी जिमी जो दुनियां, सो क्यों कर समझे ए ॥ ४५
परमधामकी आत्माएँ ही परमधामके विशेष सुखोंको जान सकती हैं. इस
नश्वर जगतके जीव उन अखण्ड सुखोंको कैसे समझ सकेंगे ?

जेता वस्तर भूषन, सब रंग रस कै गुन ।
रुह कछुए कहे एक जरे को, सो सब आगूं होत पूरन ॥ ४६
ब्रह्मआत्माओंके जितने वस्त्र तथा आभूषण हैं उन सभीमें सब प्रकारके रङ्ग,
रस तथा अनेक प्रकारके गुण विद्यमान हैं. यदि आत्मा किसी एक को
थोड़ासा भी निर्देश दें तो उससे पूर्व ही उसकी चाहना पूर्ण हो जाती है.

अनेक सिनगार एक खिन में, चित चाह्या सब होत ।
दिल में पीछे उपजे, ओ आगे धरे अंग जोत ॥ ४७

इस प्रकार आत्माओंकी इच्छानुसार क्षण मात्रमें ही उनके अङ्गोंमें अनेक
प्रकारके शृङ्गार सुशोभित होते हैं. मानों, हृदयमें चाहना बादमें उत्पन्न हुई हो
उससे पूर्व ही वे अङ्गोंमें सुशोभित हो गए हों.

कै रंग रस नरमाई, कै सुख बानी जोत खुसबोए ।

ए अरस वस्तर भूषन की, क्यों कहूं सोभा सलूकी सोए ॥ ४८

इन आभूषणोंमें अनेक प्रकारके रङ्ग, रस तथा सुकोमलताएँ हैं, साथ ही उनसे निकलती हुई मधुर वाणी, उनकी ज्योति तथा सुगन्धिसे भी अपार सुख प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार परमधामके इन वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभा एवं संरचनाके विषयमें कहाँ तक वर्णन किया जाए ?

मीठी बानी चित चाहती, खुसबोए नरमाई चित चाहे ।

सोभा सलूकी चित चाही, ए अरस सुख कहे न जाए ॥ ४९

इन वस्त्र तथा आभूषणोंमें ब्रह्मात्माओंकी चाहनानुसार मधुरवाणी, सुगन्धि, सुकोमलता तथा संरचनाकी शोभा है। इस प्रकार परमधामके सुखोंका वर्णन नहीं किया जा सकता।

अरस बका की हकीकत, माहें लिखी कतेब वेद ।

खोले जमाने का खावंद, और खोल न सके कोई भेद ॥ ५०

वेद तथा कतेब ग्रन्थोंमें परमधामकी इस यथार्थताका उल्लेख हुआ है, किन्तु अन्तिम समयके परमात्माके बिना इन रहस्योंको कोई भी स्पष्ट नहीं कर सकता।

लिख्या वेद कतेब में, सोई खोले जिन सिर खिताब ।

देसी मुक्त सबन को, करके अदल हिसाब ॥ ५१

इसलिए वेद तथा कतेब ग्रन्थोंमें स्पष्ट लिखा है कि ये रहस्य वे ही स्पष्ट कर सकेंगे जिनको इनका दायित्व दिया गया है। वे अन्तिम समयमें प्रकट होकर सबका लेखा जोखा रखेंगे एवं उन्हें मुक्तिस्थलका सुख प्रदान करेंगे।

सातों सरूप अखंड, मैं वरनन किए सिर ले ।

दो रास पांच अरस अजीम, बोझ दिया न सिर सरूपों के ॥ ५२

मैंने इस दायित्वको स्वीकार कर परमात्माके सातों अखण्ड स्वरूपोंका वर्णन किया है। उनमें दो रासके स्वरूप हैं तथा पाँच (श्रीराजजीके तीन एवं

श्रीश्यामाजीके दो शृङ्गार) अखण्ड परमधामके स्वरूप हैं. इस प्रकार वर्णन कर मैंने अन्य किसी स्वरूपके लिए यह दायित्व नहीं छोड़ा है.

जोलों इलम को हुकमें, कह्या नहीं समझाए ।
तोलों सो रुह आप को, क्यों कर सके जगाए ॥ ५३

जब तक तारतम ज्ञानके साथ-साथ जागृत होनेका आदेश स्पष्ट रूपमें नहीं दिया जाता, तब तक आत्मा स्वयंको कैसे जागृत कर सकती है ?

जब रुह को जगावे हुकम, तब रुह आपै छिप जाए ।
तब रहे सिर हुकम के, यों हुकमें इलम समझाए ॥ ५४

जब श्रीराजजीका आदेश ब्रह्म आत्माको जागृत कर देता है तब आत्माका अहंभाव स्वतः क्षीण हो जाता है. तब आत्मा मात्र श्रीराजजीके आदेश पर ही निर्भर हो जाती है. इस प्रकार तारतम ज्ञान श्रीराजजीके आदेशके सम्बन्धमें प्रकाश डालता है.

जाहेर किया हक इलमें, रुह सिर आया हुकम ।
सोई करे हक वरनन, ले हकै हुकम इलम ॥ ५५

जब तारतम ज्ञानने यह रहस्य स्पष्ट कर दिया तब आत्माको श्रीराजजीके आदेशका अनुभव हुआ. अब वह उनका आदेश प्राप्त कर तारतम ज्ञानके द्वारा उनके स्वरूपका वर्णन कर रही है.

हुकमें बेसक इलम, और हुकमें जोस इसक ।
मेहेर निसबत मिलाए के, वरनन करे अरस हक ॥ ५६

श्रीराजजीके आदेश से ही ज्ञान, आवेश एवं प्रेम प्राप्त हुए हैं. उनकी कृपा तथा शाश्वत सम्बन्धके द्वारा आत्मा परमधाम तथा परमात्माका वर्णन कर सकती है.

एही आसिक करे वरनन, और आसिकै सुने इत ।
ए केहेवें लेवें मोमिन, या रसूल तीन सूरत ॥ ५७

अनुरागिनी आत्मा ही परमधाम तथा श्रीराजजीका वर्णन कर सकती है एवं उनके विषयमें सुन सकती है. यह वर्णन करनेवाली तथा इनके रहस्यको

ग्रहण करनेवाली ब्रह्मात्मा ही है अथवा तो रसूल मुहम्मद द्वारा वर्णित तीन स्वरूप हैं.

मैं हक अरस में जुदे जानती, ल्यावती सबद में वरनन ।

जड़में सिर ले ढूँढती, हक आए दिल बीच चेतन ॥ ५८

यदि मैं श्रीराजजीको परमधामसे अलग समझता तो शब्दोंके द्वारा उनका वर्णन कर लेता, इतना ही नहीं इस जड़वत् संसारमें उनको खोजने भी लगता. किन्तु धामधनी तो मेरे हृदयको ही परमधाम बनाकर उसमें विराजमान हो गए हैं और मुझे सचेत कर उन्होंने मेरी सभी शंकाओंका निवारण कर दिया है.

कहूँ इनका बेवरा, सिर हुकम लेसी मोमन ।

सो हुकमें समझ जागसी, मिले हुकमें हक वतन ॥ ५९

अब मैं उनका विवरण देता हूँ ब्रह्मात्मा एँ ही श्रीराजजीके आदेशसे इसे ग्रहण करेंगी तथा इसे समझकर जागृत हो जाएँगी जिससे दिव्य परमधाममें उनका श्रीराजजीसे मिलन हो सकेगा.

हुकमें चले हुकम, हुकमें जाहेर निसबत ।

हुकमें खिलवत जाहेर, हुकमें जाहेर वाहेदत ॥ ६०

श्रीराजजीके आदेशसे ही उनके आदेशकी महिमा जानी जा सकती है एवं उनके सम्बन्धकी पहचान हो सकती है. इतना ही नहीं श्रीराजजीके आदेशने तो परमधामकी एकान्त स्थली मूलमिलावा तथा उसमें विराजमान ब्रह्मात्माओंके एकात्मभावको भी स्पष्ट कर दिया है.

हुकमें दिल में रोसनी, सुध हुकमें अरस नूर ।

मुकैयद मुतलक हुकमें, हुकमें अरस सहूर ॥ ६१

इसी आदेशके कारण ही हृदयमें ज्ञानका प्रकाश आता है तथा दिव्य परमधाम एवं अक्षरधामकी सुधि होती है. इसी आदेशके द्वारा धर्मग्रन्थोंमें अन्तर्निहित ज्ञान स्पष्ट हो जाता है और दिव्य परमधामकी समझ प्राप्त हो सकती है.

कोई दम न उठे हुकम बिना, कोई हले ना हुकम बिना पात ।

तहाँ मुतलक हुकम क्यों नहीं, जहाँ वरनन होए हक जात ॥ ६२

इस आदेशके बिना न कोई श्वास ले सकता है और न ही कोई पत्ता भी हिल सकता है. इसलिए जहाँ पर परमधामकी सम्पदाओंका वर्णन हो रहा है, वहाँ पर निश्चय ही यह आदेश कैसे नहीं होगा ?

हक बातें रूह हुकमें सुने, हुकमें होए दीदार ।

हुकमें इलम आखरी, खोले हुकमें पार द्वार ॥ ६३

इसी आदेशके माध्यमसे ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी बातें सुन सकती हैं और उनके दर्शन कर सकती हैं. इतना ही नहीं इसीके द्वारा वे ब्रह्मज्ञान (तारतम ज्ञान) प्राप्त कर पाके द्वार खोलती हैं.

ए वरनन होत सब हुकमें, आया हुकमें बेसक इलम ।

हुकमें जोस इसक सबे, जित हुकम तित खसम ॥ ६४

यह सम्पूर्ण वर्णन इसी आदेशके प्रतापसे हुआ है. इसीके माध्यमसे यह सन्देह निवारक तारतमज्ञान, श्रीराजजीका जोश तथा प्रेम प्राप्त हुए हैं. वस्तुतः जहाँ उनका आदेश होता है वहीं पर श्रीराजजी विराजमान होते हैं.

जब ए द्वार हुकमें खोलिया, हुकमें देख्या हक हाथ ।

तब रही ना फरेबी खुदी, वाहेदत हुकम हक साथ ॥ ६५

जब श्रीराजजीके आदेशसे परमधामके द्वार खुल गए हैं तब देखा कि यह आदेश तो स्वयं श्रीराजजीके हाथमें है. अब तो नश्वर जगतका मिथ्याभिमान स्वतः मिट गया. इस प्रकार श्रीराजजीके आदेशके साथ-साथ उनके एकात्मभावका स्पष्ट अनुभव होने लगा.

पेहेले हुकमें इलम जाहेर, हुआ हुकमें हक वरनन ।

मैं हुकम लिया सिर अपने, अब रूह छिप गई हक इजन ॥ ६६

सर्व प्रथम श्रीराजजीके आदेशसे यह तारतम ज्ञान अवतरित हुआ, तदुपरान्त उसी आदेशके द्वारा धामधनी एवं परमधामका वर्णन होने लगा. मैंने श्रीराजजीका आदेश शिरोधार्य किया है. अब मेरी आत्मा इसी आदेशमें समा गई है.

हक बैठे दिल अरस में, कह्या हकें अरस दिल मोमन ।

रुहें पोहोंचाई हकें अरस में, हक बैठे अरस दिल रुहन ॥ ६७

अब श्रीराजजी मेरे हृदयको परमधाम बनाकर इस पर विराजमान हो गए हैं। उन्होंने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना परमधाम कहा है। इस प्रकार ब्रह्मात्माओंके हृदयरुपी धाममें विराजमान होकर श्रीराजजीने उनको परमधाम पहुँचा दिया।

हक रुहें बीच अरस के, नहीं जुदागी एक खिन ।

हुकमें नैन कान दीजिए, अब देखो नैनों सुनो वचन ॥ ६८

श्रीराजजी तथा ब्रह्मात्माएँ परमधाममें एकात्मभावसे रहते हैं। एक क्षणके लिए भी उनका वियोग नहीं है। अब अपने नेत्र तथा श्रवण अङ्गोंको श्रीराजजीके आदेशके अधीन कर अपनी आँखोंसे उनके दर्शन करें एवं श्रवणोंसे उनके वचन सुनें।

अब हकें हुकम चलाइया, खुदी फरेबी गई गल ।

रास खेल रस जागनी, हुआ रुहें सुख असल ॥ ६९

अब मुझ पर श्रीराजजीने अपना आदेश चलाया जिससे मेरा अहङ्कार समाप्त हो गया। इसलिए हे आत्मा ! जागनी रास खेलकर जागनीका रस प्राप्त कर ले। इस प्रकार ब्रह्मात्माओंको परमधामके शाश्वत सुखोंका अनुभव हुआ है।

कहे हुकमें महामत मोमिनो, हकें पोहोंचाई इन मजल ।

कहे सारन्न नहीं त्रैलोक में, सो हक बैठे रुहें बीच दिल ॥ ७०

महामति श्रीराजजीके आदेशसे कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीने ही मुझे इस भूमिका तक पहुँचाया है। शास्त्र पुकार करते हैं कि परब्रह्म परमात्मा चौदह लोकोंमें नहीं हैं, किन्तु वे स्वयं ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना परमधाम बनाकर उसमें विराजमान हो गए हैं।

आतम फरामोस से जागेका प्रकरण

ऐसा आवत दिल हुकमें, यों इसकें आतम खड़ी होए ।

जब हक सूरत दिल में चूभे, तब रुह जागी देखो सोए ॥ १

श्रीराजजीके आदेशसे मेरे हृदयमें ऐसो विचार आते हैं कि उनके प्रेमसे यह आत्मा जागृत हो जाएगी। जब उनका स्वरूप हृदयमें अङ्कित हो जाएगा तभी आत्मा जागृत हो जाएगी।

हक सूरत वस्तर भूषन, बीच बका अरस के ।

तिनको निरने इन जुबां, क्यों कर केहेवे ए ॥ २

श्रीराजजीका स्वरूप तथा उनके वस्त्र एवं आभूषण सभी अखण्ड परमधामके हैं। यह नश्वर जिह्वा उनका निरूपण कैसे कर सकती है ?

जिन दृढ़ करी हक सूरत, हक हुकमें जोस ले ।

अरस चीज कही सो मेहर से, पर बल इन अंग अकल के ॥ ३

जिन्होंने श्रीराजजीके स्वरूपको अपने हृदयमें दृढ़तापूर्वक अङ्कित किया है वह उनके आदेश एवं जोशके कारण ही सम्भव हुआ है। उनकी ही कृपासे परमधामकी सम्पदाका वर्णन किया गया है किन्तु इसके लिए बुद्धि तथा बल इसी नश्वर तनके हैं।

जो जुबां बचन केहेत है, हिसा कोटमा ना पोहोंचत ।

पोहोंचे ना जिमी जरे को, तो क्या करे जात सिफत ॥ ४

इस नश्वर शरीरकी जिह्वाके द्वारा जो वचन कहे जाते हैं उनका करोड़वाँ भाग भी परमधाम तक पहुँचकर वहाँकी भूमिके कणमात्रका वर्णन नहीं कर सकता, तो वह ब्रह्मात्माओंकी शोभाका वर्णन कैसे कर सकेगा ?

किया हुकमें बरनन अरस का, पर दृष्ट मसाला इत का ।

एक हरफ लुगा पोहोंचे नहीं, लग अरस चीज बका ॥ ५

श्रीराजजीके आदेशके द्वारा परमधामका वर्णन किया है किन्तु उसके लिए सभी उदाहरण नश्वर जगतके हैं। वस्तुतः इस जगतका एक अक्षर भी परमधामकी दिव्य सामग्री तक नहीं पहुँच सकता।

जिन देखी सूरत हक की, इन वजूद के सनमंथ ।
जोस हुकम मेहेर देखावहीं, मोमिन जाने एह सनंथ ॥ ६

जिन्होंने इसी नश्वर शरीरके माध्यमसे परमात्माके अखण्ड स्वरूपके दर्शन किए हैं वे ब्रह्मात्माएँ ही उनके आवेश, आदेश एवं कृपाके दर्शन करवाती हैं क्योंकि वे ही इनका रहस्य जानती हैं.

सबों सिफत करी जोस अकलें, इन अंग छूटे ना दृष्ट फना ।
कोई बल करो हक हुकमें, पर अरसें क्यों पोहोंचे सुपना ॥ ७

अनेक महापुरुषोंने अपनी बुद्धिके द्वारा परमात्माके स्वरूपका प्रयत्न पूर्वक वर्णन करना चाहा. किन्तु उनकी दृष्टि नश्वर जगतको छोड़कर आगे नहीं जा सकी. यदि कोई श्रीराजजीके आदेशसे इसके लिए प्रयत्न करने लगे तो भी उनकी स्वप्नकी बुद्धि अखण्ड परमधाम तक कैसे पहुँच सकेगी ?

नींद उडे रहे ना सुपना, और सुपने में देखना हक ।
मेहेर इलम जोस हुकमें, हक देखिए बेसक ॥ ८

यदि यह नींद उड़ जाएगी (आत्मा जागृत हो जाएगी) तो स्वप्नवत् जगतका अस्तित्व ही नहीं रहेगा. किन्तु स्वप्नवत् जगतमें ही श्रीराजजीके दर्शन करने हैं (यह कैसे सम्भव होगा). वस्तुतः श्रीराजजीकी कृपा, ब्रह्मज्ञान, आवेश तथा आदेशके द्वारा यहीं पर बैठे बैठे उनके दर्शन अवश्य हो सकते हैं.

पर जेता हिसा नींद का, रुह तेती फरामोस ।
जो मेहेर कर हुकम देखावहीं, तब देखे बिना जोस ॥ ९

परन्तु अज्ञानरूपी नींदका आवरण जितना दृढ़ होगा यह आत्मा उतना ही अधिक भ्रमित होगी. जब श्रीराजजी कृपापूर्वक अपना आदेश प्रदान करेंगे तब आवेशके बिना ही उनके दर्शन हो सकते हैं.

हक जाने सो करें, अनहोनी सो भी होए ।
हिसाब किएं सुपन में, मुतलक न देखे कोए ॥ १०

श्रीराजजी जैसा चाहते हैं वैसा कर सकते हैं. उनके समक्ष असम्भव भी सम्भव हो जाता है. इस स्वप्नवत् जगतमें भी उन्होंने परमधामका विवरण

दिलवाया है, यद्यपि आजतक किसीने भी उसके विषयमें देखा अथवा सुना नहीं था.

ए बात तो कारज कारन, हक जानत त्यों करत ।

असल रुह तन मिलावा, निसबत है वाहेदत ॥ ११

यद्यपि यह प्रसङ्ग तो विशेष कार्यके कारण उपस्थित हुआ है तथापि श्रीराजजी जैसा चाहते हैं वैसा कर सकते हैं. ब्रह्मात्माओंके मूलस्वरूप (पर आत्मा) अद्वैत परमधाममें उनके अद्वैत अङ्गस्वरूप हैं.

ए हक बातन की बारीकियां, सो हक के दिएं आवत ।

ना सीखे सिखाए ना सोहोबतें, हक मेहरें पावत ॥ १२

श्रीराजजीके हृदयका गूढ रहस्य उनकी कृपासे ही स्पष्ट हो सकता है. मात्र सीखने-सिखाने अथवा सङ्गत करनेसे ही नहीं अपितु उनकी कृपासे वह प्राप्त हो सकता है.

अपनी रुहों वास्ते, कै कोट काम किए ।

ए जाने अरवाहे अरस की, जिन नाम निसान लिए ॥ १३

श्रीराजजीने अपनी ब्रह्मात्माओंको आनन्द प्रदान करनेके लिए करोड़ों उपाय किए हैं. इस रहस्य को परमधामकी आत्माएँ ही जानतीं हैं क्योंकि वे ही वहाँके सङ्केतोंसे परिचित हैं.

ए जो अरस बारीकियां, अरस सहरें रुह जानत ।

जिन पट खुल्या सो न जानहीं, बिना हक सिफत ॥ १४

ब्रह्मात्माएँ ही तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामके इन सूक्ष्म बातोंको जानतीं हैं. जिनके हृदयपट खुल गए हैं वे भी श्रीराजजीकी कृपाके बिना यह रहस्य समझ नहीं सकते हैं.

जिन जो देख्या जागते, सो देखे माहें सुपन ।

कानों सुन्या सो भी देखत, याके साथ तो हक इजन ॥ १५

जिन्होंने जागृत अवस्थामें परमधामको देखा है, वे ही अभी स्वप्नमें बैठकर उसके दर्शन कर रहे हैं. जिन्होंने मात्र अपने कानोंसे सुना है वे भी

परमधामका अनुभव कर सकते हैं क्योंकि इन ब्रह्मात्माओंके पास तो स्वयं श्रीराजजीका आदेश है.

रखे वजूद को हुक्म, जेते दिन रख्या चाहे ।
रुहों खेल देखावने, कै विध जुगत बनाए ॥ १६

श्रीराजजीका आदेश ब्रह्मात्माओंको जितने दिन तक शरीर धारण करवाना चाहता है उतने दिन तक धारण करवाएगा. अपनी आत्माओंको यह नश्वर खेल दिखानेके लिए ही श्रीराजजीने इस प्रकारके अनेक प्रबन्ध किए हैं.

आत्म तो फरामोस में, भई आड़ी नींद हुक्म ।
सो फेर खड़ी तब होवहीं, रुह दिल याद आवे खसम ॥ १७

ब्रह्मसृष्टिओंकी आत्मा तो भ्रमकी नींदमें है. यह नींद भी श्रीराजजीके आदेशसे ही आवरण रूप बनी है. जब उनके हृदयमें श्रीराजजका स्मरण हो आएगा तभी ब्रह्मात्माएँ जागृत हो पाएँगी.

सो साख मोमिन एही देवहीं, यों बूझमें भी आवत ।
अनभव भी कछू केहेत है, और हुक्म भी कहावत ॥ १८

ब्रह्मात्माएँ ही इस रहस्यकी साक्षी देंगी. यह रहस्य उनकी ही समझमें आएगा. मेरा अनुभव भी इसी प्रकार कह रहा है तथा श्रीराजजीका आदेश भी इसी प्रकार कहलवा रहा है.

मोमिन केहेवे हुक्में, बूझ अनभव पर हुक्म ।
हुक्म केहेवे सो भी हुक्में, कछू ना बिना हुक्म खसम ॥ १९

ब्रह्मात्माएँ जो कुछ कहतीं हैं वह श्रीराजजीके आदेशसे ही है. उनकी समझ एवं अनुभव भी श्रीराजजीके आदेशके अधीन हैं. श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही उनके आदेशके विषयमें कुछ कहा जा रहा है. वस्तुतः श्रीराजजीके आदेशके अतिरिक्त कहीं कुछ भी नहीं है.

रुह तेती जागी जानियो, जेता दिलमें चूभे हक अंग ।
जो अंग हिरदे न आइया, रुह के तेती फरामोसी संग ॥ २०

अपनी आत्माको उतना ही जागृत समझना चाहिए जितना श्रीराजजीका

स्वरूप हृदयमें अङ्कित हुआ है. श्रीराजजीके जितने अङ्ग हृदयमें अङ्कित नहीं हुए हैं उतनी ही भ्रान्ति आत्मामें अभी भी शेष है.

ताथें जो रूह अरस अजीम की, सो क्यों ना करे उपाए ।

ले हक सरूप हिरदे मिने, और देवे सब उडाए ॥ २१

इसलिए जो परमधामकी आत्माएँ हैं वे जागृत होनेका उपाय क्यों नहीं करतीं. उन्हें तो श्रीराजजीके स्वरूपको हृदयमें अङ्कित कर अन्य सभी प्रपंचोंको उड़ा देना चाहिए.

इसक बिना रूह के दिल, चूभे ना सूरत हक ।

मेहर जोस निसबतें, हक हुकमें चूभे मुतलक ॥ २२

किन्तु हृदयमें प्रेमका आविर्भाव हुए बिना श्रीराजजीका स्वरूप अङ्कित नहीं हो सकता. श्रीराजजीके आदेशसे जब उनकी कृपा प्राप्त होगी, उनका आवेश अवतरित होगा एवं उनके सम्बन्धकी पहचान होगी तभी उनका स्वरूप हृदयमें अङ्कित होगा.

मोहे दिलमें हुकमें यों कह्या, जो दिलमें आवे हक मुख ।

तो खडा होए मुख रूहका, हकसों होए सनमुख ॥ २३

श्रीराजजीके आदेशने मुझे इस प्रकार कहा, जब तेरे हृदयमें श्रीराजजीका मुखारविन्द अङ्कित हो जाएगा तब तेरी परआत्माका मुख भी जागृत होकर श्रीराजजीके सम्मुख खड़ा हो जाएगा.

अधुर हरवटी नासिका, दंत जुबां और गाल ।

जो अंग आया हक का दिलमें, उठे रूह अंग उसी मिसाल ॥ २४

इसी प्रकार अधरोष्ट, चिबुक, नासिका, दन्तावलि, मुखकमल, कपोल आदि श्रीराजजीके जो भी अङ्ग हृदयमें अङ्कित हो जाते हैं, उसी समय परआत्माके वे अङ्ग जागृत हो जाएँगे.

जो तूं ग्रहे हक नैन को, तो नजर खुले रूह नैन ।

तब आसिक और मासूक के, होए नैन नैन से सैन ॥ २५

हे आत्मा ! यदि तू श्रीराजजीके नेत्र कमलको अपने हृदयमें अङ्कित करेगी

तो तेरी परआत्माके नेत्र भी अवश्य खुल जाएँगे। तब परआत्मा तथा प्रियतम धनीके नयन परस्पर सांकेतिक बातें करने लगेंगे।

जो हक निलाट आवे दिलमें, और दिलमें आवे श्रवन ।

दोऊ अंग खडे हो रुह के, जो होवे रुह मोमन ॥ २६

यदि ब्रह्मात्माके हृदयमें श्रीराजजीके ललाट एवं श्रवण अङ्ग अङ्कित हो जाएँगे तो उसकी पर-आत्माके भी ये दोनों अङ्ग जागृत हो जाएँगे।

भौं भृकुटी पल नासिका, सुंदर तिलक हमेस ।

गौर सोभा मुख चौक की, क्यों कहूं जोत नूर केस ॥ २७

श्रीराजजीकी भौंहें, भृकुटि, पलकें, नासिका, सुन्दर तिलक, गौर मुखमण्डल एवं कुन्तल (केश) आदि की देदीप्यमान शोभाका वर्णन किन शब्दोंमें करें ?

ए अंग जेते मैं कहे, आवें रुह के हिरदे हक ।

तेते अंग रुह के, उठ खडे होए बेसक ॥ २८

मैंने श्रीराजजीके जितने अङ्गोंका वर्णन किया है, यदि वे सभी हृदयमें अङ्कित हो जाएँगे तो निश्चय ही पर-आत्माके उतने सभी अङ्ग जागृत होकर खडे हो जाएँगे।

पाग बनी सिर सारंगी, इन जुबां कही न जाए ।

ए जुगत जोत क्यों कहूं, जो हकें बांधी दिल ल्याए ॥ २९

श्रीराजजीके सिर पर सारङ्गीके आकारकी सुन्दर पाग सुशोभित है, जिसका वर्णन जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकता है। श्रीराजजीने इसे युक्ति पूर्वक बाँधा है, इसके विषयमें और क्या कहा जाए ?

अतंत सोभा सुंदर, चढती चढती तरफ चार ।

जित देखूं तित अधिक, सोभा न आवे माहें सुमार ॥ ३०

इस दिव्य तेजोमयी पागकी शोभा अत्यन्त सुन्दर है तथा चारों ओर फैली हुई है। चारों ओर जहाँ भी देखते हैं उधर यह शोभा अधिक बढ़ती हुई दिखाई देती है। इसकी कोई सीमा ही नहीं है।

हक हैडा हिरदे ग्रहिए, दिलमें रहे दायम ।
सो हैडा अंग रुह का, उठ खडा हुआ कायम ॥ ३१

श्रीराजजीके कोमल हृदयको अपने हृदयमें इस प्रकार धारण करना चाहिए कि वह सर्वदा हृदयमें ही रह जाए. तब अपने पर-आत्माका हृदय भी सर्वदाके लिए जागृत हो जाएगा.

जो हक अंग दिलमें नहीं, सो अंग रुह का फरामोस ।
जब हक अंग आया दिलमें, सो रुह अंग आया माहें होस ॥ ३२

श्रीराजजीका जो अङ्ग हमारे हृदयमें अङ्कित नहीं होता है, हमारी पर-आत्माका वही अङ्ग अज्ञानरूपी नींदमें निमग्न रहता है ऐसा समझना चाहिए. जब श्रीराजजीका अङ्ग हृदयमें अङ्कित होगा तभी पर-आत्माके उस अङ्गमें चेतना आ जाएगी.

कट पेट पांसे हक के, पीठ खभे कांध केस ।
ए दिलमें जब ढूढ़ हुए, तब रुह आया देखो आवेस ॥ ३३

श्रीराजजीका कटि प्रदेश, उदर, पसलियाँ, पृष्ठभाग, स्कन्ध प्रदेश तथा सुन्दर कुन्तल (केश) की शोभा जब हृदयमें ढूढ़ हो जाती है तब आत्मामें आया हुआ श्रीराजजीका आवेश स्पष्ट दिखाई देगा.

बाजू मछे कोनियां, कांडे कलाइयां हाथ ।
हक के अंग हिरदे आए, तब रुह खड़ी हुई हक साथ ॥ ३४

श्रीराजजीकी भुजाएँ, कोहनी, काँडा, कलाई एवं हस्त कमल आदि अङ्गोंकी छवि हृदयमें जब अङ्कित हो जाती है उसी समय पर-आत्मा जागृत होकर श्रीराजजीके सम्मुख खड़ी हो जाएगी.

पोहोंचे हथेली अंगुरी नख, लीके रंग सलूक ।
हक अंग मीहीं हिरदे बैठे, अब निमख न होए रुह चूक ॥ ३५

इसी प्रकार पहुँचा, हथेली, अङ्गुलियाँ, नख, हथेलीकी रेखाएँ तथा हस्तकमलकी सुन्दर शोभा हृदयमें अङ्कित हो जाएगी, उसी समय पर-आत्मा जागृत हो जाएगी. इसमें लेशमात्र भी ढील नहीं होगी.

नख अंगूठे अंगुरियां, नीके ग्रहिए हक कदम ।

सोई नख अंगुरियां पांउ रुह के, खडे होत माहें दम ॥ ३६

इसी प्रकार श्रीराजजीके श्रीचरणोंके नख, अंगूठे तथा अङ्गुलियोंकी अनुपम शोभा हृदयमें ग्रहण करेंगे तो पर-आत्माके ये सभी अङ्ग उसी क्षण जागृत हो जाएँगे.

जब हक चरन दिल दृढ धरे, तब रुह खडी हुई जान ।

हक अंग सब हिरदे आए, तब रुह जागे अंग परवान ॥ ३७

जब हृदयमें श्रीराजजीके श्रीचरणोंको दृढ़ता पूर्वक धारण करेंगे, तब पर-आत्मा जागृत हो गई है ऐसा समझना चाहिए. इस प्रकार श्रीराजजीके सभी अङ्ग जब हृदयमें आ जाएँगे तब आत्मा निश्चय ही जागृत हो जाएगी.

मोहोरी चूड़ी इजार की, और नेफा इजार बंध ।

हरे रंग बूटी कै नकस, हकें सोभित भली सनंध ॥ ३८

श्रीराजजीकी चूड़ीदार इजारकी मोहरी पर सुशोभित चूड़ी, नेफा, इजारबन्द तथा इसमें चित्रित हरे रङ्गके छोटे-छोटे फूल आदि अत्यन्त सुशोभित हैं.

क्यों कहूं जुगत जामें की, हरे पर उजल दावन ।

निपट सोभित मीहीं बेलियां, झाँई उठत अति रोसन ॥ ३९

हरित रङ्गकी इजार पर सुशोभित उज्ज्वल श्वेत रङ्गके जामाकी शोभा किस प्रकार व्यक्त की जाए ? इसमें बीच-बीचमें सूक्ष्म लताओंकी चित्रकारी है जिनसे देवीप्यमान प्रकाश निकलता है.

एक सेत रंग जामा कह्या, माहें जवेर जुगत कै रंग ।

इन जुबां रोसनी क्यों कहूं, जो झलकत अरस के नंग ॥ ४०

यह जामा श्वेत रङ्गका है, इसमें विभिन्न रङ्गोंके रत्न जड़ायमान हैं. परमधामके इन रत्नोंसे निकली हुई ज्योतिर्मयी किरणोंकी सुन्दर आभा किन शब्दोंमें व्यक्त की जाए ?

बीच पटुका कस्या कमरें, रंग के विध छेडे किनार ।

बेली नक्स फूल केते कहूं, अवकास भर्यो झलकार ॥ ४१

श्रीराजजीने जामाके मध्यभागमें कटि पर कस कर पटुका बाँधा है जिसके पल्ले और किनारी पर विभिन्न रङ्गोंकी छटा सुशोभित है. उसमें चित्रित लताओं तथा फूलोंकी चित्रकारीके विषयमें क्या कहा जाए ? इनकी किरणोंसे सपूर्ण आकाश जगमगाता है.

एक झलकार मुख केहेत हों, माहें कै सलूकी सुखदाए ।

सो गुन गरभित इन जुबां, रंग रोसन क्यों कहे जाए ॥ ४२

यह झलकार तो मैंने अपने मुखसे कहा है किन्तु उसमें और भी अनेक कलात्मक चित्रकारियाँ हैं. उनमें अन्तर्निहित अनेक गुणों तथा उनसे निकले हुए विभिन्न रङ्गके प्रकाशका वर्णन जिहाके द्वारा कैसे करें ?

जामा जुड बैठा अंग पर, कोई अचरज खूबी लेत ।

सोभा सलूकी सुख क्यों कहूं, अंग गौर पर जामा सेत ॥ ४३

श्रीराजजीके अङ्गपर सुशोभित जामा आश्र्य जनक शोभा युक्त है. इसकी संरचनाकी सुखद शोभाका वर्णन कैसे करें, गौर वर्णके अङ्ग पर श्वेत रङ्गका यह जामा अत्यन्त सुशोभित है.

बगलों नक्स केवडे, कंठ बेली दोऊ गिरवान ।

ए जुगत जुबां तो कहे, जो कछू होए इन मान ॥ ४४

इस जामाके पार्श्व भागमें दोनों ओर केवडेके पुष्पोंकी भाँति सुन्दर चित्रकारी है. गलेमें तथा दोनों तनियों पर सुन्दर लताएँ सुशोभित हैं. इसकी अनुपम शोभाका वर्णन तभी हो सकता है जब इसकी कोई उपमा प्राप्त हो.

कटाव कोतकी कांध पीछे, ऊपर फुंदन हारों के ।

रुह जो जागृत अरस की, सुख लेसी बका इत ए ॥ ४५

स्कन्ध प्रदेशके पृष्ठ भागमें केवडेके पुष्पोंकी भाँति सुन्दर चित्रकारी है. उसके ऊपर कण्ठहारके फुँदने सुशोभित हैं. परमधामकी जो आत्मा जागृत हुई होगी वही यहाँ पर इन अखण्ड सुखोंका अनुभव कर सकती है.

बाँहें चूड़ी और मोहोरियां, चूड़ी अचरज जुगत ।
निपट मीहीं मोहोरीय से, चढ़ती चढ़ती सोभित ॥ ४६

जामेकी बाहोंकी मोहरी पर दृश्यमान चुन्नें चूड़ियोंके सदृश आश्र्य जनक
दिखाई देती हैं। मोहरीसे लेकर ऊपर तककी ये चुन्नें उतरोत्तर अधिक शोभा
धारण करती हैं।

आए वस्तर हिरदे हक के, रुह अपने पेहने बनाए ।
तेती खड़ी रुह होत है, जेता दिल में हक अंग आए ॥ ४७

जब श्रीराजजीके इन दिव्य वस्त्रोंकी छवि अपने हृदयमें अङ्गित हो जाती है
तब हमारी पर-आत्मा भी उसीके अनुरूप वस्त्र धारण कर लेती है। हमारे
हृदयमें श्रीराजजीके जितने अङ्ग अङ्गित हो जाते हैं हमारी पर आत्माके उतने
ही अङ्ग जागृत हो जाते हैं।

पांच नंग माहें कलंगी, तामें तीन नंग ऊपर ।
एक मध्य एक लगता, पांच रंग जोत बराबर ॥ ४८

श्रीराजजीके सिर पर सुशोभित पागमें लगी कलङ्गीमें विभिन्न रङ्गोंके पाँच
रत्नों की आभा झलकती हैं। इनमें तीन रत्न ऊपर की ओर हैं, एक मध्यमें
है तथा एक पागके साथ लगता हुआ है। इन पाँचों रत्नोंसे निकले हुए पाँचों
रङ्ग एक समान प्रतीत होते हैं।

ए जो कलंगी सिर पर, लटक रही सुखदाए ।
जो भूषन रुह नजर भरे, तो जानों अरवा देवे उडाए ॥ ४९

पाग पर सुशोभित कलङ्गी लटकती हुई सुखद प्रतीत होती है। यदि आत्मा
इन आभूषणोंको अपने दृष्टिमें स्थापित करेगी तो वह उसीमें मग्न होकर मानों
शरीरको ही छोड़ देगी।

सात नंग माहें दुगदुगी, सो सातों जुदे जुदे रंग ।
चढ़ती जोत आकास में, करत माहों माहें जंग ॥ ५०

इसी पागमें कलङ्गीके नीचे स्थित दुगदुगीमें सात अलग-अलग रङ्गोंके रत्न
सुशोभित हैं। उनकी ज्योतिर्मयी किरणें आकाशमें परस्पर छन्द करती हुई
दिखाई देती हैं।

जो रस कलंगी दुगदुगी, सोई पाग को रस ।
अंग रंग जोत बराबर, ए नंग रस नूर अरस ॥५१

इस कलङ्गीकी दुगदुगीके दर्शनसे जो आनन्द प्राप्त होता है वही आनन्द पागके दर्शनसे होता है. श्रीराजजीके अङ्गोंकी भाँति इन आभूषणोंका रङ्ग भी अत्यन्त सुशोभित है. ये सभी रल परमधामके होनेसे समान तेज एवं आनन्दसे परिपूर्ण हैं.

जो हिरदे आए हक भूषन, जाहेर स्यामाजी के जान ।
कलंगी दुगदुगी राखडी, होत दोऊ परवान ॥५२

इस प्रकार जब श्रीराजजीके आभूषण हृदयमें अङ्कित हो जाएँगे तब श्रीश्यामाजीके आभूषण भी इसी भाँति अङ्कित हो जाएंगे. श्रीराजजीके सिर पर स्थित पागमें कलङ्गी एवं दुगदुगीकी जैसी शोभा है उसी प्रकारकी शोभा श्रीश्यामाजीके सिर पर सुशोभित राखड़ी की है. दोनों एक समान हैं.

दोऊ मुक्ताफल कान के, करडे कंचन बीच लाल ।
साडी किनार सेंथे पर, श्रवन पानडी झाल ॥५३

श्रीश्यामाजीके श्रवण अङ्गोंमें मोतियोंसे जड़ित दो बालियाँ (मुक्ताफल) सुशोभित हैं. स्वर्णमें जड़े हुए इन रलोंके मध्यमें लालिमायुक्त माणिक्य सुशोभित है. उनके सिरके मध्य भाग (माँग)से लगती हुई साड़ीकी किनारी अत्यन्त सुशोभित है. श्रवण-अङ्गोंमें पहनी हुई पानडी (पानके पत्तेके आकारका आभूषण) एवं कर्ण फूल भी सुशोभित हैं.

हक अंग तो मुतलक मारत, पर भूषन लगें ज्यों भाल ।
चितवन जुगल किसोर की, देत कदम नूरजमाल ॥५४

श्री राजजीके दिव्य अङ्गोंकी शोभा निश्चय ही हृदयको घायल कर देती है. उसमें भी उनके आभूषण तो वाणोंकी भाँति चुभ जाते हैं. इन युगल स्वरूपका चिन्तन करनेसे उनके चरण कमल हृदयमें अङ्कित हो जाते हैं.

मुख बीडी आरोगे पान की, लाल सोभे अधुर तंबोल ।
ए रुह दृष्टे जब देखिए, पट हिरदे देत सब खोल ॥५५

जब श्रीराजजी मुखमें पानका बीड़ा धारण करते हैं तो उनका लाल अधरोष

ताम्बूलके कारण और भी अधिक सुशोभित होता है। यह आत्मा इस अनुपम शोभाका दर्शन करती है तो उसके हृदयके द्वार खुल जाते हैं।

कहूं केते भूषन कंठ के, तेज तेज में तेज ।

आसमान जिमी के बीच में, हो गई रोसन रेजा रेज ॥ ५६

श्रीराजजीके कण्ठमें सुशोभित आभूषणोंकी शोभा किन शब्दोंमें व्यक्त की जाए। ये तो एक दूसरे से अधिक तेजोमय हैं। इनके प्रकाशसे आकाश और भूमिके प्रत्येक कण जगमगाने लगते हैं।

हार कै जवेन के, कहूं केते तिनके रंग ।

कै लेहें माहें उठत, ए तो अरस अजीम के नंग ॥ ५७

श्रीराजजीके कण्ठमें विभिन्न रत्नोंके कण्ठहार सुशोभित हैं। उनके रङ्गोंका वर्णन कैसे करें? उन रङ्गोंसे अनेक तरङ्गें उठती हैं क्योंकि ये तो परमधामके रत्न हैं।

एक एक नंगमें कै रंग, रंग रंग में तरंग अपार ।

तरंग तरंग किरने कै, हर किरने रंग न सुमार ॥ ५८

प्रत्येक रत्नमें अनेक रङ्गोंकी आभा झलकती है एवं एक-एक रङ्गमें असंख्य तरङ्गें उठती हैं। प्रत्येक तरङ्गसे अनेक प्रकारकी किरणें विकेन्द्रित होती हैं और प्रत्येक किरणमें अनन्त रङ्ग झलकते हैं।

जामें चादर जुड रही, ढांपत नहीं झलकार ।

गिनती जोत क्यों कर होए, नंग तेज ना रंग पार ॥ ५९

श्रीराजजीने अपने अङ्ग पर धारण किए हुए जामे पर सुन्दर चादर सुशोभित है। इसमें जामाकी सुन्दरता स्पष्ट दिखाई देती है। इसमें जड़ायमान रत्नोंके विभिन्न रङ्ग इनसे निकलती हुई ज्योतिर्मयी किरणोंका कोई पारावार नहीं है।

ए रंग जोत किन विध कहूं, जो ले देखो अरस सहूर ।

सोभा रंग सलूकी सुख, देखो रूह की आंखों जहूर ॥ ६०

इन रङ्गोंकी ज्योतिका वर्णन कैसे करें, जागृत बुद्धिके द्वारा ही इन्हें हृदयङ्गम

किया जा सकता है। इनकी सुन्दर संरचना एवं सुखदायी रङ्गोंकी शोभा आत्मदृष्टिसे ही गोचर होती है।

भूषन हक श्रवन के, और हक कंठ कै हार ।

सोई कंठ श्रवन रुह के, साज खडे सिनगार ॥ ६१

श्रीराजजीके श्रवण-अङ्गके आभूषण तथा कण्ठमें सुशोभित अनेक कण्ठाहारोंकी छवि हृदयमें अङ्कित होने पर पर-आत्माके कण्ठ तथा श्रवण अङ्ग उसीके अनुरूप शृङ्गार धारण कर सुसज्जित हो जाते हैं।

सोभा जुगल किशोर की, दोऊ होत बराबर ।

जो हिरदे सो बाहर, दोऊ खडे होत सरभर ॥ ६२

इस प्रकार युगल स्वरूप श्रीराजश्यामाजीकी शोभा एक समान प्रतीत होती है। वह दिव्य शोभा जैसे बाहर दिखाई देती है उसी प्रकार हृदयमें अङ्कित होती है। इस प्रकार दोनों स्वरूपोंकी शोभा हृदयमें समान रूपसे अङ्कित होती है।

बाजूबंध और पोहोचियां, कडे जवेर कंचन ।

नंग रंग नाम केते कहूं, कही जाए न जरा रोसन ॥ ६३

इहोंने धारण किए हुए भुजबन्ध, पहुँची, कड़ा तथा कञ्चन एवं रत्नमय आभूषणोंके रङ्गोंके नाम कहाँ तक लिए जाएँ? उनकी ज्योतिर्मयी आभाका लेशमात्र भी वर्णन नहीं हो सकता है।

मुंदरियां दसों अंगुरियों, एक छोटी की न केहेवाए जोत ।

अरस जिमी आकास में, हो जात सबे उदोत ॥ ६४

उनकी दसों अङ्गुलियोंमें मुद्रिकाएँ सुशोभित हैं। उनमें-से एक छोटी-सी मुद्रिकाकी ज्योतिका भी वर्णन नहीं हो सकता है। क्योंकि यह ज्योति परमधारमें भूमिसे लेकर आकाश तक व्यास होती है।

हक के भूषन की क्यों कहूं, रंग नंग जोत सलूक ।

आत्म उठ खडी तब होवही, पेहले जीव होए भूक भूक ॥ ६५

इस प्रकार श्रीराजजीके आभूषणोंके रत्नोंके रङ्ग, उनकी ज्योति तथा

संरचनाके विषयमें क्या कहा जाए ? यह जीव जब इनके ऊपर समर्पित हो जाता है तब आत्मा जागृत होकर खड़ी हो जाती है.

रुह भूषन हाथ के, हक भेलें होते तैयार ।

ए सोभा जुगल किसोर की, जुबां केहे न सके सुमार ॥ ६६

श्रीराजजीके आभूषणोंके साथ साथ श्रीश्यामाजीके करकमलोंके आभूषण भी सुसज्जित होकर शोभायमान होते हैं. इस प्रकार युगल स्वरूप श्रीराजश्यामाजीकी अपार शोभाका वर्णन जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकता है.

चारों जोडे चरन भूषन, रंग चारों में उठें हजार ।

ए वरनन जुबां तो करे, जो कछुए होए निरवार ॥ ६७

इन युगलचरणोंके चारों आभूषणों (झाँझरी, बुँधुरु, काँवी, कड़ा) से हजारों रङ्गोंकी तरङ्गें उठती हैं. इस अनन्त सौन्दर्यका वर्णन जिह्वाके द्वारा तभी हो सकता है जब इसकी कोई सीमा हो.

वस्तर भूषन हक के, आए हिरदे ज्यों कर ।

त्यों सोभा सहित आत्मा, उठ खड़ी हुई बराबर ॥ ६८

इस प्रकार श्रीराजजीके दिव्य वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभा जैसे ही हृदयमें अङ्कित हो जाती है उसी समय हमारी पर-आत्मा इन सभी शोभाओंसे युक्त होकर जागृत हो जाती है.

सुपने सूरत पूरन, रुह हिरदे आई सुभान ।

तब निज सूरत रुह की, उठ बैठी परवान ॥ ६९

इस आत्माने धारण किए हुए स्वप्नके शरीरके हृदयमें जब परमधामकी यह शोभा पूर्णरूपसे अङ्कित हो जाती है तब इस सुरतारूप आत्माकी पर-आत्मा निश्चय ही जागृत होकर बैठ जाएगी.

जब पूरन सरूप हक का, आए बैठा माहें दिल ।

तब सोई अंग आत्म के, उठ खड़े सब मिल ॥ ७०

जब श्रीराजजीका पूर्ण स्वरूप हृदयमें अङ्कित हो जाएगा, तब पर-आत्माके वे सभी अङ्ग उसी समय जागृत हो जाएँगे.

बस्तर भूषन सब अंगों, कंठ श्रवन हाथ पाए ।

नख सिख सिनगार साज के, बैठे अरस दिल में आए ॥ ७१

इस प्रकार कण्ठ, श्रवण-अङ्ग, हस्तकमल, चरणारविन्द आदि सभी अङ्गोंमें नखसे लेकर शिखा तक पूर्ण शृङ्खार सुसज्जित कर श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके हृदयधाममें आकर विराजमान हो गए हैं।

जब बैठे हक दिल में, तब रुह खड़ी हुई जान ।

हक आए दिल अरस में, रुह जागे के एह निसान ॥ ७२

जब श्रीराजजी हृदयरूपी धाममें विराजमान हो जाते हैं तब आत्मा जागृत हो गई है ऐसा समझना चाहिए। इस प्रकार ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्री राजजीका पदार्पण होना ही आत्म जागृतिका लक्षण है।

हक के दिल का इसक, रुह पैठ देखे दिल माहें ।

तो हक इसक सागर से, रुह निकस न सके कहें ॥ ७३

जब ब्रह्मात्मा श्रीराजजीके हृदयमें प्रवेशकर उनके प्रेममें निमग्न हो जाती है तब वह इस प्रेमके सागरसे कभी भी बाहर नहीं निकल सकती।

जो हक करें मेहरबानगी, तो इन विध होए हुकम ।

एता बल रुह तब करे, जब उठाया चाहें खसम ॥ ७४

जब श्रीराजजीकी अपार कृपा होती है तभी उनके आदेशसे यह स्थिति उत्पन्न होती है। आत्मा इतना प्रयत्न भी तभी कर सकती है जब श्रीराजजी उसे जागृत करना चाहते हैं।

महामत हुकमें केहेत हैं, जो होवे अरस अरवाए ।

रुह जागे का एह उदम, तो ले हुकम सिर चढाए ॥ ७५

महामति श्रीराजजीके आदेशसे कहते हैं, जो परमधामकी आत्माएँ होंगी उनके लिए जागृत होनेका यही उपाय है। इसलिए श्रीराजजीके आदेशको शिरोधार्य करें।

चरन को अंग तिन में नख

सखी री तेज भर्यो आकास लों, नख जोत निकसी चीर ।
ज्यों सागर छेद के आवत, नेहर निरमल का नीर ॥ १

हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीके चरणकमलके नखकी ज्योति परमधामके देदीप्यमान आकाशको चीरती हुई उसी प्रकार आगे बढ़ती है जिस प्रकार गहरे नीले सागरको चीरती हुई निर्मल जलकी स्वच्छ (धवल) धारा बहती है.

रंग केते कहूं चरन के, आवें न माहें सुमार ।
याही वास्ते खेल देखाईया, रुह देखसी देखनहार ॥ २

इन चरण कमलोंसे उठती हुई किरणोंके रङ्गका वर्णन कहाँ तक करें, वे शब्दोंकी सीमामें नहीं आ सकते. श्रीराजजीने इसीलिए इस खेलकी रचना की है कि इसे देखनेवाली ब्रह्मात्माएँ ही इन चरणोंकी यह विशेषता समझ सकें.

प्यारे पांऊ मेरे मेहेबूब के, देख नख अंगूठे अंगुरियों ।
सो बैठे बीच दिल तखत के, तो अरस कहा मेरे दिल कों ॥ ३

मेरे प्रियतम धनीके अत्यन्त प्रिय चरण कमलके अङ्गुष्ठ तथा अङ्गुलियोंके नखकी शोभाको तो देखो, ये कितने सुन्दर हैं. स्वयं श्रीराजजी मेरे हृदयरूपी सिंहासनमें विराजमान हैं इसीलिए मेरे हृदयको परमधाम कहा गया है.

दो अंगूठे आठ अंगुरी, नख सोभित तिन पर ।
नख लगते सिर अंगुरी, ए जोत कहूं क्यों कर ॥ ४

श्रीराजजीके इन चरणोंमें दो अङ्गुष्ठ तथा आठ अङ्गुलियोंके अग्रभाग पर सुशोभित सुन्दर नखोंकी ज्योतिका वर्णन कैसे किया जाए ?

चरन अंगूठें पतले, और पतली अंगुरियाँ ।
लाल रंग माहें सोभित, अतंत उजलियाँ ॥ ५

इन श्रीचरणोंके अङ्गुष्ठ तथा अङ्गुलियाँ पतली हैं. लालिमायुक्त ये अङ्गुलियाँ अत्यन्त उज्ज्वल शोभायमान हैं.

देख्यूं एक एक अंगुरी, आठों अंगुरी दोऊ पाए ।
कोमल सलूकी मिल रही, ए छब फब कही न जाए ॥ ६
मैं इन एक एक अङ्गुलियोंके दर्शन करता हूँ तो दोनों चरणोंकी आठों
अङ्गुलियोंकी संरचना अत्यन्त सुन्दर तथा सुकोमल लगती हैं. इस सुन्दर
छविकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती.

दोऊ पांउ बड़ी दो अंगुरी, अंगूठों बराबर ।
तिन थ्रें तीन उतरती, लगती कोमल सुन्दर ॥ ७

इन दोनों चरण कमलोंकी दो अङ्गुलियाँ शेष अङ्गुलियोंसे थोड़ी सी बड़ी
हैं और लम्बाईमें अंगूठेके समान सुशोभित हैं. शेष तीनों अङ्गुलियाँ
क्रमशः छोटी होती हुई चली गई हैं. सभीकी सुकोमलता तथा सुन्दरता
अद्वितीय है.

झलकत नूर बराबर, ऊपर अंगुरियों नख ।
सोभा सलूकी नख जोत की, जुबां कहे न सके इन मुख ॥ ८

इन अङ्गुलियोंके नखों से एक समान ज्योतिर्मयी आभा निकलती है. इन
नखोंकी संरचना तथा इनसे निकलती हुई ज्योतिकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त
नहीं हो सकती.

अतंत जोत नखन की, ताको क्यों कर कहूँ प्रकास ।
केहे केहे मुख एता कहे, जोत पोहोंची जाए आकास ॥ ९

इन नखोंकी ज्योति अत्यन्त प्रखर है, उसका वर्णन कैसे किया जाए ? मेरी
जिहासे इतना ही कहा जा सकता है कि यह ज्योति पूरे आकाशमें व्यास हो
जाती है.

जो सुन्दरता अंगुरियों, और सुन्दरता नख जोत ।
ए सोभा न आवे सबद में, केहे केहे कहूँ उदोत ॥ १०

इन अङ्गुलियोंकी सुन्दरता तथा उनके नखोंकी ज्योतिकी सुन्दरताकी शोभा
शब्दोंकी सीमामें नहीं आती है.

तेज जोत कछू और है, सोभा सुन्दरता कछू और ।

पर ए अंग नूरजमाल के, याको नहीं निमूना ठौर ॥ ११

जब भी देखते हैं इन नखोंका तेज, ज्योति तथा इनकी सुन्दरताकी शोभा
सर्वदा विलक्षण दिखाई देती हैं. वस्तुतः ये अङ्ग अक्षरातीत धामधनीके हैं
इसलिए इनके लिए यहाँ पर कोई उदाहरण नहीं दिया जा सकता है.

जोत में एकै रोसनी, सोभा सुंदर गुन अनेक ।

सोभा रंग रोसन नरमाई, रस मीठे कै विवेक ॥ १२

यद्यपि इनकी ज्योतिमें एक ही प्रकारका प्रकाश दिखाई देता है परन्तु उनकी
शोभा, सुन्दरता तथा गुण अनेक हैं. इस दिव्य प्रकाशमें इन अङ्गोंकी शोभा,
सुकोमलता तथा मधुरताका अनुभव किया जा सकता है.

सोभा माहें सलूकियां, और खुसबोए सुखदाए ।

सुख प्रेम कै खुसालियां, इन जुबां कही न जाए ॥ १३

इस शोभामें सुन्दर संरचना तथा सुखदायी सुगन्ध झलकती है. इससे प्राप्त
होने वाले सुख, प्रेम तथा प्रसन्नताका वर्णन नहीं हो सकता है.

अरस बातें सुख बारीक, सुपन बानी न आवे सोए ।

कछुक जाने रुह अरस की, जो बेसक जागी होए ॥ १४

परमधामके इन अङ्गोंसे प्राप्त होने वाला सुख अत्यन्त सूक्ष्म होता है. वह
स्वप्नके शब्दोंकी सीमामें नहीं आ सकता. जो ब्रह्म आत्मा निश्चय ही जागृत
हो गई है वही इसका थोड़ा-सा अनुभव कर सकती है.

महामत कहे हक हुकमें, ऐसा सुख न दूजा कोए ।

पांउ मासूक के आसिक, पिवत रस धोए धोए ॥ १५

महामति श्रीराजजीके आदेशसे कहते हैं, इन चरण कमलोंके अतिरिक्त अन्यत्र
कहीं भी ऐसा परमसुख प्राप्त नहीं हो सकता है. इसलिए अनुरागिनी आत्माएँ
अपने प्रियतम धनीके इन चरणोंको धो-धोकर चरणामृतका पान करतीं हैं.

चरन हक मासूक के उपली सोभा

फेर फेर चरन को निरखिए, रुह को एही लागी रट ।

हक कदम हिरदे आए, तब खुल गए अन्तर पट ॥ १

मेरी आत्माको श्रीराजजीके चरणकमलोंको बार-बार देखनेकी चाहना लगी है. जब उनके चरणकमल हृदयमें अङ्कित हो जाएँगे तब हृदयका आवरण दूर हो जाएगा.

गुन केते कहूँ इन चरन के, आवें न माहें सुमार ।

याही वास्ते खेल देखाइया, रुह देखसी देखनहार ॥ २

इन चरणोंके गुणोंका वर्णन कहाँ तक करें, इनकी कोई सीमा ही नहीं है. इस खेलकी रचना भी इसीलिए की गई है कि इसे देखनेवाली ब्रह्मात्माएँ इन गुणोंको ग्रहण कर सकेंगी.

वरनन करत हों चरन की, अरस सूरत हक जात ।

ए नेक कहूँ हक हुकमें, सोभा सबद न इत समात ॥ ३

मैं श्रीराजजीके उन चरणकमलोंका वर्णन करता हूँ जो दिव्य परमधारमें शोभायुक्त हैं. उनकी ही आज्ञासे यहाँ पर उनकी शोभाका लेशमात्र वर्णन कर रहा हूँ क्योंकि यह शोभा इन शब्दोंमें नहीं समाती है.

कदम तली अति उजल, निपट नरम रंग लाल ।

रुहें आसिक इन कदम की, ए कदम छूटें ना नूरजमाल ॥ ४

श्रीराजजीके चरणतल अत्यन्त उज्ज्वल, सुकोमल तथा लालिमायुक्त हैं. अनुरागिनी आत्माएँ अपने प्रियतम धनीके इन चरणोंको कभी भी नहीं छोड़ती हैं.

कही सूछम सूरत अमरद की, ए कदम भी तिन माफक ।

रस रंग सोभा सलूकी, देख अरस सहूरें हक ॥ ५

श्रीराजजीके स्वरूपका सूक्ष्मरूपसे वर्णन करते हुए उन्हें किशोर स्वरूप कहा गया है. उनके चरण कमल भी उसी स्वरूपके अनुरूप हैं. ब्रह्मात्माएँ जागृत बुद्धिके द्वारा सुन्दर शोभायुक्त इन चरणकमलोंसे प्राप्त आनन्दका अनुभव कर सकती हैं.

लांक सलूकी दोऊ कदम की, लाल एडी निपट नरम ।

गौर रंग रस भरे, जुबां क्या कहे सिफत कदम ॥ ६

इन दोनों चरणोंके चरण-तलकी गहराई तथा एड़ियाँ लालिमायुक्त, अति सुन्दर तथा सुकोमल हैं। गौरवर्णके ये चरण कमल आनन्द रससे परिपूर्ण हैं। यह जिह्वा इनकी महिमाका गुणगान कैसे कर पाएगी ?

सलूकी कदम तलीय की, ऊपर सलूकी और ।

छबि हक कदम की क्यों कहूं, ए जो जुबां इन ठौर ॥ ७

चरणतलकी तथा ऊपरकी सुन्दर संरचना अति अद्वितीय है। इस प्रकार इन चरणोंकी शोभा नश्वर जगतमें बैठकर यहाँकी जिह्वा द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती है।

हक हादी रूहें निसबत, ए अरस की वाहेदत ।

जो रूह होवे अरस की, सो क्यों छोडे ए न्यामत ॥ ८

परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंका एकात्मभाव सम्बन्ध है। इसलिए जो आत्मा परमधामकी होगी वह श्रीराजजीके इन चरणरूपी निधिको कैसे छोड़ सकेगी ?

ए कदम तालें मोमिन के, लिखी जो निसबत ।

तो आठों जाम रूह अटकी, बीच अरस खिलवत ॥ ९

इन चरण कमलोंका सौभाग्य ब्रह्मात्माओंको ही प्राप्त है क्योंकि इनके साथ ही इनका सम्बन्ध है। इसलिए परमधाम मूलमिलावामें आठों प्रहर ब्रह्मात्माकी दृष्टि इन्हीं चरणोंमें स्थिर रहती है।

लग रहे हक कदम को, सोई रूह अरस की ।

ए रस अमृत अरस का, कोई और न सके पी ॥ १०

जिन आत्माओंकी दृष्टि श्रीराजजीके चरणोंमें ही रहती है वे ही परमधामकी आत्माएँ हैं। इसलिए इनके अतिरिक्त अन्य कोई भी इन चरणोंके अमृतरसका पान नहीं कर सकता।

जो कोई अरवा अरस की, हक कदम तिन जीवन ।
सो जीव जीवन बिना क्यों रहे, जाके असल अरस में तन ॥ ११

जो आत्मा परमधामकी होगी उसके जीवन ही ये चरण कमल हैं. इसलिए
जिसकी पर-आत्मा परमधाममें विराजमान है वह आत्मा अपने जीवन
स्वरूप इन चरणोंके बिना कैसे रह सकती है ?

हकें अरस कह्या अपना, जो अरस दिल मोमिन ।
सो मोमिन उतरे अरस से, है असल निसबत तिन ॥ १२

स्वयं श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना परमधाम कहा है. ये
ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधामसे इस नश्वर जगतमें अवतरित हुई हैं. इनका
वास्तविक सम्बन्ध श्रीराजजीके इन श्रीचरणोंसे है.

ए जो मोमिन उतरे अरस से, अरस कह्या दिल जिन ।
हक कदम हमेसा अरस में, एक दम छोड़ें ना मोमिन ॥ १३

जो ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं. उनके ही हृदयको परमधाम कहा
गया है. श्रीराजजीके चरण कमल तो सर्वदा परमधाममें ही होते हैं. इसलिए
ये ब्रह्मात्माएँ इन चरणोंको कदापि नहीं छोड़ सकतीं हैं.

हकें तो कह्या अरस दिल को, जो इनों असल अरस में तन ।
हक कदम छूटे दिल से, ताए क्यों कहिए मोमिन ॥ १४

श्रीराजजीने इनके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि इनकी पर-आत्मा
परमधाममें हैं. यदि किसीके हृदयसे श्रीराजजीके चरण कमल छूट जाएँ तो
उनको ब्रह्म आत्मा कैसे कहा जाए ?

हक कदम मोमिन दिल में, और कदम रुह हिरदे ।
ए कदम नैन पुतली मिने, और रुह फिरत सिर पर ले ॥ १५

श्रीराजजीके चरण कमल ब्रह्मात्माओंके हृदयमें हैं, वह भी आत्माके हृदयमें
हैं. इसलिए ब्रह्मात्माएँ इन चरणोंको अपने नयनोंकी पुतलीमें स्थापित कर
जगतमें विचरण करतीं हैं.

हकें बैठक कही अपनी, दिल मोमिन का जे ।

जिन दिल हक आए नहीं, सो दिल मोमिन कहिए क्यों ए ॥ १६

श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना विश्राम स्थल कहा है. किन्तु जिस हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप ही अङ्कित नहीं है वह हृदय कैसे ब्रह्मात्माओंका हो सकता है ?

आसमान जिमी के लोक का, सबद छोडे ना सुरैया कों ।

बिन मोमिन सब दुनियां, खात गोते फना मों ॥ १७

इस जगतके सभी शब्द शून्य निराकार तथा ज्योतिस्वरूपको छोड़कर आगे नहीं गए हैं. क्योंकि ब्रह्मात्माओंके बिना ये सभी जीव नश्वर जगतमें ही गोते खा रहे हैं.

सुरैया पर ला मकान है, तिन पर नूर अरस ।

अरस पर अरस अजीम, पोहोंचे मोमिन इत सरस ॥ १८

ज्योति स्वरूपसे परे शून्य निराकार है, उससे परे अक्षरब्रह्मका अधिष्ठान अक्षरधाम है एवं उससे भी परे दिव्य परमधाम है. ब्रह्मात्माएँ ही वहाँ पर आनन्द पूर्वक पहुँचती हैं.

अरस दिल मोमिन तो कहा, अरस बका सुध मोमिनों में ।

चौदे तबकों गम नहीं, मोमिन आए हक कदमों सें ॥ १९

इन ब्रह्मात्माओंको इसीलिए धामहृदया कहा है कि इनको अखण्ड परमधामकी सुधि है. इन चौदह लोकोंमें किसीको भी इस दिव्य परमधामकी सुधि नहीं है. ऐसे दिव्य परमधाममें श्रीराजजीके चरणोंमें बैठी हुई ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें (सुरता रूपमें) अवतरित हुई हैं.

सोई कहिए मोमिन, जिन दिल हक अरस ।

सो ना मोमिन जिन ना पिया, हक सुराही का रस ॥ २०

वास्तवमें ब्रह्मात्मा कहलानेकी अधिकारिणी वही आत्मा है, जिसका हृदय श्रीराजजीका परमधाम है. जिसने श्रीराजजीकी प्रेम सुधाका पान नहीं किया है उसे ब्रह्मात्मा नहीं कहा जा सकता.

हकें दिल को अरस तो कहा, करने मोमिन पेहचान ।
कहे मोमिन उतरे अरस से, तन अरस एही निसान ॥ २१

श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंकी पहचान के लिए ही उनके हृदयको अपना परमधाम कहा है. ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं एवं इनकी पर-आत्माएँ परमधाममें हैं. यही इनकी पहचान है.

रुहें उतरीं अपने तनसे, और कहा उतरे अरस सें ।
तन दिल अरस एक किए, हकें कदम धरे दिल में ॥ २२

वस्तुतः ब्रह्मात्माओंकी सुरता उनकी पर-आत्मासे अवतरित हुई हैं तथापि यह कहा गया है कि वे परमधामसे अवतरित हुई हैं. इन्हीं ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अपने चरणकमल रखकर धामधनीने परमधाम और इनके हृदयको एक बना दिया है.

ए निसबत असल अरस की, हकें जाहेर तो करी ।
दिल मोमिन अरस तो कहा, जो रुहें दरगाह से उतरी ॥ २३

ब्रह्मात्माओंका सम्बन्ध मूलतः परमधामसे ही है, इसलिए स्वयं श्रीराजजीने ही इसे यहाँ पर प्रकट किया है. इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा गया है कि वे परमधामसे ही इस जगतमें अवतरित हुई हैं.

ख्वाब वजूद दिल मोमिन, हकें कहा अरस सोए ।
अरस तन मोमिन दिलसे, ए केहेने को हैं दोए ॥ २४

ब्रह्म आत्माओंके स्वप्नके शरीरके हृदयको श्रीराजजीने अपना परमधाम कहा है. वस्तुतः उनकी पर-आत्मा तथा इस स्वप्नके शरीरका हृदय कहने मात्रके लिए दो हैं, मूलतः एक ही हैं.

मोमिन असल तन अरस में, और दिल ख्वाब देखत ।
असल तन इन दिलसे, एक जरा न तफावत ॥ २५

ब्रह्मात्माओंका मूल तन (पर-आत्मा) परमधाममें है और उसीका हृदय यह स्वप्न देख रहा है. इसीलिए मूल तन एवं स्वप्नके तनके हृदयमें लेशमात्र भी अन्तर नहीं है.

तो हक सेहरग से नजीक, ए विध जाने मोमन ।

अरस दिल मोमिन तो कह्या, जो निसबत अरस तन ॥ २६

इसीलिए श्रीराजजीको प्राणनलीसे भी निकट कहा गया है. इस रहस्यको ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं. इन ब्रह्मात्माओंको धामहृदया इसीलिए कहा है कि इनका सम्बन्ध परमधामके मूल तन (पर-आत्मा) से है.

ए बारीक बातें अरस की, ए मोमिन जाने हक सहूर ।

तो हक कदम दिल अरस में, हक सहूर से नाहीं दूर ॥ २७

ब्रह्मात्माएँ ही तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामके इस गूढ़ रहस्यको जान सकती हैं. इनके हृदयरूपी धाममें श्रीराजजीके चरणकमल होनेसे वे इनकी सुधिसे दूर नहीं हैं.

ए ख्वाब देखे सो झूठ है, सत सोई जो माहें वतन ।

सांचे बैठे कदम पकड़ के, झूठमें न आए आपन ॥ २८

इस स्वप्नमें जो कुछ दिखाई दे रहा है वह सब मिथ्या है. सत्य तो केवल वही है जो परमधाममें है. हमारी परआत्मा श्रीराजजीके चरणोंको ग्रहण कर बैठी हुई है. इसीलिए हम वास्तवमें इस मिथ्या जगतमें नहीं आए हैं.

ए विचार देखो मोमिनों, हक देखावें अपने सहूर ।

इन दिल को अरस तो कह्या, जो कदम नहीं आपन से दूर ॥ २९

हे ब्रह्मात्माओ ! विचार पूर्वक देखो, श्रीराजजी अपना ज्ञान देकर तुम्हें यह खेल दिखा रहे हैं. उनके चरण कमल हमारी पर आत्मासे दूर नहीं हैं इसलिए उन्होंने हमारे हृदयको परमधाम कहा है.

जो रूह देखे लांक लीकको, तो रूह तितहीं रहे लाग ।

अरस रूहों को इन लीक बिना, सुख दुनियां लागे आग ॥ ३०

यदि यह आत्मा श्रीराजजीके चरण तलकी गहराईकी रेखाका दर्शन करती है तो उसकी दृष्टि वहीं पर स्थिर हो जाती है. परमधामकी आत्माओंको इन रेखाओंके बिना संसारके सभी सुख अनितुल्य प्रतीत होते हैं.

एक लीक भी रुहथें न छूटहीं, तो क्यों छूटे तली कोमल ।

अरस रुहें इन लीक बिना, तबहीं जाए जल बल ॥ ३१

जब ये चरण रेखाएँ भी ब्रह्मात्माओंसे नहीं छूटती हैं तो वे इन कोमल चरण तलको कैसे छोड़ सकती हैं ? परमधामकी आत्माएँ इन चरण रेखाओंके बिना स्वयंको तत्काल मिटा देती हैं.

ए कदम तली की जोत से, आसमान जिमी रोसन ।

दिल मोमिन इन कदम बिना, अंग हो जाए सब अग्नि ॥ ३२

इन चरण तलकी ज्योतिसे भूमि तथा आकाश प्रकाशित होते हैं.
ब्रह्मात्माओंका हृदय इन चरणोंके बिना अग्निके समान जलने लगता है.

चकलाई इन कदम की, कदम तली ऊपर सलूक ।

ए फिराक मोमिन ना सहें, सुनते होए टूक टूक ॥ ३३

इन चरणोंके तलकी अथवा ऊपरी भागकी सुन्दरता अत्यन्त शोभायुक्त है.
ब्रह्मात्माओंसे क्षण भरके लिए भी इनका वियोग सहन नहीं होता है अपितु वियोगकी बात सुनते ही उनका हृदय खण्ड-खण्ड हो जाता है.

सोभा कदम तलीय की, और सोभा सलूकी नखन ।

सोभा अंगुरी अंगूठे, क्यों छोड़ें आसिक तन ॥ ३४

अनुरागिनी आत्मा इन चरण तलकी शोभा तथा अङ्गुष्ठ एवं अङ्गुलियोंके नखकी शोभाको कैसे छोड़ सकती है ?

फना टांकन की सलूकी, और छबि घूंटी कांडों ।

अरस रुहें जुदागी ना सहें, जाके असल तन अरस मों ॥ ३५

जिनके मूल तन परमधाममें हैं ऐसी अनुरागिनी आत्माएँ इन चरण कमलोंके पञ्चेकी संरचना, घूंटी तथा कांडाकी सुन्दरताका वियोग क्षण भरके लिए भी सहन नहीं कर सकती हैं.

पीड़ी घूंटन पांऊं माफक, सोभा अति सुंदर ।

ए कदम सुध तिने परे, जो रुह बेधी होए अंदर ॥ ३६

इनकी पिण्डलियाँ तथा घुटने भी चरणोंकी भाँति अत्यन्त सुन्दर सुशोभित

हैं। इन चरणोंकी सुधि उनको ही हो सकती है जिनके अन्तरहृदयमें ये चरण अङ्कित हो गए हैं।

विचार तो भी याही को, रूह नजर तो भी ए।

जो रूह इन कदम की, रहे तले कदम्ये के ॥ ३७

जो आत्माएँ सर्वदा इन चरणोंके आश्रयमें रहती हैं उनके विचार, चिन्तन इन्हीं चरणोंमें केन्द्रित रहते हैं। इतना ही नहीं उनकी दृष्टिमें भी इनकी छवि समाई हुई होती है।

हाथों कदम न छोड़हीं, रूह हिरदे माहें लेत।

हक कदम खैंचें रूह को, सब अंगों समेत ॥ ३८

ये चरण कमल ब्रह्मात्माओंके हाथोंसे छुटते ही नहीं हैं, वे तो इनको अपने हृदयमें बसा लेती हैं। श्रीराजजीके ये चरण ब्रह्मात्माओंको सम्पूर्ण अङ्गों सहित अपनी ओर खींच लेते हैं।

जेते अंग आसिक के, सो सब कदमों लगत।

ए गति सोई जानहीं, जिन रूह अंग खैंचत ॥ ३९

अनुरागिनी आत्माओंके सभी अङ्ग श्रीराजजीके चरणोंमें ही समर्पित हो जाते हैं। इस वास्तविकता को वे ही आत्माएँ जान सकती हैं जिनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग उन चरणोंकी ओर खींच जाते हैं।

कै गुन हक कदम में, सब गुन खैंचें रूहकों।

मासूक गुङ्ग सोई जानहीं, आए लगी जिनसों ॥ ४०

श्रीराजजीके चरण कमलोंमें अनेक प्रकारके गुण विद्यमान हैं। ये सभी गुण ब्रह्मात्माओंको अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। वे ही आत्माएँ श्रीराजजीकी गूढ़ लीलाओंको जान सकती हैं जो इन चरणोंकी ओर आकृष्ट होती हैं।

पांत पीडी घूटन की, जो चकलाई सोभा ए।

जेते अंग आसिक के, तिन सब अंगों देत घाए ॥ ४१

श्रीराजजीके चरणोंकी पिण्डलियों तथा घुटनोंकी अतिसुन्दर शोभा अनुरागिनी आत्माओंके अङ्ग प्रत्यङ्गोंको विदीर्ण (घायल) कर देती है।

क्यों कहूं पीड़ीय की, सलूकी सुख जोर ।
ए सुख सब रगन को, और देत कलेजा तोर ॥ ४२

इन पिण्डलियोंके विषयमें क्या कहा जाए, इनकी अपार सुन्दरताका सुख हृदयके नस-नसको छिन्न-भिन्न कर देता है.

घाव लगत टूटत रगा, इन विधि रेहेत जो याद ।
मासूक मारत आसिकको, अरस अंग चरन स्वाद ॥ ४३

इन नसोंके छिन्न-भिन्न होनेसे हृदय घायल हो जाता है. इस प्रकार इनकी स्मृति बनी रहती है. प्रियतम धनी अपनी अनुरागिनी आत्माओंके हृदयको घायल कर उन्हें अपने चरणोंके सुखका आस्वादन करवाते हैं.

ए कदम देखे रुह फेर फेर, तली लांक या ऊपर ।
दिल मोमिन अरस कहा, सो या कदमों की खातर ॥ ४४

ब्रह्मात्मा एँ इन श्रीचरणोंके चरणतल या ऊपरी भागके वारंवार दर्शन करती हैं. इन्हीं चरणोंके कारण ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा गया है.

हक कदम अरस दिलमें, सो दिल मोमिन हुआ जल ।
अरवा मोमिन जीव जलके, सो रुह जल बिन रहे न पल ॥ ४५

श्रीराजजीके चरण कमल ब्रह्मात्माओंके हृदयधाम में होनेसे उनके हृदयको जलके समान माना गया है. ब्रह्मात्मा एँ जलके जीवोंके समान हैं. इसलिए वे पल भरके लिए भी जलके बिना नहीं रह सकती हैं.

ए बेली फूल रुह मोमिन, सो बेल भई हक चरन ।
बेल जुदागी फूल क्यों सहे, यों कदम बिना रहें ना मोमन ॥ ४६

ब्रह्मात्मा एँ लताओंमें लगे पुष्पोंके समान हैं तो श्रीराजजीके चरण लताके समान हैं. इसलिए ये पुष्प लताओंका वियोग कैसे सहन कर सकते. इसी प्रकार ब्रह्मात्मा एँ भी इन श्रीचरणोंके बिना नहीं रह सकतीं.

जब देखूं कदम रंग को, जानों एही सुख सागर ।
जब देखूं याकी सलूकी, आड़ी निमख न आवे नजर ॥ ४७

श्रीराजजीके इन चरणोंके रङ्गके दर्शन होते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानों

यही सुखोंका सागर है. जब इनकी सुन्दर संरचनाके दर्शन होते हैं तो उनकी छवि क्षण भरके लिए भी दृष्टिसे दूर नहीं होती है.

जो आड़ी आवे पलक, तो जानें बीच पड़ो ब्रह्मांड ।

ए निसबत हक वाहेदत, जो अरस दिल अखंड ॥ ४८

दर्शन करते समय यदि नयनोंकी पलकें झपक जाती हैं तो ऐसा आभास होता है मानो ब्रह्माण्ड ही व्यवधान बनकर आ गया है. ब्रह्मात्माओंका श्रीराजजीके साथ इस प्रकारका अद्वैत सम्बन्ध है क्योंकि इनका हृदय ही अखण्ड धाम है.

ए कदम ताले मोमिन के, सो मोमिन हक चरन ।

तो अरस कह्या दिल मोमिन, जो रूहें असल अरस में तन ॥ ४९

इन दिव्य चरण कमलोंका सौभाग्य ब्रह्मात्माओंको प्राप्त है. वस्तुतः ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके ही चरणोंके अङ्ग हैं. ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है क्योंकि उनका मूल तन (पर-आत्मा) परमधाममें विराजमान है.

सुन्दरता इन कदम की, सो चूभ रही रूह के दिल ।

अरस परस ऐसी हुई, एक निमख न सके निकल ॥ ५०

इन श्रीचरणोंकी सुन्दरता ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्गित हो गई है. वे इस प्रकार एकाकार हो गई हैं कि इन चरणोंको एक क्षणके लिए भी हृदयसे दूर नहीं कर सकतीं.

चकलाई इन कदम की, सुख सलूकी देत ।

हिरदे जो रूह के चूभत, रूह सोई जाने जो लेत ॥ ५१

इन चरणोंकी अनुपम सुन्दरता अपार सुख प्रदान करती है. जिस आत्माके हृदयमें यह सुन्दरता अङ्गित हो जाती है, वही इनका महत्व समझकर इन्हें ग्रहण करती है.

अति मीठे रसीले रंग भरे, जाको ए चरन मेहेर करत ।

सुख सोई जाने रूह अरस की, जिन दिल दोऊ पांउ धरत ॥ ५२

श्रीराजजीके अत्यन्त मधुर तथा प्रेम रसपूर्ण श्रीचरणोंकी कृपा जिस पर हो

जाती है अर्थात् जिसके हृदयमें श्रीराजजी इन दोनों चरणोंको स्थापित करते हैं वही परमधामकी आत्मा अपार सुखका अनुभव प्राप्त करती है.

सो पल पल ए रस पीवत, फेर फेर प्याले लेत ।

ए अमल क्यों उतरे, जाको हक बका सुख देत ॥ ५३
ऐसी आत्माएँ प्याले भर-भरकर इन चरण कमलोंके रसका पान करती हैं.
जिनको श्रीराजजी अखण्ड सुख प्रदान करते हैं, उनसे यह अमल (मस्ती)
कैसे उतर सकता है ?

ए सुख कायम हकके, जिन दिल एह कदम ।

सोई रुह जाने ए जिन लिया, या जानत एह खसम ॥ ५४

जिनके हृदयमें इन चरणोंकी छवि समा जाती है, उनको श्रीराजजीके अखण्ड^{अनन्द} आनन्दका अनुभव होता है. इस अपार आनन्दको वही आत्मा जानती है
जिसने इसका अनुभव किया है अथवा तो इसे स्वयं श्रीराजजी ही जानते हैं.

कै विधके सुख कदम में, मेहर कर देत मेहरबान ।

तो अरस कह्या दिल मोमिन, इन पर कहा कहे सुभान ॥ ५५

इस प्रकार परमकृपालु श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंको अपने चरणोंके विभिन्न सुख कृपा पूर्वक प्रदान करते हैं. इसीलिए इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है. भला वे इससे बढ़कर अधिक और क्या कह सकते हैं ?

हकें दिल किया अरस अपना, इन पर बडाई न कोए ।

ए सुख लें मोमिन दुनी में, जो अरस अजीम की होए ॥ ५६

श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम बनाया है. इससे अधिक महिमा अन्य कोई नहीं हो सकती. परमधामकी आत्माएँ अब इस नश्वर जगतमें भी परमधामका अखण्ड सुख प्राप्त कर सकती हैं.

ए सुख क्या जाने खेल कबूतर, कह्या हक का अरस दिल ।

ए जाहेर हुए सुख जानसी, मोमिन मिलावा मिल ॥ ५७

जादूके खेलके कबूतरके समान नश्वर जगतके ये जीव इस परम सुखका

अनुभव कैसे कर सकते हैं ? ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है। मूलमिलावामें मिलकर रहने वाली ब्रह्मात्माएँ जगतमें प्रकट हो कर इस आनन्दका अनुभव करेंगी।

कदम मेहेबूब के मोमिन, क्यों सहें जुदागी खिन ।

तो हकें कह्या अरस दिलको, कर बैठे अपना वतन ॥ ५८

ब्रह्मात्माएँ क्षण मात्रके लिए भी अपने प्रियतम धनीके चरणोंका वियोग कैसे सहन करेंगी ? इसलिए श्रीराजजीने उनके हृदयको परमधाम कहा और वे उसमें आसीन हो गए।

दिया मोमिनों बडा मरातबा, जेती हक बिसात ।

ले बैठे मोमिन दिलमें, सब मता हक जात ॥ ५९

इस प्रकार ब्रह्मात्माओंको सर्वाधिक सम्मान प्राप्त हुआ। परमधाममें जितनी भी सम्पदा हैं उन सबको लेकर स्वयं श्रीराजजी इन ब्रह्मात्माओंके हृदयमें विराजमान हो गए। वस्तुतः ये सारी सम्पदा श्रीराजजीके ही अङ्ग स्वरूप हैं।

हक सूरत किन पाई नहीं, ना अरस पाया किन ।

तरफ भी किन पाई नहीं, माहें त्रैलोकी त्रैगुन ॥ ६०

आज तक किसीने भी दिव्य परमधाम तथा परब्रह्म परमात्माके स्वरूपके दर्शन नहीं किए हैं। इस त्रिगुणात्मक जगतमें त्रिगुणाधिपतियों सहित किसीको भी परमात्माकी दिशा तक प्राप्त नहीं हुई।

कह्या चौदे तबक जरा नहीं, तो बका सुध होसी किन ।

हक सूरत अरस कायम, सब दिल बीच कह्या मोमिन ॥ ६१

जब इन चौदह लोकोंका ही अस्तित्व नहीं है तो यहाँके जीवोंको अखण्डकी सुधि कैसे हो सकती है ? वस्तुतः पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप तथा अखण्ड परमधाम दोनों ही ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अधिष्ठित हैं।

हक अंग नूर हादी कह्या, मोमिन हादी अंग नूर ।

ए सब हक बका वाहेदत, ज्यों हक नूर जहूर ॥ ६२

श्रीराजजीके अङ्गकी तेजरूपा श्री श्यामाजी हैं एवं श्रीश्यामाजीके अङ्गकी

तेजरूपा ब्रह्मात्माएँ हैं. ये सभी श्रीराजजीके अद्वैत स्वरूपमें अधिष्ठित हैं जिससे सर्वत्र श्रीराजजीका ही तेज प्रकाशित होता है.

ए गुञ्ज थीं अरस बारीकियां, कोई न जाने बका बात ।

सो रुहें आए दुनीमें प्रगटीं, अरस बका हक जात ॥ ६३

परमधामके ये रहस्य अत्यन्त गुप्त थे इसलिए कोई भी अखण्ड परमधामको जानता नहीं था. ब्रह्मात्माएँ जैसे ही इस जगतमें अवतरित हुईं हैं, तो उनके आगमनसे अखण्ड परमधामकी सम्पदाएँ भी प्रकट हो गईं हैं.

कहे हुकम नूरजमाल का, मोहे प्यारे अति मोमन ।

महामत कहे दोनों ठौरों, हम को किए धन धन ॥ ६४
श्रीराजजीके आदेशका यही उद्घोष है कि उसे ब्रह्मात्माएँ अति प्रिय हैं. महामति कहते हैं, इस प्रकार श्रीराजजीने हमें दोनों स्थानों पर (इस जगतमें तथा परमधाममें) धन्य बना कर कृतार्थ कर दिया.

प्रकरण ६ चौपाई ३५५

चरन निसबतका प्रकरण अंदरताई

ए क्यों छोड़ें चरन मोमिन, जो हक की वाहेदत ।

आए दुनीमें जाहेर करी, जो असल हक निसबत ॥ १

ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं हैं जिनका श्रीराजजीके साथ एकात्मभाव सम्बन्ध है. उन्होंने इस जगतमें आकर इस सम्बन्धको प्रकट किया है.

रुहें उतरी नूर बिलंदसे, कदम नासूतमें भूलत ।

तिन पर रसूल होए आङ्ग्या, जो असल हक निसबत ॥ २

ये ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुईं हैं किन्तु इस नश्वर जगतमें आकर श्रीराजजीके चरणोंको भूल गईं. उनको जागृत करनेके लिए श्रीराजजीने रसूलके द्वारा अपना सन्देश भेजा क्योंकि उनका वास्तविक सम्बन्ध श्रीराजजीसे ही है.

रुहें अरस भूलीं नासूतमें, ताए हक रमूजें लिखत ।
सो सब मोमिन समझाहीं, जो असल हक निसबत ॥ ३

इस नश्वर जगतमें आकर परमधामको भूलनेवाली ब्रह्मात्माओंके लिए
श्रीराजजीने अपना रहस्यमय सन्देश भेजा है. अब वे ही इस सन्देशको
समझेंगी क्योंकि उनका ही सम्बन्ध श्रीराजजीसे है.

रुहें कदम भूली नासूतमें, हक ताए भेजे इसारत ।
ताको हादी केहे समझावहीं, जो असल हक निसबत ॥ ४

ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आकर श्रीराजजीके चरणोंको भी भूल गई हैं. इसलिए
श्रीराजजीने उनको अपने सङ्केत भेजे हैं. श्रीश्यामाजीने सदगुरु बनकर उन्हें
ये सङ्केत स्पष्ट कर समझाए क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध श्रीराजजीसे ही है.

रुहें अरस की कदम भूलियां, तिन पर रुह अपनी भेजत ।
अरस बातें केहे समझावहीं, जो असल हक निसबत ॥ ५

परमधामकी ये ब्रह्मात्माएँ जब श्रीराजजीके चरणोंको ही भूल गई तब इनको
जागृत करनेके लिए श्रीराजजीने श्रीश्यामाजीको भेजा. श्रीश्यामाजीने
सदगुरुके रूपमें प्रकट होकर श्रीराजजीकी अङ्गभूता इन ब्रह्मात्माओंको
परमधामकी सम्पूर्ण बातें समझायां.

फरामोस हुइयां लाहूत से, रुहअल्ला संदेसे देवत ।
ए मेहर लेवें मोमिन, जो असल हक निसबत ॥ ६

परमधामसे आई हुई ये ब्रह्मात्माएँ भ्रमरूपी निद्रामें पड़ गई. इसलिए
सदगुरुने इन्हें परमधामका सन्देश दिया. श्रीराजजीकी कृपासे ही उनकी ये
अङ्गनाएँ इन सन्देशोंको ग्रहण कर रहीं हैं.

खिताब हादी सिर तो हुआ, फुरमान और न कोई खोलत ।
हक कदम हिरदे मोमिनों, जो असल हक निसबत ॥ ७

यह दायित्व (शोभा) मुझे इसीलिए दिया गया कि कुरानके गूढ़ रहस्य अन्य
किसीसे भी स्पष्ट नहीं हुए थे. इन्हीं ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीके
चरणकमल अङ्कित हैं जिनका मूल सम्बन्ध श्रीराजजीके चरणोंसे है.

रुहें भूलियां खिलवत खेल में, ताएं रुहअल्ला इलम ल्यावत ।

सो कायम करे त्रैलोक को, जो असल हक निसबत ॥ ८

ब्रह्मात्माएँ इस खेलमें आकर मूलमिलावाको ही भूल गई हैं. इसलिए श्रीश्यामाजी उनके लिए तारतम ज्ञान लेकर सदगुरुके रूपमें अवतरित हुई हैं. श्रीराजजीकी अङ्गभूता ये ब्रह्मात्माएँ अब इस दिव्य ज्ञानके प्रतापसे तीनों लोकोंको अखण्ड करेंगी.

इसक रबद हुआ अरसमें, तो रुहें इत देह धरत ।

रुहें चरन तो पकड़ें, जो असल हक निसबत ॥ ९

परमधाममें श्रीराजजीके साथ हुई प्रेम चर्चके कारण ही ब्रह्मात्माओंको इस जगतमें आकर नश्वर शरीर धारण करना पड़ा है. इनका सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है. इसलिए उन्होंने उनके चरणकमलोंको ग्रहण किया है.

आए कदम दिल मोमिन, जाको सबद न पोहोचे सिफत ।

हकें अरस दिल तो कह्या, जो असल हक निसबत ॥ १०

इन ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीके श्रीचरण अङ्गित हैं. इसलिए इनकी महिमा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती. इनके साथ अपना मूल सम्बन्ध होनेके कारण ही श्रीराजजीने इनके हृदयको परमधाम कहा है.

ए बरनन हुकमें तो किया, जो जाहेर करनी खिलवत ।

ए कदम रुहें तो पकड़ें, जो असल हक निसबत ॥ ११

मूलमिलावाके गूढ़ रहस्योंको यहाँ पर प्रकट करनेके लिए ही श्रीराजजीके आदेशने इतना वर्णन किया है. ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको तभी ग्रहण करतीं हैं क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध श्रीराजजीसे ही है.

हकें आए किया अरस दिलको, बीच ल्याए कदम न्यामत ।

सिर हुकमें हुजत तो लई, जो असल हक निसबत ॥ १२

श्रीराजजीने इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम बनाकर अपने चरणकमल रूपी अपार सम्पदा उसमें स्थापित कर दी. तभी ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजीकी अङ्गना होनेका दावा किया क्योंकि उनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे ही है.

अरस मोहोल दिलको किया, आए बैठी हक सूरत ।

ए अरस मेहेर तो भई, जो असल हक निसबत ॥ १३

श्रीराजजीने इनके हृदयको परमधाम रङ्गभवन भी बनाया है, क्योंकि इनके हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप अङ्कित है. इनका सम्बन्ध श्रीराजजीसे होनेसे ही उनके ऊपर ऐसी महती कृपा हुई है.

इन कदमों मेहेर मुझ पर करी, देखाए दई वाहेदत ।

तो इलम दिया बेसक, जो असल हक निसबत ॥ १४

श्रीराजजीके इन चरण कमलोंकी कृपा मुझ पर अवश्य हुई है. उन्होंने ही मुझे परमधामके एकात्मभावका अनुभव करवाया. यह जागृत बुद्धिका तारतम ज्ञान भी उन्होंने इसीलिए दिया है कि मेरा मूलसम्बन्ध उनसे ही है.

मोमिनों पाई बेसकी, सो इन कदमों की बरकत ।

सो क्यों छूटें मोमिन से, जो असल हक निसबत ॥ १५

इन चरणोंके प्रतापसे ही ब्रह्मात्माओंको यह ब्रह्मज्ञान प्राप्त हुआ है. इसलिए ब्रह्मात्माओंसे अब वे चरण कैसे दूर होंगे जिनका मूलसम्बन्ध ही श्रीराजजीसे है.

इन चरनों किया अरस दिल को, दिल बोलें सुध परत ।

रुहें तो लेवें महंमद सिफायत, जो असल हक निसबत ॥ १६

इन्हीं चरणोंने हृदयको परमधाम बनाया है. जब हृदयमें यह बात दृढ़ होती है तभी इसकी सुधि होती है. श्रीराजजीके साथ अपना मूलसम्बन्ध होनेके कारण ही ब्रह्मात्माएँ अन्तिम मुहम्मदकी अनुशंसा प्राप्त करेंगी.

रुहें कदम पकड़ें हक के दिलमें, पैठ इसक ठौर ढूँढत ।

दिल मोमिन अरस तो कह्या, जो असल हक निसबत ॥ १७

ब्रह्मात्माओंने अपने हृदयमें श्रीराजजीके चरण कमल ग्रहण किए हैं एवं वे हृदयकी गहराईमें श्रीराजजीका प्रेम खोज रहीं हैं. श्रीराजजीने इनके हृदयको इसीलिए परमधाम बनाया कि इनका मूलसम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

ए कदम ले दिल मोमिन, अरससे ना निकसत ।

ए रुहें जाने अरस बारीकियां, जो असल हक निसबत ॥ १८

इन चरणोंको अपने हृदयमें धारण करनेके बाद ब्रह्मात्माएँ परमधामका चिन्तन छोड़कर अन्य कुछ भी नहीं करती हैं। इसीलिए श्रीराजजीकी अङ्गभूता ये आत्माएँ परमधामके गूढ़ रहस्योंको समझती हैं।

रुहें सिर पर कदम चढाएके, अरस मोहोलों में मालत ।

सब हक गुझ रुहें जानहीं, जो असल हक निसबत ॥ १९

इन चरणोंको शिरोधार्य कर ब्रह्मात्माओंकी सुरताएँ परमधामके विभिन्न प्रासादोंमें विचरण करती हैं। इस प्रकार श्रीराजजीकी अङ्ग स्वरूपा ये आत्माएँ उनके गूढ़ रहस्योंको भलीभाँति जान लेती हैं।

ले चरन दिल अरसमें, सब गलियों में फिरत ।

सब सुध होवे अरसकी, जो असल हक निसबत ॥ २०

ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके श्रीचरणोंको हृदयमें धारणकर परमधामकी गली-गलीमें विचरण करती हैं। श्रीराजजीकी अङ्गभूता होनेसे इनको ही परमधामकी हर प्रकारकी सुधि है।

रुहें नैन पुतलियों बीचमें, हक कदम राखत ।

एक हुए दिल अरस रुहें, जो असल हक निसबत ॥ २१

ये ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको सर्वदा अपने नयनोंकी पुतलीमें बसा लेती हैं। इस प्रकार श्रीराजजीकी अङ्ग स्वरूपा ब्रह्मात्माएँ इन चरणोंके साथ एकाकार हो जाती हैं।

दिल अरस किया इन कदमों, इतहीं बैठे कर भिस्त ।

ए न्यारे निमख न होवही जो असल हक निसबत ॥ २२

इन्हीं चरणोंने अपना विश्रामस्थल बनाकर ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधामकी शोभा दी है। इसीलिए श्रीराजजीकी अङ्गभूता इन ब्रह्मात्माओंसे क्षण भरके लिए भी ये चरण कमल दूर नहीं होते हैं।

गुन केते कहूँ इन कदमके, जिन अरस अखण्ड किया इत ।

ए कदम ताले तिनके, जो असल हक निसबत ॥ २३

इन चरणोंके गुणोंका वर्णन कहाँ तक करूँ ? जिन्होंने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अखण्ड परमधाम बना दिया है। इन चरण कमलोंको प्राप्त करनेका सौभाग्य जिनको प्राप्त हुआ है उन ब्रह्मात्माओंका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है।

तिन भाग की मैं क्या कहूँ, जिन दिल ए कदम बसत ।

धन धन कदम धन ए दिल, जो असल हक निसबत ॥ २४

इन ब्रह्मात्माओंके परम सौभाग्यको किन शब्दोंमें व्यक्त करूँ, जिनके हृदयमें इन श्रीचरणोंकी छवि समायी हुई है। श्रीराजजीके ये श्रीचरण तो धन्य हैं ही साथ ही इन ब्रह्मात्माओंके हृदय भी धन्य हैं क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है।

कै मलकूत वारूं तिन खाक पर, जिन दिल ए कदम आवत ।

और दिल अरस न होवहीं, बिना असल हक निसबत ॥ २५

जिनके हृदयमें ये चरण कमल अङ्कित हैं उन ब्रह्मात्माओंकी चरणरज पर अनेकों वैकुण्ठको समर्पित कर दूँ। क्योंकि इनका सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है इसलिए इनके अतिरिक्त अन्य किसीका भी हृदय परमधाम नहीं हो सकता है।

दिल सांच ले सरीयत चले, या पाक होए ले तरीकत ।

दिल अरस न होए बिना मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ २६

इस नश्वर जगतके जीव पवित्र हृदयसे कर्मकाण्ड (सराअ) या उपासना (तरीकत) के मार्ग पर क्यों न चलें ? किन्तु इन ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीका भी हृदय परमधाम नहीं हो सकता है।

कोई करो सब जिमिएं सेजदा, पालो अरकान लग क्यामत ।

पर ए कदम न आवे दिलमें, बिना असल हक निसबत ॥ २७

यदि कोई सम्पूर्ण पृथ्वी पर नमन भी कर ले एवं जीवन पर्यन्त कुरान पर आधारित बावन नियमों (अरकानों) का पालन करता रहे तो भी श्रीराजजीके श्रीचरण उसके हृदयमें अङ्कित नहीं हो सकते।

तेहेतर फिरके महमद के, तामें एक को हक हिदायत ।
और नारी एक नाजी कहा, जाकी असल हक निसबत ॥ २८

रसूल मुहम्मदके अनुयायी तिहतर समुदायोंमें बँट गए, उनमें एक ही समुदाय (नाजी फिरका) को परमात्माका निर्देश प्राप्त है, जिसका सम्बन्ध स्वयं परमात्मासे है. शेष बहतर समुदाय नारी (दोजखी) कहे गए हैं.

उतम होए षट करम करो, आचार करो विधोगत ।
ब्रह्म चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ २९

ब्राह्मण होकर विधि पूर्वक षट्कर्मका पालन करे तथा पवित्र आचरण रखे तो भी ब्रह्मसृष्टियोंके अतिरिक्त उसके हृदयमें परब्रह्म परमात्माके श्रीचरण अङ्कित नहीं हो सकते हैं.

षट्सात्र पढो कांड तीनों, करम निहकरम विधोगत ।
ए चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३०

भला वह षट्शास्त्रोंका अध्ययन करते हुए कर्म, ज्ञान एवं उपासनाके द्वारा निष्काम भावको प्राप्त करे, तो भी श्रीराजजीकी अङ्गभूता ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त उसके हृदयमें परब्रह्म परमात्माके चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकते.

नवों अंगों पालो नवधा, ल्यो वैकुंठ चार मुगत ।
ए चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३१

भला कोई नवों अङ्गोंसे नवधा भक्तिके द्वारा वैकुण्ठ धामकी चार प्रकारकी मुक्तिके अधिकारी क्यों न बने, तो भी परब्रह्मकी अङ्गभूता ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त उसके हृदयमें परब्रह्मके चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकते हैं.

वेद सात्र पुरान पढो, सब पैडे देखो प्रापत ।
ए चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३२

चाहे कोई वेद, पुराण, शास्त्र आदिका अध्ययन कर सभी मत मतान्तरोंका ज्ञान प्राप्त कर ले, तो भी परब्रह्मकी अङ्गभूता ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त उसके हृदयमें ये चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकते.

कोई वेद पांचों मुख पढ़ो, कै त्रैगुन जात पढत ।

पर ए चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३३

कोई अपने मुखसे पाँचों वेदोंका पठन क्यों न करें अथवा त्रिगुणाधिपति तीनों देवता भी वेदोंका पठन क्यों न करें, तो भी ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त उनके हृदयमें ये चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकते.

ब्रह्मसृष्टि कही वेदने, ब्रह्म जैसी तदोगत ।

तौल न कोई इनके, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३४

वेदोंमें ब्रह्मसृष्टिको ब्रह्मके समान कहा गया है इनकी तुलना किसीके साथ नहीं हो सकती है. क्योंकि इनका सम्बन्ध परब्रह्म परमात्माके साथ है.

सुकजी आए इन वास्ते, ले किताब भागवत ।

ए चरन न आवें ब्रह्मसृष्टि बिना, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३५

इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए भागवत ग्रन्थका ज्ञान लेकर सुकदेवजी इस जगतमें आए हैं. इन ब्रह्माङ्नाओंके अतिरिक्त अन्य किसीके भी हृदयमें परब्रह्म परमात्माके चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकते हैं.

ब्रह्मने भेजी परमहंस पर, वेद अस्तुत बंदोवस्त ।

ए ब्रह्म चरन क्यों छोड़ही, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३६

परब्रह्मने इन्हीं परमहंसोंके लिए वैदिक ज्ञानकी व्यवस्था की है. परब्रह्मकी अङ्गभूता ये ब्रह्मात्माएँ इन चरणकमलोंको कैसे छोड़ सकेंगी ?

कही आई उपनिषद इनपें, पूरब रिषी कहे जित ।

धाम बका पाया इनोंने, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३७

उपनिषदोंका ब्रह्मज्ञान भी इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए अवतरित हुआ है. इनको ही पूर्व कालके ऋषियोंका स्थान प्राप्त हुआ है. इन्हीं ब्रह्माङ्नाओंने अखण्ड परमधामका अनुभव किया है क्योंकि इनका ही सम्बन्ध परब्रह्म परमात्मासे है.

ब्रह्मसृष्टि मोमिन कहे, रुहें लेवें वेद कतेब बिगत ।

ए समझ चरण ग्रहे ब्रह्मके, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३८

इन्हीं आत्माओंको वेदोंमें ब्रह्मसृष्टि तथा कतेब ग्रन्थोंमें मोमिन कहा है. ये

ही वेद तथा कतेबोंका रहस्य समझकर परब्रह्म परमात्माके चरणोंको ग्रहण कर सकती हैं. क्योंकि इनका ही सम्बन्ध परब्रह्मसे है.

ब्रह्मसृष्टि रुहें नाम दोए, अरस रुहें ए जानत ।
दोऊ जान चरन ग्रहें एकै, जाकी ब्रह्मसों निसबत ॥ ३९

इन्हींको ब्रह्मसृष्टि अथवा श्रेष्ठ आत्मा कहा गया है. ये ही परमधामकी आत्माएँ कहलाती हैं. वैदिक तथा कतेब ग्रन्थों द्वारा वर्णित दोनों नामोंको एक ही समझकर परब्रह्मके चरणोंको ग्रहण करनेवाली ब्रह्मात्माएँ ही उनकी अङ्गभूता हैं.

पढे वेद कतेब को, जोग कसब ना पोहोंचत ।
दिल अरस किया जिन कदमों, ए न आवें बिना हक निसबत ॥ ४०
भला कोई वेद तथा कतेब आदि ग्रन्थोंका अध्ययन कर योग साधनाएँ तथा मन्त्र जप आदि क्यों न कर ले, किन्तु जिन चरणोंने ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम बनाया है उन्हें वे प्राप्त नहीं कर सकते. क्योंकि परब्रह्म परमात्माके साथके सम्बन्धके बिना ये चरण कमल प्राप्त नहीं हो सकते हैं.

दिल अरस कह्या जो मोमिन, सो दिल नाजी पाक उमत ।
और इलाज ना इलम कोई, बिना असल हक निसबत ॥ ४१

जिन ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा गया है उनके समुदायको ही कुरानमें पवित्र नाजी फिरका कहा है. परब्रह्म परमात्माके सम्बन्धके बिना उनके चरण कमलोंको प्राप्त करनेका न कोई अन्य उपाय है और न ही कोई ज्ञान है.

इलम लुंदनी भेजिया, सो मोमिन ए परखत ।
परख चरन ग्रहें हक के, जाकी असल हक निसबत ॥ ४२
इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए तारतम ज्ञान भेजा गया है वे ही इसके महत्वको समझकर श्रीराजजीके चरणोंको ग्रहण करेंगी. इनका ही उनके साथ मूलसम्बन्ध है.

हक हादी की मेहर से, भिस्त आठ होसी आखरत ।
पर ए चरन न आवें दिलमें, बिना असल हक निसबत ॥ ४३
श्रीराजजी एवं श्रीश्यामाजीकी अहैतुकी कृपासे अन्तिम (आत्मजागृतिके)

समयमें संसारके सभी जीवोंको आठों मुक्ति स्थल प्राप्त होंगे. किन्तु परब्रह्मकी अङ्गभूता इन ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीके भी हृदयमें ये चरण कमल अङ्कित नहीं हो सकेंगे.

महंमद सूरत हकी बिना, द्वार खुले ना हकीकत ।
ए कदम पावें दिल औलिया, जाकी असल हक निसबत ॥ ४४

रसूल मुहम्मद द्वारा वर्णित हकी सूरतके बिना अखण्डके द्वार नहीं खुल सकते. इन चरण कमलोंको परब्रह्मके मित्र (वली-खुदाके मित्र) कहलाने वाले इन ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई प्राप्त नहीं कर सकता है. क्योंकि ये ही उनकी अङ्गनाएँ हैं.

ए कदम आए जिन दिल में, तित आई हक सूरत ।
ए चौदे तबक पावें नहीं, बिना असल हक निसबत ॥ ४५

ये चरणकमल जिनके हृदयमें अङ्कित हुए हैं उनके हृदयमें पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप भी अङ्कित हुआ है. इस प्रकार परब्रह्मकी अङ्गनाके अतिरिक्त चौदह लोकोंके कोई भी जीव इस परम सौभाग्यको प्राप्त नहीं कर सकते.

दिल मोमिन क्यों अरस कहा, ए दुनी एता ना विचारत ।
ए विचार तो उपजे, जो होए हक निसबत ॥ ४६

ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम क्यों कहा गया है इस पर जगतके लोग विचार ही नहीं कर सकते. उनके हृदयमें ये विचार तभी उत्पन्न हो सकते जब उनका सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे होता.

रुहें अरस बुधजी बिना, छल का न पावे कोई कित ।
ए सहूर भी दिल न आवहीं, बिना असल हक निसबत ॥ ४७

परमधामकी ब्रह्मात्माएँ तथा बुद्धजीके बिना नश्वर जगतका कोई भी जीव इन चरणोंको प्राप्त नहीं कर सकता. श्रीराजजीके साथ सम्बन्ध हुए बिना हृदयमें यह विचार ही उत्पन्न नहीं हो सकता है.

रुहअल्ला दजालको मारसी, छोडावसी उमत ।
कर एक दीन चरन देखावहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४८

कुरानमें इस प्रकारका उल्लेख है कि अन्तिम समयमें श्यामाजी (रुहअल्लाह) स्वरूप सदगुरु प्रकट होकर नास्तिकतारूपी शैतान (दज्जाल)को मार डालेंगे एवं इसके बन्धनसे अपने समूहको छुड़ाएँगे तथा सभीको एक ही परमात्माकी उपासनाके मार्गमें ले जाएँगे.

अरस सूरत पर सेजदा, करसी मेहेदी इमामत ।
कदम ग्रहें देखावहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४९

साथ ही यह भी उल्लेख है कि अन्तिम समयमें इमाम महदी प्रकट होकर परमधामके स्वरूप पर नमन करनेका उपदेश देंगे. वस्तुतः जिनका सम्बन्ध परब्रह्म परमात्माके साथ है वे ब्रह्मात्माएँ ही उनके चरणोंको ग्रहण कर अन्य लोगोंके लिए भी मार्ग प्रशस्त करती हैं.

दोऊ आए बीच हिन्दुअन के, जैसे कह्या हजरत ।
ए बेवरा सोई समझहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५०

रसूल मुहम्मदने जैसा कहा था कि ये दोनों स्वरूप हिन्दुओंमें प्रकट होंगे. वस्तुतः यह विवरण भी परब्रह्मकी अङ्गभूता ब्रह्मात्माएँ ही समझ सकती हैं.

अरस कह्या दिल मोमिन, ले दिल अरस गलियों में खेलत ।
सो पावें रुहें लाहूती, जाकी असल हक निसबत ॥ ५१

इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि वे अपने हृदयमें श्रीराजजीके चरणोंको धारण कर परमधामकी गली-गलीमें विचरण करेंगी. परब्रह्मकी अङ्गभूता ये ब्रह्मात्माएँ ही यह परम सौभाग्य प्राप्त कर सकती हैं.

ए कदम पावें रुहें अरसकी, नहीं औरों की किसमत ।
ए सोई पावें हक बारीकियां, जाकी असल हक निसबत ॥ ५२

वस्तुतः परमधामकी ब्रह्मात्माओंको ही इन चरणोंका अनुग्रह प्राप्त है. यह परम सौभाग्य अन्य किसीको प्राप्त नहीं है. श्रीराजजीकी अङ्गना होनेसे ये ब्रह्मात्माएँ ही श्रीराजजीके हृदयके गूढ़ रहस्योंको समझ सकती हैं.

एहेल किताब एही कहे, एही पावें हक मारफत ।

एही आसिक होवें मासूककी, जाकी असल हक निसबत ॥ ५३

ये ही ब्रह्मात्माएँ कुरानकी उत्तराधिकारिणी कहलाईं हैं. इनको ही पूर्णब्रह्म परमात्माकी पूर्ण पहचान है. ये ही प्रियतम धनीकी अनुरागिनी कहलातीं हैं. क्योंकि इनका वास्तविक सम्बन्ध पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीराजजीसे है.

जो रुहें उतरी अरस से, सो कदम ले अरस पोहेंचत ।

देसी भिस्त सबनको, जाकी असल हक निसबत ॥ ५४

जो ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं, वे इन्हीं चरणोंके प्रतापसे परमधाममें जागृत होंगी. इतना ही नहीं संसारके सभी जीवोंको भी ये मुक्ति स्थलका सुख प्रदान करेंगी. क्योंकि इनका सम्बन्ध अक्षरातीत परमात्मासे है.

जो रुहें कही लाहूती, इजने इत उतरत ।

सो पकडें कदम इसकसों, जाकी असल हक निसबत ॥ ५५

जो आत्माएँ परमधामकी कही गई हैं. वे श्रीराजजीके आदेशसे ही इस जगतमें अवतरित हुई हैं. वे श्रीराजजीके चरणोंको प्रेम पूर्वक ग्रहण करेंगी क्योंकि इनका सम्बन्ध स्वयं श्री राजजीसे है.

रुहें अरस रबदें इत आइयां, देखो कौन कदम ग्रहे जीतत ।

सो क्यों बिछुडें इन कदमसों, जाकी असल हक निसबत ॥ ५६

परमधाममें हुए प्रेम सम्वादके कारण ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें अवतरित हुई हैं. अब देखो उनमें-से कौन श्रीराजजीके चरणोंको ग्रहण करनेमें सर्व प्रथम होतीं हैं. वस्तुतः जिनका मूल सम्बन्ध अक्षरातीत परमात्मासे है वे इन चरणोंसे कैसे दूर हो सकतीं हैं ?

याही रबदें इत आइयां, लेने पीउका बिरहा लजत ।

सो पाए कदम क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५७

इसी प्रेम सम्वादके कारण ही ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें अवतरित हुई हैं ताकि उन्हें प्रियतमके विरहका सुख प्राप्त हो सके. वे अपने प्रियतमके चरणोंको प्राप्त कर उन्हें कैसे छोड़ सकतीं हैं जिनका सम्बन्ध ही प्रियतम धनीसे है.

ए रबद अरस खिलवत का, रुहें इसक अंग गलित ।

सो क्यों छोड़े पांऊ पकडे, जाकी असल हक निसबत ॥ ५८

यह प्रेम सम्वाद मूलमिलावामें हुआ है, जहाँ पर सभी आत्माएँ सदैव प्रेममें
ओत-प्रोत रहती हैं। धामधनीकी ऐसी अङ्गनाएँ अब इन चरणोंको ग्रहण
करने पर उन्हें कैसे छोड़ सकती हैं ?

रुहें इन कदम के वास्ते, जीवते ही मरत ।

सो क्यों छोड़े प्यारे पांऊको, जाकी असल हक निसबत ॥ ५९

ये ब्रह्मात्माएँ इन चरण कमलोंके लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर देती हैं।
ऐसी अङ्गनाएँ अपने प्रियतम धनीके प्यारे चरण कमलोंको कैसे छोड़ सकतीं
हैं ?

याही कदमके वास्ते, रुहें जल बल खाक होवत ।

तो दिल आए कदम क्यों छूटहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६०

इन चरणोंके लिए ब्रह्मात्माएँ स्वयंको अग्निमें होम तक कर देती हैं। ऐसी
अङ्गनाएँ अपने हृदयमें अङ्कित इन चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

रुहें होवें जिन किन खिलके, हक प्रगटे सुनत ।

आए पकडें कदम पलमें, जाकी असल हक निसबत ॥ ६१

ये ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें भला किसी भी जातिमें प्रकट हुई हों किन्तु अपने
धामधनीके प्रकट होनेका समाचार सुनते ही दौड़कर उनके चरण ग्रहण
करेंगी, क्योंकि ये उनकी ही अङ्गनाएँ हैं।

जब आखर हक जाहेर सुने, तब खिनमें रुहें दौड़त ।

सो क्यों रहें कदम पकडे बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ६२

इस अन्तिम समयमें परमात्माके प्रकट होनेकी बात सुनते ही ब्रह्मात्माएँ पल
भरमें दौड़कर आएँगी। ऐसी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंको ग्रहण किए
बिना कैसे रह सकती हैं ?

जब इमाम आए सुने, तब मोमिन रेहे ना सकत ।

दौड़के कदम पकड़ें, जाकी असल हक निसबत ॥ ६३

अपने सद्गुरुका आगमन सुनते ही ब्रह्मात्माओंसे रहा नहीं जाता, वे दौड़कर उनके चरणोंको ग्रहण करेंगी क्योंकि वे धनीकी अङ्गनाएँ हैं।

मलकूत वैकुंठ वास्ते, दुनी पहाड़ से गिरत ।

तो रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६४

नश्वर जगतके जीवोंने वैकुण्ठ आदि लोकोंकी प्राप्तिके लिए भी जब पर्वतोंसे गिरकर अपने प्राणोंका उत्सर्ग (त्याग) किया है तो परब्रह्म परमात्माकी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

मलकूत वैकुंठ वास्ते, दुनी सिर लेत करवत ।

तो रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६५

वैकुण्ठके सुखोंकी प्राप्तिके लिए इस जगतके अनेक लोगोंने अपने सिर पर आरे (करवत) चलाए हैं तो परब्रह्म परमात्माकी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

मलकूत वैकुंठ वास्ते, दुनियां आग पीवत ।

तो रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६६

वैकुण्ठके क्षणिक सुखोंके लिए इस जगतके अनेक लोगोंने अग्निका पान तक किया है, तो अक्षरातीत धनीकी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

मलकूत वैकुंठ वास्ते, दुनी भैरव झांपावत ।

तो रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६७

इसी वैकुण्ठकी प्राप्तिके लिए अनेक लोगोंने पहाड़से छलाङ्गें लगाई (भैरव झाँप खाया), तो परब्रह्म परमात्माकी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

मलकूत वैकुंठ वास्ते, दुनी हेममें गलत ।

तो रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६८

इसी प्रकार वैकुण्ठके सुखोंकी प्राप्तिके लिए अनेक लोगोंने हिमालयके हिममें अपने शरीरको गला दिया तो परमधामकी आत्माएँ अपने प्रियतम धनीके चरणको कैसे छोड़ सकती हैं ?

और इलाज जो कै करो, पर पावे ना बिना किसमत ।

सो हक कदम ताले मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ ६९

इस प्रकार अनेकों उपाय क्यों न किया जाए किन्तु उनकी अङ्गनाओंके अतिरिक्त अन्य किसीको भी परब्रह्म परमात्माके चरणोंका सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सकता है. मात्र इन ब्रह्माङ्गनाओंको ही चरणोंकी प्राप्तिका सौभाग्य प्राप्त है.

ए बिन मोमिन कदम न पाइए, जो करे कै कोट मेहेनत ।

ए मोमिन अरस अजीमके, जाकी असल हक निसबत ॥ ७०

ये चरणकमल ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीको प्राप्त नहीं हो सकते हैं. भला वे करोड़ों उपाय क्यों न कर लें. ये ब्रह्मात्माएँ श्रेष्ठ परमधामकी हैं, उनका मूल सम्बन्ध स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मासे है.

रुहें अरसकी कहें वेद कतेब, बिन कुंजी क्योंए न पाइयत ।

सो रुहअल्ला बेसक करी, जाकी असल हक निसबत ॥ ७१

वेद तथा कतेब आदि ग्रथोंमें स्पष्ट उल्लेख है कि ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधामकी हैं किन्तु तारतम ज्ञानरूपी कुञ्जीके बिना यह गूढ़ रहस्य स्पष्ट नहीं हो सकता. धामधनीकी अङ्गना स्वयं श्रीश्यामाजीने प्रकट होकर इस जगतमें सन्देह निवारक तारतम ज्ञान प्रकट किया है.

हक कदम दिल मोमिन, देख देख रुह भीजत ।

एक पाउ पल ना छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७२

धामधनीके चरण कमल ब्रह्मात्माओंके हृदयमें हैं यह देखकर आत्मा गदगद हो जाती है. इस प्रकार धामधनीकी अङ्गनाएँ पल मात्रके लिए भी इन चरणोंको नहीं छोड़ती हैं.

ए कदम रुहें दिल लेयके, देह झूठी उडावत ।
कोई दिन रखें वास्ते लजत, जाकी असल हक निसबत ॥ ७३

ब्रह्मात्माएँ इन चरणोंको हृदयमें धारण कर नश्वर तनको उड़ा देती हैं. यदि थोड़े समयके लिए शरीरको धारण भी करती हैं तो भी इन चरणोंका सुख प्राप्त करनेके लिए ही है. क्योंकि इनका सम्बन्ध स्वयं धामधनीसे है.

मोमिन आए अरस से, दुनी क्या जाने ए गत ।

ए कदम ताले ब्रह्मसृष्टि के, जाकी असल हक निसबत ॥ ७४

ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं. नश्वर जगतके जीव यह तथ्य कैसे समझेंगे ? श्रीराजजीके ये चरणकमल इन्हीं ब्रह्मात्माओंके भाग्यमें हैं क्योंकि इनका ही सम्बन्ध श्रीराजजीसे है.

रुहें खाना पीना रोजा सेजदा, इन कदमों हज जारत ।

और चौदे तबक उडावहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७५

इन ब्रह्मात्माओंका खान, पान, व्रत, नमन तथा यात्राका विराम ही ये चरण कमल हैं. इनके लिए वे चौदह लोकोंको भी नगण्य समझती हैं. क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

ए चरन पेहेचान होए मोमिनों, वाही को प्यारे लगत ।

नातो बुरा न चाहे कोई आपको, पर क्या करे बिना हक निसबत ॥ ७६

ब्रह्मात्माओंको ही इन चरणोंकी पहचान है इसीलिए ये उनको ही प्रिय लगते हैं. यद्यपि कोई भी अपना अहित नहीं चाहता (सभी परमात्माको पाना चाहते हैं) परन्तु परमात्माके सम्बन्धके बिना वे क्या कर सकते हैं ?

पाए बिछुरे पीउ परदेस में, बीच हक न डारें हरकत ।

ए करी इसक परीछा वास्ते, पर ना छूटे हक निसबत ॥ ७७

इस जगतमें आने पर ही ब्रह्मात्माओंको धामधनीके इन चरण कमलोंका वियोग हुआ है. यद्यपि धामधनी ब्रह्मात्माओंको मायामें डालना नहीं चाहते, किन्तु प्रेमकी परीक्षाके लिए ही ऐसा किया है, तथापि ब्रह्मात्माओंसे धामधनीका मूल सम्बन्ध नहीं छूटा है.

जिन परदेस में पांड पकड़े, ज्यों बिछुरे आए मिलत ।
सो मोमिन छोड़ें क्यों कदमको, जाकी असल हक निसबत ॥ ७८

जिन ब्रह्मात्माओंने इस जगतमें धामधनीके चरण ग्रहण किए हैं उन्होंने इस प्रकार ग्रहण किए हैं मानों विछुड़नेके बाद ये चरण पुनः प्राप्त हुए हों. ऐसी ब्रह्मात्माएँ अब इन चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं जिनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

जो बिछड़ के आए मिले, सो पलक ना छोड़ सकत ।
सो रुहें पाए चरन पीउके, जाकी असल हक निसबत ॥ ७९

वियोग होनेके बाद जिनका पुनः मिलन होता है वे पल भरके लिए भी नहीं छुटते हैं इन ब्रह्मात्माओंने भी इसी प्रकार धामधनीके चरण प्राप्त किए हैं. इनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे ही है.

अरसें सबद न पोहोचे त्रैलोकका, सो दिल मोमिन अरस कहावत ।
इन कदमों बडाई दिलको दई, जाकी असल हक निसबत ॥ ८०

इस जगतके शब्द परमधाम तक नहीं पहुँच सकते हैं, वह दिव्य परमधाम ब्रह्मात्माओंका हृदय कहलाता है. इन्हीं चरणोंकी महिमासे ब्रह्मात्माओंके नश्वर शरीरके हृदयको यह महत्व प्राप्त हुआ है.

दिल मोमिन एही पेहेचान, दिल कदम छोड न चलत ।
तो पाई अरस बुजरकी, जो थी असल हक निसबत ॥ ८१

ब्रह्मात्माओंके हृदयकी यही पहचान है कि उससे श्रीराजजीके चरण कमल कभी भी नहीं छुटते हैं. इसीलिए उसको परमधामकी शोभा प्राप्त हुई है क्योंकि इन ब्रह्मात्माओंका सम्बन्ध श्रीराजजीसे है.

ए कदम नूरजमाल के, आई दिल मोमिन लजत ।
सो मोमिन अरवा अरस के, जाकी असल हक निसबत ॥ ८२

ये चरण कमल अक्षरातीत धामधनीके हैं. ये ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्कित होते ही उनको अपार आनन्दका अनुभव हुआ. ये ब्रह्मात्माएँ स्वयं परमधामकी हैं, इनका सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

ए चरन दिलका जीव है, तिन बिन जीव क्यों जीवत ।

तो हकें अरस कहा दिलको, जो असल हक निसबत ॥ ८३

ये चरण कमल हृदयका जीवन है. इसीलिए जीवनके बिना जीव कैसे जीवित रह सकता है. धामधनीने इनके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि इनका सम्बन्ध स्वयं उन्हींके साथ है.

जो निसबती दिल चरन के, तामें जरा न तफावत ।

ए कदम रुहें ल्याई दुनीमें, जाकी असल हक निसबत ॥ ८४

इन ब्रह्मात्माओंका हृदय तथा धामधनीके चरणोंमें कोई भी अन्तर नहीं है. इन चरणोंको इस जगतमें लानेका श्रेय भी इन ब्रह्मात्माओंको प्राप्त है क्योंकि इनका मूलसम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे ही है.

हक जाहेर बीच दुनीके, रुहें समझके समझावत ।

हुआ फुरमाया रमूलका, तो जाहेर हुई हक निसबत ॥ ८५

ये ब्रह्मात्माएँ अक्षरातीत धनीके इस जगतमें आगमनका रहस्य स्वयं समझकर अन्य लोगोंको समझाती हैं. इस प्रकार रसूल मुहम्मदका कथन सत्य सिद्ध हुआ है, क्योंकि धामधनीकी अङ्गनाएँ इस जगतमें अवतरित हो गई हैं.

चौदे तबक करसी कायम, ए जो झूठे खाकीबुत ।

मोमिन बरकत इन कदमों, जाकी असल हक निसबत ॥ ८६

अब ये ब्रह्मात्माएँ चौदह लोकोंके नश्वर शरीर धारी जीवोंको भी अखण्ड मुक्ति स्थलका सुख प्रदान करेंगी. इन्हीं चरणोंकी कृपासे ब्रह्मात्माओंको यह शक्ति प्राप्त हुई है क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

सबों भिस्त दे घरों आवसी, रुहें कदम ग्रहें बड़ी मत ।

अरस के तन जो मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ ८७

संसारके सभी प्राणीयोंको मुक्ति स्थल (वहिश्त) का सुख प्रदान कर ये ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत होंगी. क्योंकि इन श्रेष्ठ ब्रह्मात्माओंने धामधनीके चरणोंको ग्रहण किया है. इन ब्रह्मात्माओंके मूल तन (पर-आत्मा) दिव्य परमधाममें हैं और इनका ही सम्बन्ध अक्षरातीतसे है.

ए काम किया सब हुकर्में, अब्बल बीच आखरत ।
हक बका द्वार खोलिया, महामत ले आए निसबत ॥ ८८

इस प्रकार आदि (ब्रज), मध्य (रास) तथा अन्त (जागनी) के सभी कार्य श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही हुए हैं. अब महामति अखण्ड धामके द्वार खोलकर ब्रह्मात्माओंको परमधाम ले चलते हैं.

प्रकरण ७ चौपाई ४४३

कदम परिकरमा निसबत

उमर जात प्यारी सुपने, निस दिन पीड जपत ।
लाल कदम न छोड़ें मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ ९

इस स्वप्नवत् जगतमें भी अनुरागिनी आत्माओंका जीवन अपने प्रियतम धनीके नामस्मरणमें ही व्यतीत हो जाता है. ये ब्रह्मात्माएँ अपने प्रियतम धनीके लालिमायुक्त चरणोंको छोड़ती ही नहीं है क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध इन्हीं धामधनीसे है.

मांग लई प्यारी उमर, ए जो रबद के बखत ।
लाल पांउ तली छोडें क्यों मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ २

इन ब्रह्मात्माओंने प्रेम सम्वादके समय धामधनीसे नश्वर जगतका जीवन माँगा था. इसलिए अब धामधनीकी ये अङ्गनाएँ उनके लालिमायुक्त चरण तलको कैसे छोड़ सकती हैं ?

पांउ निस दिन छोडें ना मोमिन, सुपने या सोवत ।
सो क्यों छोडें बेसक जागे, जाकी असल हक निसबत ॥ ३

ये ब्रह्मात्माएँ नींदमें हों अथवा स्वप्न अवस्थामें हो, किन्तु अपने प्रियतम धनीके चरण कमलोंको अहर्निश नहीं छोड़ती हैं. तो फिर वे जागृत अवस्थामें निश्चय ही इन चरणोंको कैसे छोड़ सकेंगी क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध स्वयं अक्षरातीत धनीसे है.

जब उड़ी नींद असल की, हक देखें होए जागृत ।
सुख लेसी खेलका अरस में, जाकी असल हक निसबत ॥ ४

जब पर-आत्मा पर पड़ा हुआ अज्ञानका आवरण दूर हो जाएगा तब वह जागृत होकर श्रीराजजीके स्वरूपका दर्शन करेगी एवं परमधाममें होते हुए भी नश्वर जगतके सुखोंका अनुभव करेगी क्योंकि इसका मूलसम्बन्ध स्वयं अक्षरातीतसे है.

दीजे परिकरमा अरस की, मोमिन दिल ना सखत ।
सूते भी कदम ना छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५

ये ब्रह्मात्माएँ सर्वदा परमधामकी ही परिक्रमा करती हैं. इनका हृदय अत्यन्त सुकोमल है. स्वप्नमें भी ये अपने धनीके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं. क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध धामधनीसे ही है.

सुख आगूँ अरस द्वारके, कै विध केल करत ।
सो क्यों छोड़ें चरन हक के, जाकी असल हक निसबत ॥ ६

रङ्गभवनके मुख्य द्वारके सम्मुख चाँदनी चौकमें किस प्रकार विभिन्न लीलाएँ होती हैं. इनको याद करते हुए ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं.

करें सुपनेमें कुरबानियां, ऐसे मोमिन अलमस्त ।
सूते भी कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७

ब्रह्मात्माएँ ऐसी प्रेम दिवानी हैं कि वे स्वप्नमें भी अपने जीवनकी आहुती दे सकती हैं. वे तो नींदमें भी धामधनीके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं क्योंकि इनका मूल सम्बन्ध ही श्रीराजजीसे है.

सुपने कदम पकड़ के, ता पर अपना आप वारत ।
हक करें सुरखरू इनको, जाकी असल हक निसबत ॥ ८

इस स्वप्नवत् जगतमें भी धामधनीके चरणोंको ग्रहण कर ये ब्रह्मात्माएँ उन पर समर्पित हो जाती हैं. इसीलिए श्रीराजजी इनको प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं क्योंकि इनका सम्बन्ध भी उन्हींसे है.

लेवें सुख बाग मोहोलन में, मलारमें बरसा रुत ।
ए रुहें क्यों छोड़ें चरन सुपने, जाकी असल हक निसबत ॥ ९

ये ब्रह्मात्माएँ वर्षा ऋतुमें भी परमधामके वन-उपवन तथा महलोंमें अपार
सुख प्राप्त करती हैं. इसलिए धामधनीकी ये अङ्गनाएँ इस स्वप्नवत् जगतमें
भी उनके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं.

रुहें खेलें मलार बनमें, हक हादी की सोहोबत ।
ए क्यों छोड़ें चरन मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ १०

ये आत्माएँ वर्षात्रऋतुमें भी श्रीराजजी तथा श्यामाजीके साथ वनमें खेलतीं
हैं. इसीलिए उनकी अङ्गरूपा ये आत्माएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं
हैं ?

मोमिन बसें अरस वनमें, ऊपर चाह्या मेह बरसत ।
सो क्यों रहें इन पांउ बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ११

जब ये ब्रह्मात्माएँ वन-उपवनमें लीलाएँ करती हैं उस समय वहाँ पर उनकी
इच्छानुसार वर्षा होती है. श्रीराजजीकी ये अङ्गनाएँ उनके चरणोंके बिना इस
जगतमें कैसे रह सकतीं हैं ?

रुहें मलार अरस बागमें, ऊपर सेरडियां गरजत ।
रुहें सुपने पांउ न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ १२

जब ये ब्रह्मात्माएँ वर्षा ऋतुमें वन-उपवनमें लीला करती हैं, उस समय
आकाशमें बादल गर्जना करते हैं. इन लीलाओंको याद करनेवाली ये
ब्रह्मात्माएँ इस स्वप्नवत् जगतमें अपने धामधनीके चरणोंको कैसे छोड़
सकतीं हैं ?

रुहें खेलें हक हादी सों बनमें, नूर बीजलियां चमकत ।
सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १३

जब ये श्रीराजजी तथा श्यामाजीके साथ वनमें लीलाएँ करती हैं उस समय
आकाशमें बिजली चमकती है. ऐसी लीलाओंका स्मरण करती हुई
धामधनीकी ये अङ्गनाएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं हैं ?

हक खेलोंने कै खेलावहीं, कै मोर कला पूरत ।
सो क्यों छोड़ें पांउ हकके, जाकी असल हक निसबत ॥ १४

श्रीराजजी इन वन-उपवनोंमें पशु पक्षियोंको विभिन्न प्रकारकी क्रीड़ाओंके लिए प्रेरित करते हैं। यहाँ पर अनेक मयूर भी अपनी कलाका प्रदर्शन करते हैं। ऐसे अनुपम दृश्यको स्मरण करती हुई ये ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

रुहें खेलें अरस के बागमें, कै पसु पंखी खेलावत ।
सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १५

परमधामके वन-उपवनोंमें ये ब्रह्मात्माएँ स्वयं क्रीड़ा करती हुई पशु-पक्षियोंको भी विभिन्न प्रकारकी क्रीड़ाएँ कराती हैं। ऐसी धामधनीकी अङ्गनाएँ इस जगतमें आकर उनके चरणोंको कैसे भूल जाएँगी ?

रुहें सुपने दुनीको न लागहीं, जाको मुरदार कही हजरत ।
ए हक कदम क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ १६

ये ब्रह्मात्माएँ स्वन्जमें भी इस जगतके प्रभावमें नहीं बहरती हैं, जिसको रसूल मुहम्मदने मृततुल्य कहा है। ऐसी धनीकी अङ्गनाएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

ए रुहें हक हादी संग, विध विध बन विलसत ।
ए क्यों छोडें कदम मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ १७

ये ब्रह्मात्माएँ श्रीराजश्यामाजीके साथ परमधामके विभिन्न वनोंमें विलास करती हैं। ऐसी ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आकर अपने धनीके चरणोंको कैसे भूल सकती हैं ?

खेलने वाली सातों घाटकी, हक प्रेम सुराही पिलावत ।
रुहें सुपने न छोडें कदमको, जाकी असल हक निसबत ॥ १८

ये तो परमधामके सातों घाटोंमें क्रीड़ा करनेवाली हैं। स्वयं श्रीराजजी अपने हृदयरूपी प्रेम पात्रसे इन्हें प्रेम सुधाका पान कराते हैं। ऐसी ये अङ्गनाएँ इस स्वन्जवत् जगतमें आकर अपने धनीके चरणोंको अवश्य नहीं भूलेंगी।

रुहें सराब हक सुराही का, पैदरपे पीवत ।
बेहोस हुएं न छोड़ें कदम, जाकी असल हक निसबत ॥ १९
ये ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके हृदयरूपी प्रेम पात्रसे अहर्निश प्रेम सुधाका पान
करती हैं। ऐसी ब्रह्मात्माएँ मूर्च्छित अवस्थामें भी अपने धनीके चरणोंको नहीं
भूल सकतीं।

झूलें पुल मोहोल साम सामी, जल बीच मोहोल झलकत ।
रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २०
ब्रह्मात्माएँ श्रीयमुनाजीके दोनों पुल महलोंमें लगे हुए झूलोंमें झूलतीं हैं। इन
सुन्दर प्रासादोंका प्रतिबिम्ब जलमें प्रतिबिम्बित होता है। ऐसी दिव्य लीलाका
आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे भूल सकतीं हैं ?

रुहें रमें किनारें जोए के, हक हादी रुहें झीलत ।
सो सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २१
ये ब्रह्मात्माएँ श्रीयमुनाजीके तटपर विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करती हुई
श्रीराजश्यामाजीके साथ जल क्रीड़ा करती हैं। इस स्वप्नवत् जगतमें आकर
ये अपने धनीके चरणोंको अवश्य नहीं भूलेंगी।

हक हादी रुहें पाट पर, मन चाहे सिनगार साजत ।
रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २२
जल क्रीड़ाके बाद श्रीराजश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ पाट घाटमें बैठकर
इच्छानुसार शृङ्खार सजाते हैं। धामधनीकी ऐसी अङ्गनाएँ इस जगतमें आकर
अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं हैं।

रुहें मिलावा अरस बाग में, देखो किन विध ए सोभित ।
रुहें हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २३
परमधामके वन-उपवनोंमें ब्रह्मात्माओंका मिलन कितना शोभायुक्त होता है।
ऐसी ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं हैं जिनका सम्बन्ध
ही स्वयं धामधनीसे है।

पसु पंखी बोलें इन समें, कै विध बन गुंजत ।

रुहें सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २४

इस समय वनमें पशु-पक्षी कलरव करते हैं. उनकी ध्वनि पूरे वनमें गूँजती है. इस लीलाका आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी अपने धनीके चरणोंको नहीं छोड़ेंगी.

विध विधके कुंज वनमें, हक रुहें केल करत ।

सो क्यों छोडें इन कदम को, जाकी असल हक निसबत ॥ २५

ये ब्रह्मात्माएँ कुञ्जवनमें श्रीराजजीके साथ विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करतीं हैं. ऐसी आत्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकेंगी ?

बट पीपल की चौकियां, हक हादी रुहें हींचत ।

रुहें सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २६

बट-पीपलकी चौकीके ऊपर लगे हुए झूलोंमें श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ झूलते हुए आनन्दमयी लीलाएँ करते हैं. इस लीलाका आनन्द लेनेवाली आत्माएँ स्वप्नमें भी अपने धनीके चरणोंको नहीं छोड़तीं हैं.

ताल पाल वन गिरदवाए, ऊपर कै मोहोल देखत ।

सो क्यों छोडें हक कदमको, जाकी असल हक निसबत ॥ २७

हौजकौसर तालकी पालके चारों ओर वन प्रदेश सुशोभित है वहाँ पर विभिन्न प्रकारके प्रासाद शोभायुक्त हैं. यहाँके आनन्दका अनुभव करनेवाली आत्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकतीं हैं ?

सोभा चारों घाटकी, जित जोए हौज मिलत ।

रुहें सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ २८

जहाँ पर यमुनाजी हौजकौसर तालमें मिलती हैं वहाँ पर स्थित चारों घाटोंकी शोभा अद्वितीय है. इसका आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी धामधनीके चरणोंको नहीं छोड़ सकतीं हैं.

ए जो कहे मेहराब, घाटों ऊपर सोभित ।

हक कदम हिरदे रुह के, जाकी असल हक निसबत ॥ २९

चारों घाटों पर सुन्दर तोरण (कमान) सुशोभित हैं। इस अनुपम शोभाको देखनेवाली ब्रह्मात्माओंके हृदयमें धामधनीके चरण कमल अङ्कित हैं। क्योंकि इनका सम्बन्ध श्रीराजजीसे है।

खेलें हौज कौसर के बागमें, रुहें बन डारी झूलत ।

हक चरन सुपने न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३०

हौजकौसर तालके तटपर स्थित उपवनमें वृक्षोंकी शाखाओं पर झूलती हुई ब्रह्मात्माएँ आनन्दका अनुभव करती हैं। इस आनन्दको याद करती हुई वे धामधनीके श्रीचरणोंको स्वप्नमें भी नहीं छोड़ती हैं।

रुहें खेलें टापू के गुरज में, जाए झरोखों बैठत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ३१

हौज कोसर तालके मध्य द्वीप पर स्थित प्रासादों (टापू महल) के गुर्जोंमें खेलती हुई ये ब्रह्मात्माएँ झरोखेमें जाकर बैठ जाती हैं। इन लीलाओंका आनन्द लेनेवाली धामधनीकी ये अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकेंगी ?

खेलें अरस हौज टापू मिने, हक भेलें चांदनी चढत ।

रुहें क्यों रहें इन कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ३२

हौज कौसर तालके मध्य स्थित द्वीप प्रासाद (टापू महल) की छत पर धामधनीके साथ आनन्दमयी लीलाएँ करनेवाली ये ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आकर उनके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

नेहरें मोहोल ढांपियां, जल चक्राव ज्यों चलत ।

मोमिन हक कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३३

जवरोंकी नहरोंमें प्रासादोंके अन्दर ढँका हुआ जल चक्राकार होकर प्रवाहित होता है। इस अनुपम शोभाको देखनेवाली ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

कै मोहोल मानिक पहाड़में, हिसाब में न आवत ।

ए मोमिन कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३४

मानिक पर्वतमें अनेक प्रासाद सुशोभित हैं जिनकी गणना नहीं हो सकती है. इन प्रासादोंका आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

कै ताल नेहरें मानिक पर, ढिग हिडोलों चादरें गिरत ।

ए कदम मोमिन क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३५

मानिक पर्वतमें अनके प्रकारके ताल, नहरें, झूले तथा गिरती हुई जलधाराएँ सुशोभित हैं. इस दृश्यका सुख प्राप्त करनेवाली ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंको कैसे भूल सकती हैं ?

कै भांतों नेहरें वन में, सागरों निकस मिलत ।

मोमिन खेलें कदम पकड़के, जाकी असल हक निसबत ॥ ३६

मानिक पर्वतसे आगे वनकी असंख्य नहरें हैं. उनमें बहता हुआ जल सागरोंमें जाकर समाहित होता है. यहाँ पर ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको ग्रहण करती हुई विभिन्न प्रकारकी क्रीड़ाएँ करती हैं. क्योंकि उनका सम्बन्ध ही श्रीराजजीसे है.

कै बडे मोहोल किनारे सागरों, कै मोहोल टापू झलकत ।

ए मोमिन कदमों सुख लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३७

सागरोंके तटपर विशाल प्रासाद (बड़ी राँगकी हवेलियाँ) सुशोभित हैं तथा सागरोंके मध्यभागमें अनेक द्वीप महल सुशोभित हैं. यहाँ पर ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंका आनन्द प्राप्त करती हैं क्योंकि उनका मूल सम्बन्ध स्वयं श्रीराजजीसे है.

आगूं बडा चौगान बन बिना, दूब कै दुलीचों जुगत ।

मोमिन दौड़के कदम पकड़ें, जाकी असल हक निसबत ॥ ३८

रङ्गभवनके पृष्ठभागमें विशाल मैदान (पश्चिमकी चौगान) है, वहाँ पर वृक्ष नहीं हैं. उसके निकट कालीनकी भाँति दूब सुशोभित है. यहाँ पर लीला

करती हुई ब्रह्मात्माएँ द्रुत गतिसे दौड़कर श्रीराजजीके चरण ग्रहण करती हैं।

हक हादी रुहें इन चौगानमें, कै पसु पंखी दौड़ावत ।

मोमिन लेवें सुख कदमों, जाकी असल हक निसबत ॥ ३९

श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ इस मैदानमें पशु पक्षियों पर आरोहण कर उन्हें दौड़ाते हैं। यहाँ पर भी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंका सुख प्राप्त करती हैं।

कहा कहुं बाग अरसका, जित कै रंगों फूल फूलत ।

रुहें क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४०

रङ्गभवनके पृष्ठभागमें स्थित फूलबाग तथा नूरबागका वर्णन कहाँ तक करें। वहाँ पर अनेक रङ्गोंके फूल खिले हुए हैं। यहाँका आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

रुहें खेलें फूल बागमें, कै खुसबोए रस बेहेकत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४१

फूल बागमें लीला करनेवाली ब्रह्मात्माएँ यहाँकी अपार सुगन्धिका आनन्द लेती हैं वे अपने धामधनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

विध विधकी वन छत्रियां, जडाव चंद्रवा ज्यों चलकत ।

ए कदम सुख सुपने लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४२

यहाँ पर वनके वृक्षोंकी छत्रियाँ चँद्रवाकी भाँति सुशोभित हैं। श्रीराजजीके चरणोंमें बैठी हुई ब्रह्मात्माएँ स्वप्नवत् जगतमें भी इस अनुपम शोभाका आनन्द प्राप्त करती हैं।

इन बाग तले जो बाग है, ए क्यों कहे जुबां सिफत ।

ए मोमिन कदम क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४३

फूलबागके नीचे नूरबाग सुशोभित है। इसकी सुन्दरताका वर्णन नहीं हो सकता है। धामधनीके साथ यहाँका आनन्दको लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

मोर चकोर मैना कोईली, कै विध वन टहुंकत ।
रुहें कदम सुख सुपने लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४४
यहाँ पर मयूर, चकोर, मैना, कोयल आदि पक्षी विभिन्न प्रकारसे मधुर
कलरव करते हैं। धामधनीके चरणोंमें रहनेवाली ब्रह्मात्माएँ इस अपार
शोभाका आनन्द स्वप्नमें भी प्राप्त करती हैं।

जो खेलें झीलें चेहेबचे, जल फुहारे उछलत ।
सो क्यों रहे हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४५
जो ब्रह्मात्माएँ जलकुण्डोंमें जलक्रीड़ा करती हुई आनन्दका अनुभव करतीं
हैं तथा फुहारोंसे उछलते हुए जलका मनोहर दृश्य हृदयझम करतीं हैं, वे
अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकतीं हैं ?

रुहें खेलें लाल चबूतरे, कै रंगों हाथी झूमत ।
सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४६
ये ब्रह्मात्माएँ लाल चबूतरे पर विभिन्न क्रीड़ाएँ करतीं हैं। वहाँ पर विविध
झँडोंके अनेक हाथी झूमते हुए दिखाई देते हैं। इस अपार आनन्दका अनुभव
करनेवाली ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकतीं हैं ?

कै बाघ चीते दीपे केसरी, बोलें कूदें गरजत ।
रुहें क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४७
यहाँ पर विभिन्न प्रकारके बाघ, चीते, तेंदुए (दीप), केसरी सिंह आदि पशु
गर्जना करते हुए दौड़ते हैं। इस दृश्यको हृदयझम करनेवाली ब्रह्मात्माएँ नश्वर
जगतमें भी अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकतीं हैं ?

कै विध बाजे बजावहीं, इत बांदर नट नाचत ।
रुहें सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ४८
यहाँ पर वानर भी विभिन्न प्रकारके वाद्ययन्त्र बजाते हुए नटोंकी भाँति नृत्य
करते हैं। ऐसे दृश्योंको हृदयमें धारण करनेवाली ब्रह्मात्माएँ इस स्वप्नवत्
जगतमें धामधनीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

कै बडे पसु पंखी अरस के, कै उडें खेलें कूदत ।
रहें क्यों रहें हक चरन बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ४९

परमधाममें अनेक बड़े-बड़े पशु पक्षी कोई उड़ते हुए कोई दौड़ते हुए क्रीड़ा
करते हैं. ऐसे अनुपम दृश्यका आनन्द लेनेवाली ब्रह्मात्माएँ धामधनीके
चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

कै विध यों मधुवनमें, सुख लेवें चित चाहत ।
सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ५०

इसी प्रकार ब्रह्मात्माएँ मधुवनमें भी विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करती हुई
इच्छानुसार सुख प्राप्त करती हैं. ऐसी ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंके बिना
कैसे रह सकती हैं ?

बडे मोहोल जो पहाड़ से, इत रहें खेलें कै जुगत ।
सो सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५१

यहाँ पर पर्वतकी भाँति दिखाई देनेवाले बड़े बड़े प्रासादोंमें ब्रह्मात्माएँ
विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करती हैं. ऐसी ब्रह्मात्माएँ इस स्वप्नवत् जगतमें
आकर धामधनीके चरणको अवश्य नहीं छोड़ेंगी.

चार मोहोल बडे थंभ ज्यों, सो ऊपर जाए मिलत ।
रहें इत सुख कदमों लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५२

पुखराज पर्वतमें स्तम्भोंकी भाँति सुशोभित बड़े-बड़े चार प्रासाद हैं. जो
ऊपर जाकर एक दूसरेसे मिल जाते हैं. यहाँ पर धामधनीकी अङ्गनाएँ अपने
धनीके चरणोंका सुख प्राप्त करती हैं.

हजार हांसें जित गिरदवाए, बीच मोहोल बडे बिराजत ।
इत रहें सुख लेवें चरनका, जाकी असल हक निसबत ॥ ५३

पुखराज पर्वतके चारों ओर एक हजार पहल (हास) शोभायमान हैं तथा
मध्यमें बड़े बड़े प्रासाद सुशोभित हैं. ब्रह्मात्माएँ यहाँ पर आकर धामधनीसे
अपार सुख प्राप्त करती हैं.

पहाड़ पुखराजी मोहोल में, सुख चाँदनी लेवत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ५४

पुखराज पर्वतके विशाल प्रासादों (पुखराजी महलों) की चाँदनीमें बैठकर ब्रह्मात्माएँ अपार आनन्दका अनुभव करती हैं। श्रीराजजीकी ऐसी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

अति बडे चार द्वार चाँदनी, कै हाथी हलकों आवत ।

चरन छूटे ना इन खावंद के, जाकी असल हक निसबत ॥ ५५

इस विशाल चाँदनीमें बडे-बडे चार द्वार सुशोभित हैं। इन्हीं द्वारोंसे होकर हाथियोंका झुण्ड चाँदनी पर आता है। यहाँका आनन्द लेनेवाली ब्रह्माङ्गनाओंसे अपने स्वामीके चरण कमल नहीं छुटते हैं।

बडे पसु पंखी इन चाँदनी, हक हादी मोहोला लेवत ।

रुहें ए चरन क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५६

बडे-बडे पशु पक्षी इसी चाँदनी पर श्रीराजजी तथा श्यामाजीके दर्शन करते हैं। ऐसे धामधनीके इन चरणोंको उनकी अङ्गनाएँ कैसे छोड़ सकती हैं ?

हाथी बाघ चीते दीपे केसरी, कोई जातें गिन ना सकत ।

हक कदम रुहें क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ५७

यहाँ पर हाथी, बाघ, चीता, तेंदुए, केसरीसिंह आदिकी असंख्य जातियाँ हैं। इन सभीकी विभिन्न लीलाओंको देखनेवाली ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

ए निपट बडा मोहोल चाँदनी, इत कै मिलावे मिलत ।

रुहें न छोडें हक कदमको, जाकी असल हक निसबत ॥ ५८

इस चाँदनी पर विशाल प्रासाद हैं जहाँ पर अनेक पशुपक्षी तथा परिचारिकाएँ एकत्रित होती हैं। ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंमें बैठकर इन सुखोंका अनुभव करती हैं।

बडे चार द्वार चबूतरों, क्यों कहूं देहेलानों सिफत ।

ए सुख लेवें मोमिन कदमों, जाकी असल हक निसबत ॥ ५९

इस चाँदनीके चारों द्वारोंके सम्मुख दो दो चबूतरे सुशोभित हैं इनसे लगते हुए दालानोंकी शोभा अद्वितीय है. श्रीराजजीके चरणोंमें रहकर ब्रह्मात्मा एँ यहाँका अपार आनन्द प्राप्त करती हैं.

ए अति ऊँचे मोहोल बीचके, हक सुख आकासी देवत ।

रुहें ए कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६०

आकाशीके मध्यमें स्थित अत्यन्त ऊँचे प्रासाद (आकाशी महल) के अन्दर श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंको आनन्द प्रदान करते हैं. धामधनीकी ये अङ्गनाएँ उनके चरणोंको किसी भी प्रकार नहीं छोड़ती हैं.

हक हादी रुहें बडे मोहोल में, इन गुरजों सुख को गिनत ।

ए कदम सुख मोमिन जानहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६१

इन विशाल प्रासादोंमें श्रीराजश्यामाजी तथा ब्रह्मात्मा एँ आनन्दमयी लीलाएँ करते हैं. यहाँके गुरजोंके सुख भी अनन्त हैं. ब्रह्मात्मा एँ श्रीराजजीके चरणोंमें बैठकर इन सुखोंको प्राप्त करती हैं.

सुख लेत ताल मूल जोएके, कै विध केल करत ।

रुहें क्यों छोड़ें हक चरन को, जाकी असल हक निसबत ॥ ६२

श्रीयमुनाजीका उद्गम स्थल पुखराजी तालमें ब्रह्मात्मा एँ विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करती हैं. इन लीलाओंका आनन्द लेनेवाली धामधनीकी अङ्गनाएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

मोहोल बडे ताल ऊपर, रुहें सुख लेवें हकसों इत ।

ए क्यों छोड़ें हक कदमको, जाकी असल हक निसबत ॥ ६३

इस तालके ऊपर रत्नोंके विशाल प्रासाद सुशोभित हैं. जहाँ पर ब्रह्मात्मा एँ श्रीराजजीसे अपार सुख प्राप्त करती हैं. इस प्रकार धामधनीकी अङ्गनाएँ उनके चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं ?

दोनों तरफों मोहोल के, आगूं जित दरखत ।

सो क्यों छोड़ें कदम सुपने, जाकी असल हक निसबत ॥ ६४

इन प्रासादोंके दोनों ओर बड़े बनके पाँच-पाँच वृक्ष सुशोभित हैं. यहाँके आनन्दका अनुभव करनेवाली ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी धामधनीके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं.

दोऊ किनारें गुरज दोए, बीच सोलें चादरें उतरत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ६५

पुखराजी तालसे अधबीचके कुण्डमें सोलह जलधाराओंके दोनों ओर दो गुर्ज सुशोभित हैं. इस दृश्यको हृदयङ्गम करनेवाली ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

ऊपर चादरों मोहोल जो, बीच बड़े देहेलान देखत ।

दोऊ तरफों कदम सुख लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६६

इन जलधाराओंके ऊपर दोनों ओर विशाल प्रासाद (खास महल) सुशोभित हैं. मध्यमें बड़े-बड़े दालान हैं. यहाँ पर दोनों ओर बैठकर ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंका सुख प्राप्त करती हैं.

अधबीच में कुंड जो, जित चादरों जल गिरत ।

रुहें छोडें ना कदम सुपने, जाकी असल हक निसबत ॥ ६७

पुखराजी तालके इन प्रासादोंसे सोलह जलधाराओंके रूपमें प्रवाहित होता हुआ जल अधबीचके कुण्डमें गिरता है. इस दृश्यको हृदयङ्गम करती हुई ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी श्रीराजजीके चरणोंको नहीं छोड़ेंगी.

तले ताल वन बंगले, जल चक्राव ज्यों चलत ।

रुहें सुपने कदम न छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ६८

इस तालके नीचे विशाल प्रासाद तथा वनकी अद्वितीय शोभा है. यहाँ पर जल चक्रीय गतिसे प्रवाहित होता है. यहाँका आनन्द लेनेवाली धामधनीकी अङ्गनाएँ अपने धनीके चरणोंको स्वप्नमें भी नहीं छोड़ती हैं.

कै फुहारे मुख जानवरों, जल तीर ज्यों छूटत ।

क्यों भूलें इत सुख कदम के, जाकी असल हक निसबत ॥ ६९

यहाँके बड़े बड़े प्रासादोंमें स्थित उपवनमें पशुओंकी मुखाकृतिके अनेक फुहारे हैं. उनसे तीरकी भाँति तीव्र गतिसे जल निकलता है. श्रीराजजीके चरणोंमें रहनेवाली ब्रह्मात्माएँ इन सुखोंको कैसे भूल सकती हैं ?

ए जंजीरें जलकी, अदभुत सोभा लेवत ।

क्यों छोड़ें ए कदम मोमिन, जाकी असल हक निसबत ॥ ७०

यहाँ पर नहरोंमें प्रवाहित होता हुआ जल शृङ्खला (जञ्जीर) की भाँति दिखाई देता है. जिसकी शोभा अत्यन्त अद्भुत है. इन सुखोंको प्रदान करनेवाले धामधनीके चरणोंको ब्रह्मात्माएँ कैसे भूल सकती हैं ?

उलंघ जात कै चेहेबचों, जल साम सामी जात आवत ।

इत कदम सुख मोमिन लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७१

आमने-सामनेके फुहारोंसे निकलती हुई जलधाराएँ अनेक कुण्डोंको लाँघकर आगे बढ़ती हैं. यहाँ पर ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंका अपार सुख प्राप्त करती हैं.

जल आवे जाए ऊपर से, तले हक हादी रुहें खेलत ।

ए सुख क्यों छूटें कदम के, जाकी असल हक निसबत ॥ ७२

इन फुहारोंकी जलधाराएँ ऊपरसे आती जाती हैं. इनके नीचे श्रीराज श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ विभिन्न लीलाएँ करते हैं. श्रीराजजीके चरणोंके ये सुख इस जगतमें कैसे छूट सकते हैं ?

गिरदवाए बडे द्वार मेहराबी, ए मोहोल सोभा लेवत ।

इत खेलें रुहें कदम तलें, जाकी असल हक निसबत ॥ ७३

यहाँ पर चारों ओर बड़े बड़े द्वार तोरण (कमान) की भाँति सुशोभित हैं. जिनसे इन प्रासादोंकी शोभा और भी अधिक बढ़ जाती है. ब्रह्मात्माएँ यहाँ पर श्रीराजजीके चरणोंमें विभिन्न लीलाएँ करती हैं.

इत ताल तलें बन छाया मिने, रुहें बीच बगीचों मलपत ।

ए सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७४

ब्रह्मात्माएँ पुखराजी तालके नीचे उपवनमें बगीचोंके अन्दर वनकी छायामें
आनन्दसे झूमतीं हैं। श्रीराजजीके चरणोंके इन सुखोंको वे इस स्वप्नवत्
जगतमें भी नहीं छोड़तीं हैं।

केती चक्रावसे बाहेर, जोए तले चबूतरे निकसत ।

रुहें खेलें तले कदम के, जाकी असल हक निसबत ॥ ७५

अनेक जलकुण्डोंसे नहरोंके द्वारा चक्रीय गतिसे बहता हुआ जल ढौँपे
चबूतरेसे बारह निकल कर यमुनाजीके कुण्डमें गिरता है। यहाँ पर
श्रीराजजीके चरणोंमें बैठकर खेलती हुई ब्रह्मात्माएँ इन दृश्योंको देखतीं हैं।

जोए चबूतरे कुंड पर, ऊपर बन झूमत ।

ए कदम सुख मोमिन लेवहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७६

श्रीयमुनाजीके ढँके हुए चबूतरे तथा मूलकुण्डके ऊपर वनके वृक्षोंकी
शाखाएँ झूमती हुई सुन्दर दिखाई देतीं हैं। ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंमें
बैठकर इन सुखोंका अनुभव करतीं हैं।

जमुना जल ढांपी चली, ए बैठक सोभा अतंत ।

ए सुपने कदम न छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७७

यमुनाजी मूलकुण्डसे निकलकर कुछ दूरी तक ढँकी हुई प्रवाहित होतीं हैं।
इनके तटपर विश्रामके लिए अति सुन्दर विश्रामस्थल हैं। धामधनीकी ये
अङ्गनाएँ स्वप्नमें बैठकर भी उनके चरणोंके इन सुखोंका अनुभव करतीं हैं।

दोऊ किनारें ढांपिल, आगूं जल जोए खुलत ।

रुहें क्यों रहें इन कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ७८

दोनों किनारोंसे ढँका हुआ यह जल आगे चलकर खुले रूपमें प्रवाहित होता
है। इस मनोहरी दृश्यका अनुभव करवानेवाले श्रीराजजीके इन चरणोंको
ब्रह्मात्माएँ कैसे छोड़ सकतीं हैं ?

एक मोहोल एक चबूतरा, जाए जोए पुल तले मिलत ।

रुहे एकदंम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७९

यमुनाजीके तट पर मोड़से लेकर पुल तक क्रमशः एक चबूतरा एवं एक देहुरी हैं. यहाँसे बहता हुआ जल केलके पुलके नीचे तक पहुँचता है. यहाँसे यमुनाजी दूसरे मोड़ तक सीधी बहती हुई चलती हैं. इस अनुपम शोभाका अनुभव करवाने वाले धामधनीके चरणोंको ब्रह्मात्माएँ कैसे छोड़ सकती हैं ?

जोए इतथें मरोर सीधी चली, अरस आगूं सोभा सरत ।

रुहें क्यों छोडें इन कदम को, जाकी असल हक निसबत ॥ ८०

यहाँसे मुड़कर आगे बढ़ती हुई यमुनाजी रङ्गभवनके आगे अद्वितीय शोभा धारण करती हैं. इस शोभाका अनुभव करवानेवाले धामधनीके चरणोंको उनकी अङ्गनाएँ कैसे छोड़ सकती हैं.

दोऊ पुल के बीच में, बड़ी सातों घाटों सिफत ।

रुहें खेलें इत कदमों तले, जाकी असल हक निसबत ॥ ८१

दोनों (केल तथा वट) पुलोंके मध्यमें सातों घाटोंकी अद्वितीय शोभा है. श्रीराजजीके चरणोंमें रहने वाली ब्रह्मात्माएँ यहाँ पर विभिन्न लीलाएँ करती हैं.

नूर और नूरतजल्ला, अरस साम सामी झलकत ।

ए रुहें कदम न भूलें सुपने, जाकी असल हक निसबत ॥ ८२

अक्षरधाम तथा परमधाम यमुनाजीके दोनों ओर आमने सामने सुशोभित हैं. इस अनुपम दृश्यका अनुभव करवानेवाले धामधनीके इन चरणोंको उनकी अङ्गनाएँ स्वप्नमें भी नहीं भूलेंगी.

दोऊ दरबार की रोसनी, अंबर नूर भरत ।

रुहें कदम न भूलें सुपने, जाकी असल हक निसबत ॥ ८३

दोनों धामोंका देदीप्यमान प्रकाश पूरे आकाशमें व्यास होता है. ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी अपने धनीके चरणोंको याद करती हुई इस दिव्य शोभाका अनुभव करती हैं.

अरस जिमी नूर अपार है, इतके बासी बड़े बख्त ।

महामत रुहे हक जात हैं, जाकी हक कदमों निसबत ॥ ८४

परमधामकी दिव्यभूमिका प्रकाश अपरम्पर है. महामति कहते हैं, यहाँ पर रहनेवाली धामधनीकी अङ्गनाएँ बड़ी भाग्यशालिनी हैं. उनका ही मूलसम्बन्ध श्रीराजजीके चरणोंसे है.

प्रकरण ८ चौपाई ५२७

अरस अंदर निसबत चरन

अरस अंदर सुख देवहीं, जो रुहों दिल उपजत ।

सो रुहें कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ १

परमधाम-रङ्गमहलमें श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंकी इच्छाके अनुरूप उन्हें अपार सुख प्रदान करते हैं. ऐसे धामधनीके चरणकमल उनकी अङ्गनाएँ कैसे छोड़ सकती हैं.

अरस अरवाहें भोम खिलवत, नूर दसों दिस लरत ।

सो क्यों छोड़ें इन कदम को, जाकी असल हक निसबत ॥ २

ब्रह्मात्माएँ रङ्गभवनकी प्रथम भूमिका स्थित मूलमिलामें विराजमान हैं. यहाँका दिव्य प्रकाश दसों दिशाओंमें स्पर्धा करता हुआ दिखाई देता है. ये ब्रह्मात्माएँ धामधनीके चरणोंको कैसे भूल सकती हैं जिनका मूल सम्बन्ध ही उनके साथ है.

रुहें बारे हजार बैठाए के, हक हाँसी को खेलावत ।

सो रुहें कदम क्यों छोड़हीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ३

श्रीराजजीने इसी मूलमिलावामें बारह हजार ब्रह्मात्माओंको अपने चरणोंमें बैठाकर उनका उपहास (हाँसी) करनेके लिए उनकी सुरताको नश्वर जगतके खेलमें भेजा है. धामधनीकी ये अङ्गनाएँ अपने धनीके इन चरणोंको कैसे छोड़ सकती हैं.

लें सुख चेहेबचे भोम दूसरी, मोहोल बारे सहस्र जित ।

सो क्यों छोड़ें रुहें कदम को, जाकी असल हक निसबत ॥ ४

ये ब्रह्मात्माएँ रङ्गभवनकी दूसरी भूमिकामें जल कुण्ड(खडोकली) में

जलक्रीडा कर भूलभुलवनीके बारह हजार मन्दिरोंमें आनन्दमयी लीलाएँ
करती हैं। इन सुखोंका अनुभव करवानेवाले अपने धनीके चरणोंको ये
अङ्गनाएँ कैसे भूल सकती हैं ?

रुहें तीसरी भोम चढ के, बडे झरोखों आवत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ५

तीसरी भूमिकामें पहुँचकर ब्रह्मात्माएँ बडे झरोखा पर (दस मन्दिरके
दालानमें) आती हैं। यहाँके सुखोंका अनुभव करवानेवाले धामधनीके इन
चरणोंको वे कैसे भूल सकती हैं ?

कै इंड पलथें पैदा फना, जिन कादर ए कुदरत ।

ए आवें मुजरे इन सरूप के, जाकी असल हक निसबत ॥ ६

जिन समर्थ अक्षरब्रह्मके संकेत मात्रसे एक ही क्षणमें करोड़ों ब्रह्माण्ड उत्पन्न
होकर मिट जाते हैं। ऐसे अक्षरब्रह्म भी अक्षरातीत धामधनीके दर्शनके लिए
अक्षरधामसे नित्य प्रति परमधाम आते हैं।

नूर मकान से आवें दीदार को, इत नूरजमाल विराजत ।

रुहें याद कदम क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ७

इसी तीसरी भूमिकामें विराजमान अक्षरातीत धामधनीके दर्शनके लिए
अक्षरब्रह्म अक्षरधामसे नित्यप्रति आते हैं। इस समयका सुख देनेवाले
धामधनीके इन चरणोंको ब्रह्मात्माएँ कैसे छोड़ सकती हैं ?

हक बैठें पौढें भोम तीसरी, आगूँ झरोखों आरोगत ।

रुहें क्यों छोडें इन कदम को, जाकी असल हक निसबत ॥ ८

श्रीराजजी इसी तृतीय भूमिकामें झरोखेके सम्मुख आसीन होते हैं, पीले
मन्दिरमें विश्राम करते हैं एवं झरोखाके सम्मुख दस मन्दिरोंकी दालानमें
विराजमान होकर आरोगते हैं। इस दृश्यका अनुभव करवानेवाले अपने
धनीके चरणोंको ब्रह्मात्माएँ नहीं भूलतीं हैं।

रुहें अरस अजीम की, भोम चौथी देखें निरत ।

सो हक कदम क्यों छोडहीं, जाकी असल हक निसबत ॥ ९

परमधामकी ये ब्रह्मात्माएँ रङ्ग भवनकी चतुर्थ भूमिकामें नृत्य लीलाका दर्शन

करती हैं। ऐसे दिव्य आनन्दका अनुभव करवानेवाले श्रीराजजीके चरणोंको वे कैसे भूल सकती हैं ?

रुहें अरस अजीम की, पांचमी भोम पौढत ।

सो सुपने कदम न छोड़ही, जाकी असल हक निसबत ॥ १०

परमधामकी ये आत्माएँ पाँचवीं भूमिकामें विश्राम (शयन) करती हैं। यहाँके सुखोंको अनुभव करवानेवाले श्रीराजजीके इन चरणोंको वे स्वप्नमें भी नहीं भूलती हैं।

रुहें अरस अजीम की, भोम छठी कै जुगत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ ११

परमधामकी ये आत्माएँ श्रीराजजीके साथ छहीं भूमिकामें सुखपालोंका आनन्द लेती हैं। धामधनीकी ये अङ्गनाएँ उनके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं?

रुहें अरस भोम सातमी, जो छपर खटों हीचत ।

सो सुपने कदम न छोड़ही जाकी असल हक निसबत ॥ १२

ये ब्रह्मात्माएँ रङ्ग भवनकी सातवीं भूमिकामें झूलते में झूलती हैं। ऐसी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंको स्वप्नमें भी नहीं भूलती हैं।

ए अरस भोम आठमी, साम सामी हिडोलों खटकत ।

ए रुहें सुपने कदम न छोड़ही, जाकी असल हक निसबत ॥ १३

ये ब्रह्मात्माएँ रङ्ग भवनकी आठवीं भूमिकामें आमने सामने लगे हुए झूलतोंमें श्रीराजजीके साथ झूलती हैं। उस समय ज़ज़ीरोंकी कर्णप्रिय मधुर ध्वनि मुखरित होती है। इन सुखोंका अनुभव करनेवाली ब्रह्मात्माएँ स्वप्नमें भी धनीके चरणोंको नहीं छोड़ती हैं।

अरस रुहें सुख नौमी भोमें, सुख सिंघासन समस्त ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १४

ये ब्रह्मात्माएँ रङ्ग भवनकी नवमी भूमिकामें सुशोभित सिंहासनमें श्रीराजजीके साथ आनन्दका अनुभव करती हैं। ऐसी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

रुहें रहेवें अरस में, जो सुख झरोखों भोगवत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १५

जो ब्रह्मात्माएँ परमधाममें झरोखोंका सुख लेती रहती हैं वे इस जगतमें
श्रीराजजीके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं।

हक हादी रुहें सुख अरस चाँदनी, अरस अंबर जोत होवत ।

सो क्यों रहें हक कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १६

रङ्ग भवनकी चाँदनीमें श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ अपार आनन्दका
अनुभव करते हैं। यहाँकी ज्योति पूरे आकाशमें व्यास होती है। इस अपार
सुखका अनुभव करनेवाली ब्रह्मात्माएँ अपने धनीके चरणोंके बिना कैसे रह
सकती हैं ?

सकल भोम सुख लेवहीं, रुहें हक कदम पकरत ।

सो क्यों रहें इन कदम बिना, जाकी असल हक निसबत ॥ १७

श्रीराजजीके चरणोंको हृदयमें धारण कर ब्रह्मात्माएँ रङ्ग भवनकी सभी
भूमिकाओंके अपार सुखका अनुभव करती हैं। जिनका सम्बन्ध ही स्वयं
धामधनीसे है ऐसी आत्माएँ उनके चरणोंके बिना कैसे रह सकती हैं ?

आई नजीक जागनी, पीछे तो उठ बैठत ।

हांसी होसी भूली पर, जाकी असल हक निसबत ॥ १८

अब आत्म जागृतिका समय निकट आ गया है। पीछे तो (धामधनीके आदेश
द्वारा जगाने पर) सभी अपनी पर-आत्मामें जागृत हो जाएँगी तब
धामधनीकी अङ्गनाओंको उनकी भूल पर बड़ी हँसी होगी।

रुहें हुकम ले दौड़ियो, मूल तन अरस में उठत ।

हक हंससी तुम ऊपर, रुहें क्यों भूली ए निसबत ॥ १९

हे ब्रह्मात्माओ ! धामधनीके आदेशको शिरोधार्य कर आत्मजागृतिके लिए
तत्पर हो जाओ। जिससे तुम्हारा मूल तन (पर-आत्मा) परमधाममें जागृत
हो जाए। अन्यथा श्रीराजजी तुम्हारा उपहास करते हुए कहेंगे कि मेरी
अङ्गनाएँ अपने सम्बन्धको कैसे भूल गई ?

आया नजीक बखत मोमिनों, क्यों भूलिए हादी नसीहत ।

जो सुपने कदम न भूलिए, हंसिए हक्सों ले निसबत ॥ २०

हे ब्रह्मात्माओ ! आत्म जागृतिका समय निकट आ गया है. अब सद्गुरुके उपदेशोंको क्यों भूलें ? यदि हम स्वप्नवत् जगतमें भी धामधनीके चरणोंको नहीं भूलेंगी, तो जागृत होने पर उनके साथ मिलकर आनन्द विनोद करेंगी.

लाहा लीजे दोनों ठौर का, सुनो मोमिनों कहे महामत ।

क्यों सुपने ए चरन छोड़िए, अपनी असल निसबत ॥ २१

महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! सुनो, इस प्रकार धामधनीके सम्बन्धको पहचान कर दोनों स्थानों (नश्वर जगत तथा दिव्य परमधाम) का लाभ लेना चाहिए. अपना मूल सम्बन्ध अक्षरगतीत धामधनीके साथ है इसलिए हम इस स्वप्नमें भी उनके चरणोंको क्यों भूलें ?

प्रकरण ९ चौपाई ५४८

श्री राजजी की इजार

असल इजार एक पाच की, एकै रस सब ए ।

कै बेल पात फूल बूटियाँ, रंग केते कहूं इनके ॥ १

श्रीराजजीकी इजार मूलतः पाच नामक रत्न सदृश हरित रङ्गकी है किन्तु इस एक ही रङ्गमें अनेक प्रकारके गुण तथा सर्वरस समाहित हैं. इसमें अनेक लताएँ, पत्ते, फूल तथा बूटियाँ चित्रित हैं. इनके विभिन्न रङ्गोंका वर्णन कैसे करें ?

बेल मोहरी इजार की, जानों एही भूषन सुंदर ।

अतंत सोभा बसे, एही है खूबतर ॥ २

इस इजारकी मोहरी पर अनेक प्रकारकी सुन्दर लताएँ सुशोभित हैं. ऐसा प्रतीत होता है कि यह सुन्दर आभूषण ही है, इसकी ही शोभा सबसे अधिक है एवं यही सर्वश्रेष्ठ कृति है.

इजार बंध नंग कै रंग, कै बूटी कै नक्स ।

निरमान न होए इन जुबाँ, ए वस्तर अजीम अरस ॥ ३

इसके इजारबन्दमें अनेक रङ्गोंके विभिन्न रत्न सुशोभित हैं. उनमें विभिन्न

बूटियोंकी चित्रकारी है. परमधामके इस अद्वितीय वस्त्रकी सुन्दरताका मूल्याङ्कन जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकता है.

अति सोभा अति नरमाई, नंग सोभित नरम पसम ।

अरस चीज न आवे सबद में, ए नेक केहेत हुकम ॥ ४

जिस प्रकार इसकी शोभा अत्यधिक है उसी प्रकार इसमें कोमलता भी अत्यधिक है. अति कोमल इस दिव्य वस्त्रमें अनेक रङ्गोंके रल्सुशोभित हैं. यद्यपि परमधामकी वस्तुकी शोभा शब्दोंमें व्यक्त नहीं हो सकती तथापि श्रीराजजीकी आज्ञासे थोड़ा-सा वर्णन करता हूँ.

बेल पात फूल कै विध के, कै विध कांगरी इत ।

जोत न नरमाई सुमार, जुबां क्या कहे सिफत ॥ ५

इसमें विभिन्न प्रकारकी लताएँ पत्ते, फूल आदिकी चित्रकारी अङ्कित है. इसके किनारे पर विभिन्न प्रकारकी काँगरी सुशोभित हैं. इनकी ज्योतिर्मयी आभा तथा सुकोमलताका कोई पारावार ही नहीं है. यह जिह्वा इस अपार शोभाका वर्णन कैसे कर सकती है ?

नेफा रंग कसूंब का, अति खूबी अतलस ।

बेल भरी मोती कांगरी, जानों ए भूषन से सरस ॥ ६

इस इजारके नेफेका रङ्ग कुसुंभ नामक पुष्पके रङ्गकी भाँति केसरिया है. रेशमी वस्त्रका यह नेफा अत्यन्त सुकोमल है. इसमें विभिन्न प्रकारकी लताओंकी चित्रकारी है एवं किनारे पर मोतियोंकी काँगरी है. ऐसा लगता है कि यह आभूषणसे भी अधिक सुन्दर है.

ताना बाना रंग रेसम, जबेर का सब सोए ।

बेल फूल बूटी तो कहूं, जो मिलाए समारे होए ॥ ७

इस इजारका ताना-बाना रेशमी धागेसे होने से यह अत्यन्त सुकोमल है. पाच नामक रल्सी भाँति हरित रङ्गकी होनेसे यह पूर्णरूपसे रल्सी-सी ही बनी हुई प्रतीत होती है. इसमें चित्रित लताएँ, फूल, बूटियाँ आदिकी शोभा तभी व्यक्त की जा सकती है जब इसको किसीने सँवार कर बनाया हो.

खुले अंग सिनागर छबि छाती

रुह मेरी क्यों न आवे तोहे लजत, तोको हकें कही अरस की ।

अरस किया तेरे दिल को, तोहे ऐसी बडाई हकें दई ॥ १

हे मेरी आत्मा ! तुझे अभी तक आनन्दका अनुभव क्यों नहीं हो रहा है ?
धामधनीने तो तुझे परमधामकी आत्मा कहा है. उन्होंने तेरे हृदयको परमधाम
बनाकर तुझे इतनी बड़ी शोभा प्रदान की है.

जो कदी तें आई नहीं, तोमें हकका है हुकम ।

हुजत दई तोको अरस की, दिया बेसक अपना इलम ॥ २

यद्यपि तेरी पर-आत्मा इस जगतमें आई नहीं है (मात्र सुरता ही आई है)
तथापि तुझे धामधनीका आदेश प्राप्त है. इतना ही नहीं परमधामकी होनेका
अधिकार भी तुझे दिया है और सन्देहको दूर करने वाला अपना ब्रह्मज्ञान
(तारतम ज्ञान) भी प्रदान किया है.

बिन जामें देखों अंग को, आसिक सब सुख चाहे ।

वागा पेहेने हमेसा देखिए, कछू ए छबि और देखाए ॥ ३

यदि तू अनुरागिनी बनकर अपने प्रियतम धनीके सभी प्रकारके सुखोंको
चाहती है तो बिना जामा पहने हुए उनके अङ्गोंको देख. बाघा वस्त्र धारण
किए हुए उनके स्वरूपका दर्शन तो सर्वदा करती आई है, किन्तु बाघा
बिनाकी उनकी शोभा कुछ और ही दिखाई देती है.

आसिक इन मासूक की, नए सुख चाहे अनेक ।

निरखे नए नए सिनागर, जाने एक से दूजा विसेक ॥ ४

अनुरागिनी आत्मा अपने प्रियतम धनीके अनेक नए नए सुखोंकी चाहना
करती है और उनके नए नए शृङ्गारका दर्शन करती है. मानों वे एक दूसरेसे
अधिक विशेष हैं.

जुदे जुदे सुख ले हक के, रुह आसिक क्योंए न अघाए ।

ताथें जुदा जुदा वरनन, सुख आसिक ले दिल चाहे ॥ ५

इस प्रकार श्रीराजजीके अलग-अलग शृङ्गारके सुखोंको प्राप्तकर यह

अनुरागिनी आत्मा कदापि तृप्त नहीं होती है। इसलिए उसके मनमें उनके नूतन शृङ्खारोंका वर्णन करनेकी इच्छा बनी रहती है।

खाना पीना छिन छिन लिया, प्यार अरस रुहन ।

पल पल मासूक देखना, एही आहार आसिकन ॥ ६

प्रतिपल अपने प्रियतम धनीका प्रेम प्राप्त करना ही परमधामकी इन आत्माओंका खाना-पीना है। इन अनुरागिनियोंका आहार ही प्रतिपल अपने प्रियतमके दर्शन है।

हक बैठे अपने अरस में, सो अरस मोमिन का दिल ।

तो अनेक खूबी खुशालियां, हम क्यों न लेवें सामिल ॥ ७

प्रियतम धनी अपने परमधाममें विराजमान हैं और वह परमधाम ब्रह्मात्माओंका हृदय है। तो फिर हम उनके साथ मिलकर अनेक प्रकारका आनन्द क्यों प्राप्त न करें ?

ए जो हक वस्तर की खूबियां, सो हक अंग परदा जहूर ।

बारीक ए सुख जाने रुहें, जिनपें अरस सहूर ॥ ८

श्रीराजजीके वस्त्रोंकी यही विशेषता है कि उनके अङ्गका प्रकाश ही वस्त्रके आवरणकी भाँति दिखाई देता है। जिन ब्रह्मात्माओंको तारतम ज्ञान प्राप्त है वे ही उनके इन सूक्ष्म सुखोंको समझ सकतीं हैं।

वस्तर भूषण सब पूरन, सुख बिन जामें और जिनस ।

देख देख देखे जो आसिक, जो देखे सोई सरस ॥ ९

श्रीराजजीका दिव्य स्वरूप वस्त्र तथा आभूषणोंसे पूर्ण सुशोभित है तथापि इन वस्त्राभूषणोंके बिना वह कुछ और ही आनन्दप्रद लगता है। ऐसी दिव्य छविको देखती हुई अनुरागिनी आत्माकी दृष्टि स्थिर हो जाती है। वह जिस अङ्गको देखती है वही उसे अधिक सुन्दर लगता है।

कट कोमल अति पतली, सुंदर छाती गौर ।

देख देख सुख पाइए, जो होवे अरस सहूर ॥ १०

उनकी कटि अत्यन्त सुकोमल तथा कृश (पतली) है एवं वक्षस्थल सुन्दर

गौर वर्णका है. यदि परमधामकी जागृत बुद्धिका ज्ञान हो तो इसे देखते हुए अपार सुखका अनुभव होता है.

कट कोमल कहीं जो पतली, ए सुख सलूकी और ।

ए जुबां सोभा तो कहे, जो कहूं देखी होए और ठौर ॥ ११

श्रीराजजीकी सुकोमल तथा कृश कटिकी सुन्दर संरचना कुछ और ही प्रकारकी है. इस दिव्य शोभाको शब्दोंके द्वारा तभी व्यक्त किया जा सकता है जब ऐसी शोभा अन्यत्र कहीं दिखाई दे.

और पेट पांसली हक की, ए कौन भाँत कहूं रंग ।

रुह देखे सहूर अरस के, और कौन केहेवे हक अंग ॥ १२

इसी प्रकार उदर तथा पसलियोंकी शोभा एवं रङ्गके विषयमें क्या वर्णन करें ? जो परमधामकी ब्रह्मात्मा होगी वही जागृत बुद्धिके द्वारा इनका अनुभव कर सकेगी. उसके अतिरिक्त इन दिव्य अङ्गोंकी शोभा अन्य कौन व्यक्त कर सकता है ?

पांसे पांखडी बगलें, सोभित बंधों बंध ।

अंग रंग खूबी खुसालियां, पार न सुख सनंध ॥ १३

वक्षस्थल तथा उदरके दोनों ओरकी पसलियाँ पुष्पोंकी पँखुरियोंकी भाँति गूँथी हुई सी दिखाई देती है. इस प्रकार श्रीराजजीके गौरवर्णके इन अङ्गोंकी विशेषताका कोई पार पाया नहीं जा सकता है.

ज्यों वरनन सुपन सरूपकी, ए भी होत विध इन ।

ए चारों चीज उत हैं नहीं, ना अरसमें ख्वाब चेतन ॥ १४

जिस प्रकार स्वप्नवत् जगतके शरीरका वर्णन किया जाता है, उसी प्रकार दिव्य परमधामके शाश्वत स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है. परन्तु इस जगतकी भाँति पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि स्वप्नकी वस्तुएँ चैतन्यमय परमधाममें नितान्त नहीं हैं.

ए वरनन अरस अंग होत है, ले मसाला इत का ।

ताथें किन विध रुह कहे, जुबां पोहोंचे ना सबद बका ॥ १५

जगतकी वस्तुओंकी उपमाके द्वारा परमधामके दिव्य स्वरूपका वर्णन किया

जा रहा है. इसलिए उसका वर्णन कैसे करें ? स्वप्नवत् जगतकी बुद्धि तथा शब्द अखण्ड तक पहुँच ही नहीं सकते हैं.

जो अरवा होए अरस की, सो कीजो इलम सहूर ।

जो इलम सहूर हकें दिया, लीजो इन से रुहें जहूर ॥ १६

जो परमधामकी ब्रह्मात्माएँ होंगी वे तारतम ज्ञानके द्वारा विचार करें. यह जागृत बुद्धिका ज्ञान श्रीराजजीने ही प्रदान किया है. इसलिए इसके दिव्य प्रकाशसे उन दिव्य स्वरूपोंके दर्शन करें.

हक को जेता रुह देखही, सुध तेती ना बुध मन ।

तो सुपन जुबां क्या केहेसी, अंग हक बका बरनन ॥ १७

यह आत्मा जिस प्रकार श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपके दर्शन करती है उतनी सुधि उसकी बुद्धि अथवा मनको नहीं होती है. इसीलिए यह स्वप्नकी जिह्वा श्रीराजजीके अङ्गोंका वर्णन कैसे कर पाएगी ?

नरम नाजुक पेट पांसली, क्यों कहूं खूब रस रंग ।

देत आराम आठों जाम, हक बका अरस अंग ॥ १८

श्रीराजजीके उदरकी पसलियाँ अत्यन्त कोमल तथा कृश हैं. उनकी सुन्दरता एवं रसिकताकी शोभा किन शब्दोंमें व्यक्त की जाए ? श्रीराजजीके अङ्गोंकी यह छवि आठों प्रहर आनन्द प्रदान करती है.

छाती निरखों हक की, गौर अति उजल ।

देख हैडा खूब खुसाली, तो मोमिन कह्या अरस दिल ॥ १९

अब श्रीराजजीके वक्षस्थलके दर्शन करते हैं. वह गौरवर्णका होनेसे अत्यन्त उज्ज्वल है. ब्रह्मात्माएँ इस (हृदय) की प्रसन्नताका अनुभव कर सकती हैं. इसीलिए उनको धामहृदया कहा गया है.

जिन देख्या हक हैयडा, क्यों नजर फेरे तरफ और ।

वाको उसी सूरत बिना, आग लगे सब ठौर ॥ २०

जिन्होंने श्रीराजजीके वक्षस्थलके दर्शन किए हैं वे अपनी दृष्टिको दूसरी ओर कैसे लगा सकती हैं ? उनको तो इस अनुपम छविके बिना सर्वत्र अग्नितुल्य लगता है.

जो हक अंग देख्या होए, हक जमाल न छोडे तिन ।

जाके अरस की एक रंचक, त्रैलोकी उडावे त्रैगुन ॥ २१

जिन्होंने श्रीराजजीके अङ्गोंके दर्शन किए हैं उनकी दृष्टिसे श्रीराजजीकी देदीप्यमान सुन्दरता छूटती ही नहीं है। अन्यथा दिव्य परमधामका मात्र एक कण भी त्रिगुण सहित तीनों लोकोंका लय कर सकता है।

वह देख्या अंग क्यों छूटहीं, हक परीछा एही मोमन ।

ए होए अरस अरवाहों सों, जिनके अरस अजीम में तन ॥ २२

ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके जिन अङ्गोंका दर्शन करतीं हैं वहाँ से उनकी दृष्टि कैसे दूर होगी ? यही तो उनकी परीक्षा है। जिनके मूल स्वरूप दिव्य परमधाममें हैं उन ब्रह्मात्माओंसे ही ऐसा होना सम्भव है।

हक जात अरस उन तन से, बीच रहत मोमिन के दिल ।

अरस मोमिन दिल तो कह्या, यों हिलमिल रहे असल ॥ २३

परमधामकी सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके अङ्गसे हैं एवं श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके हृदयमें विराजमान हैं। ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि श्रीराजजी एवं ब्रह्मात्माएँ परस्पर हिलमिल कर एकरूप हो जाते हैं।

दिल हक का और हादीय का, ए दोऊ दिल हैं एक ।

एकै मता दोऊ दिलमें, ए अरस रहें जाने विवेक ॥ २४

श्रीराजजी तथा श्यामाजी दोनोंका हृदय एक ही है तथा दोनोंके हृदयमें समान सम्पदा है। इस तथ्यको ब्रह्मात्माएँ ही विवेक पूर्वक जान सकतीं हैं।

जो गंज हक के दिलमें, सो पूरन इसक सागर ।

कोई ए रस और न पी सके, बिना मोमिन कोई न कादर ॥ २५

श्रीराजजीका हृदय प्रेमके सागरसे परिपूर्ण है। इस प्रेमसुधाको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त कोई भी प्राप्त नहीं कर सकता। क्योंकि इसे प्राप्त करनेका सामर्थ्य अन्य किसीके पास नहीं है।

तो अरस कहा दिल मोमिन, जो इन दिल में हक बैठक ।

तो इत जुदागी कहां रही, जहां हकै आए मुतलक ॥ २६

ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधामकी संज्ञा दी गई है कि वहाँ पर स्वयं श्रीराजजीकी बैठक है. जिनके हृदयमें स्वयं श्रीराजजी आकर विराजमान होते हैं उन ब्रह्मात्माओंसे धामधनीका वियोग होना कैसे सम्भव है ?

ए क्यों होए बिना निसबतें, इतहीं हुई वाहेदत ।

निसबत वाहेदत एकै, तो क्यों जुदी कहिए खिलवत ॥ २७

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीका आसीन होना सम्बन्धके बिना कैसे हो सकता है ? यही तो एकात्मभावका उदाहरण है. सम्बन्ध और एकात्मभाव दोनों एक ही हैं. इसलिए उनसे मूलमिलावा कैसे दूर हो सकता है ?

इतहीं हक मेहरबानगी, इतहीं हुकम इलम ।

तो इत जोस इसक क्यों न आवहीं, जो हकें दिलमें धरे कदम ॥ २८

जिन ब्रह्मात्माओं पर श्रीराजजीकी अपार कृपा है उनको ही उन्होंने अपना आदेश तथा ब्रह्मज्ञान भी प्रदान किया है. फिर उनमें जोश तथा प्रेम क्यों नहीं आएगा जिनके हृदयमें स्वयं धामधनीने पदार्पण किया है.

सोईं सहूर अरस का, जो कहा हक इलम ।

सोईं मोमिन पें बेसकी, यों अरस रुहें जुदी ना खसम ॥ २९

यही परमधामकी समझ है, इसीको ब्रह्मज्ञान कहा गया है. इसीसे ब्रह्मात्माएँ सन्देह रहित हो जाएँगी. इस प्रकार परमधामकी आत्माएँ श्रीराजजीसे भिन्न नहीं है.

जुबां क्या कहे बडाई रुह की, पर रुहें भूल गई लाड लजत ।

एक दम न जुदे रेहे सकें, जो याद आवे हक निसबत ॥ ३०

नश्वर जिह्वाके द्वारा श्रीराजजीकी इन विशेषताओंका वर्णन कैसे सम्भव है ?

परन्तु परमधामकी ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आकर उनके प्रेम (लाड) का स्वाद ही भूल गई हैं. यदि धामधनीका सम्बन्ध स्मरण हो जाए तो आत्मा

एक क्षणके लिए भी उनसे वियुक्त नहीं रह सकती।

हक हैडे के अंदर, मता अनेक अलेखे ।

उपली नजरों न आवहीं, जोलों रुह अंदर ना देखे ॥ ३१

इस प्रकार श्रीराजजीके हृदयमें ऐसी अनन्त सम्पदाएँ हैं। जब तक ब्रह्मात्माएँ अन्तर्दृष्टिसे नहीं देखती हैं तब तक बाह्य दृष्टिसे ये सम्पदाएँ दिखाई नहीं देंगी।

क्यों छूटे हक हैयडा, मोमिन के दिल से ।

अरस मता जो मोमिनका, सब हक हैडे में ॥ ३२

ब्रह्मात्माओंके हृदयसे श्रीराजजीका हृदय कैसे दूर हो सकता है। क्योंकि परमधामकी ब्रह्मात्माओंकी सम्पूर्ण सम्पदा श्रीराजजीके ही हृदयमें विद्यमान है।

सब अंग देखत रस भरे, प्रेम के सुख पूरन ।

रुह सोई जाने जो देखहीं, ले हिरदे रस मोमन ॥ ३३

श्रीराजजीके सभी अङ्ग प्रत्यङ्ग प्रेम रससे परिपूर्ण तथा अत्यन्त सुखदायी हैं। उन्हीं ब्रह्मात्माओंको इन अङ्गोंके दर्शन हो सकते हैं तथा वे ही अपने हृदयमें प्रेमरस प्रकट कर इन्हें समझ सकेंगी।

ए जो बातून गुन हक दिल में, सो क्यों आवे मिने हिसाब ।

ए दृष्टि मन जुबां क्या कहे, ए जो मसाला ख्वाब ॥ ३४

ये तो श्रीराजजीके हृदयके अन्तरङ्ग गुण हैं। इनकी गणना कैसे हो सकती है, यह दृष्टि, मन तथा वाणी इनके विषयमें क्या कह सकते हैं ? यहाँकी सभी सामग्रियाँ स्वप्नवत् जगतकी होनेसे नाशवान् हैं।

छाती मेरे खसम की, जिन का नाम सुभान ।

जो नेक देखूं गुन अंदर, तो तबहीं निकसे प्रान ॥ ३५

यह वक्षस्थल मेरे प्रियतम धनी का है जिनको कुरानमें सुभान-अल्लाह (परमप्रिय परमात्मा) कहा गया है। इनके गुणोंका लेशमात्र भी विचार करें तो उसी समय ये प्राण निकल जाएँगे।

जो निधि हक्क हैडे मिने, सो कै अलेखे अनेक ।

सो सुख लेसी अरस में, जिन बेवरा लिया इत देख ॥ ३६

श्रीराजजीके हृदयमें विद्यमान सम्पत्तिकी कोई गणना ही नहीं हो सकती है। ब्रह्मात्माएँ परमधारमें इन अपार सम्पदाओंका परमसुख प्राप्त करेंगी। यहाँ पर इनका मात्र विवरण ही दिया है।

हक्क हैडे में जो हेत है, रुहोंसों प्रेम प्रीत ।

जिन मेहर होसी निसबत, सोई ल्यावसी प्रतीत ॥ ३७

श्रीराजजीके हृदयमें ब्रह्मात्माओंके प्रति जैसी प्रेम-प्रीति है उसकी पहचान उसी निसबती आत्माको होगी जिस पर श्रीराजजीकी अपार अनुकम्पा है।

हक्क हैडे में इसक, सब अंगों सनेह ।

रुह देखसी हक्क मेहर से, निसबती होसी जेह ॥ ३८

श्रीराजजीके हृदयमें प्रेमका सागर परिपूर्ण है, वही उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंसे स्नेहके रूपमें छलकता है। जो उनकी अङ्गनाएँ होंगी वे उनकी कृपासे ही प्रेमका अनुभव कर सकेंगी।

हक्क हैडे में एही बसे, मैं लाड पालों रुहों के ।

ए हक्क हुजत आवे तिनों, तन असल अरस में जे ॥ ३९

श्रीराजजीके हृदयमें यही चाहना रहती है कि मैं ब्रह्मात्माओंको अतिशय प्रेम (लाड़) प्रदान करूँ। यह अधिकार उन्हीं ब्रह्मात्माओंको प्राप्त है जिनकी पर-आत्मा परमधारमें हैं।

हक्क हैडे में निस दिन, सुख देऊं रुहों अपार ।

जिन रुह लगी होए अंदर, सो जानेगी जाननहार ॥ ४०

श्रीराजजीके हृदयमें ब्रह्मात्माओंको अहर्निश अपार सुख प्रदान करने की भावना ही बनी रहती है। जिन आत्माओंके हृदयमें उनके प्रति उत्कण्ठा होती है, वे ही इस रहस्यको जान सकती हैं।

एक नुकता इलम हक दिल से, आया मेरे दिल माहें ।

इन नूर नुकते की सिफत, केहे न सके कोई क्याहें ॥ ४१

श्रीराजजीके हृदयमें स्थित ज्ञानके सागरसे मात्र एक ही विन्दु मेरे हृदयमें आई है. इसके बिना इस प्रकाशमय ज्ञानकी महिमाको कोई भी कहीं भी व्यक्त नहीं कर सकता है.

ले नूर नुकते की रोसनी, मैं ढूँढे चौदे भवन ।

इनमें कहुं न पाइया, माहें त्रैलोकी त्रैगुन ॥ ४२

इसी बीजरूप ज्ञानके प्रकाशमें मैंने चौदह लोकोंमें खोज की किन्तु इस त्रिगुणात्मक जगतमें मुझे कोई भी सार तत्त्व प्राप्त नहीं हुआ.

इन इलम नुकतेकी रोसनी, नहीं कोट ब्रह्माण्डों कित ।

सो दिया मोहे सुपन दिलमें, जो नहीं नूर अक्षर जागृत ॥ ४३

इस बीजरूप तारतम ज्ञानका जैसा प्रकाश करोड़ों ब्रह्माण्डोंमें भी प्राप्त नहीं हो सकता है. धामधनीने उसे मुझे मेरे स्वाप्निक शरीरके हृदयमें प्रदान किया है जो अक्षरब्रह्मको जागृत अवस्थामें भी प्राप्त नहीं है.

खाक पानी आग वाएको, ए चौदे तबक है जे ।

सो मेरे दिल कायम किए, बरकत नुकते इलम के ॥ ४४

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आदि तत्त्वोंसे बने हुए इन चौदह लोकोंको धामधनीने तारतम ज्ञानके द्वारा मेरी पर आत्माके हृदयमें अखण्ड करवाया है.

एक बूँद आया हक दिल से, तिन कायम किए थिर चर ।

इन बूँद की सिफत देखियो, ऐसे हक दिल में कै सागर ॥ ४५

श्रीराजजीके हृदयसे आए हुए ज्ञानके एक ही विन्दुसे इस चराचर ब्रह्माण्डको अखण्ड कर दिया है. जब एक विन्दुकी ही ऐसी महिमा है तो ऐसे तो अनेकों सागर श्रीराजजीके हृदयमें भरे हुए हैं.

एक बूँदने बका किए, तो होसी सागरों कैसा बल ।
तो काहूं न पाई तरफ किने, कै चौदे तबक गए चल ॥ ४६

जब एक ही बूँदने इस संसारको अखण्ड कर दिया है तो अनन्त सागरोंमें
कितनी शक्ति होगी. यद्यपि ऐसे अनेकों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होकर लय हो गए
हैं किन्तु आज तक कोई भी इस जागृत बुद्धिको प्राप्त नहीं कर सका.

ऐसे कै सुख हक हैडे मिने, सो ए जुबां कहे क्योंकर ।
हैडे बल तो नेक कह्या, जो इत बूँद आई उतर ॥ ४७

श्रीराजजीके हृदयमें इस प्रकारके असंख्य सुख विद्यमान हैं. इस नश्वर
जिह्वाके द्वारा उनका वर्णन कैसे हो सकता है ? मैंने इसकी क्षमताका लेशमात्र
वर्णन किया है वह भी उस हृदयसे एक बूँद उतरकर यहाँ पर आई है.

कोट ब्रह्मांड का केहेना क्या, जिमी झूठी पानी आग वाए ।
ए चौदे तबक जो मुरदे, नुकते इलमें दिए जिवाए ॥ ४८

करोड़ों ब्रह्माण्डोंके सम्बन्धमें क्या कहें ? पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश
आदि सभी क्षण भङ्गुर हैं. इन मृतप्रायः चौदह लोकोंको ब्रह्मज्ञानकी मात्र
एक ही बूँदने जीवन प्रदान कर अखण्ड कर दिया.

क्यों कहिए सोभा हक की, ना कछू झूठमें आए हम ।
लेहेजे हुकमें झूठे बैराट को, सांचे किए नुकते इलम ॥ ४९

श्रीराजजीकी शोभाका वर्णन कैसे करें, वस्तुतः हम इस नश्वर जगतमें आई
ही नहीं हैं तथापि श्रीराजजीके आदेशने तारतम ज्ञानके द्वारा इस नश्वर
जगतको सहज ही अखण्ड कर दिया है.

कही न जाए झूठ में, हक हैडे की सिफत ।
हक सोभा छल में तो होए, जो सांच जरा होए इत ॥ ५०

इसलिए इस स्वप्नवत् जगतमें श्रीराजजीके हृदयकी महिमाका वर्णन नहीं हो
सकता है. इस छलपूर्ण जगतमें श्रीराजजीकी शोभाका वर्णन भी तभी हो
सकता है जब यहाँ पर लेशमात्र भी सत्य हो.

तो कह्या वेद कतेब में, ए ब्रह्माण्ड नहीं रंचक ।
तो क्यों कहिए आगे इनके, ए जो सिफत दिल हक ॥ ५१

इसीलिए वेद तथा कतेबोंमें कहा गया है कि यह ब्रह्माण्ड पलमात्रके लिए भी स्थिर नहीं है. ऐसे स्वप्नवत् ब्रह्माण्डमें श्रीराजजीके हृदयकी महिमा इससे अधिक क्या कही जा सकती है ?

कहूं सुंदर सोभा सलूकी, कहूं केते गुन उपले ।
ए सुख न आवे हिसाब में, ए जो गिरो देखत हैं जे ॥ ५२

श्रीराजजीके वक्षस्थलकी सुन्दर शोभाके बाह्यगुणोंके विषयमें क्या कहें ?
इससे प्राप्त आनन्दकी कोई सीमा नहीं है. ब्रह्मात्माएँ ही अपने हृदयमें इसकी अनुभूति कर सकती हैं.

हक छाती सलूकी सुनके, रुह छाती न लगे घाए ।
धिक धिक पड़ो तिन अकलें, हाए हाए ओ नहीं अरस अरवाए ॥ ५३
श्रीराजजीके वक्षस्थलकी शोभाका वर्णन सुनकर जिन आत्माओंका हृदय घायल नहीं होता है उनकी बुद्धिको धिक्कार है. वे परमधामकी आत्मा कहलाने योग्य नहीं हैं.

हक छाती नरम कोमल, रुह सदा रहे सूर धीर ।
पाए विछुरे पीउ प्रदेस में, हाए हाए सो रही ना कछू तासीर ॥ ५४
श्रीराजजीका वक्षस्थल अत्यन्त सुकोमल है जबकि परमधामकी आत्माएँ समर्थ तथा शक्तिशालिनी कहलाती हैं. किन्तु इस नश्वर जगतमें आने पर उनसे श्रीराजजीके चरणकमल ही छूट गए हैं. खेदकी बात है कि ब्रह्मात्माओंमें परमधामके वे कोई भी गुण नहीं रहे हैं.

छाती मेरे खसम की, देखी जोर सलूक ।
न्यारे होते निमख में, हाए हाए जीवरा न होत टूक टूक ॥ ५५
श्रीराजजीके वक्षस्थलकी सुन्दरता देखनेके पश्चात यदि पल मात्रके लिए भी उनका वियोग हो जाए, तो यह जीव टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं होगा ?

छाती मेरे मासूक की, चूंभी मेरी छाती माहें ।
जो रुह अरस अजीम की, तिनसे छूटत नाहें ॥ ५६

प्रियतम धनीका यह हृदय मेरे हृदयमें अङ्गित हो गया है. अब परमधामकी आत्माओंकी दृष्टिसे यह वक्षस्थल कभी भी दूर नहीं होगा.

बिछुरे पाए प्रदेस में, देखी पीउ अंग छाती ।
अब पलक पडे जो बिछोहा, हाए हाए उडे ना करे आप घाती ॥ ५७
अपने धनीसे बिछुड़ी हुई ब्रह्मआत्माने इस परदेशमें भी उनके वक्षस्थलके दर्शन किए हैं . यदि अब पल मात्रके लिए भी उनका वियोग हो जाए तो उनकी आत्मा तत्काल शरीरको छोड़ देगी.

मासूक छाती रुह से ना छूटहीं, अति मीठी रंग भरी रस ।
ए क्यों कर छोड़ें मोमिन, जो होए अरवा अरस ॥ ५८

प्रियतम धनीका वक्षस्थल अनुरागिनी आत्माओंसे कभी दूर नहीं होता है क्योंकि यह अत्यन्त मधुर तथा आनन्दसे परिपूर्ण है. जो आत्माएँ परमधामकी होंगी वे इसे कैसे छोड़ सकती हैं ?

ए अंग मेरे मासूक के, मीठे अति मुतलक ।
ए लजत असल याद कर, ए लें अरवा आसक ॥ ५९

मेरे प्रियतम धनीके ये अङ्ग निश्चय ही अत्यन्त मधुर हैं अपनी पर आत्माको याद करती हुई अनुरागिनी आत्माएँ इस जगतमें भी अखण्ड स्वादका अनुभव करती हैं.

मुख न फेरें मोमिन, छाती इन सुभान ।
ए याद करते अनुभव, क्यों न आवे असल ईमान ॥ ६०

ब्रह्मात्माएँ कभी भी अपने प्रियतम धनीके वक्षस्थलसे विमुख नहीं होती हैं. परमधामके अनुभवका स्मरण होते ही उनमें वास्तविक आस्था क्यों पैदा नहीं होगी ?

मासूक छाती निरखते, क्यों याद न आवे अरस ।
विचार किए आवे अनभव, जाको दिल कहो अरस परस ॥ ६१

अपने प्रियतम धनीके वक्षस्थलकी शोभा देख कर उन्हें परमधामका स्मरण
क्यों नहीं होगा ? जिनका हृदय धामधनीके हृदयके प्रेमसे ओतप्रोत है उनको
चिन्तन करनेसे अवश्य परमधामका अनुभव होगा.

हकें अरस कह्या दिल मोमिन, अरस में मता हक सब ।
अजूँ हक आडे पट रहे, ए देख्या बडा तअजुब ॥ ६२

स्वयं श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधामकी संज्ञा दी है. परमधाममें
सब प्रकारकी सम्पदाएँ हैं तथापि आश्र्य है कि अभी भी धामधनी और
हमारे बीच भ्रमका आवरण बना हुआ है.

पट एही अपने दिल को, हकें सोई दिल अरस कह्या ।
हक पट अरस सब दिल में, अब अंतर कहां रह्या ॥ ६३

यह आवरण भी हमारे हृदय पर ही पड़ा है जिसको श्रीराजजीने परमधामकी
संज्ञा दी है. जब भ्रमका आवरण तथा परमधाम सहित स्वयं श्रीराजजी भी इसी
हृदयमें विद्यमान हैं तो अब उनके और हमारे बीच अन्तर ही क्या रहा?

जो विचार विचारिए, तो हक छाती न दिल अंतर ।
ए पट आडा क्यों रहे, जब हुकमें बांधी कमर ॥ ६४

यदि विचार पूर्वक चिन्तन करें तो ज्ञात होगा कि श्रीराजजीके हृदय और
हमारे हृदयके मध्यमें कोई अन्तर नहीं है. जब श्रीराजजीके आदेशने ही दोनों
हृदयोंको एकाकार करनेके लिए कमर बाँध ली है तो दोनोंके मध्य भ्रमका
आवरण कैसे बना रहेगा ?

ए क्यों रहे पट अरस में, पूछ देखो हक इलम ।
ओ उडाए देसी पट बीच का, जब रुह हुकमें आई कदम ॥ ६५

जागृत बुद्धिके ज्ञानसे विचार करके तो देखो, परमधाम बने हुए इस हृदयमें
भ्रमका आवरण कैसे रह पाएगा ? जब श्रीराजजीके आदेशसे ब्रह्मात्माएँ
उनके चरणोंमें जागृत हो जाएँगी तब वे इस आवरणको अवश्य उड़ा देंगी.

एही पट फरामोस का, दिल में रही अंतर ।

जब हुकमें बंधाई हिंमत, तब होस में न आवे क्योंकर ॥ ६६

इसी भ्रमके आवरणके कारण हृदयमें अन्तर पैदा हुआ है. जब श्रीराजजीके आदेशने साहस दिलाया है तो यह आत्मा जागृत होकर सचेत क्यों नहीं होगी ?

दिल अरस कह्या याही वास्ते, परदा कह्या जहूर ।

दोऊ दिल के बीच में, जो दिल देखे कर सहूर ॥ ६७

इसीलिए ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है. यदि विचार पूर्वक देखेंगे तो ज्ञात होगा कि श्रीराजजी और ब्रह्मात्माओंके हृदयके बीच मात्र भ्रमका ही आवरण है अन्य कुछ भी नहीं है.

हक छाती निपट नजीक है, सेहेरग से नजीक कही ।

हक सहूर किए बिना, आड़ी अंतर तो रही ॥ ६८

वस्तुतः श्रीराजजीका हृदय (छाती) तो अत्यन्त निकट है, उसे प्राणनलीसे भी निकट कहा गया है. श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त जागृत बुद्धिके ज्ञान पर विचार न करने पर ही यह भ्रमका आवरण बना हुआ है.

हक भी कहे दिल में, अरस भी कह्या दिल ।

परदा भी कह्या दिल को, आया सहूरें बेवरा निकल ॥ ६९

वास्तवमें ब्रह्मात्माओंके हृदयमें ही श्रीराजजी विराजमान है, इसीलिए इस हृदयको परमधाम कहा है. फिर इसी हृदयमें भ्रमका आवरण होना भी कहा है. वस्तुतः तारतम ज्ञान पर विचार करने पर ही सम्पूर्ण विवरणका निरूपण हो गया है.

जो पीठ दीजे ब्रह्मांड को, हुआ निस दिन हक सहूर ।

तब परदा उड्या फरामोस का, बका अरस हक हजूर ॥ ७०

यदि इस जगत्को पीठ देकर अहर्निश श्रीराजजीका ही चिन्तन होगा तो यह भ्रमका आवरण तत्काल उड़ जाएगा और हम परमधाममें श्रीराजजीके चरणोंमें जागृत हो जाएँगे.

मेहेबूब छाती की लजत, देत नहीं फरामोस ।

फरामोस उडे आवे लजत, सो लजत हाथ प्रेम जोस ॥ ७१

वस्तुतः यह भ्रमका आवरण ही अपने प्रियतम धनीके हृदयका आनन्द लेने नहीं देता है। इस भ्रान्तिके दूर होते ही आनन्दका अनुभव हो जाएगा और धामधनीका प्रेम एवं आवेश भी प्राप्त होंगे।

इसक जोस और इलम, ए हक हुकम के हाथ ।

तब हक हैडा ना छूटहीं, ए सब सुख हैडे साथ ॥ ७२

प्रेम, आवेश तथा ज्ञान ये तीनों श्रीराजजीके आदेशके अधीन हैं। जब ये सभी सुख हृदयमें आ जाएँगे तब श्रीराजजीका हृदय हमारे हृदयसे दूर नहीं होगा।

ए मेहेर करे जो मासूक, तो रुह हुकमें बांधे कमर ।

तब फरामोसी दूर दिलसे, हक हैडे चूभी नजर ॥ ७३

यदि श्रीराजजीकी अहैतुकी कृपा हो जाए तो यह आत्मा उनके आदेशके द्वारा हृदयके भ्रान्तिको दूर करनेके लिए कटिबद्ध हो जाएगी। जब ब्रह्मात्माकी दृष्टि श्रीराजजीके हृदयमें स्थिर हो जाएगी तब उसके हृदयसे भ्रमका आवरण अवश्य दूर हो जाएगा।

ए होए हक निसबतें, रुहों हुकम देवे हिंमत ।

तब फरामोसी रेहे ना सके, दे हक छाती लाड लजत ॥ ७४

उक्त सभी बातें श्रीराजजीके साथ सम्बन्ध होने पर ही सम्भव हैं। तभी उनका आदेश आत्माको साहस प्रदान करेगा, तब हृदयमें किसी भी प्रकारकी भ्रान्ति नहीं रहेगी और श्रीराजजी अपने हृदयके प्रेमका सुख (लाड़ लज्जत) प्रदान करेंगे।

इन विध छाती न छूटहीं, रुहों सों निस दिन ।

असल सुख हक हैडे के, ए लजत लगे अरस तन ॥ ७५

इस प्रकार श्रीराजजीके हृदयका आनन्द ब्रह्मात्माओंसे रात दिन नहीं छुटेगा। वस्तुतः वास्तविक सुख तो श्रीराजजीके हृदयका प्रेम ही है किन्तु इसका स्वाद ब्रह्मात्मा एँ ही ले सकती हैं।

जोस इसक सुख अरस के, ए लगे रुह मोमन ।

जब ए सबे मदत हुए, तब क्यों रहे पट रुहन ॥ ७६

श्रीराजजीका आवेश, प्रेम तथा परमधामके अनन्त सुख ब्रह्मात्माओंको ही सहजतासे प्राप्त होंगे। जब इन सभीका सहयोग प्राप्त होगा तब उनके हृदयमें भ्रमका आवरण कैसे रह पाएगा ?

असल नींद सो फरामोसी, फरामोसी सोई अंतर ।

जो अरस लजत आवहीं, तो इलमें तबहीं जुडे नजर ॥ ७७

वस्तुतः यह नींद भी भ्रमकी है और यह आवरण भी भ्रमका ही है। जब परमधामका स्वाद आने लगेगा तब तारतम ज्ञानके द्वारा ब्रह्मात्माओं तथा श्रीराजजीकी दृष्टि परस्पर मिल जाएगी।

इलम सहूर मेहेर हुकम, ए चारों चीजें होए एक ठौर ।

तिन खैंच लिया मता अरस का, पट नहीं कोई और ॥ ७८

तारतम ज्ञान, विवेक, कृपा तथा आदेश ये चारों यदि एक स्थान पर हो जाएँगे तो ब्रह्मात्माओंके पास परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदा स्वतः चली आएगी। तब कोई आवरण ही नहीं रहेगा।

अरस तन दिलमें ए दिल, दिल अंतर पट कछू नाहें ।

सुख लजत अरस तन खैंचहीं, तब क्यों रहे अंतर माहें ॥ ७९

वस्तुतः पर-आत्माके हृदयमें ही इस नश्वर तनका हृदय है। इन दोनों हृदयोंके मध्य कोई आवरण ही नहीं है। जब हमारी पर-आत्मा उक्त चारों सम्पदाओंके द्वारा आनन्दको अपनी ओर खींच लेगी तब दोनों हृदयोंके अन्दरका आवरण कैसे टिका रह पाएगा ?

सुपन होत दिल भीतर, रुह कहूं ना निकसत ।

ए चौदे तबक जरा नहीं, ए तो दिल में बड़ा देखत ॥ ८०

वस्तुतः स्वप्नके दृश्य हृदयके अन्दर ही दिखाई देते हैं। आत्मा तो कहीं भी निकल कर नहीं जाती है। इस प्रकार (पर-आत्माकी दृष्टिमें) ये चौदह लोक स्वप्नकी भाँति कुछ भी नहीं हैं किन्तु हमने ही (नश्वर तनके) हृदयमें इनको बड़ा मान लिया है।

हक छाती रुह थें न छूटहीं, नजर न सके फेर ।
जो कोई रुह अरसकी, ताए हक बिना सब अंधेर ॥ ८१

इस आत्मासे प्रियतम धनीके हृदयकी छवि कभी भी दूर नहीं होती है, वह अपनी दृष्टिको दूसरी ओर डाल ही नहीं सकती. जो भी परमधामकी आत्मा होगी उसे अपने प्रियतम धनीके बिना सर्वत्र अन्धकार ही दिखाई देगा.

हक छाती में लाड लजत, और छाती में असल आराम ।
ए सब सुख को रस पूरन, तो रुह लग रही आठों जाम ॥ ८२

श्रीराजजीके हृदयमें ही प्रेम एवं आनन्द है. उसीमें सब प्रकारके सुख तथा शान्ति हैं. उनका हृदय तो सब प्रकारके आनन्द रससे परिपूर्ण है, तभी यह आत्मा आठों प्रहर उसीमें स्थिर (लगी) रहती है.

रुहों हक छाती चूभ रही, सो देवे लजत अरवाहों को ।
असल सुख सागर भयो, देखें अरस आराम सबमों ॥ ८३

श्रीराजजीका हृदय सदैव ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्गृत रहता है और उनको अपार सुख प्रदान करता है. तभी ब्रह्मात्माओंके हृदयमें आनन्दका सागर लहराने लगता है एवं आत्माको सर्वत्र परमधामका ही आनन्द दिखाई देने लगता है.

ए जो हक हैडे की खूबियां, सो क्या केहेसी बुध माफक ।
पर ए कहे हक हुकम, और हक इलम बेसक ॥ ८४

श्रीराजजीके हृदयकी विशेषताओंके विषयमें यह स्वप्नकी बुद्धि क्या वर्णन कर पाएगी ? किन्तु जो कुछ वर्णन हुआ है वह श्रीराजजीके आदेशसे तथा उनसे प्राप्त तारतम ज्ञानके प्रतापसे ही है.

रुह खड़ी करे हुकम, और बेसक लुदंनी इलम ।
ना तो रुह कहे क्यों नीद में, हक हैडा बका खस्म ॥ ८५

श्रीराजजीका आदेश तथा तारतम ज्ञानके द्वारा ही यह आत्मा इतना वर्णन करनेके लिए समर्थ हुई है. अन्यथा परब्रह्म परमात्माके हृदयके अखण्ड आनन्दको यह इस स्वप्नवत् जगतमें कैसे वर्णन कर सकती है ?

महामत कहे बोलूँ हुक्में, अरस मसाला ले ।
दरगाही रुहन को, सुख असल देने के ॥ ८६

महामति कहते हैं, अब मैं श्रीराजजीके आदेशसे परमधामके ही उदाहरण
प्रस्तुत कर परमधामकी आत्माओंको अखण्ड सुख प्रदान करनेके लिए कुछ
वर्णन करता हूँ ।

प्रकरण ११ चौपाई ६४१

खभे कंठ सुखारविंद सोभा समूह मंगलाचरन

मुख मेरे मेहेबूब का, रंग अति उजल गुलाल ।
क्यों कहूँ सलूकी नाजुकी, नूर तजल्ली नूरजमाल ॥ १
मेरे प्रियतम धनीका मुखारविन्द अत्यन्त उज्ज्वल तथा लालिमायुक्त है इसकी
कोमल आकृति तथा अलौकिक प्रकाशकी शोभा शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त
करूँ ?

बांहें मेरे मासूक की, प्यारी लगें मेरी रुह ।
हक हुकम यों कहावत, सो वाही जाने हकहू ॥ २
प्रितयम धनीकी भुजाएँ मेरी आत्माको अतिशय प्रिय लगती हैं. उनका
आदेश ही मुझसे यह वर्णन करवा रहा है वास्तवमें श्रीराजजीके इन सम्पूर्ण
अङ्गोंकी शोभाको भी वही जानता है.

अंग रंग सलूकी सुभान की, चकलाई उजल गौर ।
नाम सुनत इन अंग के, जीवरा न होत चूर चूर ॥ ३
श्रीराजजीके अङ्गोंकी छवि तथा वर्ण अत्यन्त सुन्दर, उज्ज्वल एवं गौर हैं.
इन अङ्गोंका वर्णन सुनकर भी यह जीव खण्डशः नहीं होता है.

ए छबि अंग अरस के, जोत अंग हक मूरत ।
ए केहेनी में आवे क्यों कर, जो कही अमरद सूरत ॥ ४
यह अनुपम छवि तथा उज्ज्वलता श्रीराजजीके चिन्मय स्वरूपकी है.
श्रीराजजीका किशोर स्वरूप शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त हो सकता है ?

खभे देत दोऊ खूबियां, रुह देख देख होए खुसाल ।
जो नेक आवे अरसकी लजत, तो रोम रोम लगे रुह भाल ॥ ५

श्रीराजजीके दोनों स्कन्ध प्रदेश अत्यन्त शोभा युक्त हैं। उन्हें देखकर यह आत्मा अति प्रसन्नताका अनुभव करती है। यदि परमधामका आनन्द लेशमात्र भी प्राप्त हो जाए तो आत्माके रोम रोममें ये अङ्ग समाहित हो जाते हैं।

खभे मछे कोनियां, और कलाइयां कांडन ।
पोहोंचे हथेली अंगुरी, नूर क्यों कहूं नखन ॥ ६

श्रीराजजीके दोनों स्कन्ध प्रदेश भुजाएँ (मछे), कोहनियाँ, कलाईयाँ, कांडे, पहुँचे, हथेलियाँ, अङ्गुलियाँ तथा नख आदिकी देवीष्यमान आभा किन शब्दोंमें व्यक्त की जाए ?

जोत नखन की क्यों कहूं, अवकास रह्यो भराए ।
तामें जोत नखन की, नेहेरें चलियां जाए ॥ ७

इन नखोंकी ज्योतिका वर्णन भी कैसे किया जाए, यह तो पूरे आकाशमें व्यास है। इतना ही नहीं इनकी ज्योति आकाशमें चलती हुई नहरोंकी भाँति दिखाई देती है।

ज्यों ज्यों हाथ की अंगुरी, होत है चलवन ।
त्यों त्यों नख जोत आकास में, नेहेरें चीर चली रोसन ॥ ८

श्रीराजजी जैसे ही अपने हाथकी अङ्गुलियाँ चलाते हैं उसी प्रकार उनके नखोंकी ज्योति नहरोंकी भाँति पूरे आकाशको चीरती हुई चली जाती है।

एक अंग जो निरखिए, तो निकस जाए उमर ।
एक अंग वरनन ना होवहीं, तो होए सरूप वरनन क्यों कर ॥ ९

इस प्रकार श्रीराजजीके एक ही अङ्गका दर्शन करने लगें तो पूरा जीवन ही व्यतीत हो सकता है। जब एक अङ्गका भी वर्णन नहीं हो सकता है तो सम्पूर्ण स्वरूपका वर्णन कैसे सम्भव है ?

अति गौर हस्तकमल, अति नरम अति सलूक ।

ए हस्त चकलाई देख के, जीवरा होत नहीं टूक टूक ॥ १०

श्रीराजजीके हस्तकमल अत्यन्त गौर, अत्यन्त सुकोमल तथा अति सुन्दर छवियुक्त हैं। इन करकमलोंकी शोभा देखकर यह जीव टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो जाता है ?

काँडे कलाई कोनियां, इन अंग रंग सलूक ।

फेर मछे खभे लग देखिए, रुह क्यों न होए भूक भूक ॥ ११

इन हस्तकमलोंकी कलाइयों, काँडे तथा कोहनियोंके गौर वर्णकी सुन्दरता एवं सुकोमलताको देखकर पुनः भुज प्रदेश तथा स्कन्ध प्रदेशको देखते हैं तो यह जीव टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो जाता ?

ए अंग सारे रस भरे, सब संधों संध इसक ।

सहूर किएं जीवरा उडे, अरस अंग वाहेदत हक ॥ १२

श्रीराजजीके ये सभी अङ्ग आनन्द रससे परिपूर्ण हैं। इनके नस-नसमें प्रेम भरा हुआ है। इस प्रकार परमधाम तथा अद्वैत स्वरूप श्रीराजजीके अङ्ग प्रत्यङ्गका विवेक पूर्वक विचार करने पर जीवको यह नश्वर शरीर छोड़ देना चाहिए।

जीवरा न समझे अरस को, ना सहूर करे वाहेदत ।

रुहें भूल गई लाड लजत, ना सुध रही निसबत ॥ १३

इस जीवको न परमधामकी ही सुधि है और न ही वहाँ के एकात्मभावके सम्बन्धमें ज्ञान है। इसलिए इस खेलमें आकर ब्रह्मात्माएँ भी धामधनीके प्रेमका स्वाद भूल गई हैं, उन्हें यह भी सुधि नहीं रही कि वे धामधनीकी अङ्गनाएँ हैं।

मंगलाचरन तमाम

अब कहुं कंठ सोभा मुख की, और इसक सबों अंग ।

आसिक दिल छवि चूभ रही, मासूक रूप रस रंग ॥ १४

अब मैं श्रीराजजीके मधुर कण्ठ एवं मुखारविन्दकी शोभाका वर्णन कर उनके

अङ्ग प्रत्यङ्गोंमें बहती हुई प्रेमकी रसधाराका वर्णन करता हूँ क्योंकि अनुरागिनी आत्माके हृदयमें प्रियतम धनीकी छवि, रूपलावण्य तथा आनन्दकी रङ्गमयी छटा पूर्णरूपसे अङ्कित हो गई है।

ए जो कोमलता कंठ की, क्यों कहूँ चकलाई गौर ।
नेक कहा जात ख्वाबमें, जो हकें दिया सहूर ॥ १५

इस मधुर कण्ठकी सुकोमलता, सुन्दरता तथा गौर वर्णकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? इस स्वप्नवत् जगतमें श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा ही यह थोड़ा सा वर्णन हुआ है।

गौर केहती हों मुख से, सो देख के अंग इत का ।

ए जुबां दृष्ट इत फना की, सोभा क्यों कहे कंठ बका ॥ १६
मैं इनकी छविको अपने मुखसे गौर वर्णकी कहता हूँ किन्तु वह भी इस नश्वर जगतके अङ्गोंको देखकर कह रहा हूँ मेरी दृष्टि एवं वाणी दोनों ही नश्वर जगतकी हैं इसलिए इनके द्वारा अखण्डधामके धनीके कण्ठकी शोभा कैसे व्यक्त हो सकती है ?

कंठ गौर कै सुख देवहीं, जो कछू खोले रुह नजर ।

सो होत हक के हुकमें, जिनने करी नजीक फजर ॥ १७
यदि यह आत्मा अपनी दृष्टि खोल ले तो उसे ज्ञात होगा कि श्रीराजजीका यह गौर वर्णका कण्ठ अनेक प्रकारका सुख प्रदान करता है। वस्तुतः श्रीराजजीके आदेशसे ही आत्मदृष्टि खुलेगी क्योंकि उन्होंने ही ज्ञानके प्रभातको निकट ला दिया है।

ए जो लजत लाड की, सो भी हुई हाथ इजन ।

जिन निसबतें बेसक कही, ताए क्यों न आवे लजत तन ॥ १८
श्रीराजजीके प्रेमका आस्वादन भी उनके ही आदेशके हाथमें है। जिस सम्बन्धके द्वारा धामधनीने मेरे सम्पूर्ण सन्देहोंका निवारण कर दिया है, उस आत्माको अब उनके प्रेमका स्वाद क्यों प्राप्त नहीं होगा ?

ना तो बेसक जब निसबत, तब रुह क्यों करे फरामोस ।

ए देह जो सुपन की, छिनमें उडावे हक जोस ॥ १९

जब धामधनीके साथ हमारा सम्बन्ध होनेमें कोई सद्देह ही नहीं है तो आत्मामें अभी भी भ्रान्ति क्यों रही है. अन्यथा श्रीराजजीका आवेश तो इस स्वप्नकी देहको क्षणमात्रमें ही उड़ा सकता है.

ए जो देखो सहूर कर के, भई आडी हक आमर ।

ना तो बल करते धनी बेसक, ए देह ख्वाब रहे क्योंकर ॥ २०

जागृत बुद्धिके द्वारा विवेकपूर्वक देखें तो ज्ञात होगा कि श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही अभी तक (शरीरका) यह आवरण टिका हुआ है. अन्यथा धामधनीका आवेश प्राप्त होते ही यह नश्वर तन तत्काल उड़ जाता.

प्रीत रीत इसक की, इसकै सेहेज सनेह ।

निस दिन वरसत इसक, नख सिख भीजे सब देह ॥ २१

धामधनीके प्रेम-प्रीतिकी रीति ही इस प्रकारकी है कि इस प्रेममें सहज स्नेह है. जब अहर्निश प्रेमकी वर्षा होने लगेगी तब नखसे लेकर शिखा पर्यन्त यह सम्पूर्ण शरीर प्रेममें ही ओत-प्रोत हो जाएगा.

भौं भृकुटी पल पापन, मुसकत लवने निलवट ।

इन विध जब मुख निरखिए, तब खुलें हिरदे के पट ॥ २२

श्रीराजजीकी भौंहे, भृकुटी, पलकें, मन्द मुस्कान, ललाट तथा उसके ऊपरके केशोंकी पटिक्क (लवने) सहित श्रीराजजीके सम्पूर्ण मुखमण्डलकी शोभाका दर्शन करने पर हृदयके पट अवश्य खुल जाएँगे.

छब फब नई एक भांत की, श्रवन गाल मुसकत ।

लाल अधुर मुख नासिका, जानों गौर हरवटी हंसत ॥ २३

श्रीराजजीकी यह अनुपम छवि ही ऐसी नूतनता युक्त है कि उसके श्रवण अङ्ग तथा कपोल आदि भी मुस्कराते हुए दिखाई देते हैं. इतना ही नहीं लालिमायुक्त अधरोष्ठ, मुखकमल, नासिका तथा गौरवर्णका चिबुक (ठोड़ी) तो सर्वदा हँसते हुए दिखाई देते हैं.

हाथ पांड पेट हैयडा, कंठ हार भूषन वस्तर ।

ए सब अंग हक के मुसकत, और नाचत हैं मिलकर ॥ २४

उनके हाथ, पाँव, उदर, हृदय, कण्ठ तथा हार आदि आभूषण एवं वस्त्र आदि सभी अङ्ग-प्रत्यङ्गोंसे मिलकर मुस्कान करते हुए नाच रहे दिखाई देते हैं।

बल बल जाऊं मुख हक के, सोभा अति सुंदर ।

ए छबि हिरदे तो आवहीं, जो रूह हुकमें जागे अंदर ॥ २५

श्रीराजजीके ऐसे अति सुन्दर मुखारविन्द पर मैं स्वयंको समर्पित करता हूँ। किन्तु यह छवि तभी हृदयमें अङ्कित होगी जब श्रीराजजीके आदेशके द्वारा यह आत्मा अन्दरसे जागृत हो जाएगी।

हक मुख छवि हिरदे मिने, जो आवे अंतस्करन ।

तिन भेली लजत लाड की, आवे अरस के अंग वतन ॥ २६

श्रीराजजीके मुखारविन्दकी अनुपम छवि जब हृदयमें अङ्कित हो जाती है, उसी समय परमधाममें श्री राजजीके अङ्गोंके साथ ही पर-आत्माको प्रेमका स्वाद (लाड लज्जत) भी मिलने लग जाता है।

गौर मुख लाल अधुर, ए जो सलूकी सोभित ।

एह जुबां तो केहे सके, जो कोई होए निमूना इत ॥ २७

श्रीराजजीके मुखारविन्दका गौरवर्ण तथा लालिमायुक्त अधरोंकी शोभा अद्वितीय है। यदि इसकी कोई ऊपमा होती तभी यह जिह्वा उसका वर्णन कर सकती।

कहे जाए न गौर गलस्थल, और अधुर लालक ।

मुख चकलाई हक की, सब रस भरे नूर इसक ॥ २८

इसी प्रकार श्रीराजजीके गौरवर्ण युक्त कपोल, लालिमायुक्त अधरोष्ठ एवं अनुपम सौन्दर्ययुक्त मुखमण्डलकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती। ये सभी अङ्ग प्रेमसे परिपूर्ण तथा अलौकिक प्रकाश युक्त हैं।

लाल जुबां दंत अधुर, हरवटी गौर हंसत ।
जब बातून नजरों देखिए, तब रुह सुख पावत ॥ २९

श्रीराजजीकी लालिमायुक जिह्वा, उज्ज्वल दन्तावलि, लाल अधरोष्ट तथा
सुन्दर चिबुक गौरवर्णके मुखारविन्द पर मुस्कराते हुए प्रतीत होते हैं। जब
अन्तरदृष्टिसे इस दिव्य शोभाको देखते हैं तब आत्माको परम आनन्दका
अनुभव होता है।

अधुर हरवटी बीच में, क्यों कहूं लांक सलूक ।
एही अचरज मोहे होत है, दिल देख न होत भूक भूक ॥ ३०

अधरोष्ट तथा चिबुकके मध्यकी गहराई अत्यन्त सुन्दर है। मुझे इस बात पर
बड़ा आश्र्य होता है कि इस अद्वितीय शोभाको देखकर भी यह हृदय टुकड़े
टुकड़े नहीं हो रहा है।

दोऊ छेद्र चकलाई नासिका, गौर रंग उजल ।
तिलक निलाट कै रंगों, नए नए देखत माहें पल ॥ ३१

नासिकाके दोनों छिद्र अत्यन्त सुन्दर हैं। गौर वर्णकी यह नासिका अति
उज्ज्वल है। ललाट पर सुशोभित तिलकसे अनेक रङ्गोंकी आभा झलकती
है। मानो पल-पल नवीनता आ रही हो।

नैन रस भरे रंगीले, चंचल चपल भरे सरम ।
ए अरवाहें जाने अरस की, जो मेहरम बका हरम ॥ ३२

श्रीराजजीके नयन प्रेम रससे परिपूर्ण, चंचल, चपल तथा लज्जायुक्त हैं।
परमधामके अन्तःपुर (रङ्गभवन) में रहनेवाली ब्रह्मात्माएँ ही इस सुन्दर
शोभाका अनुभव कर सकती हैं।

नेत्र अनियां अति तीखियां, रस इसक भरे पूरन ।
ए खैंचें जिन रुह ऊपर, ताए सालत है निस दिन ॥ ३३

इनके नयनोंकी चितवन (कटाक्ष) अति तीक्ष्ण है। प्रेमरससे परिपूर्ण इनकी
दृष्टि जिस आत्माके ऊपर पड़ती है वह अपने प्रितयतम धनीसे मिलनेके
लिए रात दिन उत्कण्ठित हो जाती है।

स्याम सेत भौंह लवने, नेत्र गौर गिरदवाए ।

स्याह पुतली बीच सुपेत में, जंग जोर करत सदाए ॥ ३४

इन नयनोंकी भृकुटी श्याम वर्ण की है तथा पलकोंकी किनारी श्वेत रङ्गकी है. नेत्रके चारों ओर श्वेत रङ्ग सुशोभित है. नेत्रके श्वेत भागके मध्यमें श्याम रङ्गकी पुतली है. इन दोनोंकी किरणें सदैव परस्पर स्पर्धा करती रहती है.

सोभा धरत दोऊ श्रवनों, मोती उजल बीच लाल ।

ए मुख रुह जब देखहीं, बल बल जाऊं तिन हाल ॥ ३५

श्रीराजजीके श्रवण-अङ्ग अत्यन्त शोभायुक्त हैं. उनके कुण्डलमें उज्ज्वल मोतीके बीच लालरत्न सुशोभित है. आत्मा जब इस मुखमण्डलके दर्शन करती है उसी समय उस पर समर्पित हो जाती है.

प्यारी बातें करे जब आसिक, हेतें सुनत हक कान ।

क्यों कहूं सुख तिन रुह के, जो प्यार कर सुने सुभान ॥ ३६

जब अनुरागिनी आत्माएँ मीठी-मीठी बातें करती हैं तो श्रीराजजी उनको बड़े प्यारसे सुनते हैं. उन ब्रह्मात्माओंके आनन्दका वर्णन कैसे करें. धामधनी जिनकी बातोंको प्रेम पूर्वक सुनते हैं.

रुह बात करे एक हक सों, हक देत पड उत्तर चार ।

कुरबान जाऊं हक हादी की, जासों हक करें यों प्यार ॥ ३७

ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीको एक बार पुकारती हैं तो श्रीराजजी उनको चार बार उत्तर देते हैं. श्रीराजश्यामाजीकी इन अङ्गनाओं पर मैं समर्पित हो जाता हूँ जिनसे श्रीराजजी इतना प्यार करते हैं.

ए छवि अंग अरस के, जो अंग हक मूरत ।

ए केहेनी में आवे क्योंकर, जो कही अमरद सूरत ॥ ३८

यह सम्पूर्ण शोभा परमधामके स्वरूपकी है जिसका वर्णन शब्दोंके द्वारा नहीं हो सकता है. इस किशोर स्वरूपको कुरानमें अमरद सूरत कहा है.

कांध केस पेच पगरी, पीठ लीक रूप रंग ।
हाए हाए जीवरा ना उडे, केहते अरस रेहेमानी अंग ॥ ३९

श्रीराजजीके दोनों स्कन्ध प्रदेश, श्यामल कुन्तल (केश) तथा पागके पेचोंकी शोभा अद्वितीय है। उनकी पीठ तथा उसकी गहराई एवं रूप रङ्ग अत्यन्त सुन्दर हैं। ऐसे परमकृपालु परमात्माके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका वर्णन करते हुए यह जीव शरीरको क्यों नहीं उड़ा देता है।

पाग सोधित सिर हक के, बनी हक दिल चाहेल ।
सो इन जुबां क्यों केहे सके, जाकी दृष्ट अंग इन खेल ॥ ४०

श्रीराजजीके सिर पर सुन्दर पाग सुशोधित है। वह उनकी इच्छानुसार बनी हुई है। स्वप्नवत् अङ्गोंके द्वारा उसके अनुपम सौन्दर्यका वर्णन कैसे हो सकता है ?

दुगदुगी सोभा तो कहूं, जो पगड़ी सोभा होए और ।

जोत करे हक दिल चाही, कोई तरह बनी इन ठौर ॥ ४१

पागके ऊपर सुशोधित दुगदुगीकी शोभा तभी व्यक्त हो सकती है जब वह पागकी शोभासे भिन्न होती। यह दुगदुगी श्रीराजजीकी इच्छानुसार ही प्रकाशित होती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई विशेष प्रकारकी सुन्दरता खिल उठी हो।

ए क्यों आवे जुगत जुबां मिने, क्यों कहूं एह सलूक ।

जो ए तरह आवें रुह दिल में, तो तबहीं होवे टूक टूक ॥ ४२

इस पागकी कलात्मकता तथा सुन्दरता जिहाके द्वारा कैसे व्यक्त हो सकती है ? यदि यह शोभा आत्माके हृदयमें अङ्कित हो जाए तो यह हृदय टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।

इन पाग में है दुगदुगी, बनी पाग में कलंगी ।

ए जंग करे जोत जोत सों, ए बनाएल हक दिल की ॥ ४३

इस पागके ऊपर दुगदुगी तथा कलङ्गी सुशोधित हैं। इनसे निकलता हुआ अलग-अलग रङ्गोंका प्रकाश परस्पर ढन्ढ करता है। ये सभी श्रीराजजीकी इच्छानुसार बने हैं।

कै जिनसें कै जुगतें, कै तरह भाँत सलूकी ए ।
कै रंग नंग तेज रोसनी, नूर छायो अंबर जिमी जे ॥ ४४

इस पागमें विभिन्न प्रकारकी वस्तुएँ युक्ति पूर्वक सुशोभित हैं। इसकी अद्वितीय सुन्दरता तथा विभिन्न रङ्गोंके रत्नोंकी किरणें पूरे आकाश तथा भूमि पर व्यास हो रहीं हैं।

जित चाहिए ठौर दुगदुगी, सब बनी पाग पर तित ।
ठौर कलंगी के कलंगी, सिफत न जुबां पोहोंचत ॥ ४५

इस पाग पर जहाँ दुगदुगी होनी चाहिए वह वहीं पर सुशोभित है, इसी प्रकार जहाँ पर कलंगी होनी चाहिए वहाँ पर वही सुशोभित है। इस प्रकार इसकी अद्वितीय शोभाका वर्णन नहीं हो सकता है।

कै सुख सलूकी इन पाग में, मैं तो कहूं विध एक ।
दिल चाही रूह देखत, एक छिन में रूप अनेक ॥ ४६

इस पागमें ऐसी विभिन्न प्रकारकी शोभा है। मैंने तो मात्र एक ही प्रकारकी शोभाकी बात की है। आत्माएँ अपनी इच्छानुसार पल-पलमें इसके अनेक रूपोंके दर्शन करतीं हैं।

ना कछू खोली ना फेर बांधी, इन पागै में कै गुन ।
पल पल में सुख दिल चाहे, नए नए देत रूहन ॥ ४७

इस पागको न कभी खोलना पड़ता है और न ही पुनः बाँधना पड़ता है। इसमें अनेक प्रकारके गुण विद्यमान हैं। ये गुण ब्रह्मात्माओंको पल पलमें नित्य नवीन सुख प्रदान करते हैं।

या विध कै सुख देत हैं, या वस्तर या भूषन ।
सुख हक सरूप सिनगार के, किन विध कहूं मुख इन ॥ ४८

इस प्रकार श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषण ब्रह्मात्माओंको विभिन्न प्रकारके सुख प्रदान करते हैं। श्रीराजजीके शृङ्गारके इन सुखोंका वर्णन जिह्वाके द्वारा कैसे करें ?

तिलक नासिका नेत्र की, केस लवने कान गाल ।
मुख चौक देख नैन रुह के, रोम रोम छेदे ज्यों भाल ॥ ४९

श्रीराजजीकी ललाट पर सुशोभित तिलक, उनकी नासिका, नेत्र, केश,
श्रवण-अङ्ग, कपोल आदि अद्वितीय शोभायुक्त हैं। श्रीराजजीके
मुखमण्डलकी अद्वितीय शोभाके दर्शन करने पर रोम रोम उत्कण्ठित हो जाते
हैं।

मुख सुंदरता क्यों कहूं, नूर जमाल सूरत ।
ए बयान दुनी में क्यों करूं, ए जो आई अरस न्यामत ॥ ५०

इस मुख मण्डलकी सुन्दरताका वर्णन कैसे करें, यह तो अक्षरातीत परब्रह्म
परमात्माका मुख मण्डल है। परमधामकी इस अनुपम सम्पदाका वर्णन नश्वर
जगतमें कैसे किया जाए ?

ए मुख देख सुख पाइए, उपजत है अति प्यार ।
देख देख जो देखिए, तो रुह पावे करार ॥ ५१

इस मुख मण्डलके दर्शन करने पर अपार सुख एवं प्रेम प्राप्त होता है। इस
अद्वितीय शोभाको बार बार देखकर यह आत्मा आनन्दका अनुभव करती
है।

जो देखूं मुख सलूकी, तो चूभ रहे रुह माहें ।
ए सुख मुख अरस का, केहे ना सके जुबाएं ॥ ५२

इस मुख मण्डलकी सुन्दर शोभा देखते ही हृदयमें अङ्कित हो जाती है। दिव्य
परमधामके इस मुखमण्डलसे प्राप्त होने वाले सुखोंका वर्णन शब्दोंके द्वारा
नहीं हो सकता है।

गौर निलवट रंग उजल, जाऊं बल बल मुखारबिंद ।
ए रस रंग छवि देखिए, काढत विरहा निकंद ॥ ५३

श्रीराजजीका गौर ललाट प्रदेश अत्यन्त उज्ज्वल है। उनके मुखारबिन्दकी
अनुपम छविको देखकर उस पर सर्पित होनेकी इच्छा होती है। यह प्रेमरस
पूर्ण छवि विरह वेदनाको तत्काल दूर करती है।

जो मुख सोभा देखिए, तो उपजत रुह आराम ।
आठों पोहोर आसिक, एही मांगत है ताम ॥ ५४

श्रीराजजीके मुखारविन्दकी अनुपम शोभाके दर्शन करते ही आत्मा आनन्दका अनुभव करती है. इसीलिए अनुरागिनी आत्माएँ आठों प्रहर ऐसे ही आहार की कामना करती हैं.

जो गौर रंग देखिए, जुबां कहा कहे हक मान ।
और कछू न देवे देखाई, आगूं अरस सुभान ॥ ५५

श्रीराजजीके गौरवर्णके मुख मण्डलकी शोभा देखने पर ब्रह्मात्माओंको उसके समक्ष अन्य कोई भी वस्तु दिखाई नहीं देती है.

हंसत सोभित मुख हरवटी, अति सुंदर सुखदाए ।
हाए हाए रुह नजर यासों बांध के, क्यों टूक टूक होए न जाए ॥ ५६
इस मुख मण्डलमें सुशोभित चिबुक अत्यन्त सुन्दर तथा सुखदायी है. इस सुन्दर शोभाके साथ दृष्टि बँध जाने पर यह जीव क्यों टुकड़े-टुकड़े नहीं होता है.

अति गौर सुंदर हरवटी, और अतंत सोभा सलूक ।
बड़ा अचरज ए देखिया, जीवरा सुनत न होत टूक टूक ॥ ५७
यह सुन्दर चिबुक श्रीराजजीके गौरवर्णके मुख मण्डल पर अत्यन्त शोभायुक्त है. आश्र्यकी बात है कि इस अद्वितीय शोभाको सुनकर भी यह जीव टुकड़े-टुकड़े नहीं होता है.

हरवटी अधुर बीच लांक जो, मुख अधुर दोऊ लाल ।
ए लालक मुख देखे पीछे, हाए हाए लगत न हैडे भाल ॥ ५८
चिबुक तथा अधरोष्ठके मध्यकी गहराई, मुख मण्डल एवं अधरोष्ठकी लालिमाको देखकर खेदकी बात है कि मेरा हृदय अभी तक द्रवित नहीं होता है.

सोभे हंसत हरवटी, बड़ी अचरज सलूकी मुख ।
रुह देखे अंतर आँखां खोल के, तो उपजे अरस मुख ॥ ५९

मुस्कराते समय श्रीराजजीके चिबुक तथा मुख मण्डलकी शोभा अद्वितीय हो जाती है. जब आत्मा अन्तर्दृष्टि खोलकर इस शोभाका दर्शन करती है तब उसे परमधामके सुखोंका अनुभव होता है.

क्यों कहूं गौर गालन की, सोभित अति सुंदर ।
जो देखूं नैना भरके, तो सुख उपजे रुह अंदर ॥ ६०

श्रीराजजीके कपोलोंका गौरवर्ण अति सुन्दर शोभायुक्त है. इस अद्वितीय शोभाको आँखोंमें भर लेने पर आत्माको अपार सुखका अनुभव होता है.

क्यों कहूं गालों की सलूकी, क्यों कहूं गालों का रंग ।
अनेक गुन गालन में, ज्यों जोत किरन रंग तरंग ॥ ६१

इन कपोलोंकी संरचना तथा इनके रङ्गके विषयमें क्या वर्णन करें ? इनमें तो अनेकों गुण विद्यमान हैं. ऐसा प्रतीत होता है जैसे इनसे निकलती हुई किरणोंके रङ्गोंमें अनेक तरङ्गें उठ रही हों.

बारीक सुख सरूप के, कोई जाने रुह मोमन ।
इसक इलम जोस याही को, जाके होसी अरस में तन ॥ ६२

श्रीराजजीके चिन्मय स्वरूपमें अत्यन्त सूक्ष्म एवं रहस्यपूर्ण आनन्द निहित है. कोई ब्रह्मात्मा ही इसे जान सकती है. जिनकी पर-आत्मा परमधाममें विराजमान है उसी आत्माको श्रीराजजीका प्रेम, ज्ञान तथा आवेश प्राप्त होते हैं.

ए मुख अचरज अद्भुत, गुन केते कहूं गालन ।
ए रुहें जाने सुख बारीक, हर गुन अनेक रोसन ॥ ६३

श्रीराजजीका मुख मण्डल अद्वितीय शोभायुक्त है. इनके कपोलोंके कितने गुणोंका वर्णन करें ? ब्रह्मात्माएँ ही सूक्ष्मरूपसे इन गुणोंका आनन्द प्राप्त कर सकती हैं. क्योंकि प्रत्येक गुण अलग-अलग ढंगसे प्रकाशित होते हैं.

रुह के नैना खोल के, देखूँ दोऊ गाल ।

आसिक को मासूक का, कोई भेद गया रंग लाल ॥ ६४

मैं अपनी आत्मदृष्टि खोलकर इन कपोलोंके दर्शन करता हूँ, अनुरागिनी आत्माके हृदयको अपने प्रियतमके कपोलोंके लाल रङ्गने विदीर्ण कर दिया है.

गाल रंग अति उजल, गेहेरा अति कसूंबाए ।

मेहेबूब मुख देखे पीछे, रुह छिन न सहे अंतराए ॥ ६५

इन कपोलोंका रङ्ग अत्यन्त उज्ज्वल तथा गहन लालिमायुक्त है. अपने प्रियतम धनीके मुखारविन्दके दर्शन कर अनुरागिनी आत्मा पल मात्रका भी वियोग सहन नहीं कर पाती है.

ए अंग अरस सरूप के, क्यों होए वरनन जिमी इन ।

ए अचरज अदभुत हकें किया, वास्ते अरवा अरस के तन ॥ ६६

परमधामके चिन्मय स्वरूपके इन अङ्गोंका वर्णन नश्वर जगतमें कैसे सम्भव है? श्रीराजजीने ही स्वयं अपनी आत्माओंके लिए यह अद्भुत कार्य करवाया है.

महामत हुकमें केहेत हैं, हक वरनन किया नेक ।

और भी कहूँ हक हुकमें, अब होसी सब विवेक ॥ ६७

महामति श्रीराजजीके आदेशके द्वारा कहते हैं, इस प्रकार श्रीराजजीके अङ्गोंका थोड़ा-सा वर्णन हुआ है. इसी आदेशके द्वारा अब आगे और भी विवेक पूर्वक वर्णन करता हूँ.

प्रकरण १२ चौपाई ७०८

हक मासूक के श्रवण अंग

श्रवन की किन विधि कहूँ, लेत आसिक इत आराम ।

देख सुन सुख पावही, आसिक रुह इन ठाम ॥ १

श्रीराजजीके श्रवण अङ्गोंके विषयमें क्या कहें, इनसे ब्रह्मात्माओंको अपार

आनन्द प्राप्त होता है। अनुरागिनी आत्माएँ इन अङ्गोंको देखकर अथवा इनकी बात सुनकर आनन्दका अनुभव करती हैं।

कानन के गुन अनेक हैं, सुख आसिक बिना हिसाब ।

आठों जाम इत पीवहीं, अरस अरवाहें ए सराब ॥ २

इन श्रवण अङ्गोंमें अनेक गुण विद्यमान हैं जिनसे अनुरागिनी आत्माओंको अपार सुख प्राप्त होता है। परमधामकी ये आत्माएँ इन्हीं अङ्गोंसे आठों प्रहर प्रेम सुधाका पान करती हैं।

देख कोमलता कान की, नैनों सीतलता होए ।

आसिक इन सरूप के, ए सुख जाने सोए ॥ ३

इन श्रवण अङ्गोंकी सुकोमलता देखकर नेत्रोंको शीतलता प्राप्त होती है। अनुरागिनी आत्माएँ ही इन सुखोंका अनुभव प्राप्त कर सकती हैं।

मासूक का मुख सोधित, देख लवने केस कान ।

पेहेचान वाले सुख पावहीं, देख अरस अजीम सुभान ॥ ४

प्रियतम धनीका मुखमण्डल तथा उनके श्रवण अङ्ग, कनपटी एवं कुन्तलकी शोभा देखकर अपने प्रियतम धनीकी पहचान करनेवाली आत्माएँ परम सुखका अनुभव करती हैं।

कानों सुनें आसिक की, दिल दे गुझ मासूक ।

कहे आधा सुकन इसक का, आसिक होए जाए भूक भूक ॥ ५

प्रियतम धनी इन श्रवण-अङ्गोंसे अनुरागिनी आत्माओंकी गुप्त बातें सुनते हैं। यदि वे प्रेमके आधे वचन भी कह देते हैं तो अनुरागिनी आत्माएँ उन पर समर्पित हो जाती हैं।

मुख जुबां मासूक की, सो भी कानों के ताबीन ।

रुह देखे गुन कानन के, जासों हक जुबां होत आधीन ॥ ६

श्रीराजीजके मुखारविन्दकी रसना उनके श्रवण-अङ्गोंके अधीन है। मेरी आत्माने उनके श्रवण-अङ्गोंके गुणोंको देखकर ही यह अनुभव किया कि उनकी जिह्वा इसीके अधीन है।

हकें आसिक नाम धराइया, वाको भी अरथ ए ।
मासूक उलट आसिक हुआ, सो भी बल कानन के ॥ ७
श्रीराजजीने स्वयंको प्रेमी (आशिक) कहा है, इसका कारण भी ये ही श्रवण-अङ्ग हैं। इन्हीं श्रवण-अङ्गोंके कारण प्रेमपात्र (माशूक) परब्रह्म परमात्मा अनुरागी (आशिक) कहलाए हैं।

[परमधाममें ब्रह्मात्माएँ आशिक कहलाती हैं एवं अक्षरातीत धनी माशूक कहलाते हैं। इसलिए कि श्रीराजजीका प्रेम प्राप्त करनेके लिए ब्रह्मात्माएँ उनकी ओर उन्मुख रहती हैं। जब ब्रह्मात्माओंने अक्षरब्रह्मका खेल देखनेकी इच्छा व्यक्त की तब श्रीराजजीने इनके वचनोंको सुनकर इन्हें सुरताके रूपमें नश्वर जगतके खेलमें भेजा एवं उनको जागृत करनेके लिए वे स्वयं आवेश रूपमें आए, जिससे वे आशिक कहलाए। ब्रह्मात्माओंके वचनोंको सुनकर ही श्रीराजजीको अनुरागी (आशिक) बनकर इस जगतमें आना पड़ा है। इन श्रवण अङ्गोंके कारण ही वे अनुरागी (आशिक) कहलाए हैं।]

हक कहे मेरा नाम आसिक, सो भी सुन के गुझ मोमन ।
ए जाने अरवा अरस की, कहूं केते कानों गुन ॥ ८
श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंकी गुप्त बातोंको सुनकर ही अपना नाम अनुरागी (आशिक) रखा है। इस रहस्यको परमधामकी आत्माएँ ही समझ सकतीं हैं। इस प्रकार इन श्रवण-अङ्गोंके कितने गुणोंका वर्णन करें ?

खावंद अरस अजीम का, गुझ सुनत रात दिन ।
ए जो अरवाहें अरस की, कै सुख लेवें कानन ॥ ९
परमधामके धनी श्रीराजजी रात-दिन ब्रह्मात्माओंकी गुप्त बातें सुनते हैं। इस प्रकार परमधामकी आत्माएँ इन श्रवण-अङ्गोंसे अपार सुख प्राप्त करतीं हैं।
हक आसिक हुआ याही वास्ते, सो रूहें क्यों न सुनें हक बात ।
ए कौन जाने अरस रूहों बिना, कान गुन अंग अछ्यात ॥ १०
ब्रह्मात्माओंकी बातोंको सुनकर ही श्रीराजजी अनुरागी (आशिक) बने हैं तो फिर ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी बातें क्यों नहीं सुनेंगी ? इस प्रकार श्रवण-

अङ्गोंके इस अन्तरङ्ग रहस्यको परमधामकी आत्माओंके बिना अन्य कौन जान सकता है ?

बोहोत बडे गुन कान के, बिना आसिक न जाने कोए ।

कै गुझ गुन श्रवन के, और कोई जाने जो दूसरा होए ॥ ११

श्रीराजजीके ये श्रवण अङ्ग अनन्त गुणोंके भण्डार हैं. अनुरागिनी आत्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीको भी यह रहस्य ज्ञात नहीं है. इस प्रकार श्रवण अङ्गोंके अनेक रहस्यमय गुण हैं जिनको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई होता तभी जान सकता है.

और देखो गुन कानन के, जब हक देत रुहों कान ।

वाको ले अपनी नजर में, देखें सनकूल दृष्टि सुभान ॥ १२

इन श्रवण अङ्गोंके अन्य गुणोंको भी देखो, जब श्रीराजजी अपनी आत्माओंकी बातें सुनते हैं तो उनको अपनी दृष्टिमें स्थिर कर उन्हें बड़ी प्रसन्नता पूर्वक देखते हैं.

सब सुख पावे रुह तिनसों, हुए नेत्र भी कानों तालूक ।

शीतल दृष्टे देखत, ए जो मासूक मलूक ॥ १३

इस प्रकार श्रीराजजीके नेत्र भी इन श्रवण अङ्गोंके अधीन हो जाते हैं. इसलिए ब्रह्मात्माएँ श्रवण अङ्गोंसे सब प्रकारके सुख प्राप्त करती हैं. जब प्रियतम धनी अपनी आत्माओंको शीतल दृष्टिसे देखते हैं तो उन्हें अपार सुखोंका अनुभव होता है.

ए सब बरकत कानों की, सो सुन सुन रुह की बान ।

दिल भी हक तहां देत हैं, मेहर करत मेहरबान ॥ १४

यह सब विशेषता इन्हीं श्रवण अङ्गोंकी है क्योंकि धामधनी अपनी आत्माओंकी बातें सुनकर उनके ऊपर कृपा करते हुए उनको अपना हृदय प्रदान करते हैं.

ए गुन सब कानन के, कै गुझ सुख रुह परवान ।

रुहों कै सुख कानों लेत हैं, रेहेमत इन रेहेमान ॥ १५

ये सभी गुण इन श्रवण अङ्गोंके हैं कि ब्रह्मात्माएँ उनसे अनेक रहस्यपूर्ण

सुख प्राप्त करती हैं। इस प्रकार ब्रह्मात्मा एँ परम कृपालु श्रीराजजीके श्रवण अङ्गोंके अनेक सुख प्राप्त करती हैं।

हक इसक जो करते हैं, सो सब कानों की बरकत ।

अनेक सुख हैं इनमें, सो जाने हक निसबत ॥ १६

इन्हीं श्रवण अङ्गोंके प्रतापसे श्रीराजजी अपना प्रेम भाव प्रकट करते हैं। इस प्रकार इन अङ्गोंमें अनेक सुख हैं उनको श्रीराजजीकी अङ्गनाएँ ही जान सकती हैं।

आसिक जाए कहूँ ना सके, छोड़ सुख हक श्रवन ।

हिसाब नहीं सुख कानों के, कोई सके न ए गुन गिन ॥ १७
अनुरागिनी आत्मा एँ श्रीराजजीके इन श्रवण अङ्गोंसे प्राप्त सुखोंको छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं जा सकती। इस प्रकार इन श्रवण अङ्गोंके अपार गुणोंकी गणना कोई भी नहीं कर सकता है।

खोल देखो एक इसक को, तो कै सुख अरस अपार ।

सो सुख लेसी कर बेवरा, जो होसी निसबती होसियार ॥ १८
अपनी आत्म दृष्टिको खोलकर मात्र एक प्रेमका ही अनुभव करने लगें तो भी उससे परमधामके अपार सुखोंका अनुभव होगा। परमधामकी सुश ब्रह्मात्मा एँ ही इन सुखोंका अनुभव कर सकती हैं।

दिलके सुख केते कहूँ, जो हक दिल दरिया पूरन ।

सब अंग ताबे दिलके, होसी अरस में हिसाब इन ॥ १९

श्रीराजीका हृदय सुखका सागर है, उन सुखोंके विषयमें क्या कहें ? श्रीराजजीके सभी अङ्ग इसी हृदयके अधीन हैं। इस हृदयके सुखोंकी गणना तो परमधाममें ही हो सकेगी।

तो इन जुबां क्यों होवहीं, हक हादी सागर सुख ।

ए बारीक सुख बीच अरस के, होसी मूलमेले के मुख ॥ २०

श्रीराज श्यामाजी सुखके सागर हैं। इस जिह्वाके द्वारा उनका वर्णन कैसे हो

सकता है ? परमधाममें जागृत होने पर ही परमधामके इन सुखोंके गूढ़ रहस्योंकी चर्चा होगी.

जो अरथ ऊपर का लेवहीं, सो सुख जाने एक हक श्रवण ।

एक एक के कै अनेक, सो कै गुन मगज लेवें मोमन ॥ २१

यदि बाह्य दृष्टिसे देखें तो ऐसा लगता है कि ये सम्पूर्ण सुख श्रीराजजीके श्रवण अङ्ग ही जानते हैं. इन एक-एक सुखमें अन्य अनेक सुख निहित हैं. इस प्रकार इन श्रवण अङ्गोंके गुणोंको ब्रह्मात्माएँ ही जान सकती हैं.

कै अंग ताबे कान के, कान अंग सिरदार ।

कोई होसी रुह अरस की, सो जानेगी जाननहार ॥ २२

श्रीराजजीके अनेक अङ्ग इन श्रवण अङ्गोंके अधीन हैं. इसलिए श्रवण अङ्गोंको शिरोमणि कहा गया है. परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही इस रहस्यको समझ पाएँगी.

इलम भी ताबे कानों के, जो इलम कह्या बेसक ।

ए झूठी जिमिएं सेहेरगसे नजीक, इन इलमें पाइए इत हक ॥ २३

तारतम ज्ञान भी इन्हीं श्रवण अङ्गोंके अधीन है जिसे सन्देह निवारक जागृत बुद्धिका ज्ञान कहा गया है. इसी ज्ञानके द्वारा इस नश्वर जगतमें भी श्रीराजजीको प्राणनलीसे भी निकट पाया जा सकता है.

कै गुन हैं कानन के, जाके ताबे दिल खसम ।

क्यों सिफत कहूं इन दिलकी, जिन दिल ताबे हुकम ॥ २४

इस प्रकार इन श्रवण अङ्गोंमें अनेक गुण विद्यमान हैं. श्रीराजजीका हृदय भी इन्हीं के अधीन है. इस हृदयकी महिमाका वर्णन क्या करें, श्रीराजजीका आदेश भी इसीके अधीन रहता है.

हुकम इलम ताबे कान के, मेहेर दिल ताबे इसक के ।

क्यों कहूं इनसे आगे बचन, कानों ताबे भए सागर ए ॥ २५

श्रीराजजीका आदेश तथा ज्ञान दोनों ही श्रवण अङ्गोंके अधीन हैं. इसी प्रकार

उनकी कृपा एवं हृदय प्रेमके अधीन हैं। इन श्रवण अङ्गोंकी विशेषता इससे अधिक क्या कही जाए जब ज्ञान और प्रेमके सागर ही इन्हींके अधीन हो गए हैं।

निकस न सके आसिक, हक के एक अंग से ।
तिन अंग ताबे कै सागर, अरस रुहें पड़ी इनमें ॥ २६
अनुरागिनी आत्मा श्रीराजजीके किसी एक अङ्गसे भी दूर नहीं जा सकती।
क्योंकि इन अङ्गोंके अधीन अनेक सागर हैं एवं आत्माएँ इन्हीं सागरोंमें
निमग्न रहती हैं।

जो सागर कहे ताबे कान के, तिन सागरों ताबे कै सागर ।
जो गुन देखूँ हक एक अंग, याथें रुह निकसे क्योंकर ॥ २७
जिन सागरोंको श्रवण अङ्गोंके अधीन कहा है उनके अधीन भी अन्य अनेक
सागर हैं। इस प्रकार श्रीराजजीके एक अङ्गके गुणोंको भी देख लें तो आत्मा
उससे बाहर कैसे निकल सकती है ?

जो गुन मैं कहेती हों, हक अंग गुन अपार ।
अरस रुहें गिने गुन अंग के, सो गुन आवे न क्योंए सुमार ॥ २८
मैंने जिन-जिन गुणोंका वर्णन किया है, ऐसे अनेक गुण श्रीराजजीके अङ्गमें
हैं। श्रीराजजीके अङ्गके इन गुणोंको यदि परमधामकी आत्माएँ गणना करना
चाहेंगी तो भी उनका पार नहीं पाएँगी।

सुनो मोमिनो एक ए गुन, एक अंग ऊपर के कान ।
अंग अपार कहे कै बातून, अजूँ जुदे भूषन सुभान ॥ २९
हे ब्रह्मात्माओ ! इन श्रवण अङ्गोंके एक ही गुणको सुनो, बाह्य दृष्टिसे तो
ये एक ही अङ्ग हैं, किन्तु गूढ़ रूपमें इनमें अन्य अपार गुण विद्यमान हैं।
इनके आभूषणोंके गुण तो इनसे भी भिन्न हैं।

जैसी सौभा देखों साहेब की, तैसे कानों पेहेने भूषन ।
आसमान जिमी के बीच में, हो रही सबे रोसन ॥ ३०
श्रीराजजीकी जैसी दिव्य शोभा है उसीके अनुरूप उन्होंने अपने श्रवण

अङ्गोंमें दिव्य आभूषण धारण किए हैं। इन आभूषणोंका प्रकाश भूमि और आकाशके मध्यमें सर्वत्र प्रकाशित हो रहा है।

एक अंगमें कै खूबियां, सो एक खूबी कही न जाए ।

तिन खूबी में कै खूबियां, गिनती होए न ताए ॥ ३१

श्रीराजजीके एक ही अङ्गमें अनेक विशेषताएँ हैं उनमें-से एक विशेषताका भी वर्णन नहीं हो सकता है। क्योंकि उस एकमें भी अन्य अनेक विशेषताएँ होती हैं जिनकी गणना ही नहीं हो सकती।

सो खूबियां भी अरस की, जाके कायम सुख अखण्ड ।

सो कायम सुख इत क्यों कहूं, ए जो जुबां इन पिंड ॥ ३२

ये सभी विशेषताएँ परमधामकी हैं, जहाँ के सुख ही नित्य तथा अखण्ड हैं। इस नश्वर जिह्वाके द्वारा उन अखण्ड सुखोंका वर्णन कैसे करें ?

क्यों वरनों अरस अंग को, एक अंगमें अनेक रंग ।

जो देखों ताके एक रंग को, तिन रंग रंग कै तरंग ॥ ३३

परमधामके अङ्गोंका वर्णन ही कैसे किया जाए, क्योंकि वहाँ पर एक अङ्गमें भी अनेक रङ्ग विद्यमान हैं। यदि उनमें-से एक रङ्गको देखने लग जाएँ तो उसमें अनेक तरङ्गें दिखाई देती हैं।

सो एक तरंग ना केहे सकों, एक तरंगों कै किरन ।

जो देखूं एक किरन को, तो पार न पाऊं गुन गिन ॥ ३४

उस एक तरङ्गका भी वर्णन नहीं हो सकता है क्योंकि उसमें भी अनेक किरणें हैं। यदि एक किरणको देखने लग जाएँ तो उसके भी गुणोंकी गणना नहीं हो सकेगी।

एह निमूना देत हों, सो रहें जाने जो सिफत करत ।

जथारथ सबद न पोहोंचहीं, तो जुबां पोहोंचे क्यों हक सिफत ॥ ३५

यह तो मात्र उदाहरण दिया है। इसकी वास्तविकताको तो ब्रह्मात्मा एँ ही जान सकती हैं। क्योंकि वे ही इसकी महिमा गारी हैं। इस नश्वर जगतका एक भी शब्द परमधामकी यथार्थताका वर्णन करनेके लिए योग्य नहीं है तो यह

जिह्वा श्रीराजजीकी महिमाका गायन कैसे कर सकेगी ?

जो कबूँ कानों ना सुनी, सो सुन जीव गोते खाए ।

दम ख्वाबी बानी वाहेदत की, सुनते ही उड़ जाए ॥ ३६

श्रीराजजीकी इस दिव्य महिमाको कभी भी किसीने नहीं सुना था. उसे सुनकर नश्वर जगतके जीव गोते खा जाते हैं. क्योंकि स्वप्नके जीव अद्वैत भूमिकाकी वाणी सुनते ही उड़ जाते हैं.

श्रवन गुन गंज क्यों कहूँ, जाके ताबे हुए कै गंज ।

इन गंजों गुन सुख सो जानहीं, जिन बका हक समझ ॥ ३७

इस प्रकार श्रीराजजीके श्रवण अङ्गोंके अनन्त गुणोंकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? इसके अधीन अनन्त गुण हैं. इन गुणोंके भण्डारका सुख वही आत्मा प्राप्त कर सकती है जिसको परब्रह्म परमात्माकी पहचान है.

गुन एक अंग कह्यो न जावहीं, जो देखों दिल धर ।

तो गंज अलेखे अपार के, सुख कहूँ क्यों कर ॥ ३८

इस प्रकार हृदय पूर्वक विचार करें तो श्रीराजजीके एक अङ्गके गुणोंका भी वर्णन नहीं हो सकता है. फिर उनके विभिन्न अङ्गोंके अपार गुणोंके सुखका वर्णन कैसे हो सकता है ?

ए जब देखों गुन श्रवना, जानों कोई न इन सरभर ।

सहूर करों एक गुन सुख, तो जाए निकस उमर ॥ ३९

जब इन श्रवण अङ्गोंके गुण देखते हैं तो ऐसा लगता है कि इनके समान अन्य कोई नहीं है. यदि मात्र एक गुणके सुखोंको भी विचार पूर्वक मनन करने लग जाएँ तो पूरी आयु व्यतीत हो जाएगी.

ताथें सुख और अंगों के, सो भी लिए दिल चाहे ।

ना तो श्रवन ताबे कै गंज हुए, ताको एक गुन दिल न समाए ॥ ४०

इसलिए मैंने अन्य अङ्गोंके सुखोंको भी इच्छानुसार ग्रहण किया है, अन्यथा इन्हीं श्रवण अङ्गोंके अधीन भी अपार गुण हैं, जिनके मात्र एक गुणका सुख भी हृदयमें समा नहीं पाता है.

ए सुख बिना हिसाबके, ए जाने मोमिन दिल अरस ।

ए रस जिन रूहों पिया, सोई जाने रस अरस परस ॥ ४१

इन असंख्य सुखोंको धामहृदया ब्रह्मात्माएँ ही जान सकती हैं. जिन्होंने इन सुखोंका रस पान किया है वे ही श्रीराजजी तथा अपने हृदयके पारस्परिक सम्बन्धको जान सकती हैं.

जो देखी सारी कुदरत, सो भी इन श्रवन की बरकत ।

जो विचार करों इन तरफ को, तो देखों सब में एही सिफत ॥ ४२

नश्वर जगतकी यह सम्पूर्ण सृष्टि भी इन्हीं श्रवण अङ्गोंके कारण हुई है. यदि इस ओर विचार करते हैं तो श्रीराजजीके सभी अङ्गोंमें ऐसी ही विशेषताएँ दिखाई देती हैं.

जो सहूर कीजे हक सिफतें, तो ए तो हक बका श्रवन ।

ए सुख क्यों आवें सुमार में, कछू लिया दिल अरस मोमिन ॥ ४३

श्रीराजजीके अङ्गोंकी विशेषताओं पर विवेक पूर्वक विचार करें तो ज्ञात होगा कि मात्र श्रवण अङ्गोंके सुख भी गिनती में नहीं आ सकते. ब्रह्मात्माओंने उनका थोड़ा-सा अंश ही हृदयमें ग्रहण किया है.

जेता सहूर जो कीजिए, सब सिफतें सिफत बढ़त ।

जो कदी आई बोए इसक, तो मुख ना हरफ कढ़त ॥ ४४

इस प्रकार जितना विचार करें उतनी ही शोभा बढ़ती चली जाएगी. यदि हृदयमें प्रेमकी सुगन्ध आ जाएगी तो जिह्वासे एक भी शब्द नहीं निकल सकेगा.

कहे हुक्में महामत मोमिनो, क्यों कहे जाए गुन कानन ।

जाके ताबे कै गंज सागर, ए सुख सेहे सके अरसके तन ॥ ४५

महामति श्रीराजजीके आदेशसे कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! इन श्रवण अङ्गोंके गुणोंका वर्णन कैसे किया जाए. परआत्माएँ ही इन गुणोंको धारण करनेमें समर्थ हैं जिनके अधीन अनन्त गुणोंके सागर हैं.

हक मासूक के नेत्र अंग

देखो नैना नूरजमाल, जो रुहों पर सनकूल ।

अरवाहें जो अरस की, सो जिन जाओ छिन भूल ॥ १

अब श्रीराजजीके नेत्र कमलोंके दर्शन करते हैं वे ब्रह्मात्माओं पर सदैव प्रसन्न रहते हैं। परमधामकी आत्माएँ क्षण मात्रके लिए भी इन नेत्रकमलोंकी छविको न भूलें।

दिल अरस नाम धराए के, नैन वरनों नूरजमाल ।

हाए हाए छेद न पडे छाती मिने, रोम रोम लगे ना रुह भाल ॥ २

श्रीराजजीने मेरे हृदयको परमधाम बनाया है और वे स्वयं इसमें आसीन हैं। इतना जानते हुए भी मैं उनके नेत्र कमलोंका वर्णन करना चाहता हूँ। खेदकी बात है कि इन तेजोमय नयनोंका वर्णन करते हुए मेरा हृदय क्यों विदीर्ण नहीं हो रहा है और मेरे रोम-रोम शलाकासे क्यों बीधे नहीं जा रहे हैं ?

जो अरवा कहावे अरस की, सुने बेसक हक बयान ।

हाए हाए झूठी देहको छोड के, पोहोंचत ना तित प्रान ॥ ३

जो आत्माएँ परमधामकी कहलाती हैं वे निश्चय ही श्रीराजजीके अङ्गोंका वर्णन सुनती हैं किन्तु खेदकी बात है कि नश्वर शरीरको छोड़कर उनके चरणोंमें नहीं पहुँचती हैं।

सिफत पाई हक नैन की, हक नैनों में गुन अपार ।

सो गुन अखंड अरस के, ए रंग हमेसा करार ॥ ४

मैंने श्रीराजजीके नयनोंकी शोभा देखी तो पाया कि इनमें अपार गुण विद्यमान हैं। ये गुण भी दिव्य परमधामके हैं, इतना ही नहीं ये गुण प्रेमके रङ्गमें ऐसे रङ्गे हैं कि सर्वदा आनन्द प्रदान करते हैं।

गुन नैनों के क्यों कहूँ, रस भरे रंगीले ।

मीठे लगें मरोरते, अति सुन्दर अलबेले ॥ ५

इन नयनोंके गुणोंका वर्णन कैसे करें, ये तो अत्यन्त रसपूर्ण तथा मस्तीसे परिपूर्ण हैं। जब श्रीराजजी कटाक्षपूर्ण दृष्टि डालते हैं तब इनका माधुर्य एवं अलबेलापन देखते ही बनता है।

सोभावंत कै सुख लिए, तेजवंत तारे ।
बंके नैन मरोरत मासूक, सब अंग भेदत अनियारे ॥ ६

ये नयन अपार सुख एवं शोभासे युक्त हैं, इनकी पुतलियाँ भी तेजस्वितायुक्त हैं। जब श्रीराजजी अपनी तिरछी चितवनसे अपनी अङ्गनाकी ओर देखते हैं तब उनके अङ्ग प्रत्यङ्ग विदीर्ण हो जाते हैं।

मेहेर भरे मासूक के, सोहें नैन सुन्दर ।
भृकुटी स्याम सोभा लिए, चूभ रेहेत रुह अंदर ॥ ७

प्रियतम धनीके ये नेत्रकमल कृपासे परिपूर्ण होनेसे अत्यन्त सुन्दर सुशोभित हैं। उनकी श्याम रङ्गकी भृकुटी भी शोभायुक्त है। यह ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्कित हो जाती है।

जोत धरत कै जुगतें, निहायत मान भरे ।
लज्या लिए पल पापन, आनंद सुख अगरे ॥ ८

इन नेत्रोंने विभिन्न प्रकारकी ज्योति युक्तिपूर्वक धारण की हुई है जिससे ये स्वाभिमान पूर्ण दिखाई देते हैं। इनकी पलकोंमें लज्जा है। वस्तुतः ये सुख एवं आनन्दके भण्डार हैं।

नैनों की गति क्यों कहूं, गुनवंते गंभीर ।
चंचल चपल ऐसे लगें, सालत सकल सरीर ॥ ९

इन नयनोंकी गतिके विषयमें क्या कहें, ये एक ओर अत्यन्त गंभीर हैं तो दूसरी ओर अत्यन्त चंचल एवं चपल दिखाई देते हैं। इनको देखकर धामधनीसे मिलनेके लिए ब्रह्मात्माओंके अङ्ग प्रत्यङ्ग उत्कण्ठित हो जाते हैं।

नूर भरे नैना निरमल, प्रेम भरे प्यारे ।
रस उपजावत रंग सों, मानों अति कामनगारे ॥ १०

ये निर्मल नेत्र दिव्य तेजसे परिपूर्ण हैं, इनमें प्रेम ही प्रेम भरा हुआ है। ये ब्रह्मात्माओंके हृदयमें आनन्द प्रकट करते हैं, मानों इनमें प्रेमयुक्त कमनीयता समाई हुई है।

जब खैंचत भर कसीस, तब मुतलक डारत मार ।

इन विध भेदत सब अंगों, मूल तन मिट्ट विकार ॥ ११

इन नयनोंके द्वारा जब श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंको अपनी ओर आकृष्ट करते हैं, तब आत्माएँ अपने प्रियतम धनीसे मिलनेके लिए अत्यन्त उत्कण्ठित हो जाती हैं। ये नयन ब्रह्मात्माओंके रोम रोमको इस प्रकार विदीर्ण करते हैं कि उनके मूल तन (पर-आत्मा) का स्वप्नरूपी विकार ही मिट जाता है।

निपट बंकी छवि नैन की, नूरे के तारे कारे ।

सोधे सेत लालक लिए, नूर जोत उजियारे ॥ १२

इन नयनोंकी छवि बंकिम (तिरछी) है तथा उनकी श्याम रङ्गकी पुतली अति तेजस्वी है। वह श्वेत तथा लालिमायुक्त आँखेके अन्दर सुशोभित है। उसकी दिव्य ज्योतिसे सर्वत्र प्रकाशित होता है।

बडे लंबे टेढक लिए, अति अनियां सोधे ऊपर ।

सीतल करुना अमी झरे, मद रंग भरे सुंदर ॥ १३

ये नयन विशाल होते हुए भी तिरछे हैं। इनकी नोक अत्यन्त सुन्दर शोभायुक्त हैं। इनसे शीतलता एवं करुणाका अमृत मन्द मन्द गतिसे प्रवाहित होता है।

सोहत छेल छबीले, कहा कहुं सलूक ।

एह नैन निरखे पीछे, हाए हाए जीव न होत भूक भूक ॥ १४

ये नयन अत्यन्त सुन्दर (छैल छबीले) हैं। इनकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? इनको देखकर यह जीव क्यों टुकड़े टुकड़े नहीं होता है ?

दया सिंध सुख सागर, इसक गंज अपार ।

सराब पिलावत नैनसों, साकी ए सिरदार ॥ १५

श्रीराजजी करुणा एवं सुखोंके सागर हैं। उनमें प्रेमका अपार भण्डार है। वे अपने नयन रूपी पात्रोंसे प्रेम सुधाका पान कराते हैं।

छब फब इन नैनों की, जो रुह देखे खोल नैन ।

आठों पोहोर न निकसे, पावें आसिक अंग सुख चैन ॥ १६

यदि इन नयनोंकी अनुपम छवि एवं सुन्दरताको आत्म दृष्टिसे देखें तो इनसे

यह दृष्टि आठों प्रहर दूर नहीं हटेगी. इस प्रकार अनुरागिनी आत्माएँ इनसे अपार सुख प्राप्त करती हैं.

प्रेम पुंज गंज गंभीर, नेत्र सदा सुखदाए ।

जो रुह मिलावे नैन नैनसों, तो चोट फूट निकसे अंग ताए ॥ १७
प्रेमसे परिपूर्ण एवं गम्भीरतायुक्त ये नयन कमल अत्यन्त सुखदायी हैं. जो आत्मा इन नयनोंसे अपने नयन मिलाती है उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग विदीर्ण हो जाते हैं.

सीतल दृष्टि मासूक की, जासों होईए सनकूल ।

होए आसिक इन सरूप की, पाव पल न सके भूल ॥ १८

इस प्रकार प्रियतम धनीकी शीतल दृष्टि जिनके प्रति प्रसन्न हो जाती है, वह अनुरागिनी आत्मा पलके चतुर्थ अंशमात्रके लिए भी इन स्वरूपको नहीं भूल सकती.

नैन देखें नैन रुह के, तिनसों लेवे रंग रस ।

तब आवें दिल में मासूक, सो दिल मोमिन अरस परस ॥ १९

जब आत्माके नयन श्रीराजजीके नयन कमलोंको देखते हैं तो उन्हें अपार आनन्दका अनुभव होता है. उनके हृदयमें प्रियतम धनीकी छवि समा जाती है एवं श्रीराजजीके हृदयमें भी ब्रह्मात्माओंकी छवि समा जाती है. इस प्रकार पारस्परिक सुख प्राप्त होता है.

रुह देखे हक नैन को, नेत्र में गुन अनेक ।

सो गुन गिनती में न आवही, और केहेने को नैना एक ॥ २०

जब आत्मा श्रीराजजीके नयनोंको देखती है तो उसमें उसे अनेक गुण दिखाई देते हैं. यद्यपि कहनेके लिए नेत्रको एक अङ्ग कहा जाता है किन्तु उनके गुणोंकी गणना नहीं हो सकती है.

कै गुन देखे छब फब में, कै गुन माहें सलूक ।

गुन गिनते इन नैनों के, हाए हाए अजूँ न होए दिल भूक ॥ २१

इन नेत्रोंकी छविकी सुन्दरतामें अनेक गुण सुशोभित हैं तो इनकी सुन्दर

संरचनामें भी अनेक गुण हैं। इनके गुणोंकी गणना करते हुए यह हृदय अभी भी क्यों खण्डित नहीं हो रहा है ?

मेरी रूह नैन की पुतली, तिन नैन पुतली के नैन ।

मासूक राखूँ तिन बीच में, तो पाऊं अरस सुख चैन ॥ २२

मेरी आत्मा इन्हीं नयनोंकी पुतली है। इस पुतलीके भी नयनोंमें मैं अपने प्रियतम धनीको बसा लूँ तो मुझे परमधामके अपार सुखोंका अनुभव होगा.

प्रेम प्रीत रस इसक, सब नैनों में देखाई देत ।

ए रस जाने रुहें अरस की, जो भर भर प्याले लेत ॥ २३

इस प्रकार प्रेम, प्रीति तथा प्रेमरस आदि सभी गुण इन नयनोंमें दिखाई देते हैं। वस्तुतः परमधामकी आत्माएँ ही इस प्रेमरसको जानतीं हैं और प्याले भर भर कर इसका पान करतीं हैं।

देख देख जो देखिए, तो अधिक अधिक अधिक ।

नैन देखें सुख पाइए, जानों सब अंगों इसक ॥ २४

इन नयनोंकी शोभा देखने लगें तो यह पल पल अधिक दिखाई देने लगेगी.

इन नयनोंको देखते हुए परमसुखका अनुभव होता है एवं ऐसा लगता है कि श्रीराजजीके सभी अङ्ग प्रेमसे परिपूर्ण हैं।

ए नैन देख मासूक के, आसिक के सब अंग ।

सुख सीतल यों चूंभत, सब अंग बढत रस रंग ॥ २५

इन नयनोंको देखने पर अनुरागिनी आत्माओंके अङ्ग प्रत्यङ्गोंमें सुख एवं शीतलताका संचार हो जाता है। इस प्रकार उसके सभी अङ्ग आनन्द रससे परिपूर्ण हो जाते हैं।

कै गुन बडे नैन के, और कै गुन नैन टेढाए ।

कै गुन तेज तारन में, कै गुन हैं चंचलाए ॥ २६

इन विशाल तथा बंकिम (तिरछे) नयनोंमें अनेक गुण समाहित हैं। इसी प्रकार इनकी पुतलियोंमें तथा इनकी चंचलता में भी अनेक प्रकारके गुण परिपूर्ण हैं।

कै गुन हैं तिरछाई में, कै गुन पापन पल ।

कै गुन सीतल कै मेहर में, कै तीखे गुन नेहेचल ॥ २७

इनकी कटाक्षमें भी अनेक गुण हैं एवं इनकी पलकोंमें भी अनेक गुण हैं। इस प्रकार इन नयनोंमें शीतलता, दयालुता तथा तीक्ष्णता आदि अनेक गुण विद्यमान हैं।

कै गुन सोभा सुन्दर, कै गुन प्रेम इसक ।

कै गुन नैन रंग में, कै गुन रस नैन हक ॥ २८

श्रीराजजीके इन नयनोंमें शोभा, सुन्दरता, प्रेम आदि अनेक प्रकारके गुण विद्यमान हैं। इसी प्रकार इनके रङ्गोंमें भी अनेक प्रकारके गुण तथा रस विद्यमान हैं।

कै गुन नैनों के नूर में, कै गुन नैनों के हेत ।

कै गुन तीखे कै सील में, गुन मीठे कै सुख देत ॥ २९

इन नयनोंके तेजमें भी अनेक गुण हैं। इनके प्रेम, स्नेह, तीक्ष्णता तथा शीतलता में भी अनेक गुण हैं। इस प्रकार श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंको इन गुणोंके अनेक मधुर सुख प्रदान करते हैं।

यों कै गुन केते कहूं, गुन को न आवे पार ।

ए भूल देखो अपनी, ए गुन गिनूं माहें सुमार ॥ ३०

इस प्रकार श्रीराजजीके नयनोंमें अनेक गुण हैं जिनकी गणना नहीं हो सकती है। अपनी यही भूल है कि हम इन नयनोंकी शोभाके गुण गिननेका प्रयत्न करते हैं।

कै गुन नेत्र सुभान के, सो क्यों कहूं चतुराई इन ।

इन जुबां बल न पोहोंचहीं, हिसा कोटमा एक गुन ॥ ३१

प्रियतम धनीके नेत्रोंके अनेक गुण तथा चातुर्यके विषयमें क्या कहें, इन गुणोंके करोड़वें अंशका वर्णन करनेके लिए भी यह जिह्वा समर्थ नहीं है।

प्यारे मेरे प्रान के, नैना सुख सागर सलोने ।

रेहे ना सकों बिना रंगीले, ज्यों कसँबडी उजलक में ॥ ३२

श्रीराजजीके ये नेत्र कमल मेरे प्राणोंसे भी प्रिय हैं। इन सुन्दर नेत्रोंमें सुखके सागर समाये हुए हैं। इन रङ्गिलें नयनोंके बिना मुझसे रहा नहीं जाता। इनकी उज्ज्वलता लालिमायुक्त है।

जब देखों सीतल नजरों, सब ठरत आसिक के अंग ।

सब सुख उपजे अरस में, हक मासूक के संग ॥ ३३

जब अनुरागिनी आत्मा अपनी शीतल दृष्टिसे इन नयनोंकी शोभा देखती है तब उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग शीतल हो जाते हैं, जिससे उसे श्रीराजजीके साथ परमधामके सम्पूर्ण सुख प्राप्त होते हैं।

मैं नैनों देखूं नैन हक के, हुई चारों पुतली तेज पुंज ।

जब नैन मिलें नैन नैन में, नूरै नूर हुआ एक गंज ॥ ३४

जब मैं अपने नयनोंसे श्रीराजजीके नयनोंको देखती हूँ तब चारों पुतलियाँ तेजपुञ्जसे परिपूर्ण होती हैं। श्रीराजजीके नयन मेरे नयनसे मिल जाते हैं तो एक अलौकिक प्रकाशपुञ्ज दिखाई देने लगता है।

हक देखे पुतली अपनी, मैं देखूं अपनी पुतलियाँ ।

मैं हक देखूं हक देखें मुझे, यों दोऊ अरस पर भैयां ॥ ३५

श्रीराजजी मेरे नयनोंमें अपनी पुतलियाँ देखते हैं और मैं उनके नयनोंमें अपनी पुतलियाँ देखता हूँ। मैं श्रीराजजीके दर्शन करता हूँ और श्रीराजजी मेरी ओर दृष्टि डालते हैं। इस प्रकार दोनों परस्पर एक दूसरेको देखते हुए एकरूप हो जाते हैं।

हक देखें मेरे नैन में, पुतली जो अपनी ।

मैं अपनी देखूं हक नैन में, यों दोऊ जुगलें जुगल बनी ॥ ३६

श्रीराजजी मेरे नयनोंकी पुतलीमें अपने नयनोंकी पुतली देखते हैं और मैं श्रीराजजीके नयनोंमें अपने नयनोंकी पुतलीको देखती हूँ। इस प्रकार दोनोंकी पुतलियाँ एक दूसरेके नयनोंमें प्रतिबिम्बित होती हैं।

अति गौर पापन नैन की, पल बालत देखत सरम ।

गुन गरभित मेहरें पाइए, रुह हुकमें देखे ए मरम ॥ ३७

श्रीराजजीके नयनोंकी ओर गंभीरता पूर्वक देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वे मर्यादाके साथ अपनी पलकोंको फिराते हैं। श्रीराजजीकी कृपासे ही इन नयनोंमें छिपे हुए गुण प्राप्त होते हैं। इस प्रकार ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके आदेशसे ही इन गुणोंके रहस्यको समझ सकती हैं।

स्याम बंके भौंह नैनों पर, रंग गौर जुडे दोऊ आए ।

निपट तीखी अनियां नेत्रों की, मारे आसिकों बान फिराए ॥ ३८

श्रीराजजीके श्याम रङ्गके तिरछे नयन तथा तिरछी भृकुटीके मध्य गौर वर्णकी सुन्दरता सुशोभित है। इन नेत्रोंकी नोंकें अति तीक्ष्ण हैं। ऐसे नेत्रोंको फिराकर श्रीराजजी अनुरागिनी आत्माओं पर वाण छोड़ते हैं।

जब खैंचत नैना जोड के, तब दोऊ बान छाती छेदत ।

अंग आसिक के फूट के, वार पार निकसत ॥ ३९

जब श्रीराजजी दोनों नयनोंको खींचकर वाण मारते हैं तब ब्रह्मात्माओंका हृदय विदीर्ण हो जाता है और वे वाण हृदयको घायल कर उससे पार निकल जाते हैं।

दमानक ज्यों कहूं कहूं, यों पीछली देत गिराए ।

ए चोट आसिक जानहीं, जो होए अरस अरवाए ॥ ४०

जैसे बन्दूक (चलने पर) सामने वालेको गिरा देती है। इसी प्रकार इन नयनोंके वाण भी अनुरागिनी आत्माओंको घायल कर गिरा देते हैं। परमधामकी आत्माएँ ही इस चोटका मर्म समझती हैं।

भौंह बंके नैन कमान ज्यों, भाल बंकी सामी तीन बल ।

बान टेढे मारत खैंच मरोर के, छाती छेद न गया निकल ॥ ४१

श्रीराजजीके नयनोंकी भृकुटी कमानकी भाँति टेढ़ी है। ललाट पर भी टेढ़े तीन बल दिखाई देते हैं। जब श्रीराजजी इन तिरछे नयनोंको खींचकर वाण मारते हैं तब आत्माओंका हृदय विदीर्ण हो जाता है।

तीर कह्या तीन अंकुडा, छाती छेद न गया चल ।
रह्या सीने बीच आसिक के, हुआ काढना रुहों मुस्कल ॥ ४२

यह नयनवाण तीन कोने वाला है जो अनुरागिनीओंके हृदयको भेदकर वहीं पर अटक जाता है. वह उनके हृदयपर इस प्रकार स्थिर हो जाता है कि उसे वहाँ से निकालना उनके लिए कठिन हो जाता है.

केहेर कह्या तीर त्रगुडा, रही सीने बीच भाल ।
रोई रात दिन आसिक, रोते ही बदल्या हाल ॥ ४३

यह त्रिकोण वाण अनुरागिनियोंके हृदयमें चुभ कर ऐसा उत्पात मचाता है कि वह आत्मा रात दिन रोती रहती है और रोते रोते उसकी मनस्थिति ही बदल जाती है अर्थात् संसारसे विमुख होकर श्रीराजजीके प्रेममें लीन हो जाती है.

अरस बका तीर त्रगुडा, रह्या अरस रुहों हिरदे साल ।
ना पाँच तत्व तीर त्रगुन, ए नैन बान नूरजमाल ॥ ४४

ये त्रिकोण वाण अखण्ड परमधामके हैं, ये जिनके हृदयको विदीर्ण करते हैं वे आत्माएँ भी परमधामकी हैं. ये वाण पाँच तत्व तथा तीन गुणके नहीं हैं, ये तो स्वयं अक्षरातीत परब्रह्म परमात्माके नयनवाण हैं.

ए बलवान सेहेज के, जो कदी मारें दिलमें ले ।
न जानों तिन आसिक का, कौन हाल होवे ए ॥ ४५

ये शक्तिशाली वाण श्रीराजजीके नयनोंसे सहजतासे निकलते हैं. यदि श्रीराजजी हृदयमें प्रेम भाव धारण कर कभी इन वाणोंको चला दें तो न जाने उस अनुरागिनी आत्माकी स्थिति कैसी हो जाएगी.

ए बान टेढे अव्वल के, और टेढे लिए चढाए ।
खैंच टेढे मारे मरोर के, सो क्यों न आसिक टेढाए ॥ ४६

ये वाण आरम्भसे ही टेढ़े हैं और तिरछी चितवनीके द्वारा ही चलाए जाते हैं. इसलिए इनके द्वारा अनुरागिनी आत्माकी स्थिति भी टेढी क्यों नहीं होगी ?

कहे गुन महामत मोमिनो, नैना रस भरे मासूक के ।
अपार गुन गिनती मिने, क्योंकर आवें ए ॥ ४७

महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! इस प्रकार मैंने श्रीराजजीके रसपूर्ण
नयनोंका वर्णन किया है. उनमें अपार गुण भरे हुए हैं जिनकी गणना ही
नहीं हो सकती है.

प्रकरण १४ चौपाई ८००

हक मेहेबूब की नासिका अंग

गौर निरमल नासिका, सोभा न आवे माहें सुमार ।
आसिक जाने मासूक की, जो खुले होए पट द्वार ॥ १
श्रीराजजीके निर्मल गौर वर्णके मुखमण्डल पर सुशोभित उज्ज्वल नासिकाकी
शोभाका कोई पारावार नहीं है. प्रियतम धनीके इस दिव्य अङ्गको वही
अनुरागिनी आत्मा जान सकती है जिसके अन्तःकरणके द्वार खुल गए हों.

निपट सोभा है नासिका, सोहे तैसाही तिलक ।
और नहीं इनका निमूना, ए सरूप अरस हक ॥ २
नासिकाकी शोभा अत्यन्त अद्भुत है, उसी प्रकार उसके ऊपर तिलक भी
शोभायमान है. इस सुन्दरताके लिए अन्य कोई उदाहरण ही नहीं है, क्योंकि
ये तो श्रीराजजीके स्वरूपके अङ्ग हैं.

कै खुसबोए अरस की, लेवत है नासिका ।
दोऊ नेत्रों के बीच में, सोभा क्यों कहूं सुंदरता ॥ ३
यह नासिका परमधामकी सभी सामग्रियोंका सुगन्ध ग्रहण करती है. दोनों
नयनोंके मध्य सुशोभित इस नासिकाकी सुन्दरताको शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त
किया जाए ?

रंग उजलाई अरस की, झाँई झलके कसूंब बका ।
देत सलूकी कै सुख, रुह नैन को नासिका ॥ ४
इस नासिकामें परमधामकी उज्ज्वलताके साथ साथ लालिमा भी झलकती
है. इसकी अपार शोभा ब्रह्मात्माओंको अनेक प्रकारसे आनन्दित करती है.

ए छब फब कोई भांत की, निलाट तिलक बीच नैन ।

ए आसिक नासिका देख के, पावत हैं सुख चैन ॥ ५

दोनों नयनोंके मध्य नासिका ऊपर सुशोभित तिलककी सुन्दरता कुछ विशेष प्रकार की है. अनुरागिनी आत्माएँ नासिकाकी इस अद्वितीय शोभाको देखकर अत्यन्त आनन्दका अनुभव करती हैं.

भौंहें भासत भली भांतसों, पापन पलकों पर ।

ए नैन सोभा नूर जहूर, ए जाने मोमिन अंतर ॥ ६

श्रीराजजीकी भृकुटी नयनोंकी पलकोंके ऊपर अत्यन्त सुन्दर सुशोभित है. इन नयनोंकी अद्वितीय शोभा तथा उनसे निकलते हुए प्रकाशका अन्तर ब्रह्मात्माएँ ही समझ सकती हैं.

अरस फूल सुगंध अनगिनती, हिसाब नहीं कहूं कोए ।

रसांग चीज सब अरस की, कोई जरा न बिना खुसबोए ॥ ७

परमधामके वन-उपवनोंमें खिले हुए असंख्य पुष्पोंमें अपार सुगन्धि है जिसकी गणना नहीं हो सकती है. परमधाममें धातु आदि कोई भी वस्तु ऐसुगन्धि रहित नहीं है.

सो खुसबोए सब लेत है, रस प्रेमल सुगंध सार ।

सब भोग विवेके लेत है, हक नासिका भोगतार ॥ ८

श्रीराजजीकी यह नासिका इन सभीकी सुगन्धिको साररूपमें ग्रहण कर इन सबका विवेक पूर्वक आस्वादन (उपभोग) करती है.

ए को जाने रस सबन के, को जाने भोग सबन ।

ए सब भोगी हक नासिका, हक सुख लेत देत रूहन ॥ ९

इन सभी सुगन्धोंको तथा उनके स्वादको नासिकाके अतिरिक्त अन्य कौन जान सकता है ? श्रीराजजी इसी नासिकाके द्वारा इन सुगन्धोंका आस्वादन कर ब्रह्मात्माओंको भी इसका सुख प्रदान करते हैं.

चित चाहा नासिका भूषन, खुसबोए लेत चित चाहे ।
चित चाही जोत सोभा धरे, सुख आसिक अंग न समाए ॥ १०

इस नासिकामें श्रीराजजीकी इच्छानुसार आभूषण सुशोभित हैं. वह इच्छानुकूल सुगन्ध ग्रहण करती है एवं इच्छानुकूल शोभा धारण करती है. इसकी शोभाको देखकर अनुरागिनी आत्माओंके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें उमङ्ग नहीं समाता है.

हक सुख खुसबोए के, कै नए नए भोग लेत ।
ले ले हक विवेक सों, नए नए रुहों सुख देत ॥ ११

श्रीराजजी इसी नासिकाके द्वारा अपनी इच्छानुसार नित्य नूतन सुगन्धका आस्वादन करते हैं एवं ब्रह्मात्माओंको भी विवेक पूर्वक नूतन सुख प्रदान करते हैं.

कै कै लाड रुहन के, लेत देत अरस परस ।
नित नए सुख देत सनेह सों, जानों नया दूजा लिया सरस ॥ १२

इस प्रकार श्रीराजजी अपनी आत्माओंको अनेक प्रकारसे प्रेम प्रदान करते हुए उनसे भी प्रेम प्राप्त करते हैं. वे उनको प्रेमपूर्वक नित्य नूतन सुख प्रदान करते हैं जो दूसरेसे अधिक श्रेष्ठ होता है.

नित लेत प्रेम सुख अरस में, जानों आज लिया नया भोग ।
यों हक देत जो हम को, नित नए प्रेम संजोग ॥ १३

ब्रह्मात्माएँ भी परमधाममें इस प्रकारके नूतन सुख नित्य प्राप्त करती हैं. उन्हें ऐसा लगता है कि आजका सुख कलसे और अधिक नूतन है. इस प्रकार श्रीराजजी हम ब्रह्मात्माओंको प्रेमके नित्य नूतन आस्वादनका सुअवसर प्रदान करते हैं.

जिमी जल तेज वाए बन, जो कछू बीच आसमान ।
सब खुसबोए नूर में, सुख देत रुहों सुभान ॥ १४

परमधामकी भूमि, जल, तेज, वायु, आकाश तथा वन-उपवन आदि सभी प्रकाश तथा सुगन्धिसे परिपूर्ण हैं. श्रीराजजी अपनी ब्रह्मात्माओंको इनका आनन्द प्रदान करते हैं.

महामत कहे हक नासिका, याकी सोभा न आवे सुमार ।

कछू बड़ी रुह मोमिन जानहीं, जाको निस दिन एही विचार ॥ १५

महामति कहते हैं, इस प्रकार श्रीराजजीकी नासिकाकी शोभाका कोई पारावार नहीं है. इसे तो केवल श्रीश्यामाजी एवं ब्रह्मात्माएँ ही जान सकतीं हैं जो अहर्निश इसीका चिन्तन करतीं रहतीं हैं.

प्रकरण १५ चोपाई ८१५

हक मासूक की जुबान की सिफत

जाको नामै रसना, होसी कैसी मीठी हक ।

जिनकी जैसी बुजरकी, जुबां होत हैं तिन माफक ॥ १

जिसका नाम ही रसना है और वह भी श्रीराजजीकी है तो वह कितनी सुमधुर होगी ? वस्तुतः जिनकी जैसी श्रेष्ठता होती है उनकी जिह्वा (रसना) भी उसी प्रकार श्रेष्ठ होती है.

केहेनी में न आवहीं, विचार देखो मोमन ।

होए जागृत अरवा अरस की, कछू सो देखे रसना रोसन ॥ २

इस रसनाके गुण शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकते हैं. परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जागृत होकर इस रसनाके दिव्यता को कुछ अंशमें ग्रहण कर सकतीं हैं.

अति मीठी जुबां मासूक की, देत आसिक को सुख ।

कछू अरस सहूरें सुख लीजिए, पर कहो न जाए या मुख ॥ ३

प्रियतम धनीकी अत्यन्त मधुर रसना अनुरागिनी आत्माओंको अपार सुख प्रदान करती है. परमधामकी जागृत बुद्धिके द्वारा ही इस आनन्दका अनुभव किया जा सकता है किन्तु जिह्वाके द्वारा इसका वर्णन नहीं हो सकता है.

ए याद किए हक रसना, आवत है इसक ।

जिन इसके अरस देखिए, सुख पाइए हक मुतलक ॥ ४

श्रीराजजीकी इस मधुर रसनाको स्मरण करते ही हृदयमें प्रेम उभर आता है.

इसी प्रेमसे परमधामका साक्षात्कार होता है एवं श्रीराजजीके अपार आनन्दका अनुभव होता है.

और सुख हक दिल में, जाहेर होत रसनाएं ।

एह सिफत किन विध कहूं, जो रेहेत हक मुख माहें ॥ ५

इसी रसनाके द्वारा श्रीराजजीके हृदयरूपी सागरके अपार सुख प्रकट होते हैं.

इस रसनाकी महिमाका वर्णन कैसे किया जाए जो स्वयं श्रीराजजीके मुखारविन्दमें रहती है.

बोहोत सुख हक तन में, जाहेर करें हक नैन ।

सब पूरन सुख तब पाइए, जब कहें रसना मुख बैन ॥ ६

श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्ग अपार सुखोंसे परिपूर्ण हैं उनको वे अपने नयनोंके द्वारा प्रकट करते हैं, किन्तु उनके सम्पूर्ण आनन्दकी अनुभूति तभी होती है जब वे रसनाके द्वारा मधुर वचन बोलते हैं.

हर अंग सुख दें हक के, ऊपर जाहेर सुख जुबान ।

बडा सुख रुहें होत है, जब हक मुख करें बयान ॥ ७

यद्यपि श्रीराजजीका प्रत्येक अङ्ग अपार सुख प्रदान करता है तथापि उनकी रसनासे प्राप्त होने वाला आनन्द सर्वाधिक होता है. जब वे अपने मुखारविन्दसे मधुर वचन बोलते हैं तब ब्रह्मात्माओंको विशेष सुखका अनुभव होता है.

ए बेवरा पाइए बीच खेल के, कम ज्यादा बका में नाहें ।

समान अंग सब हक के, ए विचार नहीं अरस माहें ॥ ८

मात्र इस नश्वर जगतमें ही इस प्रकारका विवरण (निरूपण) हो सकता है. दिव्य परमधाममें तो न्यून तथा अधिक (कम-ज्यादा) है ही नहीं. क्योंकि श्रीराजजीके सभी अङ्ग समान सुख प्रदान करते हैं, इसलिए परमधाममें न्यूनाधिक्यका विचार ही नहीं होता है.

बोहोत बातें सुख अरस के, सो पाइएत हैं इत ।
सुख उमत को अरस में, ए जानती न थी निसबत ॥ ९

इस प्रकार इस नश्वर जगतमें भी परमधामके विभिन्न प्रकारके सुखोंका अनुभव प्राप्त होता है. परमधाममें श्रीराजजीकी अङ्गभूता ब्रह्मात्माओंको भी इनकी जानकारी नहीं थी.

सुख जाने न हक पातसाही, सुख जाने ना हक इसक ।
सुख जाने ना रहे लाड के, तो इत इलम दिया बेसक ॥ १०

परमधाममें ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीकी प्रभुता (श्रेष्ठता), प्रेम तथा दुलारके सुखोंकी जानकारी नहीं थी. इसीलिए इस जगतमें भेजकर उन्हें तारतम ज्ञानके द्वारा इन सुखोंके महत्वका अनुभव करवाया है.

तो हक अंग सुख खेल में, बेवरा करत हुकम ।
अजूँ न आवे नजरों सरूप, ना तो क्यों वरनवाए खसम ॥ ११

इसीलिए यहाँ पर श्रीराजजीके दिव्य अङ्गोंसे प्राप्त सुखोंका विवरण उनके ही आदेशके द्वारा दिया जा रहा है. अभी भी उनका दिव्य स्वरूप दृष्टिगत नहीं हुआ है अन्यथा उनके चिन्मय स्वरूपका वर्णन कैसे किया जा सकता?

हकें हम रहे वास्ते, अनेक वचन कहे मुख ।
सो रहे जागे हक इसक का, आपन लेसी अरस में सुख ॥ १२

श्रीराजजीने हम ब्रह्मात्माओंके लिए स्वयं अपने श्रीमुखसे अनेक प्रिय वचन कहे हैं. जब हमारी आत्मा जागृत होगी तभी हम परमधाममें श्रीराजजीके इस प्रेमका अनुभव कर पाएँगे.

सुख अनेक दिए हक रसनाएं, और सुख अलेखों अनेक ।
सो जागे रहे सुख पावहीं, ताथें रसना सुख विसेक ॥ १३

इस प्रकार श्रीराजजीकी रसनाने अनेक प्रकारके असंख्य सुख प्रदान किए हैं, किन्तु आत्मा जागृत होने पर ही उन सुखोंका अनुभव कर सकती है. इसीलिए रसनाके सुखोंको अधिक विशेष कहा गया है.

हकें खेल देखाया याही वास्ते, सुख देखावने अपने अंग ।

सुख लेसी बडा इसक का, रुहें ले विरहा मिलसी संग ॥ १४

श्रीराजजीने अपने अङ्गोंके सुखका अनुभव करवानेके लिए ही हमें यह खेल दिखाया है. इस जगतमें उनके विरहका अनुभव करनेवाली आत्माएँ जागृत होकर जब अपने धनीसे मिलेंगी तभी वे उनके प्रेमके अपार आनन्दका अनुभव कर पाएँगी.

दायम इसक सबों अपना, रुहें केहेती अपनी जुबान ।

याही रसना बल वास्ते, खेल देखाया सुभान ॥ १५

ब्रह्मात्माएँ सर्वदा अपने मुखसे अपने ही प्रेमकी विशेषता बताया करतीं थीं. उनकी रसना द्वारा कही गई इस श्रेष्ठतामें कितना बल है इसे वे स्वयं पहचान सकें इसीलिए श्रीराजजीने उनको यह खेल दिखाया है.

एक हुकम जुबां के सब हुआ, तिन हुकमें चले कै हुकम ।

सो जेता सबद दुनिय में, ए सब हम वास्ते किया खसम ॥ १६

श्रीराजजीके एक आदेशमात्रसे ही इस स्वप्नवत् जगतकी रचना हुई है. अब इस आदेशके अधीन अन्य अनेक आदेश कार्य कर रहे हैं. इस जगतमें जितने भी आस ग्रन्थ (शब्द) हैं वे सभी श्रीराजजीके द्वारा हम ब्रह्मात्माओंके लिए ही लिखवाए गए हैं.

हक जुबान की बुजरकी, किया खेल में बडा विस्तार ।

सो सुख लेसी हम अरस में, जिनको नहीं सुमार ॥ १७

इस जगतमें श्रीराजजीकी रसनाकी श्रेष्ठताका ही विस्तार हुआ है. अब हम ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत होकर यहाँके अपार सुखोंका अनुभव करेंगी.

जेती चीज जरा कोई खेल में, सो हक हुकमें हलत चलत ।

सो सुख दिए हक रसनाएं, हक केती करें सिफत ॥ १८

इस जगतमें जितनी भी वस्तुएँ हैं वे सभी श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही क्रियाशील हैं. इन सबसे प्राप्त होने वाले सुख श्रीराजजीकी रसनाके द्वारा ही प्राप्त होते हैं. इस प्रकार श्रीराजजीकी महिमाका कितना वर्णन करें ?

कलाम अल्ला या हडीसें, साख्र पुरान या वेद ।
ए सब सुख लेवें मोमिन, हक रसना के भेद ॥ १९

कुरान, हडीस तथा वेद, पुराण आदि शाख पूर्णब्रह्म परमात्माकी रसनाके ही विविध स्वरूप हैं. ब्रह्मात्माएँ ही इनके रहस्यको समझकर आनन्दका अनुभव कर सकती हैं.

खेल किया याही वास्ते, हकें सुख दिए अपनी जुबान ।
सो मेरी इन जुबान सों, क्यों कर होए बयान ॥ २०
श्रीराजजीने इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए इस जगतरूप खेलकी रचना की है एवं उनको अपनी रसनाके अपार सुख प्रदान किए हैं. मेरी जिह्वाके द्वारा उनका वर्णन कैसे हो सकता है ?

ए बयान होसी बीच अरस के, हम रहें मिल जासी जब ।
हक जुबान का बेवरा, हम लेसी अरस में तब ॥ २१
जब हम सभी ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत होंगी तब वहाँ पर इस नश्वर जगतके खेलकी चर्चा होगी. तभी हम वहाँ पर श्रीराजजीकी रसनाका महत्व (विवरण) समझ पाएँगी.

बडे बयान बातें कै, जो हक जुबांएं दिए इत ।
इत बेवरा कर जाए अरस में, लेसी लजत बीच खिलवत ॥ २२
श्रीराजजीकी रसनाने विभिन्न धर्मग्रन्थोंके द्वारा परमधामका रहस्य स्पष्ट कर इस नश्वर जगतमें हमें जो सुख प्रदान किया है उसका वास्तविक स्वाद मूलमिलावामें जागृत होने पर ही हम प्राप्त कर पाएँगी.

ए बारीक सुख अरस के, हक जुबांएं दई न्यामत ।
और न कोई पावही, बिना हक निसबत ॥ २३
परमधामके ये सुख अत्यन्त रहस्यमय हैं. श्रीराजजीकी रसनाके द्वारा ही हमें इस नश्वर जगतमें भी यह सुखरूपी सम्पदा प्राप्त हुई है. श्रीराजजीकी अङ्गरूपा हम ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी इस सम्पदाको प्राप्त नहीं कर सकता है.

हक रुहों को बुलाए के, नजीक बैठाइ ले ।

ए जाहेर करत है रसना, ए जो अंतर का सनेह ॥ २४

श्रीराजजीने अपनी आत्माओंको बुलाकर अपने निकट बैठाया एवं सुरताके द्वारा नश्वर जगतका खेल दिखाया। श्रीराजजीके अन्तर्हृदयका यह प्रेम उनकी ही रसनाके द्वारा व्यक्त हुआ है।

मीठी जुबां बोलत मासूक, रुहें प्यारी आसिक सों ।

ऐसा मीठा अरस खावंद, जाके बोल चूभें हिरदे मों ॥ २५

प्रियतम धनी अपनी अनुरागिनी आत्माओंके साथ मधुर वचन बोलते हैं। परमधामके धनी इतने माधुर्यपूर्ण हैं कि उनकी मधुर वाणी हृदयको घायल कर देती है।

प्यारी रसना सों अनेक, प्यारी बातें करें बनाए ।

प्यारे प्यारी रुह बीच में, ए गुन जुबां के गिने न जाए ॥ २६

श्रीराजजी अपनी प्रिय रसनाके द्वारा अनेक प्रकारकी मीठी बातें करते हैं। प्रियतम एवं उनकी अनुरागिनी आत्माके मध्य इस रसनाके द्वारा कहे गये रसीले वचनोंके गुणोंकी गणना नश्वर जगतकी जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकती है।

मीठी जुबां मीठे वचन, मीठा हक मीठा रुहों प्यार ।

मीठी रुह पावें मीठे अरस को, जो मीठा करे विचार ॥ २७

श्रीराजजीकी रसना भी मीठी है एवं उनके वचन भी मीठे हैं। वे स्वयं मधुर होनेसे ब्रह्मात्माओंके साथ उनका प्रेम भी माधुर्यपूर्ण है। यह माधुर्य रसयुक्त आत्मा भी परमधामकी मधुरताका अनुभव कर सर्वदा उसीका चिन्तन करती है।

प्यारी खिलवत में प्यारी रसना, होत वचन कदीम ।

सो इन जुबां प्यार क्यों कहूँ, जो हक हादी रुहें हलीम ॥ २८

श्रीराजजी परमधाममें इस रसमयी रसनासे सदैव एकान्त वार्ता करते हैं। श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके मध्यकी सुमधुर चर्चाका वर्णन

जिह्वाके द्वारा कैसे हो सकता है ?

सब अंग जिनके इसक के, तिनकी कैसी होसी जुबान ।

अरस रहें जाने जागृत, जो रहें सदा कदमों सुभान ॥ २९

जब श्रीराजजीके सभी अङ्ग प्रेमसे परिपूर्ण हैं तो उनकी रसना कितनी रसमयी (माधुर्यपूर्ण) होगी. इसे तो श्रीराजजीके चरणोंमें सदा सर्वदा रहनेवाली ब्रह्मात्माएँ ही जागृत होकर जान सकती हैं.

मेरी रुह देखे सहूर कर, जाके नख सिख लग इसक ।

जुबां कैसी तिन होएसी, और बानी बका अरस हक ॥ ३०

मेरी आत्मा विचार पूर्वक देख रही है कि जिनके नखसे लेकर शिखा पर्यन्त सभी अङ्गोंमें प्रेम ही प्रेम परिपूर्ण है ऐसे श्रीराजजीकी रसना स्वयं कैसी मधुर होगी एवं दिव्य परमधाममें उसकी वाणी भी कैसी सुमधुर होगी.

हक रसना बोले जो अरस में, जिन किन को वचन ।

सो सब कारन जानियो, वास्ते सुख रुहन ॥ ३१

दिव्य परमधाममें श्रीराजजीकी यह रसना जिस किसीको भी कुछ कहती है तो वह भी ब्रह्मात्माओंको आनन्दित करनेके लिए ही कहती है ऐसा समझना चाहिए.

खेलावत हक बोलाए के, या पंखी या पसुअन ।

सो सब रुहों वास्ते, सब को एह कारन ॥ ३२

श्री राजजी परमधाममें पशु अथवा पक्षियोंको अपने निकट बुलाकर उनसे विभिन्न प्रकारकी क्रीड़ाएँ करवाते हैं तो वह भी सभी ब्रह्मात्माओंको आनन्दित करनेके लिए ही है.

खेलते बोलते नाचते, या देखें खेल लराए ।

सो सब वास्ते रुहन के, कै विध खेल कराए ॥ ३३

परमधामके ये पशु पक्षी क्रीड़ा कर, बोलकर, नाचकर या लड़कर जो खेल दिखाते हैं वह सब ब्रह्मात्माओंके लिए ही है. इस प्रकार श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके लिए विभिन्न प्रकारके खेल करवाते हैं.

कहूं केती बातें हक रसना, निपट बडो विस्तार ।
क्यों कहूं जो किए रुहोंसों, हक जुबां के प्यार ॥ ३४

श्रीराजजीकी रसनाके कितने गुणोंका वर्णन करें उनका विस्तार ही विशाल है. अपनी रसनाके द्वारा ब्रह्मात्माओंसे कितना प्रेम करते हैं उसको शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त किया जाए ?

हक रसना गुन खेल में, पाव हरफ को होए न सुमार ।
तो जो गुन रसना अरस में, ताको क्यों कर पाइए पार ॥ ३५

इस नश्वर खेलमें भी श्रीराजजीकी रसनाके गुणोंका लेशमात्र भी पार पाया नहीं जा सकता तो दिव्य परमधाममें इसके गुणोंका पार कैसे पाया जा सकता है ?

ए बेवरा जाने रुहें अरसकी, जाको हुआ हक दीदार ।
जाए सिफायत हुई महंमदकी, याको सोई जाने विचार ॥ ३६

यह विवरण तो मात्र ब्रह्मात्माएँ ही जान सकती हैं जिनको श्रीराजजीके दर्शन हुए हैं. जिन ब्रह्मात्माओंको सदगुरु श्री देवचन्द्रजी द्वारा पुरस्कारके रूपमें तारतम ज्ञान प्राप्त हुआ है वे ही इस रहस्य पर विचार कर सकती हैं.

हक रसना गुन जाने रुहें, जाको निस दिन एही ध्यान ।
ए खेल कबूतर क्या जानहीं, हक रसना के बयान ॥ ३७

श्रीराजजीकी रसनाके गुण ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं क्योंकि रात दिन उनका ध्यान इसीमें रहता है. खेलके कबूतरके समान नश्वर जगतके जीव श्रीराजजीकी रसनाके गुणोंको कैसे जान सकते हैं ?

जो कछू बोलें हक रसना, सो सब वास्ते रुहन ।
और जरा हक दिलमें नहीं, ए जाने दिल अरस मोमन ॥ ३८

श्रीराजजीकी रसना जो कुछ कहती है वह सब ब्रह्मात्माओंको आनन्दित करनेके लिए ही है. ब्रह्मात्माओंको आनन्दित करनेके अतिरिक्त श्रीराजजीके हृदयमें अन्य कोई भाव नहीं है. इस रहस्यको धामहृदया ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं.

जो कछू बोलें हक जुबांए, सो सब रुहों के हेत ।

अरस बोल खेल या चलन, या जो कछू लेत देत ॥ ३९

श्रीराजजी अपनी रसनासे जो कुछ बोलते हैं वह सब ब्रह्मात्माओंको प्रेम प्रदान करनेके लिए है. परमधाममें बोलना, खेलना, चलना अथवा कुछ लेना-देना यह सब ब्रह्मात्माओंको आनन्दित करनेके लिए ही होता है.

हुकम कहावे मेरी रुहोंपे, जो हुई मुझमें वीतक ।

सो कहूं अरस रुहों को, जो दिए सुख रसना हक ॥ ४०

इस प्रकार श्रीराजजीका आदेश ही मेरी आत्माके द्वारा मेरे साथ घटित घटनाओंका विवरण दे रहा है. इसीलिए परमधामकी ब्रह्मात्माओंके लिए मैंने यह बात कही है कि श्रीराजजीकी रसना किस प्रकारका आनन्द प्रदान करती है.

हक रसना के सुख जो, आवें ना गिनती माहें ।

कै सुख अलेखे अपार, क्यों कहे जाए जुबांए ॥ ४१

श्रीराजजीकी रसनासे प्राप्त होने वाले सुखोंकी गणना ही नहीं हो सकती है. इन असंख्य तथा अपार सुखोंका वर्णन यह जिह्वा कैसे कर पाएगी ?

मीठी मीठ माहें मीठी मीठी, रस रसीली रसना बान ।

सुख सुख के माहें कै सुख, सुख क्यों कहूं रसना सुभान ॥ ४२

श्रीराजजीकी यह मधुर रसना माधुर्य रससे परिपूर्ण है. इससे निकलती हुई मधुर वाणी भी मधुर रससे परिपूर्ण है. उससे प्राप्त सुखोंमें अन्य अपार सुख निहित हैं. इस प्रकार श्रीराजजीकी रसनाके सुखोंका वर्णन नहीं हो सकता है.

मोहे इलम दिया आए अपना, तासों प्यार दिया मुझ कों ।

चौदे तबक कायम किए, केहेलाए मेरी रसना सों ॥ ४३

स्वयं श्रीराजजीने सद्गुरुके रूपमें आकर मुझे अपना ज्ञान (तारतम ज्ञान) प्रदान किया है. इसके साथ साथ अपना प्रेम भी प्रदान किया कि उन्होंने मेरी रसनाके द्वारा इस दिव्यज्ञानको प्रकाशित कर चौदह लोकोंको भी अखण्ड कर दिया.

एक नुकते इलम अपने, दुनी बका कराई मुझ सें ।
तो गंज अंबार जो सागर, कैसे होसी हक दिल में ॥ ४४

अपने ज्ञानरूपी सागरके विन्दुके समान इस तारतम ज्ञानके द्वारा श्रीराजजीने
मेरे माध्यमसे इस जगतको अखण्ड करवाया है तो उनके हृदयमें स्थित
ज्ञानका सागर कितना विशाल होगा.

जो कोई सबद बीच दुनियां, सो उठे हुकम के जोर ।
ए गुझ सुख हक रसना, कछू मोमिन जाने मरोर ॥ ४५

इस जगतमें जितने भी धर्मग्रन्थ हैं वे सभी श्रीराजजीके आदेशके प्रतापसे
ही रचे गए हैं. श्रीराजजीकी रसना स्वरूप इन धर्मग्रन्थोंके गूढ़ रहस्योंका
आनन्द भी ब्रह्मात्माएँ ही अनुभव कर सकती हैं.

बका करी जो दुनियां, दिया सब को हक इलम ।
सो इलम सिफत करे हमारी, हुकमें किया वास्ते हम ॥ ४६

जिस तारतम ज्ञानके द्वारा यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अखण्ड हो गया है, वही ज्ञान
अब हम ब्रह्मात्माओंकी महिमाका गुणगान कर रहा है क्योंकि श्रीराजजीके
आदेशके द्वारा हमारे लिए ही इसका अवतरण हुआ है.

ए जो बका किए हम वास्ते, जाने कायम होए सिफत ।
सिफत फना की ना रहे, ए हुकमें हम को दई न्यामत ॥ ४७

इस ब्रह्माण्डको भी हम ब्रह्मात्माओंके लिए ही अखण्ड किया है ताकि इसके
सभी जीव सर्वदा हमारे ही गुणगान करते रहें. यद्यपि नश्वर जगतमें की गई
महिमा तो नष्ट हो जाती है किन्तु ब्रह्मात्माओंकी महिमा सदैव बनी रहे इसके
लिए श्रीराजजीके आदेशने हमें तारतम ज्ञानरूपी यह अमूल्य निधि प्रदान
की है.

मेहर करी हक रसनाएं, सो किन विध कहूं विस्तार ।
बका सबद जो उचरे, सो देने हम को सुख अपार ॥ ४८

इस प्रकार श्रीराजजीकी रसनाने हम ब्रह्मात्माओं पर कितनी कृपा की है
उसका विस्तार पूर्वक वर्णन नहीं किया जा सकता. उसने श्रीतारतम सागरके

रूपमें अखण्ड वाणीका उच्चारण किया है वह भी ब्रह्मात्माओंको अपार सुख प्रदान करनेके लिए ही है।

सब के हक हमको किए, हक रसनाएं बीच बका ।

ए सुख इन मुख क्यों कहूं, जो दिया हादी रूहोंको भिस्तका ॥ ४९
श्रीराजजीकी इस रसनाने हम ब्रह्मात्माओंको सभी जीवोंके पूजनीय बना दिया एवं उनको अखण्ड मुक्ति स्थलोंमें स्थान दिलाया। इस प्रकार सदगुरु तथा ब्रह्मात्माओंके द्वारा समस्त जीवोंको मुक्ति स्थलका जो सुख प्राप्त हुआ है उसे कैसे वर्णन किया जाए ?

अरस के सुख तो हमेसा, घट बढ़ इत नाहें ।

पर ए नया सुख नई साहेबी, कायम कर दिया भिस्त माहें ॥ ५०

परमधामके सुख सदा अखण्ड हैं। वहाँ पर कम या अधिकका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु मुक्ति स्थलोंमें जीवोंको अखण्ड कर वहाँ पर भी ब्रह्मात्माओंकी नयी प्रभुता स्थापित कर उन्हें यह एक नूतन सुख प्रदान किया है।

अरस सुख और भिस्त का सुख, ए खेल में दिए सुख दोए ।

इन दोऊ में दिए सुख खेल के, ए हक रसना बिना क्यों होए ॥ ५१

श्रीराजजीने इस नश्वर जगतमें भी परमधामके अखण्ड सुख तथा मुक्ति स्थलोंके सुखका अनुभव करवाया एवं इन दोनों स्थानोंमें भी खेलके विभिन्न सुखोंका अनुभव करवाया है। श्रीराजजीकी रसनाके बिना यह सब कैसे सम्भव है ?

दई भिस्त चौदे तबक को, सबों पूरा इसक इलम ।

सो सब सेवे हम को, सबों बल रसना खसम ॥ ५२

इन चौदह लोकोंके जीवोंको ज्ञान एवं प्रेम प्रदानकर उन्हें मुक्ति स्थलोंमें अखण्ड कर दिया है। अब वे सभी हमारी पूजा करेंगे। यह सम्पूर्ण प्रताप श्रीराजजीकी रसनाका है।

पेहले प्यार दिया मुझे इलम सों, सो मुझपें इलम देवाए ।

सब दुनियां को आरफ कर, मुझ आगे सबपें कथाए ॥ ५३

श्रीराजजीने सर्व प्रथम मुझे प्रेमपूर्वक ज्ञान दिया फिर मेरे द्वारा पूरे जगतको ज्ञान दिलवाया. मुझे जगतके सभी जीवोंका ज्ञानी बनाकर मेरे सामने सबसे तारतम ज्ञानकी प्रशंसा करवाई.

ए सब हक रसनाएं किया, इलम प्यारा लग्या सबन ।

सो इलमें आरफ पूजे मोहे, असल अरस में हमारे तन ॥ ५४

यह सम्पूर्ण कार्य श्रीराजजीकी रसनाके प्रतापसे ही हुआ है. इस जगतके सभी जीवोंको यह तारतम ज्ञान अत्यन्त प्रिय लगा. इसी ज्ञानके कारण नश्वर जगतके ज्ञानीजन मेरी पूजा करने लगे. वस्तुतः हमारा मूल तन (पर-आत्मा) तो दिव्य परमधारमें है.

प्यार लग्या मोहे जिनसों, हकें बड़ा किया सोए ।

सो सबपें केहेलाए हुकमें, सब विध सुख दिया मोहे ॥ ५५

मुझे जिन ब्रह्मात्माओंसे प्यार है, उनको श्रीराजजीने इस संसारमें भी सर्व श्रेष्ठ होनेका गौरव प्रदान किया है. श्रीराजजीके आदेशने उन ब्रह्मात्माओंके द्वारा भी मेरी महिमाका गुणगान करवाया. इस प्रकार श्रीराजजीने मुझे सब प्रकारसे आनन्द प्रदान किया.

ए सुध नहीं अजूँ मोमिनों, जो सुख दिए हक रसनाएं ।

हकें सुख दिया आप माफक, सो कह्या न जाए इन जुबांए ॥ ५६

श्रीराजजीकी रसनाने जितना सुख प्रदान किया है वह पूर्णरूपसे ब्रह्मात्माओंको भी ज्ञात नहीं है. वस्तुतः श्रीराजजीने अपनी महिमाके अनुरूप ही हम ब्रह्मात्माओंको अपार सुख प्रदान किया है. उनकी महिमा जिह्वाके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती.

कर कायम हक रसना रस, सचराचर दिया पोहोंचाए ।

यों रसना के सुख हम को, कै विध दिए बनाए ॥ ५७

श्रीराजजीकी इस मधुर रसनाने तारतम ज्ञानके द्वारा सचराचर जगतको

अखण्ड कर दिया है। इस प्रकार श्रीराजजीकी रसनाने हमें विभिन्न प्रकारके सुख प्रदान किए हैं।

सबों इलम पढ़ाए आलम किए, जिनसों था मेरा प्यार ।

सो सुख हक रसनाएं दिया, कर के बका विस्तार ॥ ५८

ब्रह्मात्माएँ मुझे अति प्रिय हैं उन सबको भी इसी तारतम ज्ञानके द्वारा जागृतकर उन्हें ज्ञानी बनाया। इस प्रकार अखण्ड परमधामका वर्णन करवाकर श्रीराजजीकी इस रसनाने मुझे और भी अधिक सुख प्रदान किया है।

ए कायम सुख हक तरफ के, हक इलम इसक हुकम ।

सुख लाड लजत हुजत के, दिए कायम मेरे खसम ॥ ५९

श्रीराजजीके ज्ञान, प्रेम तथा आदेशके द्वारा ही हमें इस प्रकारके अखण्ड सुख प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार मेरे धनीने मुझे प्रेम तथा दुलारका अधिकार देकर अखण्ड सुखका आस्वादन करवाया है।

सुध न हुती हक साहेबी, ना सुध इलम वाहेदत ।

सुध ना हुजत निसबत, सो सुध दई जुबां खिलवत ॥ ६०

आज तक मुझे श्रीराजजीकी प्रभुताकी सुधि नहीं थी, न तारतम ज्ञानकी सुधि थी और न ही एकात्मभाव तथा श्रीराजजीकी अङ्गना होनेकी ही सुधि थी। इस प्रकार श्रीराजजीकी इस रसनाने मुझे अद्वैत परमधामके अनन्त एकान्त सुखोंकी सुधि प्रदान की है।

हक बका सुख कै विध, अरस में नहीं सुमार ।

बिन बूझे सुख हम लेते, हुते न खबरदार ॥ ६१

परमधाममें श्रीराजजीसे ऐसे कितने ही अखण्ड सुख प्राप्त होते हैं जिनकी गणना ही नहीं हो सकती है। आज तक हम बिना समझे ही उन सुखोंका अनुभव करते रहे। हम उनके प्रति नितान्त सचेत नहीं थे।

सो आठों भिस्त कायम कर, दिए अरस पट खोल मारफत ।

तिन में पुजाए सुख दिए, कर जाहेर हक निसबत ॥ ६२

श्रीराजजीकी रसनाने ही हमें तारतम ज्ञान प्रदान कर आठों मुक्ति स्थलोंको

अखण्ड कर दिया और अपनी पहचान करवाकर दिव्य परमधामके द्वार खोल दिए. श्रीराजजीके साथ अपने शाश्वत सम्बन्धको प्रकट कर उन मुक्ति स्थलोंमें भी हमारी पूजा करवाई.

हक रसना सुख दिए देत हैं, और सुख देंगे आगूं जे ।
सो इतर्थे सब हम देखत, सुख केते कहूं रसना के ॥ ६३

इस प्रकार श्रीराजजीकी रसना हमें अपार सुख प्रदान करती आई है और भविष्यमें भी करती रहेगी. हम इस खेलमें बैठकर इन सभी सुखोंको देख रहे हैं. इस प्रकार श्रीराजजीकी रसनाके कितने सुखोंका वर्णन करें.

हक रसनाएं ऐसी सुध दई, हुआ है होसी बका माँहें ।
यों खोली अंतर रुह नजर, ऐसी हुई ना रुहोंसों काँहें ॥ ६४

आज तक हमारे साथ जो बीती है और भविष्यमें भी जो बीतेगी उसकी सम्पूर्ण सुधि हमें श्रीराजजीकी रसनाने ही प्रदान की है. उसने हमारी अन्तर्दृष्टिको इस प्रकार खोल दी जो आज तक कभी भी किसी भी आत्माकी दृष्टि नहीं खुली थी.

कहूं केते सुख हक रसना, जैसे आप अलेखे अपार ।
सो सब सुख बकामें रुहों, जाको होए न काहूं सुमार ॥ ६५

जिस प्रकार स्वयं श्रीराजजीकी महिमा शब्दातीत एवं अपरम्पार है, उसी प्रकार उनकी रसनाके सुख भी अपरम्पार हैं. उनका वर्णन कहाँ तक करें ? श्रीराजजी परमधाममें अपनी ब्रह्मात्माओंको ऐसे अखण्ड सुख प्रदान करते हैं जिनका कोई पारावार ही नहीं है.

ए नेक कह्या बीच खेल के, हक रसना के गुन ।
ए सब बातें मिल करसी, आगूं हक बका वतन ॥ ६६

इस प्रकार इस नश्वर जगतमें श्रीराजजीकी रसनाके गुणोंका संक्षिप्त वर्णन किया है. परमधाममें जागृत होकर हम सभी श्रीराजजीके समक्ष इन सुखोंकी चर्चा करेंगे.

सुनो महामत रसना रस, और सुनाइयो मोमन ।

जो हुकम कहे तोहे हेत कर, हक रसना के गुन ॥ ६७

महामति कहते हैं, श्रीराजजीके आदेशने प्रेम पूर्वक उनकी रसनाके जो गुण समझाए हैं उनकी महिमा स्वयं सुनो और अन्य ब्रह्मात्माओंको भी सुनाओ.

प्रकरण १६ चौपाई ८८२

हक मासूक के वस्तर

देत निमूना बीच नासूत, जानो क्योंए आवे माहें दिल ।

आगूँ मेला बडा होएसी, लेसी मोमिन ए विध मिल ॥ १

इस मृत्युलोकमें बैठकर श्रीराजजीके वस्त्रोंका उदाहरण इसीलिए दिया जा रहा है कि वे किसी भी प्रकारसे ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्गित हो जाएँ. जब सभी ब्रह्मात्माएँ परमधाममें एक साथ जागृत होंगी तब सभी मिलकर इन अपार सुखोंका अनुभव करेंगी.

एक देऊँ निमूना दुनीका, जो पैदा दुनी में होत ।

धागा होत है रुई का, और जवरों जोत ॥ २

इस जगतमें जैसी सामग्रियाँ हैं मैं उनकी ही उपमा दे रहा हूँ. जैसे यहाँ पर रुईसे धागा बनता है और रत्नोंमें ज्योति हुआ करती हैं (उसी प्रकारका उदाहरण परमधामके वस्त्रोंके लिए दिया जा रहा है).

धागा असल रुई तांतसा, जवर जैसी जोत नंग ।

हुकमें बने ताके वस्तर, होए कैसा पेहेनावा हक अंग ॥ ३

मूलतः रुईसे निर्मित सूक्ष्म तनुओंसे वस्त्रोंका निर्माण होता है एवं रत्नोंमें ज्योतिर्मयी आभा होती है किन्तु परमधाममें तो मात्र श्रीराजजीके आदेशसे ही वस्त्र अथवा आभूषण बन जाते हैं. इसलिए ये स्वयंभू वस्त्राभूषण उनके अङ्गों पर कितने सुन्दर प्रतीत होंगे ?

पैदा निमूना दुनीय का, अरस जिमिएं न पोहोंचत ।

दुनी निमूना हक को, ए कैसी निसबत ॥ ४

इस संसारमें उत्पन्न हुई वस्तुओंका उदाहरण अखण्ड परमधाम तक नहीं

पहुँच सकता है. इसलिए श्रीराजजीके शाश्वत वस्त्रोंके लिए इन नश्वर वस्तुओंकी उपमा कैसे दी जाए ?

जामा कहूँ मैं सूत का, के कहूँ कपड़ा रेसम ।
के कहूँ हेम नंग जवेर का, के कहूँ अव्वल पसम ॥ ५
श्रीराजजीका जामा सूतका अथवा रेशमी वस्त्रका कहूँ या स्वर्ण अथवा रत्नोंका कहूँ अथवा तो कोमल मखमलके साथ उसकी तुलना करूँ (ये सभी उदाहरण नश्वर जगतके हैं).

ए पांचों उत पोहोंचें नहीं, जो कर देखो सहूर ।
क्यों पोहोंचे फना जड निमूना, ए हक बका चेतन नूर ॥ ६
यदि विचार पूर्वक देखें तो ये पाँचों वस्तुएँ परमधाम तक नहीं पहुँचती हैं.
क्योंकि ये नश्वर जगतके उदाहरण हैं और श्रीराजजीका परमधाम अखण्ड, प्रकाशमय एवं चैतन्य है.

जो कहूँ बका जिमीय के, जवेर या वस्तर ।
सो भी रुह के अंग को, सोभा कहिए क्यों कर ॥ ७
यदि अखण्ड परमधामके वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभाका वर्णन किसी प्रकार हो भी जाए तो भी उनको धारण करनेवाली ब्रह्मात्माओंके अङ्गोंकी शोभाका वर्णन कैसे किया जा सकता है ?

जो चीज पैदा जिमी की, सो दूसरी कही जात ।
चीज दूसरी वाहेदत में, कैसे कर समात ॥ ८
इस नश्वर जगतमें तो एक के बाद एक वस्तु पैदा होती है, इसलिए उसे पहली अथवा दूसरी इस प्रकार कहा जा सकता है. किन्तु अद्वैत भूमिकामें दूसरी वस्तु होती ही नहीं है. इसलिए उसकी उपमा ही नहीं दी जा सकती.

हक इलमें चुप कर न सकों, और सबद में न आवे सिफत ।
ताथें हुक्म कहेत है, सुनो जामे की जुगत ॥ ९
श्रीराजजीके द्वारा तारतम ज्ञान प्राप्त होने पर अब मुझसे मौन भी रहा नहीं जाता और इन शब्दोंके द्वारा परमधामकी शोभाका वर्णन भी नहीं हो पाता.

इसलिए श्रीराजजीके ही आदेशके द्वारा मैं उनके जामेकी शोभाका युक्तिपूर्वक वर्णन करता हूँ।

पर कछुक निमूने बिना, नजरों न आवे तफावत ।
तो चुप से तो कछु कहा भला, रुह कछु पावे लजत ॥ १०

किन्तु कुछ उदाहरण दिए बिना शाश्वत एवं नश्वर वस्तुओंका अन्तर समझाया नहीं जा सकता। इसलिए मौन रहनेसे तो कुछ कहना ही अधिक लाभप्रद है जिससे आत्माको थोड़ा-सा तो आनन्द प्राप्त होगा।

ए दिल में ले देखिए, अरस धागा और नंग ।
जोत न माए आकास में, जो सोभें पेहेने हक अंग ॥ ११
परमधामके रत्न एवं धागेको हृदय पूर्वक विचार करके देखो, श्रीराजजीने अपने अङ्गोंमें जो वस्त्र धारण किए हैं उनसे निकलती हुई ज्योति आकाशमें भी नहीं समाती है।

वस्तर नहीं जो पेहेर उतारिए, ए हक अंग नूर रोसन ।
दिल चाह्या रंग जोत पोत, अरस अंग वस्तर भूषन ॥ १२
ये वस्त्र ऐसे नहीं हैं कि इनको धारण कर उतारा जाता हो, ये तो श्रीराजजीके ही प्रकाशमय अङ्गोंकी शोभा हैं। इसलिए उनकी इच्छानुसार इन वस्त्र तथा आभूषणोंका रङ्ग, ज्योति एवं बनावट (पोत) की शोभा बदलती रहती है।

ए जो कही जुगत जामे की, हक अंग का रोसन ।
और भांत सुख आसिकों, पेहेने तन वस्तर भूषन ॥ १३
श्रीराजजीके अङ्ग पर सुशोभित जामा उनके अङ्गका ही तेजपुञ्ज है। उनके अङ्गोंके वस्त्र तथा आभूषण अनुरागिनी आत्माओंको अनुपम सुख प्रदान करते हैं।

नीला रंग इजार का, मीहीं चूडी घूंटी ऊपर ।
तिन पर झालके दावन, हरी झाँई आवत नजर ॥ १४
श्रीराजजीकी इजार हरित वर्णकी है जिसमें श्रीचरणोंकी एड़ियोंके ऊपर अति

सूक्ष्म चुन्नटें सुशोभित हैं. इस इजारके ऊपर जामाका धेरा झलकता है. उसमें इजारका हरित रङ्गकी आभा दिखाई देती है.

रंग नंग बूटी कछुए, लगत नहीं हाथ कों ।

ए सुख बारीक अरस के, इन अंग का नूर अरस मों ॥ १५

इस इजार और जामामें चित्रकारीके द्वारा जड़े हुए रत्न एवं छोटे-छोटे फूल ऐसे अद्भुत हैं कि हाथोंके द्वारा स्पर्श करने पर उनका पता भी नहीं चलता है. परमधामके ऐसे सूक्ष्म आनन्द इन ज्योतिर्मय अङ्गोंमें विद्यमान हैं. पूरे परमधाममें इनकी ही ज्योति व्यास है.

जोत करे दिल चाहती, जैसी नरमाई अंग चाहे ।

सोभा धरे दिल चाहती, जुबां खुसबोए कही न जाए ॥ १६

श्रीराजजीके ये वस्त्र उनकी इच्छानुसार प्रकाशित होते हैं तथा उनकी इच्छानुसार उनके सुकोमल अङ्गोंमें सुशोभित होते हैं. जिह्वाके द्वारा उनकी सुगन्धिका भी वर्णन नहीं हो सकता है.

चोली अंग को लग रही, सेत जामा अंग गौर ।

चीन से कुसादी दावन, ताको क्यों कर कहूं जहूर ॥ १७

श्रीराजजीके गौर वर्णके अङ्गपर सुशोभित स्वेत जामेकी कञ्जुकी अङ्गको पूर्णतया स्पर्श करती हुई सुशोभित है. उनकी कटि पर जामेके किनारकी चुन्नटें नीचेके घेरके भाग तक फैली हुई हैं. उनसे निकलती हुई किरणोंकी शोभा कैसे व्यक्त की जाए ?

पेहेनावा अरस अजीम का, क्यों कहिए माहें सुपन ।

कंकरी एक अरस की, उडावे चौदे भवन ॥ १८

स्वप्नवत् जगतमें परमधामके इन परिधानोंकी शोभा कैसे व्यक्त की जाए ? क्योंकि परमधामका एक छोटा-सा कण भी इन चौदह लोकोंको उड़ानेकी क्षमता रखता है.

वस्तरों में कै रंग हैं, सो हाथ को लगत नाहें ।

और भी हाथ लगें नहीं, जो जवेर वस्तरों माहें ॥ १९

इन वस्त्रोंमें जड़े हुए अनेक रङ्गोंके रत्न हाथ द्वारा स्पर्श नहीं होते हैं. वे

सभी वस्त्रमें ही एक रस बने हुए होते हैं।

रंग रेसम जवेर जो देखत, सो सब मसाला नंग ।
वस्तर भूषन सब नंगों के, माहें अनेक देखावें रंग ॥ २०

इन कोमल रेशमी वस्त्रोंमें जो रङ्ग तथा रत्न दिखाई देते हैं उन सभीमें वहीं
के रत्नोंकी दिव्यता है। ये सभी वस्त्र तथा आभूषण रत्न जड़ित हैं इनसे
विभिन्न प्रकारके रङ्गोंकी तरङ्गें उठती हैं।

कै बेली किनार में, और कै विध बेली चीन ।
बीच बूटी छापे कै नक्स, इन जल की जाने जल मीन ॥ २१
जामेके किनार पर तथा चुन्निटों पर विभिन्न प्रकारकी लताओंकी चित्रकारी
सुशोभित है। मध्यमें छोटे-छोटे फूलोंकी चित्रकारियाँ हैं। जिस प्रकार जलकी
मछली जलका महत्व समझती है, उसी प्रकार इनकी शोभाका अनुभव भी
ब्रह्मात्माएँ ही कर सकती हैं।

रंग कंचन कमर कस्या, पटुका जो पूरन ।
केते रंग इनमें कहूं, जानों एही सबे भूषन ॥ २२
श्रीराजजीकी कटि पर पूर्ण रूपसे बँधा हुआ कञ्चन रङ्गका पटुका सुशोभित
है। उसमें समाविष्ट विभिन्न रङ्गोंका वर्णन कहाँ तक करें ? ऐसा प्रतीत होता
है ये सभी एक प्रकारके आभूषण ही हैं।

सो रंग सारे जवेरन के, कै रंग छेडे किनार ।
हर धागे रंग कै विध, नहीं रंग जोत सुमार ॥ २३
इसकी किनार पर विभिन्न रङ्गोंके रत्न सुशोभित हैं। ऐसा लगता है कि इसके
हर धागेमें अनेक प्रकारके रङ्गोंकी आभा झलकती है। इस प्रकार इन रङ्गोंकी
ज्योतिका कोई पारावार नहीं है।

दोऊ बगलों केवडे, किन विध कहूं रोसन ।
कै रंग नंग माहें झलकें, जामा क्यों कहूं अरस तन ॥ २४
जामेके दोनों पार्श्व भाग पर केवडेके फूल जैसी चित्रकारी है। उससे निकलते

हुए प्रकाशका वर्णन किस प्रकार करें ? उसके अन्दर विभिन्न रङ्गोंके रलोंकी आभा झलकती है. इस प्रकार श्रीराजजीके अङ्गों पर सुशोभित जामेकी शोभाका वर्णन नहीं हो सकता है.

ए सोभा देख सुख उपजे, हक वस्तर या भूषन ।

और इनकी मैं क्यों कहूं, जो रेहेत ऊपर इन तन ॥ २५

श्रीराजजीके अङ्गों पर धारण किए हुए इन वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभाको देखकर अपार आनन्दका अनुभव होता है.

गिरवान दोऊं देखत, अति सुन्दर अनूपम ।

मुख आगे मासूक के, निरखत अंग आतम ॥ २६

जामेके दोनों किनार अनुपम शोभायुक्त दिखाई देते हैं. श्रीराजजीके सम्मुख बैठी हुई आत्मा इसकी शोभा देखकर आनन्दित होती है.

बातें करें सलोनियां, मासूक सलोने मुख ।

नैन सलोने रस भरे, कै देत आसिकों सुख ॥ २७

प्रियतम धनी प्रसन्न मुद्रामें मधुर तथा रसभरी बातें करते हैं. उनके सुन्दर नयन भी आनन्द रससे परिपूर्ण हैं एवं अनुरागिनी आत्माओंको अपार सुख प्रदान करते हैं.

दोऊ बेल दोऊ बगलों पर, जानों कुंदन नंग जडतर ।

नीले पीले लाल जवेर, सुख पांड देख नजर ॥ २८

जामेमें दोनों पार्श्व भाग पर लताएँ चित्रित हैं. वे ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे स्वर्णमें रल जड़ा हुआ हो. इनमें जड़े हुए नीले, पीले तथा लाल रलोंको देखकर हृदय आनन्दित होता है.

दोऊ बांहें चूड़ी अति सुन्दर, मीहीं मीहीं से लग मोहोरी ।

कै रंग नंग चूड़ियां, जवेर जवेर बीच जरी ॥ २९

जामेकी दोनों भुजाओंकी चुन्नटें अत्यन्त सुन्दर हैं. ऊपरसे लेकर मोहरी तक ये चुन्नटें सूक्ष्मतर होती चली गई हैं. इनमें विभिन्न रङ्गोंके रलोंके साथ कई छोटे छोटे फूल चित्रित हैं तथा किनारे पर जरीसे विभिन्न रल जड़े हुए हैं.

मोहोरी जडाव फूल बने, जानों के एही नंग भूषन ।

बेल जामें जो जुगतें, सब थें सोभा अति घन ॥ ३०

भुजाओंकी मोहरी पर जड़े हुए ये फूल रत्न जडित आभूषण की भाँति प्रतीत होते हैं। इस प्रकार जामा पर युक्ति पूर्वक बनी हुई लताएँ सर्वाधिक शोभायुक्त दिखाई देती हैं।

किन विध जामा लग रह्या, ए जो अंग का जहूर ।

कै नक्स बूटी मीहीं बेलियां, रुह कर देखे अरस सहूर ॥ ३१

श्रीराजजीके दिव्य अङ्ग पर यह जामा इस प्रकार सुशोभित है कि यह उनके अङ्गका ही प्रकाश लगता है। इसमें चित्रकारीके द्वारा चित्रित सूक्ष्म लताएँ तथा फूल अत्यन्त शोभायुक्त हैं। परमधामकी आत्माएँ चिन्तनके द्वारा इस शोभाके दर्शन करती हैं।

पार न जामें सलूकी, ना कछू नरमाई पार ।

इन मुख गुन केते कहूं, खूबी तेज न सुगंध सुमार ॥ ३२

जामेकी सुन्दरता एवं सुकोमलताका कोई पारावार नहीं है। इस प्रकार नश्वर जिहाके द्वारा इसके गुणोंका वर्णन कैसे करें? इसकी शोभा सुगन्धि तथा इससे प्रदीप होते हुए प्रकाशका कोई पारावार ही नहीं है।

इन ऊपर जो भूषन, नेक इन की कहूं विगत ।

क्यों नूर कहूं अरस अंग का, पर तो भी कहूं नेक मत ॥ ३३

इसके ऊपर सुशोभित आभूषणोंका भी थोड़ा-सा वर्णन करते हैं। यद्यपि श्रीराजजीके अङ्गके प्रकाशकी शोभाका वर्णन नहीं हो सकता तथापि अपनी बुद्धिके अनुसार थोड़ा-सा वर्णन करता हूँ।

धागे बराबर नक्स, झीने बारीक अतंत ।

ए फूल बेल तो आवें नजरों, जो अंग अंग खुलें वाहेदत ॥ ३४

इस जामेमें सूक्ष्म तन्तुओंकी भाँति सूक्ष्म चित्रकारी है जब पर-आत्माके अङ्ग प्रत्यङ्ग परमधाममें जागृत हो जाते हैं तभी इसमें सुशोभित फूल तथा लताएँ दृष्टिमें आ सकती हैं।

ए नक्स सो जानहीं, नैनों देखें जो होए निसबत ।

ए देखें याद आवही, पेहले बातें हुई खिलवत ॥ ३५

श्रीराजजीकी अङ्गभूता आत्माएँ इन सूक्ष्म चित्रकारीके दर्शन कर सकती हैं। इनको देखने पर मूलमिलावामें हुई प्रेम वार्ताका स्मरण हो आता है।

हक पाग जो निरखते, होए अचरज माहें सहूर ।

ए याद किए क्यों जीव ना उडे, देख नूरजमाल मुख नूर ॥ ३६

श्रीराजजीके सिर पर सुशोभित पागकी अद्भुत शोभाके दर्शन करने पर आश्वर्यका अनुभव होता है। श्रीराजजीके तेजोमय मुखमण्डलकी आभा देखकर तथा मूलमिलावेकी बातें याद कर यह जीव शरीरको क्यों नहीं उड़ा देता है।

हुकमें पाव पल में, पाग कै कोट होत ।

रंग नंग फूल कै नक्स, दिल चाही धरे जोत ॥ ३७

श्रीराजजीके आदेशमात्रसे एक पलके चतुर्थ भागमें ही ऐसी करोड़ों पाग दृश्यमान होती हैं। उनमें इच्छानुसार विभिन्न रङ्गोंके रल, फूल, बेली आदिकी चित्रकारी शोभायुक्त होकर प्रकाशित होती है।

हक पाग बनावें हाथ अपने, अरस खावंद दिल दे ।

ए देखें रुह सुख पावत, जब हाथ गौर पेच ले ॥ ३८

श्रीराजजी स्वयं अपने कर कमलोंसे यह पाग बाँधते हैं। जब वे अपने गौर वर्णके हाथोंसे पागको लपेटते हैं उस अद्वितीय शोभाको देखकर आत्मा अपार सुखका अनुभव करती है।

आसिक चाहे मैं देखों, हक यों पेच लेत हाथ माहें ।

कै विध फेरे पेच को, कोई इन सुख निमूना नाहें ॥ ३९

अनुरागिनी आत्मा चाहती है कि श्रीराजजी अपने हाथोंसे पागकी लपेट कैसे लगाते हैं उसे मैं देख लूँ। वे अपने करकमलोंसे पागके लपेटोंको फेरते हैं, उस समय जैसा आनन्द प्राप्त होता है उसकी कोई उपमा नहीं है।

जो रंग चाहिए जिन मिसलें, सो नंग धरत तित जोत ।

फूल नक्स कै कटाव, ए कछू अचरज पाग उदोत ॥ ४०

इस पागमें जहाँ जैसा रङ्ग होना चाहिए वहाँ पर उसी प्रकारके रत्न सुशोभित हैं। इस प्रकार फूल आदिकी चित्रकारीसे इस पागकी शोभा अद्वितीय एवं आश्वर्य जनक लगती है।

मध्य चौक जित चाहिए, ऊपर चाहिए चौकड़ी जित ।

बेल पात सब रंग नंग, सोई बनी पाग जुगत ॥ ४१

इस पाग पर जहाँ चौक एवं चौकड़ी होनी चाहिए वहाँ पर उसी प्रकारकी शोभा दिखाई देती है। इसी प्रकार लताएँ, पत्तियाँ, फूल आदि भी विभिन्न रङ्गोंमें युक्ति पूर्वक चित्रित होनेसे शोभायुक्त लगते हैं।

ताथें हक लेत पेच हाथ में, कोमल अंगुरियों ।

गौर अंगुरियां पतली, मीठी सोभें मुंदरियों ॥ ४२

जब श्रीराजजी अपने कर कमलोंसे पागकी लपेट देते हैं, उस समय गौर वर्णकी उनकी पतली अँगुलियों पर सुशोभित मुद्रिकाएँ झलकती हुई दिखाई देती हैं।

पोहोंचे देखूं के अंगुरी, नरमाई देखूं के गौर ।

मुंदरी देखूं के हथेलियां, देखूं लीकें के नख नूर ॥ ४३

पाग बाँधते समय मैं श्रीराजजीके कर कमलका पहुँचा, अङ्गुलियाँ, उनकी सुकोमलता, उनका गौरवर्ण, उन पर सुशोभित मुद्रिकाएँ, हथेलियाँ, उनकी रेखाएँ, नख तथा उनके प्रकाशको देखूं सर्वत्र अनुपम शोभा झलकती है।

चलवन करते हाथ की, नैनों देखत सब सलूक ।

यों देखत मासूक को, अजूं होत न आसिक टूक ॥ ४४

जब श्रीराजजी अपने कर कमलोंको हिलाते हैं, उस समय अपने प्रियतमके सुन्दर करकमलोंको देखकर भी अनुरागिनी आत्माओंका हृदय अभी तक खण्डित नहीं हो रहा है।

महामत निमूना ख्वाब का, क्यों दीजे हक वस्तर ।
हक नूर न आवे सबद में, पर रह्या न जाए क्योंए कर ॥ ४५
महामति कहते हैं, इस नश्वर जगतमें श्रीराजजीके वस्त्रोंकी उपमा कैसे दी
जाए ? यद्यपि शब्दोंके द्वारा उनके दिव्य तेजका वर्णन नहीं हो सकता है.
तथापि उनका वर्णन किए बिना मौन भी कैसे रहा जाए ?

प्रकरण १७ चौपाई १२७

हक मेहेबूब के भूषन

भूषन सबदातीत के, क्यों इत वरनन होए ।
सोभा अरस सरूप की, इत कबहूं न बोल्या कोए ॥ १
श्रीराजजीके आभूषण शब्दातीत परमधामके होनेसे इस नश्वर जगतमें उनकी
शोभाका वर्णन कैसे होगा ? यहाँ पर आज तक किसीने भी परमधामके
स्वरूपकी शोभाका वर्णन नहीं किया है.

तो क्यों माने बीच दुनियां, ए जो हक जात भूषन ।
रैन अंधेरी क्यों रहे, जब जाहेर हुआ बका दिन ॥ २
इसलिए स्वप्नवत् जगतके जीव इन चैतन्यमय आभूषणोंकी वास्तविकताको
कैसे स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु अब तारतम ज्ञानरूपी सूर्यका उदय होने
पर अज्ञानरूपी अन्धेरी रात कैसे टिकेगी ?

अनेक गुन नंग इनमें, रूह दिल चाहे जब ।
जिन जैसा दिल उपजे, सो होत आगूं से सब ॥ ३
इन आभूषणोंके रत्नोंमें विभिन्न प्रकारके गुण विद्यमान हैं जो आत्माकी
इच्छानुसार प्रकट होते हैं. हृदयमें जैसी इच्छा उत्पन्न होती है उससे पूर्व ही
ये आभूषण उनके अङ्गोंमें सुशोभित हो जाते हैं.

जेती अरवाहें अरस की, ताए मन चाह्या सब होए ।
दिल चितवन भी पीछे करे, आगे बनी आवे सोए ॥ ४
परमधामकी सभी आत्माओंकी सम्पूर्ण इच्छाएँ तत्काल पूर्ण हो जाती हैं.
वस्तुतः हृदयमें उत्पन्न होनेसे पूर्व ही वे इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं.

जैसा मीठा लगे मन को, भूषण तैसा ही बोलत ।
गरम ठंडा सब अंग को, चित चाह्या लगत ॥ ५

इन ब्रह्मात्माओंको जैसा स्वर मधुर लगता है वैसा ही स्वर उनके आभूषणोंसे निकलता है. इसी प्रकार उनकी इच्छाके अनुरूप उनके अङ्गोंको इन आभूषणोंसे शीतलता तथा उष्णताका अनुभव होता है.

हक वरनन करत हों, कहूँ नया किया सिनगार ।
ए सबद पोहोंचें नहीं, आवत न माहें सुमार ॥ ६
अब मैं श्रीराजजीके चिन्मय स्वरूपका वर्णन करता हूँ. ऐसेमें यदि मैं कहूँ कि उन्होंने नयाँ शृङ्खार धारण किया है तो भी ये शब्द वहाँ तक नहीं पहुँचते हैं. उनकी शोभा शब्दोंकी सीमामें नहीं आती है.

वस्तर और भूषण, ए हक अंग का नूर ।
सो निमख न जुदा होवही, ज्यों सूरज संग जहूर ॥ ७
श्रीराजजीके अङ्गोंमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषण उनके ही अङ्गोंका प्रकाश है. इसलिए सूर्यसे उसकी किरणोंकी भाँति ये वस्त्र तथा आभूषण उनके अङ्गोंसे पल मात्रके लिए भी दूर नहीं होते हैं.

इन जिमी आसिक क्यों रहे, बिना किए अपनो आहार ।
खाना पीना एही आसिकों, अरस रुहों एही आधार ॥ ८
अनुरागिनी आत्माएँ इस नश्वर जगतमें श्रीराजजीके दिव्य शृङ्खारकी शोभाके दर्शनरूप आहारके बिना कैसे रह सकतीं हैं ? क्योंकि परमधामकी आत्माओंका खान-पान तथा आधार ही यही दर्शन है.

सोई कलंगी सोई दुगदुगी, सोभे पाग ऊपर ।
केहे केहे मुख एता कहे, जोत भरी जिमी अंबर ॥ ९
श्रीराजजीकी पागके ऊपर कलंगीकी जैसी शोभा है उसी प्रकारकी शोभा दुगदुगीकी है. उनकी शोभाका वर्णन करते हुए इतना ही कहा जा सकता है कि उनकी ज्योति पूरे आकाशमें व्याप्त होती है.

कै विध के सुख जोत में, कै सुख सुन्दरता ।
कै सुख तरह सलूकियां, सिफत पोहोंचे न हक बका ॥ १०

उनकी ज्योति तथा सुन्दरतामें भी विभिन्न प्रकारके सुख हैं। उनकी सुन्दर संरचनासे भी अपार सुख प्राप्त होता है। इस शोभाको व्यक्त करनेके लिए कोई भी शब्द अखण्ड तक नहीं पहुँच सकता हैं।

मोतिन की जोत क्यों कहूं, इन जुबां के बल ।
सोभा लेत दोऊ श्रवनों, अति सुन्दर निरमल ॥ ११
कुण्डलमें जड़े हुए मोतियोंकी ज्योति का वर्णन जिह्वाके द्वारा कैसे करें। जिनके द्वारा दोनों श्रवण अङ्ग अत्यन्त सुन्दर तथा निर्मल शोभा धारण करते हैं।

मोती जोत अचरज, और अति उत्तम दोऊ लाल ।
जो रुह देखे नैन भर, तो अलबत बदले हाल ॥ १२
इन मोतियोंकी ज्योति ही आश्चर्य जनक है, उनमें भी अधिक आकर्षक लालिमायुक्त दो माणिक्य हैं। यदि आत्मा नयनोंको भरकर इस अनुपम शोभाको देखने लगती है तो तत्काल उसकी मनःस्थिति बदल जाती है।

कहे जुबां जोत आकास लों, जोतें सोभा कै करोर ।
सो बोल न सके जुबां बेवरा, इन अकल के जोर ॥ १३
इस जिह्वाके द्वारा इतना ही कहा जा सकता है कि इनकी ज्योति आकाशमें व्याप्त है। इस ज्योतिमें करोड़ों प्रकारकी शोभा है इसलिए नश्वर जगतकी बुद्धि और जिह्वासे उसका वर्णन नहीं हो सकता है।

ए तो मोती लाल कुंदन, वाहेदत खावंद श्रवन ।
आकास जिमी भरे जोत सों, तो कहा अचरज है इन ॥ १४
अद्वैत भूमि परमधामके स्वामी श्रीराजजीके श्रवण-अङ्गोंमें सुशोभित कुण्डलमें कुन्दनमें जड़े हुए मोती तथा लाल माणिक्यकी आभा भूमिसे लेकर आकाश तक व्याप्त है, ऐसा कहें तो इसमें कौन-सा आश्चर्य होगा।

चोली अंग सों लग रही, ज्यों अंग नूर जहूर ।

ए लजत दिल तो आवही, जो होवे अरस सहूर ॥ १५

श्रीराजजीके दिव्य अङ्ग पर सुशोभित श्वेत जामेके ऊपर की कञ्जुकी शरीरके साथ पूर्णतया संलग्न होकर उनके ही अङ्गके प्रकाशकी भाँति झलक रही है. परमधामकी जागृत बुद्धिके द्वारा विचार करने पर ही इस छविके दर्शनसे हृदय आनन्दित होता है.

एक देख्या हार हीरन का, कै कोट सूरज उजास ।

इन उजास तेज बड़ा फरक, ए सुख सीतल जोत मिठास ॥ १६

श्रीराजजीके कण्ठहारके एक हीरेसे ही करोड़ों सूर्यका प्रकाश निकलता है. इस प्रकाशमें एवं सूर्यके प्रकाशमें इतना अन्तर है कि यह प्रकाश सुखदायी, शीतल तथा सुमधुर है.

हार दूजा मानिक का, जानों उनथें अति सोभाए ।

जब लालक इनकी देखिए, जानों और सबे ढंपाए ॥ १७

श्रीराजजीके वक्षस्थल पर सुशोभित दूसरा माणिक्यका हार हीरेके हारसे भी अधिक शोभायुक्त है. जब इसकी लालिमाको देखते हैं तो लगता है कि इसके प्रकाशमें अन्य सभी प्रकाश ढँक गए हैं.

तीसरा हार अंग देखिया, अति उजल जोत मोतिन ।

जानों सबथें ऊपर, एही है रोसन ॥ १८

इसी प्रकार श्रीराजजीका तीसरा कण्ठहार अत्यन्त उज्ज्वल मोतियोंका है. इसे देखने पर ऐसा लगता है कि यही सर्व श्रेष्ठ एवं सर्वाधिक प्रकाशमान है.

जब हार चौथा देखिए, जानों नीलक अति उजास ।

जानों के सरस सबन थें, ए देत खुसाली खास ॥ १९

जब चौथे हारके दर्शन करते हैं तो नीलमणिका यह हार अत्यधिक नीलिमायुक्त है, मानो यही सर्वाधिक सुन्दर तथा अति आनन्दप्रद है.

हार लसनियां पांचमा, कछू ए सुख सोभा और ।

जानों जोत जिमी आकास में, भराए रही सब ठौर ॥ २०

इसी प्रकार पाँचवाँ हार वैदूर्यमणि (लहसुनिया) का है. इसकी शोभा तो कुछ अलग ही प्रकारका आनन्द प्रदान करती है. मानों इसकी ज्योति भूमिसे लेकर आकाश पर्यन्त सर्वत्र छायी हुई है.

जब नंग देखूं नीलवी, जानों एही सुख सागर ।

जोत मीठी रंग सुंदर, जानों के सब ऊपर ॥ २१

जब नीलमणिको देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह सुखका ही सागर है. इसकी मधुर सुन्दर आभा सर्वाधिक श्रेष्ठ है.

हारों बीच जो दुगदुगी, माहें नव रतन ।

नव जोत नव रंग की, जानों सब ऊपर ए भूषन ॥ २२

इन हारोंके मध्य सुशोभित दुगदुगीमें नव प्रकारके रत्न जड़ायमान हैं. इन नवरङ्गोंके रत्नोंसे अलग-अलग ज्योति निकलती है. जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि यह आभूषण ही सर्वाधिक शोभायुक्त है.

ए जोत सब जुदी जुदी, देखिए माहें आसमान ।

सब जोत जोत सों लडत है, कोई सके न काहूं भान ॥ २३

इन सभी रत्नोंकी अलग-अलग ज्योति आकाशमें परस्पर ढन्ढ करती हुई दिखाई देती है. किन्तु कोई भी किरण दूसरेको परास्त नहीं कर सकती.

भूषन सामी न देखिए, जो देख्या चाहे जंग ।

पेहले देखिए आकास को, तो जुध करत नंग सों नंग ॥ २४

यदि इन किरणोंका ढन्ढ देखना हो तो आभूषणोंकी ओर न देखकर पहले आकाशकी ओर देखना चाहिए. वहाँ पर एक दूसरे रत्न परस्पर युद्ध कर रहे हैं ऐसे दिखाई देते हैं.

जो कदी पेहले हार देखिए, तो वाही नजर भरे जोत ।

या बिन कछू न देखिए, सब में एही उदोत ॥ २५

यदि कभी सर्व प्रथम हार पर दृष्टि पड़ी तो उसकी ज्योतिसे ही दृष्टि भर

जाएगी. उसके अतिरिक्त अन्य कोई सुन्दरता ही दिखाई नहीं देगी. सर्वत्र उसीका प्रकाश व्याप्त दिखाई देगा.

नेक कहूँ बाजूबंध की, जोत न जामें सुमार ।
तो जो नंग बाजूबंध के, सो क्यों आवें माहें विचार ॥ २६

अब भुजबन्धका संक्षिप्त वर्णन करते हैं. जामे पर सुशोभित इसकी ज्योतिका ही कोई पारावार नहीं है तो उसमें जड़े हुए रत्नोंकी शोभाके विषयमें विचार ही कैसे किया जा सकेगा ?

नंग पटली दस रंग की, माहें कै विध के नक्स ।
ए सलूकी बेल बूटियां, एक दूजे पें सरस ॥ २७

इस भुजबन्धकी पटलियोंमें दस-दस रङ्गके रत्न जड़ायमान हैं. उनमें विभिन्न प्रकारकी चित्रकारियाँ हैं. इन चित्रकारियोंमें सुशोभित लताएँ तथा छोटे-छोटे फूल एक दूसरेसे अधिक सुशोभित हैं.

लटके बाजूबंध फुँदन, झलकत झाबे अपार ।
कै नंग रंग एक झाबे में, सो एक एक बाजू चार चार ॥ २८

इन भुजबन्धोंमें फुँदने लटक रहे हैं. इनमें लटक रही झुमकियोंकी झलककी शोभा भी अपार है. एक एक झुमकीमें विविध रङ्गोंके रत्न जड़ायमान हैं. इस प्रकार एक एक भुजबन्धमें चार-चार झुमकियाँ लटकती हुई सुशोभित हैं.

तामें नंग कहूँ केते जरी, तिन फुँदन में कै रंग ।
रंग रंग में कै किरनें, किरन किरन कै तरंग ॥ २९

इन झुमकियोंमें जड़ित रत्नों तथा जरीकी शोभा किसकी अधिक है यह कहना कठिन है. इन फुँदनोंमें अनेक रङ्गोंकी आभा झलकती है. इनमें एक एक रङ्गसे अनेक किरणें निकलती हैं एवं एक-एक किरणमें अनेक तरङ्गें दिखाई देतीं हैं.

बांहें हलते फुँदन लटके, हींचे फुँदन जोत प्रकाश ।
बांहें हलते ऐसा देखिए, मानों हींचत नूर आकाश ॥ ३०

जब श्रीराजजीकी भुजाएँ हिलती हैं तब झुलते हुए इन फुँदनोंका प्रकाश इस

प्रकार तरङ्गित होता है मानों आकाशमें वह झूला झूल रहा हो.

जो पटलियां पोहोंची मिने, सात पटली सात नंग ।

सो सातों नंग इन भाँत के, मानों चढता आकासे रंग ॥ ३१

श्रीराजजीकी कलाईमें सुशोभित पहुँचीमें सात पटलियाँ हैं, उनमें सात ही प्रकारके रल जड़े हुए हैं. वे सातों इस प्रकार सुशोभित हैं मानों उनसे निकलती हुई किरणें आकाशकी ओर चढ़ रहीं हैं.

स्याम सेत नीली पीली, जांबू आसमानी लाल ।

हाए हाए करते पोहोंची वरनन, अजूं होस लिए खडा हाल ॥ ३२

ये सात पटलियाँ श्याम, श्वेत, नीला, पीला, जाम्बू, आकाशी तथा लाल रङ्गकी हैं. इनकी अद्वितीय शोभाका वर्णन करते हुए भी हाय ! यह आत्मा सचेतावस्था (होश) में खड़ी है.

जो एक नंग नीके निरखिए, तो रोम रोम छेदत भाल ।

जोलों देखों उपली नजरों, तोलों बदलत नाहीं हाल ॥ ३३

इन रलोंमें यदि एकको भी ध्यान पूर्वक देखें तो उसकी सुन्दरता रोम रोमको बींध डालती है. किन्तु जब तक बाह्य दृष्टिसे देखते रहेंगे तब तक मनस्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं होगा.

कडियां कांडों सोभित, तिन की और जुगत ।

बल ल्याए कै दोरी नंग, रुह निरखें पाइए विगत ॥ ३४

श्रीराजजीकी कलाईमें धारण किया हुआ कड़ा अत्यन्त सुन्दर है. इसमें डोरीकी भाँति बलदार अनेक रल सुशोभित हैं. आत्मदृष्टिसे देखने पर ही इस अनुपम शोभाका आनन्द हृदयङ्गम होता है.

ए नजरों नंग तो आवहीं, जो आवे निसबत प्यार ।

ना तो भूषन हाथ हक के, दिल करसी कहा विचार ॥ ३५

इन रलोंकी शोभा तभी दृष्टिगत हो सकती है जब ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीके साथके सम्बन्धका प्रेम प्रकट हो जाए. अन्यथा श्रीराजजीके हस्तकमलोंमें धारण किए हुए इन आभूषणोंकी शोभाके प्रति हृदयमें विचार ही कैसे उठ सकेगा ?

जुदे जुदे जवरेन की, दस विध की मुंदरी ।
दोऊ अंगूठों अंगूठिए, और मुंदरी आठ अंगुरी ॥ ३६
श्रीराजजीने अलग-अलग रत्नोंकी दस मुद्रिकाएँ धारण की हैं उनमें दो
अङ्गुष्ठोंमें दो अंगूठियाँ एवं शेष आठ अङ्गुलियोंमें आठ मुद्रिकाएँ सुशोभित
हैं.

मानिक मोती नीलवी, पाच पांने पुखराज ।
लसनिएं और मनी, रहे कुंदन माहें विराज ॥ ३७

इन मुद्रिकाओंमें कुन्दनमें जड़े हुए माणिक्य, मोती, नीलमणि, पाच, पत्ता,
पुखराज, वैदूर्यमणि (लहसुनिया) तथा मणि आदि रत्न सुशोभित हैं.

ए दसों अंगुरी मुंदरी, नूर नख अंगुरी पतलियाँ ।
पोहोंचे हथेली उजल लीकें, प्रेम पूरन रस भरियाँ ॥ ३८
इन दसों अङ्गुलियोंकी मुद्रिकाएँ तथा पतली अङ्गुलियोंके नखोंका तेज,
पहुँची एवं हथेलीकी उज्ज्वल रेखाएँ प्रेम रससे परिपूर्ण हैं.

अब चरनों चारों भूषन, चारों में जुदे जुदे रंग ।
जानों के रस जवरे के, जैसे जोत अरस के नंग ॥ ३९
अब चारों चरणोंके चारों आभूषणोंका वर्णन करते हैं जो अलग-अलग
रङ्गोंमें सुशोभित हैं. ऐसा प्रतीत होता है मानों परमधामके ये सभी रत्न रससे
परिपूर्ण होकर प्रकाशित हो रहे हैं.

दस रंग नंग माहें झांझरी, ए बानी जुदी झनकार ।
ए सोभा अति अनूपम, अरस के अंग सिनगार ॥ ४०
झाँझरीमें दस रङ्गोंमें दस प्रकारके रत्न जड़ायमान हैं. इनकी झङ्कार अत्यन्त
मधुर एवं कर्ण प्रिय है. इनकी शोभा अनुपम है क्योंकि ये श्रीराजजीके
अङ्गके आभूषण हैं.

यामें बेल पात नक्स कै, कै करकरी फूल काँगरी ।
बानी सोभा सुख देत हैं, घाट अचरज ए झांझरी ॥ ४१
इनमें लताएँ, पत्तियाँ आदिकी अनेक चित्रकारियाँ सुशोभित हैं एवं काँगरी

पर अनेक प्रकारके फूलोंमें करकरीके दानें सुशोभित हैं। उनकी मधुर ध्वनि अपार सुख प्रदान करती है। इस प्रकार ज्ञाँझरीकी संरचना अत्यन्त अद्भुत है।

और बेली कै नकस, मीहीं मीहीं जुगत जिनस ।

जब नीके कर देखिए, जानों सब थें एह सरस ॥ ४२

इनमें लताओंकी चित्रकारीके साथ-साथ अन्य भी सूक्ष्म चित्रकारियाँ हैं। ध्यान पूर्वक देखने पर ऐसा लगता है मानो ये ही सर्वाधिक सुन्दर हैं।

जो सोभावत चरन को, सो केते कहूं गुन इन ।

कोई घायल अरवा जानहीं, जो होसी अरस के तन ॥ ४३

श्रीराजजीके चरणोंमें सुशोभित इन ज्ञाँझरीके गुणोंका वर्णन कैसे किया जाए ? जिनकी पर आत्मा परमधाममें है वे घायल आत्माएँ ही इन गुणोंको जान सकतीं हैं।

भूषन अंग अरस के, जानसी कोई आसिक ।

अनेक सुख गुन गरभित, ए अरस सूरत अंग हक ॥ ४४

वस्तुतः परमधामके अङ्गोंके आभूषण अनुरागिनी आत्माएँ ही जान सकतीं हैं। इन आभूषणोंके गुणोंमें अनेक सुख गर्भित हैं क्योंकि ये श्रीराजजीके तेजोमय अङ्गोंमें सुशोभित हैं।

दोऊ मिल मधुरे बोलत, लेऊ खुसबोए के सुनों बान ।

सोभा कहूं के नरमाई, ए भूषन चरन सुभान ॥ ४५

श्रीराजजीके दोनों श्रीचरणोंके आभूषण कर्णप्रिय स्वरसे मुखरित होते हैं। मुझे लगता है कि मैं इनकी सुगन्धिको ग्रहण करूँ, इनकी सुन्दर वाणीको श्रवण करूँ अथवा इनकी शोभा या कोमलताका वर्णन करूँ ? वस्तुतः ये आभूषण तो मेरे प्रियतम धनीके श्रीचरणोंके हैं।

बान मधुरी घूंघरी, ए जुदे रूप रंग रस ।

पांच रंग नंग इनमें, जानों उनपें एह सरस ॥ ४६

इसी प्रकार घुँघुरुकी ध्वनि भी अत्यन्त मधुर है। इनके रूप, रङ्ग एवं रस

भी अन्य आभूषणोंसे भिन्न हैं। इनमें पाँच रङ्गके रत्न जड़ायमान हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो अन्य आभूषणोंसे ये अत्यधिक सुन्दर हैं।

कै करडे कै बूटियां, नक्स नाके रंग और ।

ए सोभा कहूँ मैं किन मुख, जाको इन चरनों है ठौर ॥ ४७

इन घुँघरुमें अनेक कुन्दे तथा छोटे-छोटे अनेक फूल सुशोभित हैं। कुन्दे पर भी विभिन्न प्रकारकी चित्रकारी है। जिनका आश्रय ही श्रीराजजीके चरण कमल हैं ऐसी इस घुँघरुकी शोभाका वर्णन जिह्वाके द्वारा कैसे करूँ ?

मानों लाल कडी मानिक की, माहें कै रंग बेल अनेक ।

सिर पुतलियों लग रहीं, ए सोभा अति विसेक ॥ ४८

मानों इनमें माणिक्यकी भाँति रक्तिम आभायुक्त कुन्दे हैं, जिनमें अनेक रङ्गोंकी अनेक लताएँ सुशोभित हैं। इनके किनारों पर अनेक पुतलियाँ सुशोभित हैं। जिसके कारण इनकी शोभा अति विशेष हो जाती है।

इन कडी के रूप रंग, मीहीं बेल गिनी न जाए ।

मानों पुतली वाही की काँगरी, ए जुगत अति सोभाए ॥ ४९

इन कुन्दोंका रूप रङ्ग तथा सूक्ष्म लताओंकी गणना नहीं हो सकती है। इनकी किनारी पर मानों चित्रकारीसे ही पुतलियोंके आकारकी काँगरी सुशोभित है। इनकी शोभा अत्यन्त सुन्दर है।

अब कहूँ रंग कांबीय के, पेहेरी जंजीर ज्यों जुगत ।

जुदे जुदे रंग हर कडी, नैना देख न होए त्रपत ॥ ५०

अब श्रीराजजीके चरणोंके तीसरे आभूषण काँवीके रङ्गका वर्णन करता हूँ। वह शृङ्खला (जञ्जीर) की भाँति युक्त पूर्वक सुशोभित है। उसकी प्रत्येक कड़ीमें अलग-अलग रङ्गकी आभा झलकती है। इस अद्वितीय शोभाको देखकर नयन तृप्त नहीं होते हैं।

अनेक कडियां जंजीर में, गिनती न आवे ताए ।

कै रंग नंग एक कडीय में, बेल जंजीर गिनी न जाए ॥ ५१

इसकी शृङ्खला (जञ्जीर) में अनेक कडियाँ सुशोभित हैं जिनकी गणना नहीं

हो सकती है। इनमें एक-एक कड़ीमें अनेक नगोंके रङ्गोंकी आभा झलकती है। इस जञ्जीरमें चित्रित लताओंकी गणना भी नहीं हो सकती है।

ए विचार कीजे जब दिल सें, रुह की खोल नजर ।

कड़ी कड़ी के रंग देखिए, गिनते होए जाए फजर ॥ ५२

जब आत्मदृष्टि खोलकर हृदय पूर्वक विचार करें। इन कड़ियोंके रङ्गोंको देखकर गिनने लग जाएँ तो पूरी आयु ही समाप्त हो जाएगी।

ऊपर खजूरा कड़ियन का, और कै बेली कड़ियों माहें ।

तिन बेलों रंग बेली कड़ियों, ए खूबी क्यों कर कहे जुबांए ॥ ५३

इन श्रीचरणोंके चतुर्थ आभूषण कड़ीमें अनेक प्रकारकी लहरीदार लताएँ चित्रित हैं। इन लताओंमें भी विभिन्न रङ्गकी बेलोंकी छोटी-छोटी अनेक कड़ियाँ सुशोभित हैं। इनकी विशेषता शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती।

तेज जोत सोभा सलूकी, रुह केताक देखे ए ।

खुसबोए नरम स्वर माधुरी, और कै सुख गुझ इनके ॥ ५४

इनका प्रखर तेज एवं ज्योतिर्मयी आभाको आत्मा कहाँ तक देख सकती है। इनमें सुगन्धि, कोमलता, स्वरमाधुर्य एवं अनेक प्रकारके रहस्यमय सुख विद्यमान हैं।

पाँच रंग नंग हर कड़ी, कै बेल फूल पात ।

कै कटाव कै बूटियाँ, इन जुबां गिने न जात ॥ ५५

प्रत्येक कड़ीमें पाँच-पाँच रङ्गोंमें पाँच प्रकारके रत्न जड़ायमान हैं। उनमें अनेक लताएँ, फूल तथा पत्तियाँ चित्रित हैं। अनेक प्रकारके कटाव तथा छोटे छोटे फूल इतने अधिक हैं कि उनकी गणनाके लिए यह जिह्वा असमर्थ है।

हर कड़ी कै करकरी, सो देखत ज्यों जडाव ।

नंग जोत नजरों आवहीं, कै नक्स कै कटाव ॥ ५६

प्रत्येक कड़ीकी किनारी पर करकरीके कण सुशोभित हैं। वे ऐसे लगते हैं मानों उनमें जड़ायमान हैं। विभिन्न प्रकारकी चित्रकारी तथा कटावमें विभिन्न

रङ्गोंकी ज्योति स्पष्ट दिखाई देती है।

सखती न देवें चरन को, ना बोझ देवें पाए ।

गुन सुख एक भूषन, इन मुख गिने न जाए ॥ ५७

ये आभूषण चरणोंमें चूभते भी नहीं हैं एवं भार रूप भी नहीं होते हैं। इस प्रकार श्रीराजजीके चरणोंमें सुशोभित एक-एक आभूषणोंके गुणोंसे प्राप्त सुख जिहाके द्वारा गिने नहीं जा सकते हैं।

ए देखत अचरज भूषन, बैठे अंग को लाग ।

ए सोभा कही न जावही, कोई देखे जिन सिर भाग ॥ ५८

श्रीराजजीके अङ्गोंमें संलग्न (चिपके हुए) इन आभूषणोंको देखकर आश्वर्य होता है। इनकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती। भाग्यशाली आत्माएँ ही इनके दर्शन कर सकती हैं।

सरूप पुतलियों मोतियों, हैं ऊपर हर जंजीर ।

सोभित सनमुख चेतन, क्यों कहूँ इन मुख नीर ॥ ५९

काँवीकी प्रत्येक शृङ्खला ऊपर मोतियोंसे पुतलियोंकी आकृति बनी हुई हैं। सम्मुखसे देखने पर यह चेतनकी भाँति सुशोभित है। इसकी शोभाका वर्णन कैसे किया जाए ?

हक चाही बानी बोलत, हक चाही जोत धरत ।

खुसबोए नरमाई हक चाही, हक चाह्या सब करत ॥ ६०

श्रीराजजीकी इच्छानुसार यह मुखरित होती है एवं उनकी इच्छानुसार ज्योति धारण करती है। इतना ही नहीं इसकी सुगन्धि तथा सुकोमलता भी श्रीराजजीकी इच्छानुसार ही होती है। वस्तुतः श्रीराजजी जैसा चाहते हैं यह वैसा ही करती है।

जैसे सरूप रूहन के, चरनों लगे गिरदवाए ।

त्यों पुतलियां मोतिन की, कदमों रही लपटाए ॥ ६१

जिस प्रकार सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीको चारों ओरसे घेर कर उनके

चरणोंमें बैठी हुई हैं। उसी प्रकार मोतियोंकी ये पुतलियाँ भी श्रीराजजीके चरणोंको घेर कर सुशोभित हैं।

सब समूह भूषन जब देखिए, अद्भुत सोभा लेत ।

जुबां खूबी क्यों कहे सके, हक दिल चाही सोभा देत ॥ ६२

जब इन आभूषणोंके समूहको देखते हैं तो इनकी शोभा अत्यन्त अद्भुत दिखाई देती है। यह जिह्वा इनकी विशेषताको कैसे बता सकती है, ये तो श्रीराजजीकी इच्छानुसार शोभा धारण करते हैं।

हाथ दीजे भूषन पर, सो हाथों लगत नाहें ।

पेहेने हमेसा देखिए, ऐसे कै गुन हैं इन माहें ॥ ६३

इन आभूषणोंको हाथसे स्पर्श करते हैं तो ये हाथमें लगते (चुभते) ही नहीं हैं। ऐसा लगता है कि श्रीराजजी इनको सदैव धारण करते हैं ऐसे अनेक गुण इन आभूषणोंमें विद्यमान हैं।

अरस तन हाथ अरस तने, एक दूजे परस होए ।

हाथ वस्तर या भूषन, दूजा अरस तने लगे न कोए ॥ ६४

परमधामके इन दिव्य स्वरूपोंको परमधामके स्वरूप ही अपने हाथोंसे स्पर्श कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त इनके वस्त्र तथा आभूषणोंको अन्य किसीके भी हाथ स्पर्श नहीं कर सकते हैं।

और हाथ कोई है नहीं, कह्या वास्ते भूषन के ।

और वस्तर ना कछू भूषन, जो इत निमूना लगे ॥ ६५

वास्तवमें किसी अन्य हाथका तो प्रश्न ही नहीं है, यह तो मात्र इन आभूषणोंकी महिमाके लिए ही कहा गया है। इसी प्रकार वहाँके वस्त्र तथा आभूषणके लिए भी यहाँ पर कोई उदाहरण नहीं है।

है एक हमेसा वाहेदत, दूजा जरा न काहूं कित ।

ए देखत सो भी कछुए नहीं, और कछू नजरों भी ना आवत ॥ ६६

परमधाममें सर्वदा एकात्मभाव है वहाँ पर अद्वैत भावके अतिरिक्त दूसरा कुछ भी नहीं है। जिन वस्त्राभूषणोंको अलग-अलग वर्णन किया है वास्तवमें वे

अलग-अलग नहीं हैं। इतना ही नहीं वे भिन्न-भिन्न रूपमें दीखते भी नहीं हैं।

वाहेत का वाहेत में, वस्तर भूषन पेहेत ।

ए नूर है इन अंग का, ए सुन ज्यों ना नासत ॥ ६७

अद्वैत परमधामके इन वस्त्र तथा आभूषणोंको अद्वैत भूमिकामें ही धारण किया जाता है। ये सभी श्रीराजजीके अङ्गके प्रकाशसे प्रकाशमय हैं, स्वप्नवत् जगतकी वस्तुओंकी भाँति नाशवान नहीं हैं।

मीहीं बातें अरस सुखकी, सो जाने अरस अरवाए ।

इन जिमी सो जानहीं, जिन मोमिन कलेजें घाए ॥ ६८

परमधामके सुखके इन सूक्ष्म रहस्योंको परमधामकी आत्माएँ ही जान सकतीं हैं। इस नश्वर जगतमें वही ब्रह्मात्मा इसे जान सकती है, जिसके हृदयमें श्रीराजजीके वियोगकी पीड़ा वेदनारूप बनी है।

इन जिमी आसिक क्यों रहे, वह छिन में डारत मार ।

तोलों रहे सहूर में, जोलों रखे राखनहार ॥ ६९

इस नश्वर जगतमें अनुरागिनी आत्माएँ कैसे रह सकतीं हैं। श्रीराजजीके इन आभूषणोंकी शोभा उनको तत्काल घायल कर देती है। जब तक श्रीराजजी उन्हें सचेत (होशमें) रखना चाहते हैं तभी तक वे सचेत रहती हैं।

एही काम आसिकन के, फेर फेर करे वरनन ।

विध विध सुख सरूप के, सुख लेवें सिनगार भिनभिंन ॥ ७०

इन अनुरागिनी आत्माओंका कार्य ही यही है कि वे वारंवार श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषणोंका वर्णन करें एवं उनके अलग-अलग शृङ्गार एवं स्वरूपके दर्शन कर अपार आनन्दका अनुभव करतीं रहें।

एही आहार आसिकन का, एही सोभा सिनगार ।

झीलें सागर वाहेत में, मेहर सागर अपार ॥ ७१

अनुरागिनी आत्माओंके लिए यही आहार है एवं उनकी शोभा भी इसीमें है।

कि वे श्रीराजजीके एकात्मभाव (एकदिली) के सागरमें तथा कृपाके सागरमें अवगाहन करतीं हुईं आनन्दका अनुभव करतीं रहें.

महामत देखे विवेकसों, हक वस्तर और भूषन ।

सब अंग सोभा अंगों की, ज्यों दिल रुह होए रोसन ॥ ७२

महामतिने श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषणोंका विवेक पूर्वक दर्शन किए हैं। श्रीराजजीके सभी अङ्गों पर सुशोभित वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभा वास्तवमें उनके अङ्गोंके प्रकाशकी ही शोभा है जिससे ब्रह्मात्माओंका हृदय प्रकाशित होता है।

प्रकरण १८ चौपाई १९९

जोवन जोस मुख बीड़ी छवि

फेर फेर पट खोले हुकम, निसबत जान रुहन ।

हक मुख अंग इसक के, ले देखिए अरस अंग तन ॥ १

सभी ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीकी अङ्गना समझकर उनके आदेशने वारंवार उनके हृदयसे अज्ञानका आवरण दूर किया है। इसीलिए अब जागृत होकर पर-आत्माके द्वारा श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभाका प्रेम पूर्वक दर्शन करें।

हक बरनन जिमी सुपने, हुकमें कह्या नेक सोए ।

हक इसक एक तरंग से, रुह निकस न सके कोए ॥ २

श्रीराजजीके आदेशने ही इस स्वप्नवत् जगतमें उनके स्वरूपका संक्षिप्त वर्णन किया है। वस्तुतः श्रीराजजीके प्रेमकी एक तरङ्गमात्रसे भी ब्रह्मात्माएँ बाहर नहीं निकल सकतीं हैं।

सुन्दर मुख मासूक का, और अंग सबे सुन्दर ।

सो क्यों छूटे आसिक से, जब चूभे हैडे अंदर ॥ ३

प्रियतम धनीका मुखारविन्द तथा अन्य सभी अङ्ग प्रत्यङ्ग अत्यन्त सुन्दर हैं। जब ये सभी अङ्ग अनुरागिनी आत्माके हृदयमें अङ्कित हो गए हैं तो वे उनके हृदयसे कैसे छूट सकेंगे ?

क्यों कहूँ मुख की सलूकी, और क्यों कहूँ सुंदरता ।

ए आसिक जाने मासूक की, जिन घट लगे ए घाए ॥ ४

श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभा तथा सुन्दरताका वर्णन कैसे करें ? जिसका हृदय उनके प्रेममें घायल हो गया हो ऐसी अनुरागिनी आत्मा ही अपने प्रियतमकी शोभाको जान सकती है.

मुख चौक सलूकी क्यों कहूँ, कछू जाने रुह के नैन ।

ए सुख सोई जानही, जासों हक करें सामी सैन ॥ ५

श्रीराजजीके तेजोमय मुख मण्डलकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? आत्मदृष्टिसे ही इसका थोड़ासा अनुभव किया जा सकता है. इसकी सुखद अनुभूति वही आत्मा प्राप्त कर सकती है जिसको श्रीराजजी अपने नयनोंसे सङ्केत करते हैं.

सुख पाइए देखें हरवटी, मुख लांक लाल अधुर ।

दंत जुबां बीच तंबोल, मुख बोलत मीठी मधुर ॥ ६

श्रीराजजीका चिबुक, मुखारविन्द, लालिमायुक्त अधरोष्ट, अधरोष्ट एवं चिबुकके मध्यकी गहराई, दन्तावलि तथा जिह्वाके मध्यमें स्थापित ताम्बूल एवं उनकी मधुरवाणीके द्वारा अत्यन्त आनन्दका अनुभव होता है.

मुख मूँदे अधुर बोलत, बानी प्रेम रसाल ।

आसिक को छवि चूभ रही, जानों हैडे निस दिन भाल ॥ ७

श्रीराजजी अपने मुकुलित मुखसे मन्द मुस्कानके साथ प्रेमरसपूर्ण वाणी बोलते हैं. उनकी छवि अनुरागिनी आत्माके हृदयमें इस प्रकार अङ्कित होती है मानों शलाकाके समान रात दिन चुभ रही हो.

सहूर कीजे हक अंग रंग, कै तरंग लाल उजल ।

देत गौर सुख सलूकी, सोभा क्यों कहूँ बिना मिसल ॥ ८

श्रीराजजीके दिव्य तेजोमय अङ्गोंके गौरवर्णके सम्बन्धमें यदि विवेक पूर्वक विचार करेंगे तो उनके लालिमायुक्त गौर वर्णसे उज्ज्वल तरङ्गें उठती हुई दिखाई देती हैं. सुन्दर शोभायुक्त उनके गौरवर्णकी शोभाके लिए कौन-सा उदाहरण दिया जाए.

हक मुखथें बोलें वचन, स्वर मीठा निकसत ।

सो सुनत अरस रुहों को, दिल उपजत हक लजत ॥ ९

जब श्रीराजजी अपने मुखारविन्दसे मधुर वचन बोलते हैं तो उनकी वाणी अत्यन्त मधुर होती है. उसे सुनकर ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अलौकिक आनन्दकी अनुभूति होती है.

हक स्वर कैसा होएसी, और कैसी होसी मुख बान ।

सुख बातें क्यों कहूं रसना, चाहे दिल सुनने सुभान ॥ १०

श्रीराजजीका स्वर कैसा होगा, उनकी वाणी कैसी होगी तथा उनकी रसमयी रसनासे विनिश्चित आनन्दसे ओत-प्रोत वचनोंको किस उपमासे अलंकृत किया जाए ? यह हृदय सदैव अपने प्रियतम की वाणी सुननेके लिए लालायित रहता है.

हक नेक नैन मरोरत, होत रुहों सुख अपार ।

तो बात कहें सुख हक के, सो क्यों कहूं सुख सुमार ॥ ११

श्रीराजजी अपने नयनोंकी चितवनको जरा-सी तिरछी करते हैं तो ब्रह्मात्माओंको इससे अपार आनन्दका अनुभव होता है. जब वे नयनोंके सङ्केतके द्वारा कुछ कहते हैं तब उससे प्राप्त सुखोंका वर्णन कैसे करें ?

एक रोम रोम हक अंग के, सब सुखै के अंबार ।

तो सुख सरूप नख सिखलों, रुहें कहा करें दिल विचार ॥ १२

श्रीराजजीके अङ्गके रोम-रोम सुखोंका ही भण्डार है तो ब्रह्मात्माएँ उनके नखसे लेकर शिखा तकके सम्पूर्ण शरीरके अनन्त सुखोंका चिन्तन अपने हृदयसे कैसे कर सकतीं हैं ?

ज्यों रोम सुपन के अंग को, त्यों रोम न अरस अंग पर ।

सब अंग इसक वास्ते, रोम रोम कहे यों कर ॥ १३

जैसे स्वप्नके शरीर पर रोम हुआ करते हैं उस प्रकार परमधामके स्वरूपोंके अङ्ग पर रोम नहीं होते हैं. श्रीराजजीके अपार प्रेमके लिए ही उनके अङ्गोंमें रोम-रोमकी बात कही गई है.

अरस पसु या जानवर, रोम होते तिन अंग ।
रोम न रुहों अंग पर, रुहों अंग जानों अरस नंग ॥ १४

परमधामके पशु अथवा पक्षियोंके अङ्ग पर ही रोम होते हैं किन्तु
ब्रह्मात्माओंके अङ्गपर रोम नहीं होते हैं। इन ब्रह्मात्माओंके अङ्गोंको
परमधामके रत्नकी भाँति समझना चाहिए.

जवेर पैदा जिमीय से, यों अरस में पैदा न होत ।
ए खूबी हक जहूर की, सो लिए खड़ी सदा जोत ॥ १५
जैसे इस नश्वर जगतके रत्न भूमिसे उत्पन्न होते हैं किन्तु परमधामके रत्न
इस प्रकार पैदा नहीं होते हैं। यह तो श्रीराजजीके दिव्य प्रकाशकी विशेषता
है जो सदा सर्वदा चमकता ही रहता है.

याको नंग निमूना न दीजिए, अरस रुहों वाहेदत ।
इनें मिसाल न कोई लागहीं, जाकी हक हादी जात निसबत ॥ १६
इन ब्रह्मात्माओंके लिए रत्नोंकी उपमा भी नहीं दी जा सकती है क्योंकि ये
सभी एकात्मभाव (एकदिली) में ओत-प्रोत हैं। इनके लिए कोई उदाहरण
ही दिया नहीं जा सकता। ये तो श्रीराजजी तथा श्रीश्यामाजीकी अङ्गभूता हैं.

जो देऊं निमूना अरस का, तो रुहों लगत न कोई बात ।
रुहों अंग हादीय का, हादी अंग हक जात ॥ १७
यदि इनके लिए परमधामकी कोई उपमा देते हैं तो भी वह उपयुक्त नहीं
होती है क्योंकि सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीश्यामाजीकी अङ्गभूता हैं एवं स्वयं
श्रीश्यामाजी श्रीराजजीकी अभिन्न अङ्ग हैं.

तिरछा नेक जो मुसकत, तो मार डारत मुतलक ।
जो कदी सनमुख होए यों रुह सों, तो क्यों जीवे रुह आसिक ॥ १८
श्रीराजजी जब मुस्कराते हुए तिरछी चितवनीसे देखते हैं तो निश्चय ही
आत्माएँ घायल हो जाती हैं। जब कभी वे इस स्वरूपमें आत्माओंके सम्मुख
हो जाते हैं अर्थात् उन्हें इस स्वरूपके दर्शन हो जाते हैं तो वे स्वयंको कैसे
सम्हाल सकेंगी ?

आसिक अटके सब अंगों, देख देख रूप सलूक ।

एक नेक अंग के सुख में, रुह हो जात टूक टूक ॥ १९

अनुरागिनी आत्माकी दृष्टि प्रियतम धनीके अङ्गोंकी शोभा तथा स्वरूपकी सुन्दरता देखकर स्थिर हो जाती है. उनके मात्र एक अङ्गके सुखमें भी वह अत्यधिक आनन्द विभोर हो जाती है.

सब अंग देखे रस भरे, प्रेम के सुख पूरन ।

रुह सोई जाने जो देखहीं, ए पीवत रस मोमन ॥ २०

अनुरागिनी आत्माएँ श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंको प्रेम तथा मस्तीसे परिपूर्ण देखतीं हैं. उनसे उन्हें अपार सुखका अनुभव होता है. जिन्होंने श्रीराजजीके स्वरूपके दर्शन किए हैं वे ब्रह्मात्माएँ ही उनके प्रेम रसका पान करतीं हैं.

गौर गाल मुख उजल, माहें गेहेरी लालक ले ।

ए जुबां सुख सोभा क्यों कहे, अरस अंग हक के ॥ २१

श्री राजजीका कपोल गौर वर्णका है एवं मुख अत्यन्त उज्ज्वल है, उनमें गहन लालिमा भी सुशोभित है. इस नश्वर जिह्वाके द्वारा परमधामके स्वरूपकी शोभाका वर्णन कैसे करें ?

रुह आसिक जिन अंग अटकी, छूटत नहीं क्योंए सोए ।

ए किसी बातों आसिक सों, अंग मासूक जुदे न होए ॥ २२

अनुरागिनी आत्माकी दृष्टि श्रीराजजीके जिस अङ्गमें स्थिर हो जाती है वह वहाँसे हटती ही नहीं है. अनुरागिनी आत्माएँ अपने प्रियतम धनीके अङ्गोंसे कभी भी अपनी दृष्टि नहीं हटा सकतीं हैं.

जेते अंग मासूक के, रुह आसिक रहे तिन माहें ।

रुह आसिक और कहूं ना टिके, अपने अंग में भी नाहें ॥ २३

अनुरागिनी आत्माएँ अपने प्रियतम धनीके अङ्गोंके चिन्तनमें ही लीन रहतीं हैं. ऐसी आत्माओंकी दृष्टि अन्यत्र कहीं भी स्थिर नहीं हो सकती. यहाँ तक कि उन्हें अपने शरीरकी भी सुधि नहीं होती है.

करते बातें प्यारी मासूक, हाथ करें चलवन ।

नेत्र भी वाही तरह, चूभ रेहेत रुह के तन ॥ २४

जब प्रियतम धनी अपनी आत्माओंके साथ वार्तालाप करते हुए अपने हस्तकमलोंको हिलाते हैं तो उस समय उनकी दृष्टि भी ब्रह्मात्माओंकी ओर होती है, और वह आत्माओंके हृदयमें चुभ जाती है.

सब अंग हक के इसक भरे, क्यों कर जाने जाए ।

होए रुह जागृत अरस की, ताए हुकम देवे बताए ॥ २५

श्रीराजजीके सभी अङ्ग-प्रत्यङ्ग प्रेमसे परिपूर्ण हैं. उनकी महिमाको कैसे जाना जा सकता है ? परमधामकी जो आत्माएँ जागृत होंगी उनको ही श्रीराजजीके आदेशसे उनकी महिमाकी सुधि होगी.

जब बात करें हक रुह सों, तब अंग सबे उलसत ।

करते बातें छिपे नहीं, हक अंगों इसक सिफत ॥ २६

जब श्रीराजजी अपनी आत्माओंसे वार्तालाप करते हैं तब ब्रह्मात्माओंके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंमें उमङ्ग भर जाती है. उस समय श्रीराजजीके अङ्गोंमें भरा हुआ प्रेम भी किसी प्रकार छूपा नहीं रह सकता.

नेत्र कहे और नासिका, हाथ कहे और मुख ।

और अंग सबे याही विध, कहेते बातें दें सब सुख ॥ २७

इस प्रकार मैंने यहाँ पर श्रीराजजीके अङ्गोंमें नेत्रकमल, नासिका, हस्तकमल एवं मुखारविन्दका वर्णन किया है. शेष अङ्ग भी इसी प्रकारसे मात्र वार्तालापमें भी अपार सुख प्रदान करते हैं.

सब अंग करत इसारतें, हक अंग रुह सों लगन ।

ए बारीक बातें अरस की, कोई जाने जागृत मोमन ॥ २८

श्रीराजजीके सभी अङ्ग ब्रह्मात्माओंके साथ प्रेमपूर्वक सङ्केत करते हैं. परमधामके इन सूक्ष्म रहस्योंको कोई जागृत ब्रह्मात्मा एँ ही जान सकती हैं.

हक अंग जोत की क्यों कहूं, जो नूर नूर का नूर ।

अंग मीठे प्यारे सुख सलूकी, दे हक हुकम सहूर ॥ २९

श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी ज्योतिका वर्णन कैसे करें ? वे तो प्रकाश ही प्रकाशसे परिपूर्ण हैं. उनके ये अङ्ग मधुर, प्रिय तथा सुखदायी हैं. उनके आदेशसे ही इनके सन्दर्भमें विचार पूर्वक जाना जा सकता है.

कैसी मीठी बानी हक की, कहे प्रेम वचन श्री मुख ।

निसबत जान रमूज के, देत रुहों को सुख ॥ ३०

श्रीराजजीके मुखारविन्दसे विनिसृत वाणी कितनी मधुर है. वे अपने श्रीमुखसे प्रेमपूर्ण वचन कहते हैं. वे ब्रह्मात्माओंको अपनी अङ्गना समझकर उन्हें अपार सुख प्रदान करते हैं.

हक प्रेम वचन मुख बोलते, जोर आवत है जोस ।

ए बानी रुह को विचारते, हाए हाए अजूँ उडे ना फरामोस ॥ ३१

श्रीराजजी जब अपने श्रीमुखसे प्रेमपूर्ण वचन बोलते हैं तब उन्हें बड़ा जोश आता है. इन वचनोंको विचार करते हुए भी खेदकी बात है कि अभी भी ब्रह्मात्माओंसे यह भ्रमरूपी नींद दूर नहीं हुई है.

जब जोस आवे हक बोलते, प्रेम सों गलित गात ।

तिन समें मुख मासूक का, मार डारत निघात ॥ ३२

ब्रह्मात्माओंसे वार्तालाप करते हुए जब श्रीराजजीको जोश आता है तब वे प्रेमसे गलितगात्र हो जाते हैं. उस समय उनके मुखारविन्दके दर्शन कर ब्रह्मात्माएँ धायल हो जाती हैं.

हक अंग सब नाचत, जोस आवत है जब ।

करें बातें रुह सों उमंगें, मुख छवि देखी चाहिए तब ॥ ३३

ऐसे वार्तालापके समय जब श्रीराजजीको जोश आता है तो उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग सभी नाचने लग जाते हैं. वे अपनी ब्रह्मात्माओंसे बड़ी उमङ्गसे बातें करते हैं. उस समय उनके मुखमण्डलकी छवि देखने योग्य होती है.

जोश हमेसा हक को, रेहेत सदा पूरन ।

पर आसिक देखे इन विधि, रंग चढ़ता रस जोवन ॥ ३४

श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें यह आवेश सदा सर्वदा परिपूर्ण रहता है. किन्तु ब्रह्मात्माएँ उसे प्रतिपल बढ़ता हुआ देखती हैं.

सरूप मुख नख सिखलों, जोवन जिनस जुगत ।

ए आसिक अंग अरस के, चढ़ती जोत देखत ॥ ३५

श्रीराजजीका मुखारविन्द तथा नखसे लेकर शिखा पर्यन्तकी सम्पूर्ण शोभा एवं उसमें दिखाई देने वाली पूर्ण यौवनावस्थाको परमधामकी अनुरागिनी आत्माएँ ही नित्य प्रति बढ़ती हुई देखती हैं.

जोत तेज धात रंग रस, रुह बढ़ता देखे दायम ।

अंग अरस इसी रवेस, यों देखे सूरत कायम ॥ ३६

ब्रह्मात्माएँ परमधामकी ज्योति, तेज, धातु, रङ्ग, रस आदिको नित्य प्रति वृद्धि हो रही देखती हैं. इसी प्रकार उनकी पर-आत्माएँ श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंको भी नित्यप्रति नूतन रूपमें देखती हैं.

चढ़ता रंग रस तो कहूं, जो होए नहीं पूरन ।

पर आसिक जाने मासूक की, नित चढ़ती देखे रोसन ॥ ३७

यदि श्रीराजजीके अङ्गोंमें परिपूर्णता न हो तभी उनकी अभिवृद्धिकी बात होनी चाहिए किन्तु अनुरागिनी आत्माएँ अपने प्रियतम धनीके स्वरूपको नित्य नूतन आभायुक्त देखना चाहती हैं.

एही लछन आसिक के, सब चढ़ते देखे रंग ।

तेज जोत रस धात गुन, और सब पख इंद्री अंग ॥ ३८

अनुरागिनियोंका लक्षण ही यही है कि वे अपने प्रियतम धनीके तेज, जोश, रस, धातु, गुण, पक्ष, इन्द्रियाँ आदि सभी अङ्गोंमें नित्यप्रति बढ़ती हुई शोभाको देखती हैं.

हक रस रंग जोस जोवन, चढता सदा देखत ।
अरस अरवा रुहन को, हक प्रेमें देत लजत ॥ ३९

इस प्रकार श्रीराजजीकी रङ्गमयी छटा, आवेश, आनन्द तथा यौवन प्रति पल निखरता हुआ दिखाई देता है. क्योंकि वे अपनी अनुरागिनी आत्माओंको अपने अपार प्रेमका आनन्द प्रदान करते रहते हैं.

घट बढ अरस में है नहीं, हक पूरन हमेसा ।
हम इसके लें यों अरस में, सब सुख पूरनता ॥ ४०
परमधाममें किसी प्रकारकी न्यूनता अथवा अधिकताका कोई प्रश्न ही नहीं है. श्रीराजजी स्वयं सर्वदा परिपूर्ण हैं. हम ब्रह्मात्माएँ भी वहाँ पर श्रीराजजीसे प्रेमका पूर्ण आनन्द प्राप्त करती हैं.

बीड़ी लई जिन हाथ सों, सोभित पतली अंगुरी ।
तिन बीच जोत नंगन की, अति झलकत हैं मुंदरी ॥ ४१
श्रीराजजीने अपने जिस करकमलसे पानका बीड़ा धारण किया है उसकी पतली अङ्गुलियाँ अत्यन्त सुशोभित होती हैं. उनमें धारण की हुई मुद्रिकाओंके रत्नोंकी ज्योति भी जगमगाती हुई सुशोभित है.

बीड़ी मुख में मोरत, सुंदर हरवटी हंसत ।
सोभा इन मुख क्यों कहूं, जो बीच में बात करत ॥ ४२
अपने श्रीमुखमें पानका बीड़ा धारण कर चबाने लगते हैं तो उनका सुन्दर चिकुक भी मुस्कान करता हुआ दिखाई देता है. इसी बीच जब वे बात करते हैं उस समय उनकी मुखारविन्दकी शोभा अवर्णनीय हो जाती है.

एक लालक तंबोल की, क्यों कहूं अधुर दोऊ लाल ।
दंत सोभित मुख मोरत, खूबी ना इन मिसाल ॥ ४३
श्रीराजजीके मुखारविन्दमें एक तो ताम्बूलकी लालिमा है और उससे भी अधिक उनके अधरोष्टकी लालिमा सुशोभित है. जब वे ताम्बूलको चबाते हैं उस समय उनकी दन्तावलिकी शोभा भी अनुपम हो जाती है.

लाल उजल दोऊ रंग लिए, बीड़ी लेत मुख अंगुरी नरम ।

नेक मुख मूंदे बोलत, अति सुंदर मुख सरम ॥ ४४

जब वे अपनी पतली अङ्गुलियोंसे उज्ज्वल दन्तावलि एवं लालिमायुक्त अधरोष्ठके मध्य मुखमें पानका बीड़ा धारण कर चबाते हैं एवं अधखुले श्रीमुखसे बोलने लगते हैं उस समय उनके मुखारविन्दकी सुन्दरता अनुपम हो जाती है.

नेक खोलें अधुर मुख बोलत, करें प्यारी बातें कर प्यार ।

सो सुख देत आसिक कों, जिनको नहीं सुमार ॥ ४५

अपने श्रीमुखसे वाणीका उच्चारण करते समय वे अपने ओष्ठोंको थोड़ा-सा खोलते हैं और प्रेमपूर्वक प्रेममयी बातें करते हैं. उनकी मधुरवाणी अनुरागिनी आत्माओंको अपार सुख प्रदान करती है.

सुख देत सब अंग मिल, नैन नासिका श्रवन अधुर ।

हंसत हरवटी भौं भृकुटी, सब दें सुख बोल मधुर ॥ ४६

इस प्रकार श्रीराजजीके अङ्गोंमें नयन, नासिका, श्रवणअङ्ग, अधर, मुस्कराता हुआ चिबुक, भृकुटी, भौंहें आदि सभी मधुरवाणीके उच्चारण करते समय अपार सुख प्रदान करते हैं.

अदभुत सलूकी इन समें, आसिक पावत आराम ।

आठों जाम हिरदे रुह के, जानों नक्स चूभ्या चित्राम ॥ ४७

इस समयकी अद्भुत शोभा देखकर अनुरागिनी आत्माको अपार सुखका अनुभव होता है. ब्रह्मात्माके हृदयमें यह अद्वितीय शोभा आठों प्रहर अङ्कित हो जाती है.

फेर फेर ए मुख निरखिए, फेर फेर जाऊं बलिहार ।

ए खूबी खुसाली क्यों कहूं, इन सुख नाही सुमार ॥ ४८

इन आत्माओंको ऐसा लगता है कि बार-बार ऐसे शोभायुक्त मुख मण्डलके दर्शन करें एवं बार-बार उन पर समर्पित हो जाएँ. इस प्रकार श्रीराजजीके मुखारविन्दकी अनुपम शोभाका वर्णन कैसे करें ? उनसे प्राप्त सुखका कोई पारावार ही नहीं है.

अथ बीच आरोगते, मेवा काढ देत मुख थे ।
सरस मेवा केहे देत हैं, आप हाथ मेरे मुख में ॥ ४९
भोजन ग्रहण करते समय बीचमें ही अपने श्रीमुखसे मेवा निकालकर ‘यह
मेवा अत्यन्त सुन्दर है’ कहते हुए उसे स्वयं अपने करकमलोंसे मेरे
(इन्द्रावतीके) मुखमें डाल देते हैं.

रंग रस यों केहेत हूं, ए जो मेहर करत मेहरबान ।
ए भूल गैयां हम लाड सबे, ना तो क्यों रहे छिन बिन प्राण ॥ ५०
इस रङ्गमयी लीलाका वर्णन इसीलिए किया है कि परमकृपालु श्रीराजजी हम
पर अपार कृपा करते रहते हैं किन्तु उनके प्रेम (लाड) को हम इस खेलमें
आकर भूल गई हैं. अन्यथा उनके बिना ये प्राण क्षण भरके लिए भी कैसे
टिके रह सकते.

और काम हक को कोई नहीं, देत रुहों सुख बनाए ।
वाहेदत बिना हक दिल में, और न कछुए आए ॥ ५१
श्रीराजजी अपनी आत्माओंको अपार सुख प्रदान करते हैं. उसके अतिरिक्त
उनका अन्य कोई कार्य नहीं है. वस्तुतः एकात्मभावके अतिरिक्त उनके हृदयमें
अन्य कोई भाव ही नहीं है.

सुख देना लेना रुहों सों, और रुहों सों बेवहार ।
ए अरस बातें इन जिमिएं, कोई बिना रुह न लेवनहार ॥ ५२
ब्रह्मात्माओंको आनन्द प्रदान करना एवं उनसे प्रेमग्रहण करना, उनके साथ
इस प्रकार प्रेमका व्यवहार रखना, यही श्रीराजजीका कार्य है. ब्रह्मात्माओंके
अतिरिक्त अन्य कोई भी परमधामकी इन लीलाओंको ग्रहण नहीं कर सकता
है.

कोई काम न और रुहों को, एक जाने हक इसक ।
आठों जाम चौसठ घड़ी, बिना प्रेम नहीं रंचक ॥ ५३
ब्रह्मात्माओंका भी अन्य कोई काम नहीं है, वे मात्र श्रीराजजीके प्रेमको ही
जानतीं हैं. वे आठों प्रहर चौसठ घड़ी प्रेमके बिना नहीं रह सकतीं हैं.

हक जात वाहेदत जो, छोड़े ना एक दम ।
प्यार करें माहों माहें, वास्ते प्यार खसम ॥५४

ये ब्रह्मात्माएँ एक क्षणके लिए भी श्रीराजजीके साथ एकात्मभाव (एकदिली) को नहीं भूलती हैं. श्री राजजीका अपार प्रेम प्राप्त करनेके लिए वे परस्पर प्रेममें ही मस्त रहती हैं.

हक अंग चलत मुख बोलते, तब जान्या जात गुङ्ग प्यार ।
ए अरवा अरस की जानही, जाको निस दिन एह विचार ॥५५

श्रीराजजी जब अपने मुखारविन्दसे मधुरवाणी बोलते हैं तब उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग चलायमान दिखाई देते हैं. उसी समय उनके अङ्गोंमें निहित प्रेमकी पहचान होती है. परमधामकी आत्माएँ ही इस रहस्यको जान सकती हैं. क्योंकि इनके हृदयमें रात-दिन इसी प्रेमका चिन्तन रहता है.

हक नरम पांउ उठाए के, और धरत जिमी पर ।
ए अरस बीच मोमिन जानही, जिनको खुसबोए आई फजर ॥५६

श्रीराजजी अपने कोमल श्रीचरणोंको उठाकर भूमि पर रखते हैं. उनके श्रीचरणोंकी अद्वितीय शोभाको वे ही ब्रह्मात्माएँ जान सकती हैं जिनके हृदयमें उनका सुगन्धित प्रकाश अङ्कित हो गया होता है.

हक धरत पांउ उठावत, तब जानी जात चतुराए ।
सो समझें हक इसारतें, जो होए अरस अरवाए ॥५७

जब श्रीराजजी अपने श्रीचरण भूमि पर रखकर उठाने लगते हैं तब उनकी सुकोमलता एवं चातुर्यका भान होता है. जो परमधामकी आत्माएँ होंगी वे श्रीराजजीके इन सङ्केतोंको समझ सकती हैं.

कैसे लगें पांउ चलते, वह कैसी होसी भोम ।
चलते देखे हक चातुरी, हाए हाए घाए न लगे रोम रोम ॥५८

जब श्रीराजजी चलने लगते हैं, उस समय उनके चरणोंकी शोभा तथा उस दिव्यभूमिकी शोभा कैसी अनुपम लगती होगी ? इस प्रकार श्री राजजीके चलते समय उनकी चातुर्यपूर्ण गतिको देखकर भी हाय ! ब्रह्मात्माओंका

हृदय घायल नहीं होता है और उनके रोम-रोम बींधे नहीं जाते हैं।

इजार देखत पांउ में, लेत झाँई जामें पर ।

हाए हाए खूबी इन चाल की, ए जुबां कहे क्यों कर ॥ ५९

श्रीराजजीके चलते समय उन्होंने धारण की हुई इजारकी झलक जामे पर पड़ कर अत्यन्त सुशोभित होती है। उनकी चालकी शोभा इतनी सुन्दर है कि यह जिह्वा उसका कैसे वर्णन करेगी ?

स्वर भूषन मधुरे सोहे, ए तरह चलत जो हक ।

ए जो देखे रुह नजर भर, तो चाल मार डारत मुतलक ॥ ६०

उस समय श्रीराजजीके श्रीचरणोंमें सुशोभित आभूषणकी मधुर ध्वनि कर्णप्रिय लगती है। यदि आत्मा श्रीराजजीके चालकी इस अद्वितीय शोभाको दृष्टिमें भरकर देखने लग जाए तो वह तत्काल ही मूर्छित हो जाएगी।

नख अंगूठे अंगुरियां, चलते अति सोभित ।

चाल विचारते अरस की, हाए हाए अरवा क्यों न उडत ॥ ६१

चलते समय श्रीराजजीके अङ्गुष्ठ तथा अङ्गुलियोंके नखकी शोभा झलकती हुई दिखाई देती है। इस विलक्षण गतिके दर्शन करते हुए यह आत्मा इस शरीरको क्यों नहीं छोड़ देती है ?

अरस दिल मोमिन कह्हा, ठौर बड़ी कुसाद ।

हक हादी रुहें माहें बर्सें, असल अरस जो आद ॥ ६२

ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधामकी संज्ञा दी गई है। परमधाम तो अत्यन्त विशाल है। दिव्य परमधाममें श्रीराजजी श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ सदा-सर्वदा विराजमान हैं।

जेता मता हक का, सो सब अरस में देख ।

सो सब मोमिन दिल में, पाइए सब विवेक ॥ ६३

श्रीराजजीकी सम्पूर्ण सम्पदा परमधाममें है। ब्रह्मात्माओंका हृदय भी परमधाम बन जानेसे वे सम्पूर्ण सम्पत्तिको अपने हृदयमें ही प्राप्त करती हैं।

हक हादी रुहें खेलें, उठे बैठें दौड़ें करें चाल ।

ए जाने अरवाहें अरस की, जो रेहेत हमेसा नाल ॥ ६४

परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ करते हैं। इन लीलाओंमें वे उठते हैं, बैठते हैं, चलते हैं तथा क्रीड़ा करते हैं। इन लीलाओंको परमधामकी आत्माएँ ही जान सकतीं हैं जो सर्वदा इनके साथ रहतीं हैं।

ए तोहे कहे हक हुकम, सो तूं देख महामत ।

और कहो रुहन को, जो तेरे तन वाहेदत ॥ ६५

महामति कहते हैं, हे आत्मा ! श्रीराजजीके आदेशने तुझे जो कुछ कहा है तू उसीको हृदयपूर्वक विचार करके देख और परमधामकी अन्य आत्माओंको भी वह बात कह दे जिनके साथ तेरा एकात्मभाव सम्बन्ध है।

प्रकरण १९ चौपाई १०६४

हक मासूक का मुख सागर, मंगलाचरन

हक इलम के जो आरफ, मुख नूरजमाल खूबी चाहें ।

चाहें चाहें फेर फेर चाहें, देख देख उडावें अरवाहें ॥ १

श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके अनुभवी ब्रह्मात्माएँ सर्वदा अपने प्रियतम धनीके मुखारविन्दकी शोभाका बार-बार दर्शन करना चाहतीं हैं एवं उनके दर्शन करती हुई नश्वर शरीरको त्यागना चाहतीं हैं।

एही काम आसिकन का, हक इलम एही काम ।

नूरजमाल का जमाल, छोडें न आठों जाम ॥ २

ब्रह्मज्ञानको प्राप्त करनेवाली अनुरागिनी आत्माओंका यही काम है कि वे अपने प्रियतम धनीके तेजोमय स्वरूपको आठों प्रहर न भूलें।

खाते पीते उठते बैठते, सोवत सुपन जागृत ।

दम न छोडें मासूक को, जाको होए हक निसबत ॥ ३

जिनका मूल सम्बन्ध श्रीराजजीसे है ऐसी ब्रह्मात्माएँ खाते, पीते, उठते,

बैठते, सोते तथा स्वप्नमें या जागृत अवस्थामें सर्वदा अपने प्रियतम धनीके स्वरूपको पल मात्रके लिए भी नहीं भूलती हैं।

हक वरनन फेर फेर करें, फेर फेर एही बात ।

एही अरस रुहों खाना पीवना, एही वतन बिसात ॥ ४

ऐसी आत्माएँ वारंवार श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन करती हैं और उनके सम्बन्धकी ही बातें करती हैं। परमधामकी इन आत्माओंका आहार-विहार ही यही है और वे इसीको परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदा समझती हैं।

जेती रुहें आसिक, रेहेत हक खूबी के माहें ।

रुह को छोड के वजूद, कोई जाए न सके काहें ॥ ५

जितनी अनुरागिनी आत्माएँ हैं वे सदैव श्रीराजजीके स्वरूपके चिन्तनमें ही तल्लीन रहती हैं। ऐसी आत्माओंकी दृष्टि अपने प्रियतम धनीके स्वरूपको छोड़कर कहीं भी नहीं जा सकती है।

एही हक इलम को लछन, आसिकों एही लछन ।

एही इलम इसक के आरफ, सोई अरस रुह मोमन ॥ ६

ब्रह्मज्ञान (तारतम ज्ञान) की विलक्षणता यही है और अनुरागिनी आत्माओंका लक्षण भी यही है। परमधामकी ये ही आत्माएँ ब्रह्मज्ञान तथा पूर्ण प्रेमकी ज्ञाता कहलाती हैं।

मंगलाचरन संपूर्ण

वरनन करो रे रुहजी, मासूक मुख सुंदर ।

कोमल सोभा अलेखे, खोल रुह के नैन अंदर ॥ ७

हे आत्मा ! अब तू अपने प्रियतम धनीके मुखारविन्दकी सुन्दर शोभाका वर्णन कर। उनकी शोभा अत्यन्त कोमल तथा अपार है। तू अपनी अन्तर्दृष्टि खोलकर इस शोभाके दर्शन कर।

ललित लाल मुख सागर, कहूं अचरज के अद्भुत ।

ए क्योंकर आवे वानीय में, ए बका सूरत लाहूत ॥ ८

सागरके समान अत्यन्त गम्भीर श्रीराजजीका मुखारविन्द लालिमायुक्त है।

इसकी अद्भुत शोभा आश्र्यजनक है. दिव्य परमधामके ऐसे स्वरूपकी शोभा शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त हो सकती है ?

मुख गौर झरे कसूंबा, सोभा क्यों कहूं बडो विस्तार ।

रंग कहूं के सलूकी, ए न आवे माहें सुमार ॥ ९

श्री राजजीके गौर मुखमण्डलमें लालिमायुक्त आभा झलकती है. इस अनुपम शोभाका विस्तार बहुत बड़ा है. इसकी रङ्गमयी छटा तथा अद्वितीय शोभाके विषयमें क्या कहें ? इसे शब्दोंकी सीमामें नहीं बाँधा जा सकता है.

कहूं सागर मुख जोत का, के कहूं मेहर सागर ।

के कहूं सागर कलाओं का, जुबा केहे न सके क्योंए कर ॥ १०

श्री राजजीके मुखारविन्दको प्रकाशका सागर कहें, कृपाका सागर कहें अथवा इसे सम्पूर्ण कलाओंका सागर कहें ? यह जिह्वा उसका वर्णन ही नहीं कर सकती है.

मुख चौक कहूं के चकलाई, के सीतल सागर सुख ।

के कहूं सागर रस का, जो नूरजमाल का मुख ॥ ११

इस मुख मण्डलको सुन्दरता, शीतलता एवं सुखका सागर कहें अथवा रसका सागर कहें. यह तो अक्षरातीत धामधनीका मुख मण्डल है.

के कहूं सागर तेज का, के कहूं सागर सरम ।

के नूर सागर कहूं बिलंद, के चंचल गुन नरम ॥ १२

इसे तेजस्वी आभाका सागर कहें, लज्जा (मर्यादा) का सागर कहें अथवा तो विशाल तेजका सागर कहें. इसमें चञ्चलता कोमलता आदि अनेक गुण विद्यमान हैं.

कहूं सजनता के सनकूली, दोस्ती कहूं के प्यार ।

जो जो देखूं नजर भर, सो सब सागर अपार ॥ १३

इनकी सज्जनता, प्रसन्नता, मित्रता एवं प्रेमके सम्बन्धमें क्या कहा जाए ? जिन-जिन गुणोंको भी नजर भरकर देखते हैं सभी सागरके समान अपार दिखाई देते हैं.

सागर कहूं पाक साफ का, के कहूं आबदार ।

हक मुख सागर क्यों कहूं, सब विध पूरन अपार ॥ १४

इसे पवित्र तथा निर्मल सागर कहें अथवा देदीप्यमान उज्ज्वल सागर कहें ?
वस्तुतः श्रीराजजीका यह मुखमण्डल सर्वप्रकारके अपार गुणोंसे युक्त है.

मोमिन दिल कोमल कह्हा, तो अरस पाया खिताब ।

तो जो दिल मोमिन रुह का, तिन कैसा होसी मुख आब ॥ १५

ब्रह्मात्माओंके हृदयको अत्यन्त सुकोमल कहा है. इसीलिए उनको परमधामकी शोभा प्राप्त हुई है. फिर उनकी पर आत्माका हृदय कितना सुकोमल होगा एवं उसके मुख मण्डलकी शोभा कैसी अनुपम होगी ?

तिन रुह के नैन को, किन विध कहूं नूर तेज ।

जो हक नैनों हिल मिल रहे, जाके अंग इसक रेजारेज ॥ १६

ऐसी ब्रह्मात्माओंके नयन कमलकी तेजस्विताका वर्णन कैसे करें ? यदि वे श्रीराजजीके नयनोंसे मिल जाते हैं तो उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें प्रेमकी धारा प्रवाहित होने लगती है.

और हक कदम अति कोमल, पांउ तली जोत अतंत ।

सो रहें रुह नैनों बीच में, सो क्या करे जुबां सिफत ॥ १७

श्रीराजजीके चरणकमल भी अत्यन्त कोमल हैं. उनके चरणतल तेजोमयी आभायुक्त हैं. इनकी अनुपम छवि ब्रह्मात्माओंकी आँखोंमें समाई हुई रहती है. इनकी दिव्य शोभाका वर्णन कैसे करें ?

केहेवत हुकम इन जुबां, पर ए खूबी कही न जाए ।

ए कहे बिना भी ना बने, बिन कहें रुह बिलखाए ॥ १८

श्रीराजजीका आदेश ही इस जिह्वाके द्वारा यह शोभा व्यक्त कर रहा है किन्तु उनकी अनुपम छविका वर्णन नहीं हो सकता है. वर्णन किए बिना भी नहीं रहा जाता क्योंकि उनकी महिमाका गुणगान किए बिना यह आत्मा व्याकुल हो जाती है.

इन नैनों सुख बका न देख्या, सुन्या हादियों के मुख ।

सुनी बानी जुबां कहे ना सके, जुबां कहे देख्या सुख ॥ १९

इन नयनोंसे अखण्ड सुखके दर्शन नहीं हुए हैं. अपने गुरुजनोंके मुखारविन्दसे ही श्रीराजजीकी दिव्य शोभाका वर्णन सुना है. मात्र सुनकर यह जिह्वा उनका वर्णन नहीं कर सकती है. यह तो देखी हुई वस्तुका ही वर्णन कर पाएगी.

कहूँ नूर तेज रोसनी, याकी जोत गई अंबरलों चल ।

माहें गुन गर्भित कै सागर, क्यों कहे बिना अंतर बल ॥ २०

श्रीराजजीके मुखमण्डलका प्रकाश, तेजस्विता तथा ज्योतिर्मयी आभाके विषयमें क्या कहें ? यह ज्योति तो आकाशको भी व्यास करती है. इनके अन्दर सागरके समान अनेक गुण गर्भित हैं. आत्मिक शक्तिके बिना उनका वर्णन कैसे हो सकता है ?

किन विध कहूँ मुख मांडनी, कहूँ सनकूली के सुख पुंज ।

के कहूँ आनंद सागर पूरन, गरूआ गंभीर नूर गंज ॥ २१

श्रीराजजीके इस मुखमण्डलकी शोभाका वर्णन कैसे करूँ ? इसे प्रसन्नवदन कहूँ सुखोंका सागर कहूँ, अथवा आनन्द सागरसे परिपूर्ण कहूँ ? इसमें तो आनन्दका गहन एवं गम्भीर सागर तेजपुञ्जके समान समाया हुआ है.

ए सागर सरूपी मुख मासूक, कै खूबी खुसाली अनेक ।

कै रंग तरंग किरनें उठें, ए वही जाने गिनती विवेक ॥ २२

इस प्रकार सागरके समान गहन श्रीराजजीका मुखमण्डल विभिन्न प्रकारकी शोभाओंसे परिपूर्ण है. इसमें विभिन्न प्रकारके रङ्गोंकी तरङ्गें उठती हैं. वस्तुतः इनकी गणना तो वे स्वयं ही कर सकते हैं.

इन मुख सागर में कै सागर, सुख आनंद अपार ।

कै सागर सुख सलूकियां, माहें कै गंज अपार अंबार ॥ २३

इस मुखमण्डलके सागरमें अनेक सागर भरे हुए हैं, जिनसे अपार सुख तथा आनन्द प्राप्त होता है. इसकी शोभामें अनेक प्रकारके सुख सागर तथा इसकी आभामें अनेक प्रकाशपुञ्ज समाए हुए हैं.

कोई मोमिन केहेसी ए क्यों कह्या, हक मुख सोभा सागर ।
सूछम सरूप अति कोमल, ललित किसोर सुंदर ॥ २४
जो अरवा होए अरस की, सो लीजो दिल धर ।
सूछम सूरत सोभा बड़ी, सो सुनियो पड उत्तर ॥ २५

कोई ब्रह्मात्मा पूछ सकती है कि श्रीराजजीके मुखारविन्दको सागरकी उपमा क्यों दी गई है ? उनका स्वरूप तो अत्यन्त सूक्ष्म, अति कोमल, ललित, किशोर तथा अति सुन्दर है. जो परमधामकी ब्रह्मात्माएँ हैं वे इस बातको हृदयमें धारण करें, श्रीराजजीके स्वरूपकी शोभा सूक्ष्मसे सूक्ष्म तथा विशालसे विशाल है. यही उनके प्रश्नोंका उत्तर है.

कह्या निमूना एक भाँत का, अंग खूबी इसक सागर ।
खुसबोए नरम चकलाइयां, सब सागर कहे यों कर ॥ २६

श्रीराजजीकी इस दिव्य शोभाके लिए यही एक उदाहरण दिया है कि उनके अङ्गोंकी विशेषता प्रेम सागरकी भाँति अपार है. उनमें सुगन्धि, कोमलता तथा सुन्दरता अत्यधिक होनेसे उन्हें सागरकी उपमा दी गई है.

जो रंग कहूं गौर का, तो सागर मेर तरंग ।
जो कहूं लाल मुख अधुर, हुए सागर लाल सुरंग ॥ २७

यदि श्रीराजजीके मुख मण्डलको गौरवर्णका कहें तो भी उसमें सागरके समान ऊँची-ऊँची पर्वतोंकी भाँति तरङ्गे दिखाई देती हैं. यदि इस मुख मण्डलको तथा अधरोष्ठको लालिमायुक्त कहें तो उनसे निकलती हुई आभा लालिमायुक्त सागरकी भाँति सुशोभित होती है.

हक के मुख का नूर जो, सो नूरै सागर जान ।
तेज जोत या सलूकियां, सोभा सागर भार्या आसमान ॥ २८

श्रीराजजीके मुखारविन्दका प्रकाश ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह प्रकाशका सागर (नूर सागर) हो. इसी प्रकार उनके मुखण्डलकी तेजस्विता, ज्योति तथा सुन्दरताकी शोभा सागरके समान है.

सोभा हक सूरत की, सागर भी कहे न जाए ।

ए सोभा अति बड़ी है, पर सो आवे नहीं जुबांए ॥ २९

श्रीराजजीके स्वरूपकी अपार शोभाको सागरके समान भी नहीं कहा जा सकता. यह तो सागरसे भी विशेष है क्योंकि उसे जिह्वाके द्वारा व्यक्त ही नहीं किया जा सकता है.

सागर कहे यों जान के, कहे दुनियां में बडे ए ।

पड़या सागर से ना निकसे, कही अंग सोभा इन वास्ते ॥ ३०

इसे सागर इसीलिए कहा है कि इस नक्षर जगतमें सागर ही सबसे विशाल है एवं सागरमें ढूब जाने पर उससे निकला भी नहीं जा सकता. इसीलिए इन अङ्गोंकी शोभाको सागरकी उपमा दी गई है.

यों लग्या आसिक एक अंग को, सो तहां ही हुआ गलतान ।

इनसे कबूं ना निकसे, तो कहे सागर अंग सुभान ॥ ३१

अनुरागिनी आत्मा श्रीराजजीके एक अङ्गकी शोभा देखने लगती है तो वह उसीमें निमग्न हो जाती है. वह कभी भी उससे बाहर नहीं निकल सकती. इसीलिए श्रीराजजीके अङ्गको सागर कहा है.

ए रस रंग उपले केते कहूं, कै विध जिनस जुगत ।

फेर फेर देख देख हीं, रूह क्योंए न होए त्रपत ॥ ३२

बाह्यदृष्टिसे देखने पर श्रीराजजीके मुखारविन्दमें विभिन्न प्रकारके रस तथा रङ्गकी शोभा दिखाई देती है. उसे वारंवार देखने पर भी यह आत्मा किसी भी प्रकार तृप्त नहीं होती है.

सेहेज अंदर के पाइए, मुख देखें हक सूरत ।

रस बस एक हो रहीं, जो रूहें माहें खिलवत ॥ ३३

यदि अन्तर्दृष्टिसे देखें तो श्रीराजजीके मुखमण्डल तथा सम्पूर्ण स्वरूपके रङ्ग-रस एकरस दिखाई देते हैं. स्वयं ब्रह्मात्माएँ भी इसी अन्तरङ्ग भावमें अवस्थित हैं.

जो गुन हक के दिल में, सो मुख में देखाई देत ।
सो देखें अरवाहें अरस की, जो इत हुई होए सावचेत ॥ ३४
श्री राजजीके हृदयके गुण उनके मुखमण्डल पर स्पष्ट दिखाई देते हैं.
परमधामकी जो आत्माएँ तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत हो गई हैं वे ही इन
गुणोंका दर्शन कर सकती हैं.

मुख बोले पीछे पाइए, जो दिल अंदर के गुन ।
पर मुख देखें पाया चाहे, जो अंदर गुझ रोसन ॥ ३५
श्रीराजजीके हृदयके सभी गुण उनकी मधुर वाणीके द्वारा प्राप्त होते हैं. किन्तु
मेरी आत्मा उन सभी गूढ़ गुणोंको मात्र उनके मुखारविन्दके दर्शनसे ही प्राप्त
करना चाहती है.

जो गुन हिरदे अंदर, सो मुख देखें जाने जाए ।
ऊपर सागरता पूरन, ताथें दिल की सब देखाए ॥ ३६
श्रीराजजीके हृदयमें जितने गुण विद्यमान हैं वे मुखारविन्दसे ही देखे जा
सकते हैं. क्योंकि सभी गुण उनके मुखारविन्दमें ही सागरकी भाँति पूर्णतया
प्रकाशित होनेसे हृदयके सभी गुण भी उसीमें प्रकट हुए दिखाई देते हैं.

मुख मीठा सागर पूरन, मुख मीठा सागर बोल ।
मेहर सागर दृष्टि पूरन, लई इसक सागर माहें खोल ॥ ३७
श्रीराजजीका मधुर मुखमण्डल सागरके समान परिपूर्ण है एवं उनकी
मधुरवाणी भी सागरके समान है. उनकी कृपादृष्टि भी सागरके समान परिपूर्ण
है. ये सम्पूर्ण सागर उनके प्रेमसागरमें समा जाते हैं.

यों गुन सागर केते कहूं, जो देखत सुख के रंग ।
कै सुख नेहरें किरना चलें, कै सागर सुख तरंग ॥ ३८
इस प्रकार सागरके समान श्रीराजजीके अपार गुणके विषयमें क्या कहें ?
इनमें विभिन्न प्रकारके सुखोंकी रङ्गमयी छटा विद्यमान है. इन सागरोंसे
अनेक प्रकारके सुखोंकी नहरें, किरणें तथा तरङ्गें चलती रहती हैं.

कै रस रंग एक गौर में, एक रंग माहें कै रस ।
क्यों वरनों आगे मोमिनों, ए मुख मासूक अजीम अरस ॥ ३९

श्रीराजजीके मुख मण्डलके एक ही गौर वर्णमें अनेक प्रकारके रङ्ग तथा रस समाए हुए हैं। इन एक-एक रंगमें अनेक रसोंका आनन्द है। यह तो परमधामके स्वामी श्रीराजजीके मुख मण्डलकी शोभा है। ब्रह्मात्माओंके समक्ष इसका वर्णन कैसे किया जाए ?

एक सलूकी में कै चकलाइयाँ, एक चकलाइएं कै सलूक ।
ए सरूप केहते आगे मोमिन, दिल होत नहीं टूक टूक ॥ ४०

श्रीराजजीके मुख मण्डलकी मात्र आकृतिमें ही अनेक विशालताएँ हैं तो प्रत्येक विशालतामें अनेक सुन्दर आकृतियाँ भी समाहित हैं। ब्रह्मात्माओंके समक्ष इस दिव्य स्वरूपका वर्णन करते हुए यह हृदय क्यों टुकड़े-टुकड़े नहीं हो रहा है ?

दोऊ तरफ सोभा कान भूषन, बीच नासिका सोभे दोऊ नैन ।
तिलक निलाट अति उजल, दोऊ अधुर मधुर मुख बैन ॥ ४१

श्रीराजजीके मुख मण्डलमें दोनों ओरके श्रवण अङ्गोंके आभूषणोंकी अपार शोभा है। मध्यमें नासिका तथा उसके दोनों ओर नयनोंकी शोभा है। निलाट पर अत्यन्त उज्ज्वल तिलक सुशोभित है दोनों ओष्ठ तथा मुखारविन्दसे अत्यन्त मधुर वाणी निकलती है।

सिर मुकट एक भांत का, क्यों कहूं जुबां रंग नंग ।
ना देख सकों नूर नजरों, कै किरने उठें तरंग ॥ ४२

श्रीराजजीके सिर पर विशेष प्रकारका मुकुट सुशोभित है। उनमें जड़ित रत्नोंके रङ्गोंका वर्णन कैसे करूँ ? उनसे निकली हुई किरणोंकी अनेक प्रकारकी तरङ्गें हैं जिनके दिव्य प्रकाशको नैनोंसे देखा नहीं जा सकता है।

केहे केहे जुबां एता कहे, जो जोत भरया अवकास ।
आसमान जिमी भर पूरन, अब किन विध कहूं प्रकास ॥ ४३

उसके विषयमें बार-बार कहने पर भी यह जिह्वा इतना ही कह सकती है

कि इन रत्नोंकी ज्योतिसे पूरा आकाश परिपूर्ण है. जब आकाश और भूमि ही इन किरणोंसे भरपूर हैं तो इस प्रकाशको अब शब्दोंकी सीमामें किस प्रकार बाँधा जाए ?

इन विधि सोभा मुकट की, ए जुबां क्यों करे वरनन ।

सिर सोभे नूरजमाल के, नीके देखें रुह मोमन ॥ ४४

इस प्रकार यह जिह्वा मुकुटकी अद्वितीय शोभाका वर्णन कैसे कर सकती है ? यह तो श्रीराजजीके सिर पर शोभायमान है. इसको भलीभाँति देखकर ब्रह्मात्माएँ आनन्दित होती हैं.

ए नंग जवेर केहेत हों, सो सबद सुपन जिमी ले ।

ए अरज जवेर भी क्यों कहिए, जो सिनगार हक बका के ॥ ४५

स्वप्नवत् जगतके शब्दोंका आश्रय लेकर इन दिव्य रत्नोंका वर्णन किया जा रहा है. अन्यथा परमधामके इन रत्नोंका वर्णन कैसे हो सकता है ? ये तो स्वयं अक्षरातीत परमात्माके शृङ्गारके रत्न हैं.

होत जवेर पैदा जिमी से, नंग अरस में इन विधि नाहें ।

जोत पूर्न अंग ले खड़ी, रुह जैसी चाहे दिल माहें ॥ ४६

इस नक्षर जगतके रत्न भूमिसे उत्पन्न होते हैं किन्तु परमधाममें ऐसी स्थिति नहीं हैं. परमधाममें ब्रह्मात्माएँ जैसी इच्छा रखतीं हैं उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग उसी प्रकारकी आभासे युक्त हो जाते हैं.

असल तन जिनों अरस में, सो कर लीजो दिल विचार ।

हक के सिर का मुकट, सो सोभा क्यों आवे माहें सुमार ॥ ४७

जिनकी पर-आत्मा परमधाममें है ऐसी आत्माएँ हृदयपूर्वक विचार करें. श्रीराजजीके मुकुटकी शोभा शब्दोंकी सीमामें कैसे आ सकती है ?

योंही है बीच अरस के, जिनों जो सोभा प्यारी लगत ।

हर रुहें अरस अजीम की, दिल माफक देखत ॥ ४८

परमधामकी यह स्थिति है कि जिनको जो शोभा अच्छी लगती है वही उनके

समक्ष उपस्थित हो जाती है. परमधामकी प्रत्येक आत्मा अपनी इच्छानुसार शोभा देखती है.

तुम इत भी माफक इसक के, देखियो कर सहूर ।
हिसाब न सोभा मुकट की, ए जुबां क्या करे मजकूर ॥ ४९
हे ब्रह्मात्माओ ! तुम इस जगतमें भी प्रेमपूर्वक विचार करके देखो.
श्रीराजजीके मुकुटकी शोभा अपरंपार है. यह जिह्वा कैसे उसका वर्णन कर सकेगी ?

हक सूरत सलूकी क्यों कहूं, महंमदें कही अमरद ।
किसोर कही मसीय ने, सोभा कही न जाए माहें हद ॥ ५०
श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपकी सुन्दरताका वर्णन कैसे करें ? रसूल मुहम्मदने उनको अमरद सूरत कहा है. इसी प्रकार सदगुरु श्री देवचन्द्रजीने उनको किशोर स्वरूप कहा है. नश्वर जगतमें ऐसे दिव्य स्वरूपकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती है.

अति सुन्दर सूरत अरस की, ताके क्यों कहूं वस्तर भूषण ।
जामा पटुका इजार, माहें सिफत न आवे सुकन ॥ ५१
परमधामके स्वरूपकी शोभा ही अत्यन्त सुन्दर है. उनके वस्त्र तथा आभूषणके सम्बन्धमें क्या कहा जाए ? श्रीराजजीके जामा, पटुका एवं इजारकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती है.

केहे केहे मुख एता कहे, नूरै के वस्तर ।
मैं केहेती हौं बुध माफक, ज्यादा जुबां चले क्यों कर ॥ ५२
बार-बार कहने पर भी जिह्वासे इतना ही कहा जाएगा कि ये सभी वस्तुएँ प्रकाशमयी हैं. मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार इनका वर्णन किया है. जिह्वाके द्वारा इससे अधिक वर्णन नहीं हो सकता है.

सोभा सलूकी मुख की, और सलूकी भूषण ।
और सलूकी वस्तर की, ए जाने अरवा अरस के तन ॥ ५३
श्री राजजीके मुख मण्डलकी, उनके आभूषणोंकी, उनके वस्त्रोंकी शोभा

अत्यन्त सुन्दर है. परमधाममें स्थित पर-आत्मा ही उनका प्रत्यक्ष अनुभव कर सकती है.

रंग वस्तरों तो कहूं, जो दस बीस रंग होए ।

इन सुपन जिमी जो वस्तर, तामें कै रंग देखत सोए ॥ ५४

इन वस्त्रोंके रङ्गोंका वर्णन तभी सम्भव होगा जब इनका रङ्ग दस अथवा बीस प्रकारका हो. इस स्वप्नवत् जगतके वस्त्रोंमें भी अनेक प्रकारके रङ्ग होते हैं.

तो अरस वस्तर क्यों रंग गिनों, और करके दिल अटकल ।

बेसुमार ल्याऊं सुमार में, यों मने करत अकल ॥ ५५

इसलिए परमधामके वस्त्रोंके रङ्गके विषयमें अनुमानके आधार पर क्या कहा जाए ? इन अपरिमित रङ्गोंको सीमित संख्यामें निबद्ध करनेके लिए मेरी बुद्धि स्वीकार नहीं करती है.

है बड़ी लडाई इन बात में, जब सहूर करत अरस दिल ।

रुह तो मेरी इत है नहीं, हुक्म केहेवत ऊपर मजल ॥ ५६

जब धाम हृदयसे विचार करते हैं तो इस बात पर मतभेद दिखाई देता है. क्योंकि मेरी मूल (पर) आत्मा तो यहाँ पर है ही नहीं. श्रीराजजीका आदेश ही मुझसे यह वर्णन करवा रहा है.

जामा अंग को लग रह्या, हार दुगदुगी हैडे पर ।

ऊपर अति झीनी झलकत, जुड बैठी चादर ॥ ५७

श्री राजजीके दिव्य अङ्ग पर स्वेत रङ्गका जामा सुशोभित है. कण्ठ पर कण्ठहार एवं दुगदुगीकी अनुपम शोभा है. इस जामेके ऊपर अत्यन्त सूक्ष्म संरचना वाली चादर शोभायमान है.

जामे ऊपर जो भूषन, जो कंठ पेहेरे हैं हार ।

सो कै नंग जंग करत हैं, अवकास न माए झलकार ॥ ५८

जामाके ऊपर विभिन्न आभूषण सुशोभित हैं. कण्ठमें कण्ठहार सुशोभित हैं

उनके विभिन्न रत्नोंका प्रकाश परस्पर द्वन्द्व करता है. इनकी ज्योति पूरे आकाशमें भी नहीं समाती है.

याही जिनस बाजूबंध, और फुँदन लटकत ।

ए सबे हैं एक रस, पर रंग कै विध जंग करत ॥ ५९

यही स्थिति भुजबन्ध तथा उनमें लटकते हुए फुँदनोंकी है. वैसे तो ये सब एक ही प्रकारके हैं किन्तु इनसे निकलती हुई विभिन्न रङ्गोंकी किरणें परस्पर द्वन्द्व करती हुई सुशोभित हैं.

हस्तकमल कांडों कडे, माहें कै रंग कै बल ।

सो रूह लेवें विचार के, आगूं चले न जुबां अकल ॥ ६०

हस्तकमलकी कलाईमें कडें सुशोभित हैं. उनमें विभिन्न प्रकारके रङ्ग तथा बल झालकते हैं. आत्मा ही इनकी अद्वितीय शोभाको विवेक पूर्वक ग्रहण कर सकती है. इससे अधिक वर्णन करनेके लिए मन तथा वाणी सक्षम नहीं हैं.

याही विध हैं पोहोंचियां, तिनमें कै रंग नंग कंचन ।

रंग गिनती केहेते सकुचों, जानों क्यों कहूं सुमार सुकन ॥ ६१

इसी प्रकारकी शोभा पहुँचीकी है. उसमें विभिन्न प्रकारके रङ्गोंके रत्न कञ्चनमें जड़ायमान हैं. उन रङ्गोंकी गणना करते हुए संकोच होता है क्योंकि इन शब्दोंके द्वारा असंख्य रङ्गोंका वर्णन कैसे करूँ ?

किन विध कहूं हथेलियां, अति उजल रंग लाल ।

केहेते लीकां दिल लरजत, ए अंग नूरजमाल ॥ ६२

श्री राजजीकी हथेलियोंकी शोभाका वर्णन कैसे करूँ ? ये अत्यन्त उज्ज्वल एवं लालिमा युक्त हैं. इनकी सूक्ष्म रेखाओंका वर्णन करते हुए हृदयमें कम्पन होने लगता है क्योंकि ये अङ्ग स्वयं श्रीराजजीके हैं.

अंगुरियां हस्तकमल की, याको दिया न निमूना जाए ।

वचन कहूं विचार के, तो भी रूह पीछे जाए पछताए ॥ ६३

इन हस्त कमलोंकी अङ्गुलियोंकी शोभाके लिए कोई उपमा भी नहीं दी जा

सकती है. इनकी अप्रतिम छविका विचार पूर्वक वर्णन करने लगें तो भी आत्माको पश्चात्ताप होने लगता है.

हर एक अंगुरी मुंदरी, हर मुंदरी कै रंग ।

सो जोत भरत आकास को, कहूँ किन विध कै तरंग ॥ ६४

प्रत्येक अङ्गुलीमें मुद्रिका सुशोभित है. प्रत्येक मुद्रिकामें अनेक रङ्ग हैं. उनकी किरणें पूरे आकाशमें व्यास हो जाती हैं. उनसे उठती हुई तरङ्गोंका वर्णन कैसे करूँ ?

जो जोत नख अंगुरी, जुबां आगे चल न सकत ।

फेर फेर वचन एही कहूँ, अंबर जोत भरत ॥ ६५

इन अङ्गुलियोंके नखोंकी ज्योतिका वर्णन करनेके लिए भी यह जिह्वा समक्ष नहीं है. इसलिए बार-बार यही कहना पड़ता है कि इनकी ज्योति पूरे आकाशमें व्यास हो जाती है.

याही विध नख चरनों के, नख जोत एही सबद ।

एही खूबी फेर फेर कहूँ, क्या करों छूटे न जुबां हद ॥ ६६

इसी प्रकारकी स्थिति चरणकमलोंके नखोंकी भी है. इनकी शोभाको वारंवार वर्णन करने पर भी यह जिह्वा अपनी सीमासे आगे नहीं बढ़ सकती है.

कोमलता चरन अंगुरी, और चरन तली कोमल ।

ए दिल रोसन देख के, हाए हाए खाक न होत जलबल ॥ ६७

इन श्रीचरणोंकी अङ्गुली तथा चरणतलकी कोमलता एवं दिव्य आभाको देखकर यह हृदय जल-बलकर भस्म क्यों नहीं हो जाता है ?

चारों भूषन चरन के, माहें रंग जोत अपार ।

दिल न लगे बिना गिनती, जानों क्यों ल्याऊं सोभा सुमार ॥ ६८

इन चरण कमलोंके चारों आभूषणों (झाँझरी, घुँघुरु, काँवी एवं कड़ा) में विभिन्न रङ्गोंकी अपार ज्योति दिखाई देती है. इनकी किरणोंकी गणना किए बिना हृदयको सन्तुष्टि नहीं होती है, ऐसी उत्कण्ठा होती है कि इस अपार शोभाको शब्दोंकी सीमामें कैसे लाया जाए ?

सुमार कहे भी ना बने, दिल में न आवे बिना सुमार ।
ताथें मुस्किल दोऊ पड़ी, पड़गा दिल माहें विचार ॥ ६९

इन किरणोंको शब्दोंकी सीमामें भी नहीं लाया जा सकता है और सीमामें
लाए बिना ये हृदयमें अङ्कित भी नहीं हो सकते हैं। इसलिए दोनों स्थितिमें
कुछ भी करना दुष्कर हो जाता है।

चरन हक सूरत के, तिन अंगों के भूषन ।
रुह लेसी सोभा विचार के, जाके होसी अरस में तन ॥ ७०
श्रीराजजीके इन दिव्य चरण कमलोंमें सुशोभित आभूषणोंकी शोभा भी
अनुपम है। वही आत्मा यह शोभा हृदयमें धारण कर सकती है जिसकी पर-
आत्मा परमधाममें है।

याही वास्ते कहे सागर, सोभा न आवे माहें सुमार ।
सागर सोभा भी ना लगे, सबद में न आवें सोभा अपार ॥ ७१
इसीलिए इस शोभाको सागरकी उपमा दी गई है कि यह शब्दोंकी सीमामें
नहीं है। यद्यपि सागरकी उपमा भी नहीं दी जा सकती, क्योंकि यह अपार
शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त ही नहीं हो सकती है।

जो सोभा कही हक की, ऐसी हादी की जान ।
हकें मासूक कहा अपना, सो जाहेर लिख्या माहें फुरमान ॥ ७२
जिस प्रकार श्रीराजजीकी शोभा अरम्पार है उसी प्रकारकी शोभा
श्रीश्यामाजीकी भी है। कुरानमें उल्लेख है कि स्वयं राजजीने श्रीश्यामाजीको
प्रेमपात्र (माशूक) कह कर सम्बोधित किया है।

और सोभा जुगल किसोर की, रुहअल्ला ने कही इत ।
उसी इलम से मैं कहेत हों, जो कहावत हुकम सिफत ॥ ७३
इस जगतमें सर्व प्रथम सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी महाराजने इन युगल किशोर
(श्रीराजश्यामाजी) की शोभाका वर्णन किया है। उन्हींके द्वारा प्राप्त तारतम
ज्ञानके प्रतापसे मैं यहाँ पर इनकी शोभाका वर्णन कर रहा हूँ। श्रीराजजीका
आदेश ही मुझसे यह वर्णन करवा रहा है।

गौर गाल सुंदर हरवटी, फेर फेर देखों मुख लाल ।

अरस कर दिल मोमिन, माहें बैठे नूरजमाल ॥ ७४

श्रीराजजीके कपोल गौर वर्णके हैं। उनका चिबुक अत्यन्त सुन्दर है। इस लालिमायुक्त मुख मण्डलको वारंवार देखनेकी इच्छा होती है। ऐसी सुन्दर शोभा धारण कर स्वयं श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम बनाकर उस पर विराजमान हो गए हैं।

क्यों कहूँ सागर चातुरी, कै सुख अलेखे उतपन ।

कै पैदा होत एक सागरें, नए नए सुख नौतन ॥ ७५

श्रीराजजीकी अपार शोभाको सागरकी उपमा देकर अपने चातुर्थ्यका प्रदर्शन कैसे किया जाए ? उनके एक-एक सुख सागरके समान हैं, उन सागरोंसे असंख्य सुख प्रकट होते हैं। इन नित्य नूतन सुखोंका वर्णन कैसे करें ?

हक मुख सब विध सागर, सुख अलेखे अपार ।

ए सुख जाने निसबती, जिन निस दिन एही विचार ॥ ७६

श्रीराजजीके मुख मण्डलमें सब प्रकारके सागर तथा असंख्य अपार सुख अन्तर्निहित हैं। जो ब्रह्मात्माएँ अहर्निश इन्हीं सुखोंका चिन्तन करतीं हैं वे ही इन सुखोंको जानतीं हैं।

सब सागर सुखमई, सब सुख पूरन परमान ।

अति सोधित मुख सुन्दर, ए जो वाहेदत का सुभान ॥ ७७

श्री राजजीकी शोभाके सभी सागर सुखमय हैं। उन सभीसे पूर्ण सुखका अनुभव होता है। इस प्रकार अद्वैत भूमिके स्वामी श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभा अत्यन्त सुन्दर सुशोधित है।

अंग देखे जेते सूरत के, सो तो सारे इसक सागर ।

गुन हक बाहर देखावत, इन बातों मोमिन कादर ॥ ७८

श्रीराजजीके स्वरूपके जितने अङ्गोंके दर्शन किये हैं वे सभी प्रेमसे परिपूर्ण सागरकी भाँति दिखाई देते हैं। श्रीराजजी बाह्य रूपसे अपने जितने भी गुण प्रकट करते हैं ब्रह्मात्माओंमें उन सभीको देखनेकी क्षमता है।

इसक देखावें चढ़ता, सब कलाओं सुखदाए ।

घट बढ अरस में है नहीं, पर इसके देत देखाए ॥ ७९

श्रीराजजी प्रतिपल बढ़ते हुए अपने प्रेमका अनुभव करवाते हैं जो सब कलाओंसे सुखदायी है. यद्यपि परमधाममें किसी भी प्रकारका न्यूनाधिक्य नहीं है किन्तु अतिशय प्रेमके कारण ही यह शोभा बढ़ती हुई दिखाई देती है.

केहेना सुनना देखना, अरस चीज न इसक बिन ।

जो कछू सुख अखंड, सो सब इसक पूरन ॥ ८०

परमधाममें कहना, सुनना तथा देखना प्रेमसे ही होता है. प्रेमके बिना वहाँ पर कोई वस्तु नहीं है. वहाँके सभी अखण्ड सुख प्रेमसे ही परिपूर्ण हैं.

जो कोई अरस जिमीय में, पसु या जानवर ।

सो सरूप सारे इसक के, एक जरा न इसक बिगर ॥ ८१

परमधाममें पशु-पक्षी आदि जो भी हैं वे सभी प्रेमके ही स्वरूप हैं. वहाँका एक कण भी प्रेम विहीन नहीं है.

दुनी पंखी बिछोहा ना सहे, वह आगे ही उडे अरवा ।

गिरत है आकास से, होत है पुरजा पुरजा ॥ ८२

इस जगतमें भी प्रेमका महत्व है. यहाँका पक्षी तक भी अपने प्रेमीका वियोग सहन नहीं कर सकता. वह वियोगसे पूर्व ही आकाशसे गिरकर शरीरको टुकड़े-टुकड़े कर देता है.

ए पंखी प्रीत दुनीय की, होसी अरस के कैसे जानवर ।

ए निमूना इत ना बने, और बताइए क्यों कर ॥ ८३

इस नश्वर जगतके पक्षियोंमें भी प्रीतिकी ऐसी रीति है तो परमधाममें रहने वाले पशुपक्षियोंकी रीति कैसी होगी ? यद्यपि परमधामके पशुपक्षियोंके लिए इन नश्वर जगतके पशु-पक्षियोंका उदाहरण उपयुक्त नहीं है तथापि उदाहरणोंके बिना उनको कैसे समझाया जाए ?

पूर असल जिमी बराबर, और उजल जोत प्रकास ।

कहुं कम ज्यादा न देखिए, और जोत भरयो अवकास ॥ ८४

परमधामकी दिव्य भूमिमें उज्ज्वल ज्योति सर्वत्र समान रूपसे प्रकाशित है। कहीं भी उसका न्यूनाधिक्य नहीं है। पूरे आकाशमें यही ज्योति सर्वत्र परिपूर्ण दिखाई देती है।

पसु पंखी सबमें पूरन, दिल चाह्या पूरन वन ।

इन जिमी पसु पंखियों, जिकर करें रोसन ॥ ८५

यह प्रकाश श्रीराजजीकी इच्छानुसार सभी पशु-पक्षियों तथा वनोंमें पूर्णरूपसे व्यास है। इस दिव्य भूमिकाके पशुपक्षी श्रीराजजीके दिव्य प्रकाशका गुणगान करते हैं।

और आसिक वाहेदत के, इन हूं बड़ी पेहेचान ।

एही खूब खेलौने हक के, मुख मीठी सुनावें बान ॥ ८६

अद्वैत भूमिकामें रहनेवाली अनुरागिनी आत्माओंकी सर्वत्रेष्ठ पहचान यही है। सभी पशु-पक्षी श्रीराजजीके खिलौने समान हैं एवं उनको अपनी मधुर वाणी सुनाते हैं।

खूबी खुसाली पूरन, सुंदर सोभा चित्रामन ।

नैन श्रवन या चोंच मुख, गान करें निस दिन ॥ ८७

ये सभी पशु-पक्षी विभिन्न प्रकारकी शोभा एवं प्रसन्नतासे परिपूर्ण हैं। चित्रकारीके द्वारा चित्रित होने पर भी इनके नेत्र, श्रवण अङ्ग, चोंच, मुख आदि नित्य प्रति श्रीराजजीके गुणगान गाया करते हैं।

इसक इनों के क्यों कहुं, जो हक के पिलायल ।

कोई कहे न सके इनों बडाई, ए अरस अजीम असल ॥ ८८

इनके प्रेमके विषयमें क्या कहा जाए, ये तो स्वयं श्रीराजजीसे प्रेमसुधाका पान करते हैं। अखण्ड भूमिकामें रहने वाले इन पशु-पक्षियोंकी महिमाका वर्णन कोई भी नहीं कर सकता है।

सब गुन इनों में पूरन, नरम खूबी खुसबोए ।
मुख बानी जोत चित्रामन, ए हकें रिझावें सोए ॥ ८९

इनमें कोमलता, सुगन्धि, शोभा आदि सब प्रकारके गुण परिपूर्ण रूपसे विद्यमान हैं. चित्रोंमें अङ्कित इन पशुपक्षियोंकी मधुर वाणी भी श्रीराजजीको ही रिझानेके लिए होती है.

हाल चाल सब इसक की, खान पान सब साज ।
सोभा सिनगार सब इसक के, अरस इसक को राज ॥ ९०

इन पशुपक्षियोंका हलन-चलन, खान-पान तथा सम्पूर्ण शोभा-शृङ्खाल प्रेमसे परिपूर्ण है. इसीलिए सम्पूर्ण परमधाम ही प्रेमका साम्रज्य कहलाता है.

सोभा क्यों कहूं हक सूरत की, जाको नामै नूरजमाल ।
ए दिल आए इसक आवत, याको सहौरै बदले हाल ॥ ९१

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपकी शोभाका वर्णन कैसे किया जाए, वे स्वयं तेजके पुञ्ज (नूरजमाल) हैं. हृदयमें इनका स्मरण होने मात्रसे ही प्रेमका आविर्भाव होता है और उनके स्वरूपका चिन्तन करने पर मनःस्थिति ही बदल जाती है.

हक सूरत अति सोहनी, अति सुंदर सोभा कमाल ।
बैठे हक इसक छाया मिने, दूजे इसक लगे दिल झाल ॥ ९२

श्रीराजजीका स्वरूप अत्यन्त मनमोहक है. उनकी सुन्दर शोभा अद्वितीय है. अनुरागिनी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी प्रेमरूपी छत्रछायामें रहती हैं. अन्य लोगोंके लिए यह प्रेम अग्निकी ज्वालाके समान प्रतीत होता है.

और कछुए दिल है नहीं, बिना हक वाहेदत ।
और जरा कित कहूं नहीं, वाहेदत इसक निसबत ॥ ९३

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजी तथा उनके प्रति एकात्मभावके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है. श्रीराजजीके हृदयमें भी अपनी अङ्गनाओंके प्रति प्रेम एवं एकात्मभावके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं होता है.

जित रहे आग इसक की, तित देह सुपन रहे क्योंकर ।

बिना मोमिन दुनी न छूटही, दुनी ज्यों बिन जलचर ॥ १४

जिस आत्माके हृदयमें अपने प्रियतमके विरहकी अग्नि भड़क उठती है उसका स्वप्नका तन कैसे टिका रह सकता है ? ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीसे भी यह स्वप्नवत् जगत् छूट नहीं सकता है. इस जगतके जीव तो जैसे जलके बिना जलचर नहीं रह सकते हैं उसी प्रकार मायाके बिना नहीं रह सकते हैं.

ब्रह्मसृष्टि घर इसक में, और दुनियां घर कुफर ।

मोमिन जलें न आग इसकें, दुनी जाए जल बर ॥ १५

ब्रह्मसृष्टियोंका धाम प्रेमसे परिपूर्ण है और नश्वर जगतके जीवोंने इस असत्य भूमिकाको ही अपना घर समझा हुआ है. ब्रह्मात्माएँ प्रेमके कारण विरहकी अग्निमें नहीं जलती हैं जबकि जगतके जीव जल-बलकर भस्म हो जाते हैं.

आग इसकें जलें ना मोमिन, आसिकों इसक घर ।

इनों लगे जुदागी आग ज्यों, रुहें भागे देख कुफर ॥ १६

ब्रह्मात्माएँ प्रेमके कारण विरहकी अग्निमें नहीं जलती हैं क्योंकि इन अनुरागिनी आत्माओंका आश्रय ही प्रेम है. श्रीराजजीका वियोग इनको अग्निकी भाँति दाहक लगता है इसलिए वे इस मायाको देखकर दूर भागती हैं (क्योंकि मायाके कारण ही वियोग होता है).

रुहें आङ्गियां अरस अजीम से, दर्ढ नुकते इलमें जगाए ।

और उमेदां सब छोड़ाए के, हके आपमें लैयां लगाए ॥ १७

ब्रह्मात्माएँ परमधामसे इस जगतमें अवतरित हुई हैं. तारतम ज्ञानने उन्हें भ्रमरूपी निद्रासे जागृत कर दिया है. इसीलिए संसारकी सभी चाहनाओंसे छुड़ाकर स्वयं श्रीराजजीने इनको अपनी ओर लगा लिया है.

वस्तर भूषन सब इसक के, इसक सेज्या सिनगार ।

इसक हक खिलवत, रुहें हादी हक भरतार ॥ १८

श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषण सभी प्रेमसे परिपूर्ण हैं. उनकी शय्या तथा

शृङ्खार भी प्रेमसे परिपूर्ण है. अन्तरङ्ग मूलमिलावामें श्रीश्यामाजी एवं ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके ही प्रेमके अङ्ग स्वरूप हैं.

जुगल सरूप जब बैठत, इसक जाने दिल की सब ।

इसक बोल काढें जिन हेत को, उतर पावे दूजा दिल तब ॥ १९

जब युगलस्वरूप श्रीराजश्यामाजी मूलमिलावामें सिंहासन पर आसीन होते हैं तो वे सभी ब्रह्मात्माओंके हृदयके प्रेमको जान जाते हैं. जब भी वे किसीसे प्रेमपूर्वक वचन बोलते हैं तब दूसरी ब्रह्मात्माको उसका उत्तर उसीके भावोंके अनुरूप प्राप्त हो जाता है.

जुगल सरूप इत बैठत, दोऊं दिल की पावें मोमन ।

एक वचन मुख बोलते, पावें पडउतर आधे सुकन ॥ १००

युगलस्वरूप श्रीराजश्यामाजी सिंहासन पर विराजमान होते हैं. ब्रह्मात्माएँ उन दोनोंके हृदयका भाव जान जातीं हैं. जब उनके मुखारविन्दसे एक वचन उच्चरित होता है उसी समय मात्र आधा वचन बोलने पर ही ब्रह्मात्माएँ उसका उत्तर दे देतीं हैं.

इसक बोलें सुनें इसक, सब इसकै की बिसात ।

जो गुझ दिल मासूक की, सो आसिक से जानी जात ॥ १०१

इस प्रकार परमधाम मूलमिलावामें प्रेमसे ही बोलना होता है और प्रेमसे ही सुनना होता है. वहाँकी सभी सामग्री प्रेमसे परिपूर्ण हैं. इतना ही नहीं श्रीराजजीके हृदयकी गूढ़ बातें भी अनुरागिनी आत्माओंसे प्रेमपूर्वक जानी जातीं हैं.

मोमिन आसिक हक के, सो हक की जाने दें खबर ।

तो हकें किया अरस अपना, जो थे मोमिन दिल इन पर ॥ १०२

सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीकी अनुरागिनी हैं. इसीलिए वे श्रीराजजीके स्वरूपको पहचान कर इस जगतमें उसे प्रकाशित करतीं हैं. श्रीराजजीने इनके हृदयको अपना परमधाम इसीलिए बनाया क्योंकि इनके हृदयमें सदैव श्रीराजजीके स्वरूपका ही चिन्तन रहता है.

आसिक मासूक दो अंग, दोऊ इसके होत एक ।
तो आसिक मासूक के दिल को, क्यों ना कहे गुझ विवेक ॥ १०३

यद्यपि अनुरागिनी ब्रह्मात्मा एँ एवं प्रियतम धनी श्रीराजजी प्रकट (लीला) रूपमें भिन्न-भिन्न हैं किन्तु प्रेमसूत्रमें बँधने पर दोनों अद्वैत स्वरूप हैं। इसलिए अनुरागिनी आत्मा एँ प्रियतम धनीके हृदयकी गूढ़ बातें क्यों प्रकट न करे ?

तो मोमिनों दिल अपना, जीवते अरस केहेलाया ।
जो इसक मासूक के दिल का, ऊपर सरूपै देखें पाया ॥ १०४

इसीलिए इस जगतमें भी ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधामकी संज्ञा दी गई है। यही कारण है कि उन्होंने अपने प्रियतम धनीके बाह्य स्वरूपका दर्शन मात्र करनेसे ही उनके हृदयके प्रेमको जान लिया है।

जो कछुए चीज अरस में, सो सूरत सब इसक ।
सो लाड लजत सुख लेत हैं, सब रुहें हादी हक ॥ १०५

परमधामकी सभी वस्तुएँ श्रीराजजीके शाश्वत प्रेमके ही स्वरूप हैं। इसीलिए ब्रह्मात्मा एँ श्रीराजजी एवं श्रीश्यामाजीसे सब प्रकारका आनन्द (लाड-लज्जत) प्राप्त करती हैं।

इसक सुख अरस बिना, कहूं पैदा दुनी में नाहें ।
तो हकें नाम धराया आसिक, जो इसक आप के माहें ॥ १०६

परमधामके अतिरिक्त इस नक्षर जगतमें कहीं भी शाश्वत प्रेमका आनन्द नहीं है। इसीलिए श्रीराजजीने स्वयंको अनुरागी (प्रियतम) कहा क्योंकि यह सम्पूर्ण प्रेम उनके ही हृदयमें स्थित है।

या तो इसक हादी मिने, जाको हकें कह्या मासूक ।
हक का सुकन सुन आसिक, हाए हाए होत नहीं टूक टूक ॥ १०७

या तो यह प्रेम श्रीश्यामाजीमें है जिनको स्वयं श्रीराजजीने अपना प्रेमपात्र (माशूक) कहा है। खेदकी बात है कि इस प्रकार श्रीराजजीके इन प्रेमपूर्ण वचनोंको सुनकर भी अनुरागिनी आत्माओंका हृदय टुकड़े-टुकड़े नहीं होता है।

सुकजीएं भी यों कहा, प्रेम चौदे तबकों नाहिं ।

ब्रह्मसृष्टि ब्रह्म निसबती, प्रेम है तिन माहिं ॥ १०८

श्री शुकदेवजीने भी यही कहा है कि इन चौदह लोकोंमें कहीं भी शाश्वत प्रेम नहीं है. यह तो मात्र परब्रह्म परमात्माकी अङ्गना ब्रह्मसृष्टियोंमें ही है.

और इसक माहें रुहन, हकें अरस कहो जाको दिल ।

हकें दिल दे रुहों दिल लिया, यों एक हुए हिल मिल ॥ १०९

यह प्रेम ब्रह्मात्माओंके हृदयमें विद्यमान है जिसको श्रीराजजीने परमधामकी संज्ञा दी है. स्वयं श्रीराजजीने अपने हृदयकी अमूल्य निधि ब्रह्मात्माओंको प्रदान की और उनके हृदयको अपनी ओर खींच लिया (स्वयंमें समाहित किया). इस प्रकार दोनों परस्पर एकाकार हो गए हैं.

ना तो हक आदमी के दिल को, अरस कहें क्यों कर ।

पर ए आसिक माशूक की वाहेदत, बिना आसिक न कोई कादर ॥ ११०

अन्यथा श्रीराजजी स्वप्नवत् जगतके मनुष्यके हृदयको परमधामकी संज्ञासे कैसे सुशोभित करते ? किन्तु यह तो अनुरागिनी आत्मा (आशिक) तथा प्रियतम धनी (माशूक) के एकात्म भावकी बात है. अनुरागिनी आत्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी इस प्रेमभावको समझनेमें समर्थ नहीं है.

ए जाहेर लिख्या फुरमान में, रुहें उतरी लाहूत से ।

एहेल अल्ला तो कहे, जो इसक है इनों में ॥ १११

कुरानमें स्पष्ट उल्लेख है कि ब्रह्मात्माएँ परमधामसे इस नश्वर जगतमें अवतरित हुईं हैं. इन ब्रह्मात्माओंको परब्रह्म परमात्माके प्रेमी भक्त (अहल-अल्लाह) इसीलिए कहा है कि इनका हृदय शाश्वत प्रेमसे परिपूर्ण है.

इसक है वाहेदत में, कहूं पाझे न दूजे ठौर ।

दूजे ठौर तो पाईए, जो होवे कोई और ॥ ११२

वस्तुतः अद्वैत स्वरूप परमधाममें ही प्रेम है. उसके अतिरिक्त अन्य किसी स्थानमें प्रेम नहीं है. दूसरे स्थान पर प्राप्त होनेकी बात भी तभी की जा सकती है जब परमधामके अतिरिक्त अन्य किसी स्थानका अस्तित्व हो.

इसक निसानी हक की, सो पाइए सांच के माहिं ।
सांच अरस आगूं वाहेदत के, ए झूठ जरा भी नाहिं ॥ ११३
प्रेम परमात्माका ही स्वरूप है और वह सत्य परमधाममें ही प्राप्त होता है.
इस अद्वैत परमधामके समक्ष नश्वर जगतका कोई अस्तित्व ही नहीं है.

ए झूठा फरेब कछुए नहीं, जामें आए अहंमद मोमन ।
एही निसानी इसक की, जाके असल अरस में तन ॥ ११४

वस्तुः इस नश्वर जगतका कोई अस्तित्व ही नहीं है जिसमें सदगुरु श्री देवचन्द्रजी (अहंमद) अपने ब्रह्मात्माओंके साथ अवतरित हुए हैं. इन ब्रह्मात्माओंको प्रेमस्वरूपा (प्रेमके प्रतीक) इसीलिए कहा है क्योंकि इनका मूल स्वरूप (पर-आत्मा) दिव्य परमधाममें है.

इसक नाम अरस से, खेलमें ल्याए महंमद ।
ए क्या जाने नसल आदम, जो खाकी बुत सब रद ॥ ११५

सदगुरु श्री देवचन्द्रजी ही सर्वप्रथम दिव्य परमधामसे प्रेमका शाश्वत सन्देश लेकर इस जगतमें अवतरित हुए हैं. नश्वर शरीर धारण करनेवाले जगतके सामान्य मानव परमधामके शाश्वत प्रेमको कैसे समझ सकते हैं ?

ए जाने अरवाहें अरस की, जिनकी इसक बिलात ।
ए क्या जाने पैदा कुन की, हक आसिक मासूक की बात ॥ ११६

इसे तो परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जान सकती हैं जिनका आश्रय स्थान ही प्रेम है. परमात्माके द्वारा 'हो जा' (कुन) कहने मात्रसे उत्पन्न स्वप्नवत् जगतके ये जीव श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके हृदयकी बातको कैसे जान सकते हैं ?

अरस इसक हक हादी रूहें, याकी दुनी न जाने कोए ।
इसक अरस सो जानहीं, जो कायम बतनी होए ॥ ११७

दिव्य परमधामके शाश्वत प्रेमको श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं. नश्वर जगतके जीव इसे नहीं जानते हैं. अखण्ड परमधाममें रहनेवाली आत्माएँ ही परमधामके प्रेमको जान सकती हैं.

दुनियां चौदे तबकों, किन निरने करी न सूरत हक ।

तिन हक के दिल में पैठ के, करूं जाहेर हक इसक ॥ ११८

इन चौदह लोकोंके जीवोंमें आज तक कोई भी परमात्माका स्वरूप दृढ़ नहीं
कर सके हैं. ऐसे पूर्णब्रह्म परमात्माके हृदयमें प्रवेश कर मैं उनके प्रेमको
प्रकट करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ.

तो अरस हुआ दिल मोमिन, जो जाहेर किया गुझ ए ।

हक हादी गुझ मोमिन, कोई और न कादर इन के ॥ ११९

इस प्रकार श्रीराजजीके हृदयके इस गूढ़ रहस्य स्वरूप प्रेमको प्रकट करनेके
कारण ही ब्रह्मात्माओंका हृदय परमधाम कहलाया है. श्रीराजजी तथा
श्यामाजीके हृदयके गूढ़ रहस्यको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी
समझनेमें समर्थ नहीं है.

तो पाया खिताब अरस का, ना तो दिल आदमी अरस क्यों होए ।

ए हक हादी मोमिन बातून, और बूझे जो होवे कोए ॥ १२०

इसीलिए ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधामकी शोभा प्राप्त हुई है, अन्यथा
मनुष्यका हृदय परमधाम कैसे हो सकता है ? इस प्रकार श्रीराजजी, श्यामाजी
तथा ब्रह्मात्माओंके आन्तरिक (अव्यक्त) रहस्यको उनके अतिरिक्त अन्य कोई
हो तभी समझ सकता है.

मुखारबिंद मेहेबूब का, सुख देत हक सूरत ।

जुगल किसोर सोभा लिए, दोऊ बैठे एक तखत ॥ १२१

प्रियतम धनी श्रीराजजीका मुखारविन्द तथा उनका सम्पूर्ण स्वरूप सदैव
आनन्दप्रद है. ऐसी अनुपम शोभा धारण कर युगलस्वरूप श्री राजश्यामाजी
दोनों एक ही सिंहासनमें विराजमान होते हैं.

दोऊ सरूप अति उजल, कै जोत खूबियों में खूब ।

इसक कला सब पूरन, रस इसक भरे मेहेबूब ॥ १२२

दोनों स्वरूप अत्यन्त उज्ज्वल हैं. उनसे प्रकट हुई ज्योतिर्मयी किरणें अपार
शोभायुक्त हैं. वे प्रेमकी सम्पूर्ण कलाओंसे परिपूर्ण हैं. ऐसे प्रियतम धनीका
हृदय सर्वदा प्रेमरससे परिपूर्ण है.

नैन श्रवन मुख नासिका, चारों अंग गेहेरे गंभीर ।

अरस आकास सिंध तेज का, ताए चारों नेहें चलियां चीर ॥ १२३

उनके नयन, श्रवण अङ्ग, मुखारविन्द तथा नासिका आदि चारों अङ्ग सागरकी भाँति अत्यन्त गम्भीर हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन चारों अङ्गोंका तेज नहरोंकी भाँति परमधामके नभमण्डलरूपी समुद्रको चीरता हुआ आगे बढ़ता है।

एक मुख के सुख में कै सुख, और कै सुख माहें नैन ।

सुख केते कहूं नैन अंग के, मुख गिनती न आवे बैन ॥ १२४

श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभाके एक सुखमें भी अनेक सुख समाहित हैं। इस प्रकारके अनेक सुख उनके नयनोंमें समाहित हैं। इन नयनोंके सुखोंका वर्णन कैसे करूँ ? इनकी गणना शब्दोंके द्वारा नहीं हो सकती है।

श्रवन अंदर सुख क्यों कहूं, जो सुख सागर आराम ।

क्यों निकसे रुह इन से, ए अंग सुख स्यामास्याम ॥ १२५

इसी प्रकार श्रीराजजीके श्रवण अङ्गमें विद्यमान सुखोंका वर्णन कैसे करें ? ये तो साक्षात् विश्रान्ति (आराम) के ही सुख सागर हैं। इन सुखोंमें निमग्न हुई ब्रह्मात्मा उनसे कैसे बाहर निकल सकती हैं ? ये तो स्वयं श्यामाश्यामके अङ्गोंका सुख है।

अंग रुह अरस की नासिका, ए बल जानत रुह को कोए ।

चौदे तबक सुन फोड के, इत लेत अरस खुसबोए ॥ १२६

परमधामकी ब्रह्मात्मा ए ही श्रीराजजीकी नासिकका सुख ग्रहण कर सकती हैं। ब्रह्मात्माओंके सामर्थ्यको कोई बिले ही जानते हैं। क्योंकि ब्रह्मात्मा ए यहीं बैठे-बैठे इन चौदह लोकों तथा शून्यमण्डलको भी पार कर परमधामकी सुगन्धि प्राप्त करती हैं।

ऐसा बल रुह अरस के, तो बल हक होसी किन विध ।

ए बेवरा जाने पाक मोमिन, जिन हक अरस दिल सुध ॥ १२७

जब परमधामकी आत्माओंमें भी इतनी क्षमता है तो स्वयं परमधामके धनी

श्रीराजजीमें कितनी अधिक शक्ति होगी। पवित्रहृदया ब्रह्मात्माएँ ही इसका निरूपण कर सकती हैं जिनके हृदयमें श्रीराजजीकी पहचान है।

सुख कहूं मीठी जुबान के, के सुख कहूं लाल अधूर ।
के सुख कहूं रस भरे वचन, जो बोलत माहें मधूर ॥ १२८

श्रीराजजीकी मधुररसपूर्ण जिह्वा तथा लालिमायुक्त अधरोष्ठसे प्राप्त सुखोंका वर्णन कैसे करूँ ? जब स्वयं वे अपनी मधुरवाणीसे माधुर्यरसपूर्ण वचन बोलते हैं उस समयके सुखोंका वर्णन कैसे करूँ ?

दोऊं माहों माहें जब बोलहीं, तब मीठे कैसे लगत ।
कोई रुह जाने अरस की, जित हक हुकम जागृत ॥ १२९

श्रीराजजी तथा श्यामाजी परस्पर वार्तालाप करते हुए इतने सुन्दर सुशोभित होते हैं कि इस शोभाको परमधामकी आत्माएँ ही जान सकती हैं। क्योंकि वे ही श्रीराजजीके आदेशसे जागृत हुई हैं।

जानों के जोवन चढता, ऐसे नित देखत नौतन ।
गुन पख अंग इन्द्रियां, बढता नूर रोसन ॥ १३०

श्रीराजश्यामाजीकी शोभा नवयौवनयुक्त नित्य नूतन दिखाई देती है। उनके गुण, पक्ष, अङ्ग, इन्द्रियोंसे नित्यप्रति तेजोमयी आभा बढ़ती हुई दिखाई देती है।

जानों के पल पल चढता, तेज जोत रस रंग ।
पूरन सरूप एही देखहीं, इसक सूरत के संग ॥ १३१

ऐसा प्रतीत होता है कि श्रीराजजीकी यह तेजोमयी आभा तथा उसके अङ्ग-रस प्रतिपल बढ़ते हुए दिखाई देते हैं। उनके पूर्ण स्वरूपको वही ब्रह्मात्माएँ देख सकती हैं जो उनके प्रेममय स्वरूपके साथ ही रहती हैं।

बंध बंध सब इसक के, और इसकै अंगों अंग ।
गुन पख सब इसक के, सोई इसक बोलें रस रंग ॥ १३२

श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्ग तथा रोम-रोम प्रेमसे परिपूर्ण हैं। उनके गुण, पक्ष आदि सभी प्रेममय होनेसे उनकी मधुरवाणीसे भी आनन्द ही आनन्द प्रकट होता है।

सब इन्द्रियां इसक की, इसक तत्त्व रस धात ।

पिंड प्रकृति सब इसक के, इसक भीगे अंग गात ॥ १३३

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपकी सभी इन्द्रियाँ, तत्त्व, रस, धातु तथा सम्पूर्ण शरीर एवं स्वभाव प्रेमसे ही परिपूर्ण हैं। इतना ही नहीं उनके सम्पूर्ण अङ्ग प्रेमसुधासे ही सिक्त हैं।

बात विचार सब इसक के, इसके गान इलम ।

अंग क्यों कहूँ इन जिमिएँ, एता भी केहेत हुक्म ॥ १३४

श्रीराजजीकी वार्ताएँ, विचार, ज्ञान, गान आदि सभी प्रेमरससे परिपूर्ण हैं। इस नश्वर जगतमें रहकर अखण्ड परमधामके इन अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका वर्णन कैसे किया जाए ? इतना भी श्रीराजजीके आदेशके कारण ही कहा गया है।

सब चीजें इत इसक की, इसके अरस बिसात ।

रुहें हादी अंग इसक के, इसक सूरत हक जात ॥ १३५

परमधामकी सभी सामग्रियाँ प्रेमसे परिपूर्ण हैं। परमधाममें सर्वत्र प्रेम ही प्रेम व्यास है। श्रीश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके ही प्रेमके अङ्ग हैं। इतना ही नहीं परमधामकी सम्पूर्ण सामग्री श्रीराजजीकी ही प्रेम स्वरूपा हैं।

सेहेज सुभाव सब इसक के, इसके की वाहेदत ।

हक सरूप सब इसक के, इसके की खिलवत ॥ १३६

परमधामका सहज स्वभाव ही प्रेम है। वहाँका एकात्मभाव भी प्रेमका ही है। स्वयं श्रीराजजीका स्वरूप ही प्रेममय है एवं परमधामकी एकान्तस्थली (मूलमिलावा) भी प्रेमसे ही परिपूर्ण है।

मोहोल मंदिर सब इसक के, ऊपर तले सब इसक ।

दसों दिस सब इसक, इसक उठक या बैठक ॥ १३७

परमधामके सभी प्रासाद तथा भवन भी प्रेमके ही हैं। वहाँ पर ऊपर-नीचे, दसों दिशाओंमें सर्वत्र प्रेम ही व्यास है। वहाँ पर उठने अथवा बैठनेमें भी प्रेम ही प्रतिबिम्बित होता है।

यों अरस सारा इसक का, और इसक रुहों निसबत ।

इसक बिना जरा नहीं, सब हक इसक न्यामत ॥ १३८

इस प्रकार सम्पूर्ण परमधाम ही प्रेमसे परिपूर्ण है. ब्रह्मात्माओंका सम्बन्ध भी प्रेमसे ओत-प्रोत है. इस प्रकार परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदा प्रेमसे ही परिपूर्ण है. प्रेमके अतिरिक्त वहाँ पर कुछ भी नहीं है.

नेक कही हक इसक की, पर इसक बड़ा विस्तार ।

इनको वरनन न होवहीं, न आवे माहें सुमार ॥ १३९

इस प्रकार यहाँ पर प्रेमका संक्षिप्त विवरण दिया गया है किन्तु इसका विस्तार बहुत ही बड़ा है. इसका वर्णन ही नहीं हो सकता है. क्योंकि प्रेमकी महिमा शब्दोंकी सीमामें समाती ही नहीं है.

सुनो मोमिनों इसक की, नेक और भी देऊं खबर ।

अरस आसिक मासूक की, ज्यों औरों भी आवे नजर ॥ १४०

हे ब्रह्मात्माओ ! सुनो, मैं प्रेमके विषयमें और भी विवरण दे रहा हूँ. जिससे परमधाम एवं श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके विषयमें अन्य लोगोंको भी ज्ञात हो जाए.

रबद हुआ इसक का, हक हादी की खिलवत माहें ।

इत कम ज्यादा है नहीं, अरस इसक बेवरा नाहें ॥ १४१

परमधाम मूलमिलावामें श्रीराजश्यामाजी एवं ब्रह्मात्माओंके मध्य प्रेम सम्बाद हुआ. जहाँ पर न्यूनाधिक्यका कोई प्रश्न ही नहीं रहता हो ऐसी अद्वैत भूमिकामें प्रेमका निरूपण कैसे हो सकता है ?

ए बेवरा तित होवहीं, जित विछोहा होए ।

सो तो वाहेदत में है नहीं, होए विबछोहा माहें दोए ॥ १४२

यह निरूपण तो वहीं सम्भव है जहाँ पर वियोग होता हो. अद्वैत भूमि परमधाममें वियोग नहीं होता है. वियोग तो मात्र द्वैत भूमिका (नश्वर जगत) में ही सम्भव है.

हके चाह्या करूं बेवरा, देखाऊं रुहों कों ।

इसक न पाइए बिना जुदागी, सो क्यों होवे वाहेदत मों ॥ १४३

श्रीराजजीने विचार किया कि मैं प्रेमका निरूपण कर ब्रह्मात्माओंको अपनी प्रभुताका अनुभव कराऊँ. वस्तुतः वियोगके बिना प्रेमका निरूपण सम्भव ही नहीं है. किन्तु अद्वैतभूमिमें इसका निरूपण हो नहीं सकता है.

ताथें दै नेक फरामोसी, रुहों को माहें अरस ।

हांसी करने इसक की, देखें कौन कम कौन सरस ॥ १४४

इसीलिए श्री राजजीने मूलमिलावामें ही ब्रह्मात्माओंके हृदय पर भ्रम (फरामोशी) का आवरण डाल दिया. ताकि उनका प्रेममय उपहास हो जिससे वे स्वयं समझ सकें कि किसका प्रेम न्यून है और किसका अधिक है.

ए झूठा खेल देखाइया, ए जो चौदे तबक ।

हम जाने आए खेल बीच में, जित तरफ न पाइए हक ॥ १४५

श्री राजजीने ब्रह्मात्माओंको अपने चरणोंमें बैठाकर उनके हृदय पर भ्रमका आवरण डालते हुए उन्हें इन चौदह लोकोंका ऐसा नश्वर खेल दिखाया है. इससे उनको ऐसा प्रतीत होता है कि हम ऐसे नश्वर जगतमें आई हैं जहाँ पर परमात्माकी कोई दिशा ही नहीं मिलती है.

इत इसक कहां पाइए, आग पानी पथर पूजत ।

ए खेल देख्या एक निमख का, जानों हो गई कै मुदत ॥ १४६

इस नश्वर जगतमें, जहाँ पर अग्नि, जल तथा पत्थरकी पूजा होती है वहाँ पर परब्रह्म परमात्माका प्रेम कैसे प्राप्त होगा ? वास्तवमें यह नश्वर खेल एक क्षणमें ही दिखाया गया है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कोई दीर्घकाल व्यतीत हो गया हो.

झूठ हम देख्या नहीं, झूठ रहे न हमारी नजर ।

पट आडे खेल देखाइया, सो देने इसक खबर ॥ १४७

वस्तुतः इस नश्वर जगतके खेलको हमने देखा ही नहीं है क्योंकि हमारी दृष्टिके समक्ष यह मिथ्या जगत टिक ही नहीं सकता है. यह तो श्रीराजजीने

भ्रमका आवरण डालकर दिखाया है. क्योंकि इसके आड़में वे हमें दिव्य प्रेमकी सुधि दिलाना चाहते हैं.

ऐसा खेल देखाइया, जाने हम आए माहें इन ।

इसक हमें जरा नहीं, सुध हक न आप बतन ॥ १४८

श्रीराजजीने हमें भ्रमका आवरण डालकर ऐसा खेल दिखाया है जिससे हमें लगता है कि हम इस खेलमें ही आ गए हैं. यहाँ आने पर हमारे अन्दर लेश मात्र भी प्रेम भाव नहीं रहा और न ही श्रीराजजीकी, अपने स्वयंकी तथा परमधामकी ही कोई सुधि रही है.

इन इसकें हमारे ऐसा किया, ए जो झूठे चौदे तबक ।

तिन सबों कायम किए, ऐसे हमारे इसक ॥ १४९

श्रीराजजीके प्रेमने हमें ऐसी शक्ति प्रदान की कि जिसके द्वारा हमने इस नश्वर जगत (चौदह लोकों)के सभी जीवोंको अखण्ड मुक्तिस्थल प्रदान कर दिया है.

जलाए दिए सब इसकें, हो गई सब अगिन ।

एक जरा कोई ना बच्या, बीच आसमान धरन ॥ १५०

इस शाश्वत प्रेमने नश्वर जगतकी सभी भ्रान्तियाँ मिटा दी हैं, जिससे सर्वत्र प्रियतम धनीके विरहकी आग जलती हुई दिखाई देने लगी. इसलिए भूमिसे लेकर आकाश तक कोई भी इस विरह वेदनासे बच नहीं सका है.

हम जाने इसक न हमें, हम पर हंससी नूरजमाल ।

हमारे इसके ब्रह्मांड का, किया जो ऐसा हाल ॥ १५१

हमें अभी तक यही ज्ञात था कि हमारे पास प्रेम नहीं है, इसलिए श्रीराजजी हम पर हँसी करेंगे. परन्तु हमारे प्रेमने तो पूरे ब्रह्माण्डका स्वरूप ही परिवर्तित कर दिया है.

इस वास्ते खेल देखाइयां, वास्ते बेवरे इसक के ।

कोई आया न गया हमें, बैठें अरस में देखें ए ॥ १५२

श्रीराजजीने प्रेमके निरूपणके लिए ही नश्वर जगतका यह खेल दिखाया है.

वास्तवमें हम ब्रह्मात्माओंमें-से न कोई परमधामसे यहाँ पर आयी है और न ही कोई यहाँसे जाएगी. हम सभी परमधाममें बैठे-बैठे यह खेल देख रहीं हैं.

कहे महामत हुकमें देखाइया, ऐसी कर हिकमत ।
हम देख्या इसक बेवरा, बैठें बीच खिलवत ॥ १५३

महामति कहते हैं, श्रीराजजीके आदेशने ही इस प्रकार संसारकी युक्तिपूर्वक रचना कर यह खेल दिखाया है. हम ब्रह्मात्माओंने परमधाम मूलमिलावामें बैठे-बैठे ही प्रेमका यह निरूपण देख लिया है.

प्रकरण २० चौपाई १२१७

मुखकमल मुकट छवि, मंगलाचरन

याद करो हक मोमिनो, खेल में अपना खसमा
हके कौल किया उतरते, अलस्तो बेरबकुंम ॥ १
हे ब्रह्मात्माओ ! इस नश्वर जगतमें अपने प्रियतम धनी परब्रह्म परमात्माका स्मरण करो. उन्होंने हमें जगतमें उतरते हुए “क्या मैं तुम्हारा स्वामी नहीं” ऐसा कहा.

तब रुहों बले कहा, बीच हक खिलवत ।
मजकूर किया हकें तुमसों, वह जिन भूलो न्यामत ॥ २
तब ब्रह्मात्माओंने मूलमिलावामें इस प्रकार कहा, ‘निश्चय ही आप हमारे स्वामी हैं.’ हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीने तुमसे अन्य भी अनेक बातें कीं. अमूल्य निधि समान उन बातोंको मत भूलो.

हुकमें ए कुंजी ल्याया इलम, हुकमें ले आया फुरमान ।
दई बडाई रुहों हुकमें, हुकमें दई भिस्त जहान ॥ ३
श्रीराजजीका आदेश ही तारतम ज्ञानरूपी यह कुञ्जी ले आया है और वही कुरानका ज्ञान भी लेकर आया है. इसी आदेशने ब्रह्मात्माओंको महिमा प्रदान कर संसारके जीवोंको अखण्ड मुक्तिस्थलमें स्थान दिलाया है.

हुकमें हादी आइया, और हुकमें आए मोमन ।
और फुरमान भेज्या इनपे, हकें कुंजी भेजी बैठ वतन ॥ ४

इसी आदेशके कारण ही सदगुरु श्री देवचन्द्रजी तथा ब्रह्मात्माओंका इस जगतमें अवतरण हुआ है. श्रीराजजीने परमधाममें बैठकर अपने आदेशके द्वारा अपनी ब्रह्मात्माओंके लिए कुरानका सन्देश भेजा और उसे स्पष्ट करनेके लिए तारतम ज्ञानरूपी कुञ्जी भेजी है.

और भी हुकमें ए किया, लिया रुहअल्ला का भेस ।
पेहेचान दई सब अरसों की, माहें बैठे दे आवेस ॥ ५

इसके अतिरिक्त श्रीराजजीके आदेशने और भी महान कार्य किया है. उसने सदगुरु श्री देवचन्द्रजीका वेश धारण कर इस जगतमें आकर अपने आवेशके द्वारा क्षर, अक्षर तथा अक्षरातीत (मृत्युलोक, वैकुण्ठ, अक्षरधाम तथा परमधाम आदि) की पहचान करवाई है.

इलम दिया सब अरसों का, कहूँ जरा न रही सक ।
हम हादी मोमिन सब मिल, करें जारी वास्ते इसक ॥ ६

उसने मृत्युलोकसे लेकर परमधाम तक सभी धार्मोंका ज्ञान दिया जिससे किसीमें भी लेशमात्र संशय नहीं रहा. इसलिए अब हम सभी ब्रह्मात्माएँ श्रीश्यामाजीके साथ मिलकर श्री राजजीके हृदयके प्रेमको व्यक्त करनेके लिए ब्रह्मज्ञानस्वरूप तारतम ज्ञानका प्रचार-प्रसार करें.

और जेती किताबें दुनीमें, तिन सबों पोहोंची सरत ।
सो सब खोली किताबें हुकमें, केहे दई सबों कथामत ॥ ७

इस नक्षर जगतमें जितने भी धर्मग्रन्थ हैं उन सभीकी भविष्यवाणी चरितार्थ होनेका समय आ गया है. श्रीराजजीके आदेशने उन धर्मग्रन्थोंके गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट कर दिया एवं सबको आत्म-जागृतिका समय बता दिया है.

फिराए दिए सब फिरके, सब आए बीच हक दीन ।
भिस्त दई हम सबन को, ल्याए सब हक पर यकीन ॥ ८

विभिन्न मत-मतान्तरको मानने वाले लोगोंके हृदयके भावोंका भी परिवर्तन

कर दिया जिससे वे सभी एक ही परब्रह्म परमात्माको स्पष्ट करने वाले धर्म (श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म) की शरणमें आ गए. जिन जीवोंने परब्रह्म परमात्माके प्रति विश्वास व्यक्त किया है उन सभीको हमने अखण्ड मुक्तिस्थलोंमें स्थान दिला दिया है.

बका तरफ कोई न जानत, ए जो चौदे तबक ।

सो रात मेटके दिन किया, पट खोल अरस हक ॥ ९

इन चौदह लोकोंमें आज तक कोई भी अखण्ड परमधामके विषयमें नहीं जानता था. इसलिए अज्ञान-अन्धकार रूपी रात्रिको मिटाकर तारतम ज्ञानरूपी प्रकाशमें दिव्य परमधामके द्वार खोलकर पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान करवा दी.

ऐसा खेल इन भांत का, यामें गई ना कबूँ किन सक ।

ताको साफ किए हक हुकमें, सब जले बीच इसक ॥ १०

नश्वर जगतका यह खेल ही इस प्रकारका है कि इसमें आज तक किसीके भी संशय नहीं मिटे हैं. परन्तु श्रीराजजीके आवेशने हमारे द्वारा उन सभीके सन्देहोंका निवारण कर दिया है. जिससे वे सभी पश्चात्तापकी अग्निमें जलकर धामधनीके प्रेमसे पवित्र हो गए हैं.

हम मांगें इसक वतनी, आई हमपें हक न्यामत ।

हमें ऐसा खेल देखाइया, इत बैठे देखें खिलवत ॥ ११

इस नश्वर जगतमें आकर भी हमने दिव्य परमधामके शाश्वत प्रेमकी कामना की. इसलिए श्रीराजजीने हमें अपना प्रेम प्रदान कर परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदाओंका अनुभव करवाया. वस्तुतः श्रीराजजीने हमें नश्वर जगतका ऐसा खेल दिखाया है जहाँ पर बैठे हुए हम मूलमिलावाके दर्शन करते हैं.

ऐसे किए हमें इलमें, कोई छिपी न रही हकीकत ।

जाहेर गुड़ा सब अरसों की, ऐसी पाई हक मारफत ॥ १२

श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानने हमें इतना समर्थ बनाया कि अब हमसे परमधामकी कोई भी यथार्थता छिपी नहीं रही है. अब हम मृत्युलोकसे लेकर

परमधामके सभी गूढ़ रहस्य स्पष्ट कर सकते हैं। हमें ऐसी पूर्ण पहचान प्रदान की गई है।

हम झूठी जिमी बीच बैठके, करें जाहेर हक सूरत ।

एही ख्वाब के बीचमें, बताए दई वाहेदत ॥ १३

अब हम इस नश्वर जगतमें बैठे हुए भी श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपका वर्णन कर रहे हैं। क्योंकि इस स्वप्नवत् जगतमें भी श्रीराजजीने हमें एकात्मभावकी पहचान करवा दी है।

तो ए झूठी जिमी कायम हुई, ऐसी हक बरकत ।

जाने आगूं कह्या रसूलने, देसी हम सबों भिस्त ॥ १४

श्रीराजजीके आदेशमें इतनी शक्ति है कि इस स्वप्नवत् जगतको भी उसने अखण्ड कर दिया है। पूर्वसे ही रसूल मुहम्मदने कह दिया था कि ब्रह्मात्माएँ अन्तिम समयमें प्रकट होकर सभी जीवोंको मुक्तिस्थलका सुख प्रदान करेंगी।

इलमें ऐसे बेसक किए, इत बैठे पाइए सुध ।

हम इत आए बिना, देखी खेलकी सब विध ॥ १५

तारतम ज्ञानने हमें इस प्रकार सन्देह रहित बना दिया कि अब हमें यहाँ पर बैठे-बैठे परमधामकी सम्पूर्ण सुधि प्राप्त हो गई है। वस्तुतः इस जगतमें आए बिना ही हमने जगतकी सम्पूर्ण यथार्थता जान ली है।

हम तेहेकीक रूहें अरस की, इन इलमें किए बेसक ।

ए देख्या खेल झूठा जान के, क्यों छोड़ें वरनन हक ॥ १६

इस तारतम ज्ञानके द्वारा हमें निश्चित ज्ञात हुआ कि हम परमधामकी ब्रह्मात्माएँ हैं और जान बूझकर इस नश्वर जगतका खेल देख रही हैं। इसलिए यहाँ पर श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन करना क्यों छोड़ें ?

कह्या रसूलें फुरमान में, अरस दिल मोमन ।

हम और क्यों केहेलाइए, बिना अरस हक वतन ॥ १७

रसूल मुहम्मदने भी कुरानमें यही कहा है कि ब्रह्मात्माओंका हृदय परमधाम

है. इसलिए श्रीराजजीके परमधामके अतिरिक्त हमारा अन्य कौन-सा स्थान हो सकता है ?

ताथें फेर फेर वरनन, करें हक बका सूरत ।

हुकमें इलम यों केहेवहीं, कोई और न या बिन कित ॥ १८

इसलिए श्री राजजीके अखण्ड स्वरूपका वारंवार वर्णन किया है. श्री राजजीके आदेशके प्रतापसे यह तारतम ज्ञान स्पष्ट करता है कि श्रीराजजीके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है.

छिनमें सिनगार बदलें, करें नए नए रूप अनेक ।

होत उतारे पेहेने बिना, ए क्यों कह्यो जाए विवेक ॥ १९

श्रीराजजी क्षणमात्रमें अपना शृङ्गार बदलते हैं एवं नए-नए स्वरूपमें दर्शन देते हैं. वस्तुतः कोई भी वस्त्र तथा आभूषण उतारे बिना अथवा धारण किए बिना ही वहाँ पर शृङ्गार हो जाता है इसका विवरण किस प्रकार दिया जाए ?

हक सिनगार कीजे तो वरनन, जो घडी पल ठेहेराए ।

एक पाव पलमें, कै रूप रंग देखाए ॥ २०

वस्तुतः श्रीराजजीके शृङ्गारका वर्णन तभी हो सकता है जब वह पल भर भी स्थिर रहता हो. क्योंकि एक पलके चतुर्थ अंश मात्रमें ही यह शृङ्गार विभिन्न स्वरूपों तथा रङ्गोंमें दिखाई देता है.

और भी हक सरूप की, इन विधि है वरनन ।

रुहें देखें नए नए सिनगार, जिन जैसी चितवन ॥ २१

श्रीराजजीके इस अनुपम शृङ्गारकी और भी विशेषता है कि ब्रह्मात्माएँ अपनी इच्छाके अनुरूप श्री राजजीके नित्य नूतन शृङ्गारके दर्शन करती हैं.

ताथे वरनन क्यों करूं, किन विधि कहूं सिनगार ।

ए सोभा हक सूरत की, काहूं वार न पार सुमार ॥ २२

इसलिए इस शृङ्गारका वर्णन किस प्रकार किया जाए ? श्रीराजजीके स्वरूप तथा शृङ्गारकी शोभा ही ऐसी है कि उसका कोई पारावार नहीं है.

झूठी जुबां के सबदसों, और माएने लेना बका ।
जो सहूर कीजे हक इलमें, तो कछू पाइए गुङ्ग छिपा ॥ २३

इस नश्वर जगतकी जिहासे उच्चारित शब्दोंके द्वारा अखण्ड परमधामका वर्णन कैसे सम्भव होगा ? यदि श्रीराजजी प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा विचार किया जाए तभी परमधामकी दिव्यताका कुछ रहस्य स्पष्ट हो सकता है.

इलम होवे हक का, और हुकम देवे सहूर ।
होए जाग्रत रुह वाहेदत, कछू तब पाइए नूर जहूर ॥ २४

श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञान प्राप्त हो एवं श्रीराजजीके आदेशसे उस पर विचार करनेकी शक्ति प्राप्त हो जाए तभी दिव्य परमधामकी आत्मा जागृत होकर श्रीराजजीके तेजोमय स्वरूपका कुछ अनुभव प्राप्त कर सकती है.

ए सुपन देह पाँच तत्व की, वस्तर भूषन उपले ऐसे हैं ।
अरस रुह सूरत को, मुहकक पेहेनावा क्या कहे ॥ २५

यह स्वप्नकी देह पाँच तत्व द्वारा निर्मित है एवं इसके द्वारा धारण किए हुए वस्त्र तथा आभूषण भी इन्हीं तत्वोंके संयोगसे बने हुए हैं. इसलिए यह आत्मा परमधामके दिव्य स्वरूपके वास्तविक परिधानका वर्णन कैसे कर सकती है ?

रुह सूरत नहीं तत्व की, जो वस्तर पेहेन उतारे ।
नूर को नूर जो नूर हैं, कौन तिन को सिनगारे ॥ २६
ब्रह्मात्माओंके मूल तन (पर-आत्मा) पाँच तत्वों द्वारा निर्मित नहीं हैं, जो इस प्रकार वस्त्रोंको धारण कर उतारने लग जाएँ. वे तो तेजोमय स्वरूप श्रीराजजीकी अङ्गना श्रीश्यामाजीके अङ्ग स्वरूप हैं. इसलिए उनको कौन-से वस्त्र तथा आभूषण सुसज्जित कर सकते हैं.

पेहेले दृढ़ कर हक सूरत, ए अंग किन नूरके ।
हक जात के निसबती, बका मोमिन समझें ए ॥ २७
सर्वप्रथम श्रीराजजीके स्वरूपके प्रति दृढ़ता होनी चाहिए कि उनका स्वरूप (अङ्ग-प्रत्यङ्ग) किस प्रकारके प्रकाशसे प्रकाशित है. वस्तुतः इस रहस्यको

तो श्रीश्यामाजीकी अङ्ग स्वरूपा परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही समझ सकतीं हैं।

नूर सोभा नूर जहूर, और न सोभा इत ।
देखो अरस तन अकलें, ए सरूप वाहेदत ॥ २८

श्रीराजजीकी दिव्य शोभा उनके दिव्य आलोकसे आलोकित है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई शोभा नहीं है। यदि पर-आत्माकी बुद्धिसे देखें तो यह अद्वैत स्वरूप एकात्मभाव युक्त है।

नाजुकी इन सरूप की, और अति कोमलता ।
सो इन अंग जुबां क्या कहे, नूर जमाल सूरत बका ॥ २९

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपकी सौम्यता एवं मृदुलता ऐसी अनुपम है कि नश्वर जगतके शरीरकी जिह्वाके द्वारा इन अखण्ड परमधामके स्वामीके प्रकाशमय स्वरूपका वर्णन ही नहीं हो सकता है।

जैसी सरूप की नाजुकी, तैसी सोभा सलूक ।
चकलाई चारों तरफों, दिल देख न होए टूक टूक ॥ ३०

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपमें जैसी सुकोमलता है वैसी ही अप्रतिम सुन्दरता भी है। चारों ओर व्यास उनकी सुन्दरताको देखकर यह हृदय क्यों खण्डित नहीं हो जाता है ?

आसिक अपने सौक को, विध विध सुख चहे ।
सोई विध विध रूप सरूप के, नई नई लजत लहे ॥ ३१

अनुरागिनी आत्माएँ श्रीराजजीसे सर्वदा अपनी अभिरुचिके अनुरूप विभिन्न प्रकारके सुख चाहती हैं। इसलिए वे श्रीराजजीके विभिन्न स्वरूपके दर्शन कर नित्य नूतन आनन्द प्राप्त करती हैं।

दिल रूहें बारे हजार को, रूप नए नए चाहे दम दम ।
दें चाह्या सरूप सबन को, इन विध कादर खसम ॥ ३२

इन बारह हजार ब्रह्मात्माओंके हृदयमें प्रतिपल श्रीराजजीके नूतन स्वरूपके दर्शनकी चाहना बनी रहती है एवं स्वयं श्रीराजजी भी इन ब्रह्मात्माओंकी इच्छा अनुसार अपने स्वरूपका दर्शन देकर उन्हें आनन्दित करते हैं।

रुहें दिल सब ऐकै, नए नए इसक तरंग ।
पिएँ प्याले फेर फेर, माहों माहें करें प्रेम जंग ॥ ३३

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें एकात्मभाव है. इसलिए उनके हृदयोंमें प्रेमकी नित्य
नूतन तरङ्गे प्रकट होती हैं. जब वे वारंवार प्रेमका प्याला पीती हैं तो उसकी
तरङ्गे परस्पर छन्द करती हुई दिखाई देती हैं.

ए बारीक बातें अरस की, बिन मोमिन न जाने कोए ।
मोमिन भी सो जानहीं, जाको आई फजर खुसबोए ॥ ३४

परमधामके इस गूढ़ रहस्यको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जानता
है. ब्रह्मात्माओंमें भी वे ही जान सकती हैं जिनको जागृतिकी सुगन्धि प्राप्त
हो गई हो.

जो कछू बीच अरस के, पसु पंखी नंग वन ।
सोभा बानी कोमल, खुसबोए रंग रोसन ॥ ३५

परमधाममें विद्यमान जितने भी पशु-पक्षी, रल, वन आदिकी शोभा एवं
सुन्दरता है, उनकी सुमधुर वाणी, सुकोमलता, सुगन्धि तथा विभिन्न रङ्गके
प्रकाशको ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं.

मैं नरमाई एक फूल की, जोड़ देखी रुह देह संग ।
क्यों जुडे जिमी सोहोबती, सोहोबत जात हक अंग ॥ ३६

मैंने परमधामके एक पुष्पकी सुकोमलताको ब्रह्मात्माओंके तनके साथ तुलना
की तो मुझे जात हुआ कि उन पुष्पोंकी संगति ब्रह्मात्माओंके अङ्गोंके साथ
कैसे हो सकती है ? क्योंकि उनकी सङ्गति तो श्रीराजजीके अङ्गोंके साथ
सदा सर्वदा बनी हुई है.

क्यों कर आवे बराबरी, खावंद और खेलौने ।
ए मुहकक क्या विचारहीं, जाहेर तफावत इनमें ॥ ३७

दिव्य परमधामके स्वामी श्रीराजजी एवं ब्रह्मात्माओंके खिलौने समान इन
वस्तुओंमें कैसे समानता हो सकती है ? इस नश्वर जगतके जीव इन दोनोंका
स्पष्ट अन्तर पर कैसे विचार कर सकते हैं ?

ए चीजें कही सब अरस की, लीजे माहें सहूर कर ।

ए खेलौने रुहन के, नहीं खावंद बराबर ॥ ३८

इस प्रकार परमधामकी सामग्रियोंका वर्णन किया गया है. इनको विचार करते हुए हृदयङ्गम करना चाहिए. ये सभी वस्तुएँ ब्रह्मात्माओंके लिए मात्र खिलौने ही हैं. इसलिए ये कभी भी श्रीराजजीके समान नहीं हो सकते हैं.

अरस चीज भी लीजे सहूर में, जिन अरस खावंद हक ।

इन अरस की एक कंकरी, उडावे चौदे तबक ॥ ३९

इसी प्रकार परमधामकी वस्तुओंके विषयमें भी विचार किया जा सकता है, जिनके स्वामी स्वयं अक्षरातीत परमात्मा हैं. वस्तुतः परमधामका मात्र एक कण भी इन चौदह लोकोंके अस्तित्वको नगण्य कर देता है.

इत बैठ झूठी जिमी में, झूठी अकल झूठी जुबान ।

अरस चीज मुकरर क्यों होवहीं, जो कायम अरस सुभान ॥ ४०

इस नश्वर जगतकी मिथ्या भूमिमें बैठकर मिथ्या बुद्धि एवं मिथ्या वाणीके द्वारा दिव्य परमधामके शाश्वत वस्तुओंका निश्चय पूर्वक वर्णन कैसे हो सकता है ?

अरस चीज न आवे इन अकलों, तो क्यों आवे रुह मूरत ।

जो ए भी न आवे सहूर में, तो क्यों आवे हक सूरत ॥ ४१

इस नश्वर जगतकी बुद्धिमें परमधामकी अखण्ड वस्तुएँ ही समा नहीं पार्ती हैं तो ब्रह्मात्माओंका स्वरूप कैसे समा पाएगा ? यदि हृदयपूर्वक विचार करने पर भी इतनी सुधि नहीं रहती तो हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप कैसे अङ्कित हो सकेगा ?

एक रुहें और खेलौने, देख इत भी तफावत ।

सूरत हक हादी रुहें, देख जो कहावें वाहेदत ॥ ४२

बका चीज जो कायम, तिन जरा न कबूं नुकसान ।

जेती चीज इन दुनी की, सो सब फना निदान ॥ ४३

परमधाममें ब्रह्मात्माएँ तथा उनके खिलौनेके अन्तरको देखो. तत्पश्चात्

श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके अद्वैत स्वरूपको भी देखो। परमधामकी सभी वस्तुएँ अखण्ड हैं। जिनमें कण मात्रकी भी कभी क्षति नहीं होती है। किन्तु संसारमें जितनी भी वस्तुएँ हैं वे सभी निश्चय ही नश्वर हैं।

जेती चीजें अरस की, न होए पुरानी कब ।

नुकसान जरा न होवही, ए लीजे सहूर में सब ॥ ४४

परमधामकी सभी सामग्री कभी भी पुरानी नहीं होती हैं एवं उनमें लेशमात्र भी क्षय नहीं होता है। इस पर भलीभाँति विचार कर लेना चाहिए।

तो हक अरस है कह्या, ए चौदे तबक जरा नाहें ।

जो नाहीं सो है को क्या कहे, ताथें आवत न सबद माहें ॥ ४५

इसलिए श्रीराजजी तथा दिव्य परमधामको नित्य कहा है एवं इन चौदह लोकोंको अनित्य कहा है। अनित्य वस्तुएँ कैसे नित्यका वर्णन कर सकती हैं ? अत एव शब्दोंके द्वारा अखण्ड परमधामका वर्णन नहीं हो सकता है।

जेती चीजें अरस की, जोत इसक मीठी बान ।

खूबी खुसबोए हक चाहेल, तहां नजीक ना नुकसान ॥ ४६

परमधामकी सभी वस्तुओंमें तेजोमयता, प्रेम तथा मधुर वाणी है। उनमें श्रीराजजीकी इच्छानुसार सुगन्धि भी परिपूर्ण है। वहाँ पर कभी भी क्षति निकट नहीं आ सकती है।

नूर और नूर तजल्ला, कहे महंमद दो मकान ।

दोए सूरतें जुदी कही, ताकी रुहअल्ला दै पेहेचान ॥ ४७

रसूल मुहम्मदने अक्षरब्रह्म (नूर) एवं अक्षरातीत परब्रह्म (नूरतजल्ला) के दो दिव्य धारों (अक्षरधाम तथा परमधाम) का उल्लेख किया है। इन दोनों स्वरूपोंको अलग-अलग बताया है। सदगुरु श्री देवचन्द्रजीने प्रकट होकर इनकी पूर्ण पहचान करवाई है।

नाजुक नरम तेज जोत में, सलूकी सोभा मीठी जुबान ।

सुंदर सरूप खुसबोए सों, पूरन प्रेम सुभान ॥ ४८

श्रीराजजीके तेजोमय स्वरूपमें कमनीयता, कोमलता, तेजस्विता, सुन्दरता

तथा वचनमाधुर्य है। इतना ही नहीं उनका अप्रतिम सौन्दर्य सुगन्ध तथा प्रेमसे परिपूर्ण है।

सोई सरूप है नूर का, सोई सूरत हादी जान ।
रुहें सूरत वाहेदत में, ए पूरन इसक परवान ॥ ४९
उसी प्रकारका दिव्य स्वरूप अक्षरब्रह्मका है एवं श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंका स्वरूप भी उसी प्रकारका है। उनमें परस्पर एकात्मभाव है। निश्चय ही ये सभी प्रेमसे परिपूर्ण हैं।

हक सूरत अति सोहनी, दोऊ जुगल किसोर ।
गौर मुख अति सुंदर, ललित कोमल अति जोर ॥ ५०
युगलकिशोर श्रीराजश्यामाजी दोनोंका स्वरूप अत्यन्त मनमोहक है। उनके गौरवर्णके सुन्दर मुखारविन्द पर लालित्य एवं कोमलताका भाव स्पष्टरूपमें व्यक्त होता है।

और रुहों की सूरतें, जो असल अरस में तन ।
सो सहूर कीजे हक इलमें, देखो अपना तन मोमन ॥ ५१
इसी प्रकार ब्रह्मात्माओंके मूल तन (पर-आत्मा) का स्वरूप भी अति दिव्य है। हे ब्रह्मात्माओ ! तारतम ज्ञानके द्वारा विवेकपूर्वक चिन्तन कर अपने मूल स्वरूपको देखो।

खूबी खुसाली न आवे सबद में, ना रंग रस बुध बान ।
कोई न आवे सोभा सबद में, मुख अरस खावंद मेहरबान ॥ ५२
श्रीराजजीके अत्यन्त शोभायुक्त मुदित मन तथा प्रसन्न हृदयकी महिमाको शब्दोंकी सीमामें बाँधा नहीं जा सकता है। उनके गौरवर्ण तथा बुद्धिचातुर्यको किस प्रकार अलझ कृत किया जाए ? इस प्रकार कृपा सागर पूर्णब्रह्म परमात्माकी दिव्य शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती।

जैसी है हक सूरत, और तिन वस्तर भूषन ।
जो सोभा देत इन सूरतें, सो क्यों कहे जाए जुबां इन ॥ ५३
श्रीराजजीका दिव्य स्वरूप जैसा तेजोमय है उसी प्रकार उनके वस्त्र तथा

आभूषण भी देदीप्यमान हैं. ये वस्त्र तथा आभूषण श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपको अत्यन्त सुशोभित करते हैं. जिह्वाके द्वारा इनका वर्णन नहीं हो सकता है.

दिल में जानों देऊं निमूना, समझाऊं रुहों को ।
खूबी दुनी की देख के, लगाए देखों अरस सो ॥ ५४

मुझे वारंवार इच्छा होती है कि इस सम्बन्धमें कुछ उदाहरण देकर ब्रह्मात्माओंको समझाऊँ. इस नश्वर जगतकी विशेषताओंको देखकर परमधामकी सुन्दरताके साथ उसकी तुलना करूँ.

हक अंग कैसे वरनबूँ, इन झूठी जुबां के बल ।
बका अंग क्यों कर कहूँ, यों फेर फेर कहे अकल ॥ ५५
किन्तु नश्वर जिह्वाके द्वारा श्रीराजजीके दिव्य अङ्गोंका वर्णन कैसे करूँ ? मेरी बुद्धि बार-बार यही कहती है कि मैं इन अखण्ड अङ्गोंका वर्णन कैसे करूँ ?

रूप रंग इत क्यों कहिए, ले मसाला इत का ।
ए सुकन सारे फना मिने, हक अंग अरस बका ॥ ५६
यहाँ पर नश्वर जगतका उदाहरण देकर श्रीराजजीके दिव्य स्वरूप तथा वर्णका वर्णन कैसे करें ? क्योंकि यह वाणी ही नश्वर जगतकी है और श्रीराजजीके अङ्ग साक्षात् अखण्ड परमधामके हैं.

रूप रंग गौर लालक, कहूँ नूर जोत रोसन ।
ए सबद सारे ब्रह्मांड के, अरस जरा उडावे सबन ॥ ५७
श्री राजजीके दिव्य स्वरूपका वर्णन करते हुए यदि उनके रूप, रङ्गको गौरवर्ण, लालिमायुक्त आदि शब्दोंका प्रयोग करते हुए उनके दिव्य आलोक, ज्योतिर्मयी आभा तथा प्रखर प्रकाश आदिका वर्णन भी करें तो भी ये सारे शब्द इसी ब्रह्मांडके होनेके कारण सार्थक नहीं लगते हैं क्योंकि ये सभी शब्द परमधामके एक कण मात्रसे ही विलीन हो जाते हैं.

गौर हक अंग केहेत हों, ए गौर अंग लाहूत ।
और कहूं सुंदर सलूकी, ए छवि है अद्भूत ॥ ५८
श्रीराजजीके अङ्गोंका वर्णन करते हुए मैं उनके गौरवर्णकी बात करता हूँ तो
वह गौरवर्ण परमधामका समझना चाहिए. इसी प्रकार उनकी अद्भुत शोभा
तथा अनुपम छविका वर्णन भी परमधामका ही समझना चाहिए.

चकलाई हक अंगों की, रूप जाने अरवा अरस ।
रूह जागी जाने खेल में, जो हुई होए अरस परस ॥ ५९
क्योंकि परमधामकी ब्रह्मात्मा एँ ही श्रीराजजीके अङ्गोंकी सुन्दरता जान सकतीं
हैं अथवा जो आत्मा एँ नश्वर जगतमें भी जागृत हो गई हैं वे ही इन अङ्गोंके
साथ एक रस होकर इनके विषयमें जान सकतीं हैं.

जो रूह जगाए देखिए, तो ठौर नहीं बोलन ।
जो चुप कर रहिए, तो क्या लें आहार मोमिन ॥ ६०
यदि आत्माको जागृत कर देखें तो श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपका वर्णन नहीं
हो सकता है. यदि मौन रह जाएँ तो ब्रह्मात्मा एँ इस स्वरूपका अनुभव कैसे
कर पाएँगी ?

मैं देखा दिल विचार के, सुनियो तुम मोमन ।
देऊं निमूना दुनी अरस का, तुम देखियो दिल रोसन ॥ ६१
हे ब्रह्मात्माओ ! सुनो, मैंने हृदयपूर्वक विचार करके देखा और निश्चय किया
कि नश्वर जगतकी उपमा देकर भी परमधामका वर्णन अवश्य कर लेना
चाहिए. जिससे तुम तारतम ज्ञानके द्वारा हृदयको प्रकाशित कर इस पर
विचार कर सको.

कही कोमलता कमलन की, और जोत जवेरन ।
रंग सुरंग जानवरों, कै स्वर मीठी जुबां इन ॥ ६२
श्री राजजीके स्वरूपका वर्णन करते हुए मैंने उनके चरण कमलकी
सुकोमलता, परमधामके रत्नोंकी ज्योति, उनका रङ्ग तथा पशुपक्षीके मीठे
स्वर एवं मीठी वाणीका वर्णन यहींकी भाँति किया है.

कै खुसबोए माहें पंखियों, कै खुसबोए माहें फूलन ।
कै सोभा पसु पंखियों, कै नरमाई परन ॥ ६३

इसी प्रकार पशुपक्षियों तथा पुष्पोंमें भी विभिन्न प्रकारकी सुगन्धिका उल्लेख किया है. साथ ही पशुपक्षियोंकी विभिन्न प्रकारकी शोभा एवं उनके पद्मोंकी सुकोमलताका भी वर्णन किया है.

फूल कमल कै पसम, कैसी कोमल दुनी इन ।
फूल अतर चोवा मुस्क, जोत हीरा जवेन ॥ ६४

इस नश्वर जगतमें कमलका फूल, रेशमी वस्त्र आदिको सुकोमल कहा जाता है. इसी प्रकार फूल, इत्र तथा सुगन्धित द्रव्यको सुगन्धयुक्त कहा जाता है एवं हीरा तथा अन्य रत्नोंको ज्योतिर्मय कहा जाता है.

देखो प्रीत पसुअन की, और देखो प्रीत पंखिअन ।
एक चले दूजा ना रहे, जीव जात माहें छिन ॥ ६५

इस जगतमें विचरण करने वाले पशुओं तथा पक्षियोंकी प्रीतिको तो देखो, वे किस प्रकार एक दूसरेके बिना नहीं रह सकते हैं. उनमें-से किसी एकके चले जाने पर दूसरा भी क्षणभरमें ही मर जाता है.

छोटे बड़े जीव कै रंग के, जानों के देह कुंदन ।
कै नक्स कै बूटियाँ, कै कांगरी चित्रामन ॥ ६६

परमधाममें छोटे-बड़े विभिन्न रङ्गके पशुपक्षी भी मानों उनका शरीर स्वर्णमय हो इस प्रकार प्रतीत होते हैं. उनके शरीरमें विभिन्न प्रकारकी चित्रकारी, बूटियाँ, कंगरे आदि चित्रित हैं.

इन भांत केती कहूं, कै खूबी बिना हिसाब ।
ले खुलासा इन का, छोड दीजे झूठा ख्वाब ॥ ६७

इस प्रकार कितनी ही विशेषताओंका वर्णन करें, परमधामकी शोभा अपरम्पार है. इसलिए वहाँकी दिव्य शोभा एवं संसारकी अपूर्णताका स्पष्टीकरण हृदयङ्गम कर इस स्वप्नवत् जगतको त्याग दें.

देख दुनी देखो अरस को, कै रंगों सोभें जानवर ।

सुख सनेह खूबी खुसाली, कै मुख बोलत मीठे स्वर ॥ ६८

अब इस संसारके पशुपक्षियोंकी सुन्दरताको देखकर परमधामके पशुपक्षियोंकी सुन्दरताके विषयमें विचार करो. वहाँ पर विभिन्न रङ्गोंके पशुपक्षी सुशोभित हैं. उनका पारस्परिक सुख, स्नेह, सुन्दरता आदि अनुपम हैं. वे मीठे स्वरमें मधुरवाणीका उच्चारण करते हैं.

जीव जल थल या जानवरों, कै केसों परन ।

कै रंग खूबी देख विचार के, ले अरस मसाला इन ॥ ६९

परमधाममें जलचर अथवा स्थलचर किसी भी पशुपक्षियोंको देखो उनके पङ्क्षों तथा बालोंमें विभिन्न प्रकारके रङ्गकी विशेषता है. इस प्रकार परमधामके ही दिव्य उदाहरण लेकर इन पशुपक्षियोंकी विशेषता देखो.

इन विध मैं केती कहूं, रंग खूबी खुसबोए ।

परों फूलों चित्रामन, कही प्रीत इनोंकी सोए ॥ ७०

इस प्रकार मैं कहाँ तक वर्णन करूँ ? इन पशुपक्षियोंके रङ्ग, इनकी विशेषताएँ, इनकी सुगंधि, इनके पङ्क्षों पर चित्रित पुष्पलता आदिकी शोभा एवं इनकी पारस्परिक प्रीति असीम तथा अगाध है.

इन विध देखो निमूना, जो झूठी जिमी का विचार ।

तो कौन विध होसी अरस में, जो सोभा बार न पार सुमार ॥ ७१

यदि इस नश्वर जगतमें भी विभिन्न प्रकारकी विशेषताएँ हैं तो इसके उदाहरणोंके आधार पर विचार करो कि परमधाममें कैसी विशेषताएँ होंगी, जहाँकी शोभाका कोई पारावार ही नहीं है.

एक देखी विध संसार की, और विध कही अरस ।

सांच आगे झूठ कछू नहीं, कर देखो दिल दुरस्त ॥ ७२

इस नश्वर जगतकी विविधताको देखकर परमधामकी विशेषताओंका वर्णन करनेका प्रयत्न किया है. किन्तु सत्यके समक्ष अनित्य वस्तुओंका कोई अस्तित्व ही नहीं होता है. इस प्रकार हृदयपूर्वक विचार करो कि परमधामकी

शोभाके समक्ष नश्वर जगतकी शोभाका कोई अस्तित्व ही नहीं है।

सांच भोम की कंकरी, उड़ावे जिमी आसमान ।

कैसी होसी अरस खूबियां, जो खेलौने अरस सुभान ॥ ७३

परमधामकी नित्य भूमिका एक कण भी नश्वर जगतकी भूमि तथा आकाशको उड़ा सकता है। तो फिर दिव्य परमधामके पशुपक्षियोंकी विशेषता कैसी होगी जो स्वयं श्रीराजजीके खिलौने समान हैं।

सो खूब खेलौने देखिए, इनों निमूना कोई नाहें ।

सिफत इनों ना केहे सकों, मेरी इन जुबांए ॥ ७४

क्रीड़ापत्र (खिलौने)के समान इन पशुपक्षियोंकी विशेषता तो देखो, जिनकी सुन्दरताके लिए कोई उपमा ही नहीं है। मैं अपनी जिह्वाके द्वारा इनकी अनुपम शोभाका वर्णन नहीं कर सकता।

कै जुगतें खूबियां, कै जुगतें सनकूल ।

कै जुगतें सलूकियां, कै जुगतें रस फूल ॥ ७५

इनमें विभिन्न प्रकारकी कलाएँ हैं। ये अपनी कलाओंसे श्रीराजजीको प्रसन्न करते हैं। उनकी सुन्दरता विभिन्न प्रकारकी पुष्पलताओंके चित्रणसे सुशोभित है।

कै जुगतें चित्रामन, ऊपर पर केसन ।

कै मुख मीठी बानियां, स्वर जिकर करें रोसन ॥ ७६

इन पशुपक्षियोंके पद्म तथा रोमावलिमें विभिन्न प्रकारके चित्र चित्रित हैं। वे अपनी मधुरवाणी एवं कर्णप्रिय स्वरसे श्रीराजजीका गुणगान करते हैं।

जेती खूबियां अरस की, सब देखिए जमा कर ।

लीजे सब पेहेचान के, अंदर दिल में धर ॥ ७७

परमधामकी इन सभी विशेषताओंको एक साथ अवलोकन करो एवं उनको पूर्णतया पहचान कर हृदयमें धारण करनेका प्रयत्न करो।

रंग रस नूर रोसनी, सोभा सुंदर खूबी खुसबोए ।
तेज जोत कोमल, देख नरम नाजुकी सोए ॥ ७८

इन पशुपक्षियोंके रङ्ग, रस, प्रकाश, किरणें, शोभा, सुन्दरता, सुगन्धि, तेज, ज्योति, कोमलता एवं कमनीयताको देखो.

दिल अरस खुलासा लेय के, और देख अरस रुह अंग ।
रुहें सरभर कोई आवे नहीं, खूबी रूप सलूकी रंग ॥ ७९
अपने हृदयमें तारतम ज्ञानका स्पष्टीकरण लेकर अपनी पर-आत्माकी शोभाको देखो तो जात होगा कि पर आत्माकी तुलनामें अन्य कोई वस्तु नहीं आ सकती है. इसकी शोभा, रूपमाधुर्य एवं सुन्दरता ही अद्वितीय है.

खेल खावंद कैसी सर भर, जो रुहें अंग हादी नूर ।
हादी नूर हक जातका, मोमिन देखें अरस सहूर ॥ ८०
ब्रह्मात्माएँ श्रीश्यामाजीकी अङ्गस्वरूपा हैं एवं स्वयं श्यामाजी श्रीराजजीकी अङ्गभूता हैं. उनकी तुलना इस नश्वर खेलके स्वामी त्रिदेवोंके साथ कैसे की जा सकती है ? ब्रह्मात्माएँ ही तारतम ज्ञानके द्वारा यह अन्तर समझ सकती हैं.

सिफत ऐसी कही मोमिनों, जाके अकस का दिल अरस ।
हक सुपने में भी संग कहे, रुहें इन विध अरस परस ॥ ८१
ब्रह्मात्माओंकी महिमा इतनी अधिक बताई गई है कि जिनकी सुरताने धारण किए हुए नश्वर शरीरके हृदयको भी श्रीराजजीने परमधामकी संज्ञा दी है. इस स्वप्नवत् जगतमें भी श्रीराजजी इस प्रकार इनके साथ रहे हैं. परमधाममें तो ये श्रीराजजीके ही अङ्ग होनेसे परस्पर एक ही स्वरूप हैं.

ए जो मोमिन अकस कहे, जानों आए दुनियां माहें ।
हक अरस कर बैठे दिल को, जुदे इत भी छोडे नाहें ॥ ८२
इस जगतमें आई हुई ब्रह्मात्माएँ परमधामकी पर आत्माके प्रतिबिम्ब (सुरता) स्वरूप मानी गई हैं. इनके हृदयको भी परमधाम बनाकर स्वयं श्री राजजी उसमें विराजमान हुए. उन्होंने इस नश्वर जगतमें भी उनका साथ नहीं छोड़ा है.

अक्स के जो असल, ताए खेलावत सूरत ।
सो हिंमत अपनी क्यों छोड़हीं, जामें अरस की बरकत ॥ ८३

इस प्रतिबिम्बका मूल स्वरूप (पर-आत्मा) परमधाममें है. उनको अपने चरणोंमें बैठाकर श्रीराजजी नश्वर जगतका यह खेल दिखा रहे हैं. ऐसी ब्रह्मात्माएँ अपना साहस कैसे छोड़ सकती हैं जिनमें साक्षात् परमधामकी शक्ति समाहित है.

दुनी नाम सुनत नरक छूटत, इनोंपें तो असल नाम ।
दिल भी हकें अरस कह्या, याकी साहेदी अल्ला कलाम ॥ ८४

इस नश्वर जगतके जीव भी अपने स्वामी (ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि) का नाम सुनते ही नरकसे छुटकारा प्राप्त करते हैं तो इन ब्रह्मात्माओंके पास तो अपने स्वामी पूर्णब्रह्म परमात्माका मूल नाम अनादि अक्षरातीत श्रीकृष्ण है. स्वयं परब्रह्म परमात्माने इनके हृदयको परमधामकी संज्ञा दी है. कुरान आदि धर्मग्रन्थ भी इन्हीं ब्रह्मात्माओंकी साक्षीके लिए हैं.

इलम भी हकें दिया, इनमें जरा न सक ।
सो क्यों न करें फैल वतनी, करें कायम चौदे तबक ॥ ८५

स्वयं अक्षरातीत श्रीकृष्णने प्रकट होकर इन ब्रह्मात्माओंको तारतम ज्ञान दिया है, इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है. इसलिए ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें परमधामका व्यवहार कैसे नहीं करेंगी ? जिन्होंने इन चौदह लोकोंको भी अखण्ड कर दिया है.

प्रतिबिंब के जो असल, तिनों हक बैठे खेलावत ।
तहां क्यों न होए हक नजर, जो खेल रुहों को देखावत ॥ ८६

इन्हीं पूर्णब्रह्म परमात्माने इन ब्रह्मात्माओंके मूल स्वरूप (परआत्मा) को अपने निकट बैठाकर यह नश्वर खेल दिखाया है. इन पर-आत्माके ऊपर उनकी कृपादृष्टि क्यों नहीं होगी जिनको वे अपने चरणोंमें बैठाकर यह खेल देखा रहे हैं.

आडा पट भी हकें दिया, पेहेले ऐसा खेल सहूरमें ले ।

जो खेल आया हक सहूर में, तो क्यों न होए कायम ए ॥ ८७

सर्वप्रथम पूर्णब्रह्म परमात्माने ऐसा नश्वर खेल दिखानेका विचार कर इन ब्रह्मात्माओंके हृदयमें भ्रम (फरामोशी) का आवरण डाल दिया. जो नश्वर खेल सर्वप्रथम पूर्णब्रह्म परमात्माके हृदयमें आ गया है, वह कैसे अखण्ड नहीं होगा ?

हुए इन खेल के खावंद, प्रतिबिंब मोमिनों नाम ।

सो क्यों न लें इसक अपना, जिन अरवा हुजत स्यामा स्याम ॥ ८८

इन ब्रह्मात्माओंके प्रतिबिम्बके नाम भी स्वप्नवत् जगतके खेलके स्वामीके रूपमें माने गए हैं. जिनको अपने श्यामाश्यामका अधिकार प्राप्त है ऐसी आत्माएँ अपने हृदयमें अपने स्वामीका प्रेम क्यों धारण नहीं करेंगी ?

बड़ी बडाई इनकी, जिन इसके चौदे तबक ।

करम जलाए पाक किए, तिन सबों पोहोंचाए हक ॥ ८९

इन ब्रह्मात्माओंकी महिमा अत्यन्त श्रेष्ठ है. इनके प्रेमके प्रभावने चौदह लोकोंके जीवोंके कर्मबन्धन भस्मीभूत कर उनके हृदयको पवित्र बनाया एवं उन सभीको अखण्ड मुक्ति प्रदान की है.

इनों धोखा कैसा अरस का, जिन सूरतें खेलावें असल ।

खेलाए के खैंचें आपमें, तब तो असलै में नकल ॥ ९०

इन ब्रह्मात्माओंको अपने मूल घर परमधामके विषयमें कैसे सन्देह हो सकता है जिनके मूल स्वरूप (पर-आत्मा) को अपने चरणोंमें बैठाकर श्रीराजजी यह नश्वर खेल दिखा रहे हैं. जब श्रीराजजी इस नश्वर खेलको दिखाकर इसे अपने हृदयमें संवरण कर लेंगे तब ब्रह्मात्माओंकी सुरताएँ भी अपने मूल स्वरूपमें ही जागृत होंगी.

नकलें असलें जुदागी, एक जरा है आडा पट ।

कह्या सेहेरग से नजीक, तिन निपट है निकट ॥ ९१

मात्र भ्रमका लेशमात्र आवरण ही इन आत्माओंको अपने मूल स्वरूप (पर

आत्मा) से दूर होनेका अनुभव करवाता है. वस्तुत ये दूर नहीं हैं. इनके लिए स्वयं पूर्णब्रह्म परमात्मा भी प्राणनलीसे भी अधिक निकट कहे गए हैं.

इन सुपने देह माफक, हकें दिल में किया प्रवेस ।

ए हुकम जैसा कहावत, तैसा बोले हमारा भेस ॥ १२

इहोंने धारण किए हुए स्वज्ञवत् शरीरके हृदयमें भी श्रीराजजीने उसकी क्षमताके अनुसार (आवेशके रूपमें) प्रवेश किया है. इसलिए उनका आदेश जिस प्रकार प्रेरणा करता है उसीके अनुरूप इस नश्वर शरीरके द्वारा श्रीराजजीका वर्णन हो रहा है.

अरस तनका दिल जो, सो दिल देखत है हम कों ।

प्रतिबिंब हमारे तो कहे, जो दिल हमारे उन दिल मों ॥ १३

हमारी पर-आत्माका हृदय हमारे इस नश्वर शरीरके हृदयको देख रहा है. इसीलिए इस नश्वर शरीरको पर आत्माका प्रतिबिम्ब कहा है क्योंकि परआत्माके हृदयमें ही इसका हृदय अङ्कित है.

ऐसा खेल किया हुकर्में, हमारी उमेदां पूरन ।

हम सुख लिए अरस के, दुनीमें आए बिन ॥ १४

हमारी मनोकामनाओंको पूर्ण करनेके लिए ही श्रीराजजीके आदेशने संसारका यह अद्भुत खेल रचाया है. वास्तवमें नश्वर जगतमें आए बिना ही हमने इसमें परमधामके सुखोंका अनुभव किया है.

ना तो ऐसा वरनन क्यों करें, ए जो वाहेदत नूरजमाल ।

ना कोई इनका निमूना, ना कोई इन मिसाल ॥ १५

अन्यथा अद्वैत स्वरूप पूर्णब्रह्म परमात्माके स्वरूपका इस प्रकार वर्णन कैसे हो सकता है ? इनके लिए न कोई उदाहरण है और न ही कोई उपमा है.

अरस भोमकी एक कंकरी, तिन आगे ए कछुए नाहें ।

तो क्यों दीजे बका सुभान को, सिफत इन जुबांएं ॥ १६

परमधामके मात्र एक कणके समक्ष भी इस जगतका कोई अस्तित्व नहीं रहता

है. इसलिए अखण्ड धामके धनीके स्वरूपकी महिमा इस नश्वर जगतकी जिहासे कैसे गाई जाए ?

अरस जिमी सब वाहेदत, दूजा रहे ना इन्हों नजर ।
ज्यों रात होए काली अंधेरी, त्यों मिटाए देवे फजर ॥ १७

परमधामकी भूमि ही अद्वैत स्वरूपा है. उसके समक्ष अन्य किसीका अस्तित्व ही नहीं है. जैसे रात्रि चाहे कितनी ही गहन अन्धकारमयी क्यों न हो तथा सर्वत्र कलिमा क्यों न व्याप्त हो किन्तु प्रातःकालका सूर्य उस सम्पूर्ण अन्धकारको तत्काल समाप्त कर देता है.

है हमेसा एक वाहेदत, एक बिना जरा न और ।
अंधेर निमूना न लगत, अंधेर राखत है ठौर ॥ १८

परमधाम तो सर्वदा अद्वैत भूमिका है. वहाँ एकत्वभावके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है. इसलिए उसके लिए अन्धकारका उदाहरण नहीं दिया जा सकता क्योंकि उसका भी तो कुछ अस्तित्व है.

ए चौदे तबक कछुए नहीं, वेदों कहा आकास फूल ।
झूठा देखाई देत है, याको अंकूर ना मूल ॥ १९

इन चौदह लोकोंका कोई अस्तित्व ही नहीं है. वेदोंने इनको आकाशपुष्प कहा है. यहाँ पर जो कुछ दिखाई दे रहा है वस्तुतः वह सब मिथ्या है. इसका कोई जड़ या मूल कुछ भी नहीं है.

इत वाहेदत कबूं न जाहेर, झूठे हक को जाने क्यों कर ।
सुध वाहेदत क्यों ले सकें, जो उड़ें देखें नजर ॥ १००

इस नश्वर जगतमें कभी भी अद्वैत परमधामकी सुधि प्रकट नहीं हुई है. इसीलिए इस जगतके जीव पूर्णब्रह्म परमात्माको कैसे जान सकते हैं ? अखण्ड परमधामकी दृष्टिमें जिनका कोई अस्तित्व ही नहीं है ऐसे जगतके जीव अद्वैत भूमिकाकी सुधि कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?

असल बात वाहेदत की, अरस अरवाहें जाने मोमन ।
इत हक सुध मोमिनों, जाके असल अरस में तन ॥ १०१

परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही अद्वैत परमधामकी बातें जान सकतीं हैं. इस नश्वर

जगतमें भी इन्हीं ब्रह्मात्माओंको परब्रह्म परमात्माकी सुधि है। क्योंकि इनका ही मूल तन (पर-आत्मा) परमधाममें है।

अब तुम सुनियो मोमिनों, अरस बिने तुमारी बात ।
वाहेदत तो कहे मोमिन, जो रुहें असल हक जात ॥ १०२

हे ब्रह्मात्माओ ! अब सुनो, परमधाममें तुम्हारी कौन-सी स्थिति है ? तुम मूलतः श्रीराजजीकी अभिन्न अङ्ग हो। इसलिए तुम्हें अद्वैत स्वरूपा कहा गया है।

और एक मता रुहन का, देखो अरस वाहेदत ।
लीजो मोमिन दिलमें, ए हक अरस न्यामत ॥ १०३

ब्रह्मात्माओंकी एक और विशेषता यह भी है कि परमधाम और उनमें एकात्मभाव है। इसलिए हे ब्रह्मात्माओ ! इस जगतमें भी तुम अपने हृदयमें परमधामकी सम्पदा धारण करो।

नैन एक रुह के, जो सुख लेवें परवरदिगार ।
तिन सुख से सुख पोहोंचहीं, दिल रुहों बारे हजार ॥ १०४

परमधामकी यह स्थिति है कि यदि कोई आत्मा अपने नयनोंसे श्रीराजजीके सुख ग्रहण करती है तो उसके इस सुखसे पूरी बारह हजार ब्रह्मात्माओंके हृदयमें सुख पहुँच जाता है।

एक रुह बात करे हकसों, सुख लेवे रस रसनाएं ।
सो सुख रुहों आवत, दिल बारे हजार के माहें ॥ १०५

इसी प्रकार यदि एक आत्मा श्रीराजजीसे वार्तालाप करती हुई अपनी रसनासे सुख ग्रहण करती है तो वह सुख सभी बारह हजार ब्रह्मात्माओंके हृदयमें स्वतः पहुँच जाता है।

हक बोलावें रुह एक को, सो सुख पावे अतंत ।
सो बात सुन रुह हक की, सब रुहें सुख पावत ॥ १०६

जब श्रीराजजी किसी एक ब्रह्मात्माको बुलाते हैं तो उसे अपार आनन्दका

अनुभव होता है। श्रीराजजीकी वाणी सुनकर उसको जो सुख प्राप्त होता है उससे अन्य सभी ब्रह्मात्माओंको भी अपार सुखका अनुभव होता है।

रुह सुख हर एक बात का, हक सों अरस में लेवत ।

सो सुख सुन रुहें सबे, दिल अपने देवत ॥ १०७

इस प्रकार ब्रह्मात्माएँ परमधाममें श्रीराजजीसे हर प्रकारके सुख प्राप्त करती हैं। उन सुखोंको सुनकर सभी आत्माएँ उन्हें अपने हृदयमें धारण करती हैं एवं अपना हृदय दे बैठती हैं।

तो हकें कह्या अरस अपना, मोमिनों का जो दिल ।

तो सब त्याए वाहेदत में, जो यों सुख लेत हिलमिल ॥ १०८

इसीलिए परमात्माने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना परमधाम कहा है, जो इस प्रकार परस्पर हिल मिलकर अपार सुखका अनुभव करती हैं। इन सभी ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीने मूल मिलावामें अपने चरणोंमें बैठाया है।

इन विधि सुख केते कहाँ, अरस अरवा मोमन ।

तो आए वाहेदत में, जो हक कदम तले इनों तन ॥ १०९

इस प्रकार परमधामकी ब्रह्मात्माओंको प्राप्त सुखका वर्णन कहाँ तक करें ? ये इसीलिए श्रीराजजीके अद्वैत स्वरूपमें हैं क्योंकि इनका मूल स्वरूप (परात्मा) श्रीराजजीके चरणोंमें ही है।

हकें अरस कह्या दिल मोमिन, और भेज दिया इलम ।

क्यों आवें अरस दिल झूठमें, इत है हक का हुकम ॥ ११०

श्रीराजजीने इन्हीं ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है और उनके लिए ही जागृत बुद्धिका (तारतम) ज्ञान भेजा है। अन्यथा जिनका हृदय ही परमधाम है ऐसी ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें कैसे आ सकती हैं ? वस्तुतः श्रीराजजीके आदेशके कारण ही उनकी सुरताएँ यहाँ पर आई हैं।

ताथें वरनन इन दिल, अरस हक का होए ।

हक के इसक से जल जाए, और जरा न रेहेवे कोए ॥ १११

इसीलिए इन ब्रह्मात्माओंके हृदयसे श्रीराजजीके परमधामका वर्णन हो सका

है. श्रीराजजीके शाश्वत प्रेमसे संसारके छल-प्रपञ्च जलकर भस्म हो जाते हैं अर्थात् इन ब्रह्मात्माओंके लिए संसारका कोई अस्तित्व ही नहीं रहता है.

इन दिल को अरस तो कहा, जो खोल दिए बका द्वार ।
ताथें फेर फेर वरनवुं, हक वाहेदत का सिनगार ॥ ११२

इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है क्योंकि इन्होंने परमधामके द्वार खोल दिए हैं. इसलिए मैं अद्वैत स्वरूप श्रीराजजीके शृङ्गारका बार-बार वर्णन करता हूँ.

किसोर सूरत हादी हक की, सुंदर शोभा पूरन ।
मुख कमल कहूँ मुकुट की, पीछे सब अंग वस्तर भूषण ॥ ११३

श्री राज श्यामाजीका किशोर स्वरूप अत्यन्त सुन्दर शोभासे परिपूर्ण है. अब मैं उनके मुखारविन्द तथा उनके मुकुटकी शोभाका वर्णन करता हूँ, तत्पश्चात् सभी अङ्गोंमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषणोंका वर्णन करूँगा.

नख सिख लों वरनन करूं, याद कर अपना तन ।
खोल नैना खिलवत में, बैठ तले चरन ॥ ११४

मैं अपनी आत्मदृष्टि खोलकर मूलमिलावामें श्रीराजजीके चरणोंमें बैठी हुई पर-आत्माको स्मरण करते हुए श्रीराजजीके शृङ्गारमें नखसे लेकर शिखा पर्यन्तका वर्णन करता हूँ.

जैसा केहेत हों हक को, यों ही हादी जान ।
आसिक मासूक दोऊ एक हैं, ए कर दई मसिएं पेहेचान ॥ ११५

जैसे श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन है उसी प्रकारकी शोभा श्रीश्यामाजीकी भी समझ लेनी चाहिए क्योंकि श्रीश्यामाजी एवं प्रियतम धनी दोनों एक ही स्वरूप हैं. सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने मुझे यह पहचान करवाई है.

जुगल किसोर तो कहे, जो आसिक मासूक एक अंग ।
हक छिन में कै रूप बदलें, याही विध हादी रंग ॥ ११६

श्री श्यामाजी एवं प्रियतम धनी श्री राजजी दोनों एक ही अङ्ग हैं, इसलिए इनको युगलकिशोर कहा गया है. वैसे तो श्रीराजजी क्षण मात्रमें ही अनेक

रूप एवं शृङ्गार बदलते रहते हैं इसी प्रकार श्रीश्यामाजीके शृङ्गार भी परिवर्तित होते हैं.

हमारे फुरमान में, हक्के केते लिखे कलाम ।
मासूक मेरा महंमद, आसिक मेरा नाम ॥ ११७

हमारे लिए भेजे गए सन्देश पत्र (कुरान) में श्रीराजजीने इस प्रकारके अनेक वचन कहे हैं कि श्री श्यामाजी मेरी माशूका हैं एवं मैं स्वयं उनका आशिक हूँ.

मंगलाचरन सम्पूर्ण

केस तिलक निलाट पर, दोऊ रेखा चली लग कान ।

केस न कोई घट बढ, सोभा चाहिए जैसी सुभान ॥ ११८

श्रीराजजीके ललाट पर सुशोभित तिलक केश पर्यन्त पहुँचा है. केशकी दोनों रेखाएँ कर्ण तक पहुँची हैं. ये केश कहीं भी कम या अधिक नहीं हैं. श्रीराजजीकी शोभाके अनुरूप ही इनकी शोभा है.

एक स्याम नूर केसन की, चली रोसन बांध किनार ।

दूजी गौर निलाट संग, करें जंग जोर अपार ॥ ११९

श्रीराजजीके ललाट पर श्यामल केशोंकी प्रकाश रेखा श्रवण अङ्गों तक पहुँची है. दूसरी ओर ललाटका गौर वर्ण अत्यन्त आभायुक्त है. इन दोनोंकी ज्योति परस्पर स्पर्धा करती हुई सुशोभित है.

सोभा चलि आई लवने लग, पीछे आई कान पर होए ।

आए मिली दोऊ तरफ की, सोभा केहेवे न समरथ कोए ॥ १२०

श्यामल कुन्तल (केश) की शोभा कनपटी (लवनों) से होती हुई कान तक पहुँची है. दोनों ओरसे चली आई केशोंकी रेखाएँ परस्पर मिलती हैं. इस शोभाको व्यक्त करनेमें कोई भी समर्थ नहीं है.

याही भांत भौंह नेत्र संग, करत जंग दोऊ जोर ।

स्याह उजल सरभर दोऊ, चली चढ टेढी अनी मरोर ॥ १२१

इसी प्रकार भृकुटी तथा नेत्र दोनोंके प्रकाशकी किरणें परस्पर स्पर्धा करती

हुई सुशोभित हैं। भृकुटीकी श्यामलता एवं नेत्रकी उज्ज्वलता दोनों समान रूपसे सुशोभित हैं। नेत्रोंकी नोंक भी भृकुटीके एक कोनेसे चढ़ती हुई तिरछी होकर दूसरे कोने तक चली गई है।

दोऊ अनियां भौंह केसन की, निलाट तले नैन पर ।

रेखा बांध चली दोऊ किनारी, आए अनियां मिली बराबर ॥ १२२
भृकुटीके केशोंके दोनों कोण ललाटके नीचे नयनोंके ऊपर तिरछी रेखा बनाते हुए पंक्तिबद्ध होकर किनारी तक पहुँचते हुए एक समान सुशोभित हैं।

दोऊ नैन किनारी सोभित, घट बढ कोई न केस ।

उजल स्याह दोऊ लरत हैं, कोई दे ना किसी को रेस ॥ १२३

नयनोंके दोनों किनारों पर भृकुटीके केश समान रूपसे सुशोभित हैं। इनमें कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है। यहाँ पर नेत्रोंकी उज्ज्वलता तथा भृकुटीकी श्यामलतासे निकली हुई किरणें परस्पर स्पर्धा करती हुई किसीको भी परास्त नहीं कर पा रही हैं।

तिलक निलाट न किन किया, असल बन्यो रोसन ।

कै रंग खूबी छिन में, सोभा गिनती होए न किन ॥ १२४

श्रीराजजीके ललाट पर सुशोभित तिलक किसीके द्वारा अङ्कित किया गया नहीं है। वह स्वतः श्रीराजजीके अङ्गमें प्रकाशित हो रहा है। उसमें क्षणमात्रमें विभिन्न रङ्गोंकी शोभा सुशोभित होती है जिसकी गणना नहीं हो सकती है।

देह इन्द्री फरेब की, देखत इलत फना ।

सो क्यों कहे बका सुभान मुख, इन अंग की जो रसना ॥ १२५

इस नश्वर शरीरकी इन्द्रियाँ भ्रमपूर्ण जगतकी हैं इसलिए नश्वर जगतको ही देखती हैं। नश्वर शरीरकी रसनासे अखण्ड धामके धनी श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभाका वर्णन कैसे हो सकता है ?

नासिका हक सूरत की, ए जो स्वास देत खुसबोए ।

ब्रह्मांड फोड इत आवत, इत रुह बास लेत सोए ॥ १२६

श्रीराजजीके मुखमण्डलमें सुशोभित नासिकासे श्वास-प्रश्वासके द्वारा निकली

हुई सुगन्धि पूरे ब्रह्माण्डको बींधती हुई इस जगतमें पहुँचती है. यहाँकी आत्माएँ इसी सुगन्धिका अनुभव करती हैं.

बिना मोमिन कोई ना ले सके, हक नासिका गुन ।

कहा अरस हक वतन, सो किया दिल जिन ॥ १२७

ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी श्रीराजजीकी नासिकामें गर्भित गुणोंका सुख प्राप्त नहीं कर सकता है. इन्हीं ब्रह्मात्माओंके हृदयको श्रीराजजीने परमधामकी शोभा प्रदान की है.

हक सूरत की बारीकियां, ए जाने अरस अरवाए ।

हक सूरत तो जानहीं, जो कोई और होए इसदाए ॥ १२८

श्रीराजजीके स्वरूपका रहस्य परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं. इनके अतिरिक्त परमधाममें यदि कोई होता तो ही इन स्वरूपको जान सकता.

तीन खूनें तलें नासिका, खूना चढ़ता चौथा ऊपर ।

ए खूबी जाने रुह अरस की, ए जो अनी आई नमती उतर ॥ १२९

नासिकाके नीचे तीन कोण हैं एवं चौथा कोण ऊपरकी ओर चला जाता है. इस नासिकामें ऊपरसे नीचेकी ओर उतरता हुआ कोण अत्यन्त सुन्दर है. इस प्रकार नासिकाकी इस अनुपम शोभाको परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जान सकती हैं.

दोऊ छेदों के गृदवाए, यों पांखडी फूल कटाव ।

बीच अनी आई जो नासिका, ए मोमिन जाने मुखभाव ॥ १३०

नासिकाके दोनों छिद्रोंके चारों ओर मानों फूलोंकी पञ्चुड़ियाँ तथा कटाव बने हुए हों इस प्रकारकी शोभा है. मध्यमें सुशोभित नासिकाकी नोंक मुखारविन्दकी शोभा बढ़ती है. वस्तुतः ब्रह्मात्माएँ ही इस शोभाके भावको जानती हैं.

इन अनियों और अनी मिली, तिन उतर अनी हुई दोए ।

किनार तलें दोऊ छेद के, सोभा लेत अति सोए ॥ १३१

नासिकाके ऊपरी भागके कोण तथा उतर चढ़ाव वाले कोणसे दूसरे कोण

परस्पर मिलते हैं। जहाँसे ऊतर कर नीचे यह दो कोणोंमें विभक्त हो जाती है। किनारेके नीचेके दो छिद्र अत्यन्त शोभायुक्त हैं।

दोऊ छेद्र तलें अधुर ऊपर, तिन बीच लांक खूने तीन ।
सोई सोभा जाने इन अधुर की, जो होए हुकम आधीन ॥ १३२

इन दोनों छिद्रोंके नीचे ओष्ठके ऊपर मध्यकी गहराईमें तीन कोण सुशोभित हैं। इस लालिमायुक्त ओष्ठकी अनुपम शोभाको वही आत्मा जान सकती है जो श्रीराजजीके आदेशके अधीन है।

और तलें जो अधुर, दोऊ जोड़ सोभित जो मुख ।
रेखा लाल दोऊ सोभित, रुह देख पावे अति सुख ॥ १३३

अर्ध्व ओष्ठ (उपरका होठ) एवं अधरोष्ठ दोनों मिलकर श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभा बढ़ाते हैं। इन दोनोंके मध्य लालिमायुक्त रेखा सुशोभित है जिसे देखकर आत्माको अपार सुख प्राप्त होता है।

तलें अधुर के लांक जो, मुख बराबर अनी तिन ।
सेत बीच बिंदा खुसरंग, ए मुख सोभा जाने मोमिन ॥ १३४

अधरोष्ठके नीचेकी गहराईमें भी मुखारविन्दके ऊपरकी भाँति तीन कोण सुशोभित हैं। गौर वर्णके मुखमण्डलके मध्य बिन्दीके समान सुशोभित अधरोष्ठके नीचेका यह कोण अत्यन्त शोभायुक्त है। इस प्रकार श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभा ब्रह्मात्माएँ ही जानती हैं।

इन तलें गौर हरवटी, जानों मुख सदा हंसत ।
ए सोभा जाने अरवाह अरस की, जिन दिल में हक बसत ॥ १३५

इन ओष्ठोंके नीचे गौरवर्णका चिबुक इस प्रकार सुशोभित है मानों वह सदा मन्द-मन्द मुस्कान करता हो। परमधामकी आत्माएँ ही इस दिव्य शोभाको जानती हैं जिनके हृदयमें स्वयं श्रीराजजी विराजमान हैं।

ए रंग कहे मैं इन मुख, पर किन विध कहूं सलूक ।
ए करते मुख वरनन, दिल होत नहीं टूक टूक ॥ १३६

इस स्वप्नवत् जगतकी जिह्वाके द्वारा मैंने श्रीराजजीके मुखमण्डलकी शोभाके

रङ्गोंका वर्णन किया है. किन्तु इस सुन्दर छविका वर्णन कैसे किया जाए ?
श्रीराजजीके मुखारविन्दकी शोभाका वर्णन करते हुए यह हृदय खण्डशः क्यों
नहीं होता है ?

फेर कहूँ हरवटीय से, ज्यों सुध होए मुख कमल ।

हक मुख मोमिन निरखहीं, जिन दिल अगस अकल ॥ १३७

मैं पुनः चिबुकसे वर्णन आरम्भ करता हूँ. जिससे श्रीराजजीके मुखारविन्दकी
और अधिक सुधि हो जाए. जिन ब्रह्मात्माओंके हृदयमें परमधामकी जागृत
बुद्धि है वे ही श्रीराजजीके इस मनोहर मुखारविन्दके दर्शन कर सकती हैं.

हरवटी गौर मुख मुतलक, खुसरंग बिंदा ऊपर ।

बीच लांक तलें अधुर, चार पांखडी हुई बराबर ॥ १३८

श्रीराजजीके मुख मण्डलमें गौर वर्णका चिबुक सुशोभित है. उसके ऊपर
लालिमायुक्त बिन्दी है. चिबुक एवं अधरके मध्यकी गहराई पर एक समान
चार पुष्पदल सुशोभित हैं.

गौर पांखडी दो लांक की, लाल पांखडी दो तिन पर ।

अधुर अधुर दोऊ जुड मिले, हुई लांक के सरभर ॥ १३९

अधरोष्टके नीचेकी गहराईकी दो पंखुड़ियाँ गौर वर्णकी हैं तो उसके ऊपरकी
दो पंखुड़ियाँ लालिमायुक्त हैं. जब दोनों ओष्ठ परस्पर जुड़ जाते हैं तो ऊपर
तथा नीचे दोनों ओरकी पहुँड़ियाँ गहराई पर एक समान प्रतीत होतीं हैं.

जोड बनी दोऊ अधुर की, निपट लाल सोभित ।

तिन ऊपर दो पांखडी, हरी नेक टेढ़ी भई इत ॥ १४०

दोनों ओष्ठोंकी लालिमायुक्त जोड़ी सुशोभित हो रही है. उनके ऊपरकी दो
पंखुड़ियाँ हरे रङ्गकी पंखुड़ियोंकी भाँति जरा-सा मुड़ी हुई दिखाई देतीं हैं.

दंत सलूकी रंग की, इन जुबां कही न जाए ।

मुख मुरकत दंत देखत, क्या केहे देऊं बताए ॥ १४१

श्रीराजजीकी दन्तावलिकी शोभा तथा रङ्गोंका वर्णन जिह्वाके द्वारा नहीं हो

सकता है. मुस्कराते समय मुखारविन्दमें दाँतोंकी शोभा स्पष्ट दिखाई देती है. उनका वर्णन कैसे किया जाए ?

क्यों कहूँ रंग रसना, मुख मीठा बोल बोलत ।
स्वाद लेत रस अरस के, जुबां केहे ना सके सिफत ॥ १४२

रसनाके रङ्गका वर्णन कैसे करूँ ? जिससे श्रीराजजी रसभरी वाणी बोलते हैं. वे इसी रसनासे परमधामके सम्पूर्ण रसोंका आस्वादन करते हैं. यह नश्वर जिह्वा इसकी शोभाका वर्णन नहीं कर सकती है.

रस जानत सब अरस के, रस बोलत रसना बैन ।
रुहें एक सबद सुनें रस का, तो पावें कायम सुख चैन ॥ १४३

श्रीराजजीकी यह रसना परमधामके सम्पूर्ण रसोंका आस्वादन करती है एवं रसिली वाणीका उच्चारण करती है. इससे विनिसृत मात्र एक शब्दको भी यदि ब्रह्मात्माएँ सुनती हैं तो उससे उनको अखण्ड सुखका अनुभव होता है.

नेक अधुर दोऊ खोलहीं, दंत लाल उजल झलकत ।
अधुर लाल जो पांखडी, जानों के नित मुसकत ॥ १४४

श्रीराजजी जब दोनों ओष्ठोंको थोड़ा-सा खोलते हैं तब दन्तावलिसे लालिमायुक्त उज्ज्वल आभा झलकती है. उस समय दो पुष्पदलकी भाँति दोनों लाल ओष्ठ नित्य प्रति मुस्कराते हुए प्रतीत होते हैं.

दंत उजल ऐनक ज्यों, माहें जुबां देखाई देत ।
देख दंत की नाजुकी, अति सुख मोमिन लेत ॥ १४५

उज्ज्वल दन्तावलि दर्पणकी भाँति सुशोभित है. उनके अन्दर जिह्वाकी शोभा अनुपम है. दन्तावलिकी सुकोमलताको देखकर ब्रह्मात्माओंको अपार सुखका अनुभव होता है.

कबूँ दंत रंग उजल, कबूँ रंग लालक ।
दोऊ खूबी दंतन में, माहें रोसन ज्यों ऐनक ॥ १४६

दन्तावलिका रङ्ग कभी उज्ज्वल दिखाई देता है तो कभी लालिमायुक्त

सुशोभित है. इस प्रकार दन्तावलिकी दोनों शोभाओंके मध्य ऐनक (चश्मा) की भाँति तेजोमयी आभा सुशोभित होती है.

दोऊ बीच अधुर रेखा मुख, कटाव तीन तीन तरफ दोए ।

पांखें रंग सुरंग दोऊ उपली, चढि टेढ़ी सोभा देत सोए ॥ १४७

श्रीराजजीके मुखारविन्दमें दोनों ओष्ठोंके मध्यकी रेखामें दोनों ओर तीन-तीन कटाव दिखाई देते हैं. ऊर्ध्व ओष्ठोंके ऊपरका भाग पुष्पदलकी भाँति सुन्दर शोभायुक्त है. उससे ऊपरकी ओर चढ़ती हुई तिरछी रेखा अत्यन्त शोभायुक्त है.

खुसरंग बीच सिंघोडा, तलें दो अनी ऊपर एक ।

इन दोऊ पांखें खुसरंग, ए कटाव सोभा विसेक ॥ १४८

नासिकाके नीचे सुशोभित छिद्रका आकार एवं रङ्ग लाल सिंघाड़ेकी भाँति है. इसके नीचेके भागमें दो कोण एवं ऊपरी भागमें एक कोण है. ये दोनों पुष्पदल लालिमायुक्त हैं. इनका कटाव भी विशेष शोभायमान है.

तिन अनी पर दूजी अनी, सोभित सिंघोडा सुपेत ।

ऊपर पांखें दोऊ फिरवली, बीच छेद्र सोभा दोऊ देत ॥ १४९

दोनों कोणोंके ऊपरका कोण श्वेत सिंघाड़ेकी भाँति शोभायुक्त है. उसके ऊपर दो पुष्पदल गोलाकार दिखाई देते हैं एवं मध्यमें दोनों छिद्र सुशोभित हैं.

इन फूल ऊपर आई नासिका, सो आए बीच अनी सोभाए ।

तिन पर रेखा दोऊ तिलक की, रंग छिन में कै देखाए ॥ १५०

इस सिंघाड़ेके फूलका-सा आकार लिए नासिकाका ऊपरका भाग ललाटके नीचेके भागसे मिलता है. वहाँ पर मध्यमें अत्यन्त शोभायुक्त कोण सुशोभित है. इस नासिकाके ऊपरसे लेकर ललाट तक तिलककी दो रेखाएँ हैं. ये क्षणमात्रमें अनेकों रङ्गोंमें दिखाई देती हैं.

दोऊ नेत्र टेढे कमल ज्यों, अनी सोभा दोऊ अतंत ।

जब पापन दोऊ खोलत, जानों के कमल दोऊ विकसत ॥ १५१

श्रीराजजीके दोनों नेत्र कमलके फूलकी भाँति तिरछे हैं. उनके दोनों कोण

अत्यन्त शोभायुक्त हैं। जब वे दोनों पलकोंको खोलते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे दो कमल विकसित (खिल) हो रहे हों।

नासिका के मूल से, दोऊ कमल बने अद्भूत ।
स्याम सेत झाँई लालक, सोभा क्यों कहूँ अंग लाहूत ॥ १५२

नासिकाके मूलसे ही ये दोनों नेत्र कमलके पुष्पकी भाँति अद्भुत एवं सुन्दर दिखाई देते हैं। इनमें श्याम तथा श्वेत वर्णके साथ-साथ लालिमा भी झलकती है। परमधामके इन अङ्गोंकी शोभाका वर्णन कैसे किया जाए ?

और कै रंग दोऊ कमल में, टेढे चढते निपट कटाव ।

मेहरे भरे नूर वरसत, हक सींचत सदा सुभाव ॥ १५३

इन दोनों नेत्रकमलोंसे विभिन्न रङ्गोंकी आभा झलकती है। ये दोनों तिरछे तथा चढ़ते हुए कटावकी भाँति सुशोभित हैं। श्री राजजीके ये दोनों नेत्र कृपासे परिपूर्ण हैं। इनसे प्रतिपल प्रकाशकी वर्षा होती है। श्रीराजजी अपने सरल स्वभावके अनुरूप इन नेत्र कमलोंसे प्रेमका सिञ्चन करते हैं।

गौर गलस्थल गिरदवाए, और बीच नासिका गौर ।

स्याह पांखडी कमल पर, सोभित टेढियां नूर जहूर ॥ १५४

श्री राजजीके लालिमायुक्त कपोलोंके चारों ओर गौर वर्ण सुशोभित है। दोनों कपोलोंके मध्यमें गौर वर्णकी नासिका शोभायुक्त दिखाई देती है। इन नेत्रकमलकी श्यामल वर्णकी पलकें बड़िम भृकुटीके साथ तेजोयम शोभायुक्त हैं।

अनी चार दोऊ कमल की, दो बंकी चढती ऊपर ।

अति स्याह टेढी पांखडी, कछू अधिक दोऊ बराबर ॥ १५५

इन दोनों नेत्र कमलोंके चारों कोणोंमें दो कोण ऊपरकी ओर चढ़ते हुए तिरछे हैं एवं दो नीचेकी ओर हैं। अत्यन्त श्यामलवर्णवाली ये पंखुडियाँ कही अधिक तिरछी हैं तो कही एक समान हैं।

उजल निलाट तिन पर, आए मिली केस किनार ।

सोहे रेखा बीच तिलक, जुबां कहा कहे सोभा अपार ॥ १५६

इन नेत्रोंके ऊपर उज्ज्वल ललाट सुशोभित है जो श्यामल कुन्तलके किनार

तक व्यास है. इस ललाटके मध्यमें तिलककी दो रेखाएँ सुशोभित हैं. इनकी अपार शोभाका वर्णन नहीं हो सकता है.

दोऊ तरफों रेखा हरवटी, आए मिली कानन ।
गौर कान सोभा क्यों कहूं, नहीं नेत्र जुबां मेरे इन ॥ १५७

चिबुकके दोनों ओरकी रेखाएँ श्रवणअङ्गों तक पहुँचती हैं. ये श्रवणअङ्ग अत्यन्त गौर वर्णके हैं. उनकी शोभाको देखकर वर्णन करनेके लिए जिह्वाके पास कोई नयन ही नहीं हैं.

गौर गाल दोऊ निपट, माहें झलकत मोती लाल ।
ए सोभा कानन की क्यों कहूं, इन जुबां बिना मिसाल ॥ १५८

गौरवर्णके दोनों कपोलों पर श्रवणअङ्गोंमें सुशोभित लाल माणिक्य तथा मोतीकी आभा प्रतिबिम्बित होती है. श्रवणअङ्गकी अनुपम शोभाका वर्णन भी जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकता है.

केस रेखा कानों पीछे, बीच में अंग उजल ।
हक मुख सोभा क्यों कहिए, इन जुबां इन अकल ॥ १५९

श्रवणअङ्गोंके पीछे श्यामल केशोंकी रेखा ग्रीवा तक पहुँची है. मध्यका भाग अत्यन्त उज्ज्वल शोभायुक्त है. इस प्रकार इस नक्षर जगतकी बुद्धि तथा वाणीके द्वारा श्रीराजजीके मुखमण्डलकी शोभाका वर्णन कैसे करें ?

मुकुट बन्यो सिर पाचको, रंग नंग तामें अनेक ।
जुदे जुदे दसों दिस देखत, रंग एकपें और विसेक ॥ १६०

श्रीराजजीके सिर पर पाच नामक रत्नका सुन्दर मुकुट सुशोभित है उसमें विभिन्न रङ्गोंके रत्न जड़ायमान हैं. दसों दिशाओंमें उनके अलग-अलग रङ्ग प्रतिभासित होते हैं एवं एक दूसरेसे अधिक विशेष लगते हैं.

असल नंग पाच एक है, असल रंग तामें दस ।
दस दस रंग हर दिसें, सोभा क्यों कहूं जवेर अरस ॥ १६१

मूलतः यह मुकुट पाच नामक एक ही रत्नका है किन्तु उसमें भिन्न-भिन्न दश रङ्ग सुशोभित हैं. इस प्रकार प्रत्येक दिशामें दस-दस रङ्ग सुशोभित हैं.

परमधामके इन रत्नोंकी शोभाका वर्णन कैसे करें ?

और मुकट सिर हक के, केहेनी सोभा तिन ।

सो न आवे सोभा सबद में, मुकट क्यों कहूँ जुबां इन ॥ १६२

स्वयं श्रीराजजीके सिर पर सुशोभित मुकुटकी शोभाका वर्णन करना है. उसकी दिव्य शोभा शब्दोंकी सीमामें निबद्ध नहीं हो सकती है. नश्वर जिह्वाके द्वारा अनुपम शोभायुक्त मुकुटका वर्णन कैसे करूँ ?

दस रंग कहे एक तरफ के, दूजी तरफ दस रंग ।

सो रंग रंग कै किरने उठें, किरन किरन कै तरंग ॥ १६३

इस दिव्य मुकुटमें एक ओर दस रङ्ग सुशोभित हैं तो दूसरी ओर भी दस ही रङ्ग सुशोभित हैं. प्रत्येक रङ्गसे अनेक किरणें निकलती हैं एवं एक-एक किरणसे अनेक तरङ्गें उठती हैं.

किन विध कहूँ सलूकियां, हर दिस सलूकी अनेक ।

देख देख जो देखिए, जानों उनथें एह नेक ॥ १६४

इस मुकुटकी सुन्दर छविका वर्णन कैसे करें ? प्रत्येक दिशामें इसकी शोभा अनेक गुणा बढ़ जाती है. बार-बार यह शोभा देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि दूसरी शोभासे यह अधिक विशेष है.

एक दोरी रंग नंग दस की, ऐसी मूल मुकट दोरी चार ।

गिरदवाए निलवट पर, सुख क्यों कहूँ सोभा अपार ॥ १६५

इस मुकुटमें मूलतः रत्नोंकी चार पड़िक्याँ (डोरियाँ) हैं. एक-एक पंक्तिमें दस-दस रङ्गोंके रत्न सुशोभित हैं. ललाट पर मस्तकके चारों ओर सुशोभित इन पड़िक्योंकी शोभा अपरम्परा है.

यामें एक दोरी अव्वल तलें, कांगरी दस रंग ता पर ।

तिन दोरी पर बनी बेलडी, और कहूँ सुनो दिल धर ॥ १६६

इस मुकुटमें नीचेसे सर्वप्रथम एक रत्नपड़िक (डोरी) है. उस पर दस रङ्गकी काँगरी सुशोभित है. उस दोरीके ऊपर पुष्प लताएँ सुशोभित हैं. मैं उसका वर्णन करता हूँ तुम उसे हृदयपूर्वक सुनो.

इन पर भी दोरी बनी, ता पर बेल और जिनस ।
तिन पर दोरी और कांगरी, जानों उनथें एह सरस ॥ १६७

इसके ऊपर जो डोरी सुशोभित है उस पर भी अन्यतम शोभा युक्त पुष्पलताकी चित्रकारी है. उसके ऊपर डोरी एवं काँगरी सुशोभित हैं. उसे देखकर ऐसा लगता है मानों दूसरीसे यह अधिक सुन्दर है.

चारों दोरी के रंग कहे, और दस रंग कांगरी दोए ।
और जिनस दो बेल की, रंग बोहोत ना गिनती होए ॥ १६८

इस प्रकार चारों डोरीके रङ्गोंका वर्णन हुआ. दो काँगरीमें दस रङ्गोंकी आभा झलकती है. उनके मध्यमें स्थित दो लताओंमें तो अनेक रङ्गोंकी आभा है. उनकी गणना ही नहीं हो सकती है.

दस रंग कांगरी के कहूं, चार मनके ऊपर तीन ।
दो तीन पर एक दो पर, ए जाने दस रंग रुह प्रवीन ॥ १६९

काँगरीकी दो पट्टियोंके रङ्गोंका विवरण इस प्रकार है, त्रिकोण आकारकी इस काँगरीमें सर्वप्रथम चार रत्नोंकी पट्टिक है. उसके ऊपर क्रमशः उत्तरोत्तर तीन, दो एवं एक रत्न सुशोभित हैं इस प्रकार चतुर आत्माएँ इन दसों रङ्गोंकी शोभा भलीभाँति जान सकती हैं.

ए दस रंग के मनके दस, ऊपर एक रंग तलें दोए ।
दोए रंग तलें तीन हैं, तीन रंग तलें चार सोए ॥ १७०

इन दस रङ्गोंके दस रत्नोंका रङ्ग इस प्रकार है. सबसे ऊपर एक रङ्गका एक रत्न है, उसके नीचे दो रङ्गके दो रत्न हैं, उसके नीचे तीन रङ्गके तीन रत्न हैं एवं उसके नीचे चार रङ्गके चार रत्न हैं.

इन विध चार दोरी भई, और दोए भई कांगरी ।
दोए बेली कै रंगों की, ए गिनती जाए न करी ॥ १७१

इस प्रकार इस मुकुटमें चार डोरी, दो काँगरी तथा दो बेल सुशोभित हैं. उनकी दोनों बेलियोंमें अनेक रङ्गोंकी चित्रकारी है जिसकी गणना नहीं हो सकती है.

ऊपर फिरते फूल कटाव कै, कै बूटियाँ नक्स ।

तिन पर कही जो कांगरी, फिरती अति सरस ॥ १७२

इस मुकुटके ऊपरी भागमें चारों ओर विभिन्न प्रकारके पुष्प तथा कटाव चित्रित हैं एवं साथमें विभिन्न प्रकारकी बूटियाँ भी चित्रित हैं. पुनः उनके ऊपर चारों ओर सुन्दर काँगरी सुशोभित है.

तिन ऊपर टोपी बनी, ऊपर चढती अनी एक ।

तलें कटाव कै रंग नंग, ए अनी फूल बन्यो विसेक ॥ १७३

उनके ऊपर सुन्दर टोपी बनी हुई है. उसके ऊपर उत्तरोत्तर चढ़ता हुआ कोण सुशोभित है. कोणके नीचे विभिन्न रङ्गोंके रत्नोंकी चित्रकारी है. इस कोण पर विशेष प्रकारका फूल बना हुआ है.

तीन खूने तिन ऊपर, दो दोऊ तरफों बीच एक ।

दस दस नंग तिनों में, सो मोमिन कहें विवेक ॥ १७४

उसके ऊपर तीन कोण सुशोभित हैं. उनमें दो कोण दोनों ओर हैं एवं एक मध्यमें है. तीनों कोणोंमें दस-दस रत्न सुशोभित हैं. ब्रह्मात्मा एँ ही इसका विवेकपूर्वक वर्णन करती हैं.

मानिक मोती पांने नीलबी, गोमादिक पाच पुखराज ।

और हीरा नंग लसनियाँ, बीच मनि दसमी रही विराज ॥ १७५

इन दस रत्नोंमें माणिक्य, मोती, पत्ता, नीलमणि, गोमादिक, पाच, पुखराज, हीरा, वैदूर्यमणि (लहसुनिया) तथा मध्यमें मणि शोभायमान है.

ए दस रंग नंग तिन में, फिरते बने तीन फूल ।

तले डांडियाँ रंग अनेक हैं, ए सोभा देख हूजे सनकूल ॥ १७६

उक्त तीनों कोणोंमें चारों ओर दस रङ्गोंके रत्न जड़े हुए हैं जिससे चारों ओर तीन फूल जैसी शोभा दिखाई देती है. नीचे डण्डेमें अनेक रङ्गोंके रत्न जड़ायमान हैं. इस प्रकार इस अद्वितीय शोभाको देखकर अति प्रसन्नता होती है.

दसों दिसा जित देखिए, मन चाह्या रूप देखाए ।

बिना निमूने इन जुबां, किन विध देऊं बताए ॥ १७७

यह अद्वितीय मुकुट इतना सुन्दर है कि दसों दिशाओंमें कहींसे भी देखने पर मनकी इच्छानुरूप वह सुन्दर दिखाई देता है। इसका कोई उदाहरण न होनेसे इस जिह्वाके द्वारा इसका वर्णन कैसे करूँ ?

जिन रूह का दिल जिन विध का, सोई विध तिन भासत ।

एक पलक में कै रंग, रूह जुदे जुदे देखत ॥ १७८

जिन ब्रह्मात्माओंके हृदयमें जिस प्रकारका भाव प्रकट होता है उसीके अनुरूप यह मुकुट सुशोभित होता है। इसलिए ब्रह्मात्माएँ पलमात्रमें ही इसमें अलग-अलग प्रकारके अनेकों रङ्गोंके दर्शन करतीं हैं।

एह मुकट इन भांत का, पल में करे कै रूप ।

जो रूह जैसा देख्या चाहे, सो तैसा देखे सरूप ॥ १७९

यह मुकुट इस प्रकारका है कि पल-पलमें अनेकों रूपोंमें दिखाई देता है। जो ब्रह्मात्मा इसे जिस रूपमें देखना चाहती है वह उसी रूपमें दिखाई देता है।

मैं मुकट कहूँ बुध माफक, ए तो अरस जवेर के नंग ।

नए नए कै भांत के, कै छिन में बदलें रंग ॥ १८०

मैंने इस नश्वर जगतकी बुद्धिके अनुसार इस मुकुटका वर्णन किया है। इसमें जड़े हुए रत्न दिव्य परमधामके हैं। नित्य नूतन रूपमें भासित होते हुए ये क्षण मात्रमें अनेकों रङ्गोंमें दिखाई देते हैं।

और विध मुकट में, रूहें आवें सब मिल ।

सब रूप रंग देखें इनमें, जो चाहे जैसा दिल ॥ १८१

इस मुकुटकी अन्य विशेषता यह भी है कि जब सभी ब्रह्मात्माएँ एक साथ मिलकर इसकी शोभा देखतीं हैं तो सभी अपने हृदयकी चाहना अनुसार अलग-अलग रङ्ग तथा रूपके दर्शन करतीं हैं।

याही भांत सब भूषन, याही भांत वस्तर ।

वस्तर भूषन सब एक रस, ज्यों कुंदन में जडतर ॥ १८२

इसी प्रकारकी अनुपम शोभा अन्य आभूषणों तथा वस्त्रोंकी भी है. ये सभी वस्त्र तथा आभूषण मानों कुन्दनमें जड़े हुएकी भाँति एक समान दिखाई देते हैं.

ए जडे घडे किनने नहीं, ना पेहर उतारत ।

दिल चाहे रंग छिन में, मन पर सोभा फिरत ॥ १८३

इनको न किसीने जड़ा है और न ही किसीने बनाया है, न इनको धारण करनेकी आवश्यकता होती है और न ही उतारनेकी. इनमें तो हृदयकी भावनाके अनुसार पल-पलमें रङ्ग तथा शोभा अलग-अलग प्रकारसे बदलती हुई दिखाई देती है.

जिन छिन रुह जैसा चाहत, सो तैसी सोभा देखत ।

बारे हजार देखें दिल चाहे, ए किन विध कहूँ सिफत ॥ १८४

आत्मा जिस समय जैसा चाहती है उसी प्रकारकी शोभा उसमें दिखाई देती है. बारह हजार ब्रह्मात्माएँ इसमें अपनी इच्छानुसार अलग-अलग शोभा देखती हैं. इसकी महिमाको किस प्रकार व्यक्त करूँ ?

मोती करनफूल कुंडल, कहूँ केते नाम भूषन ।

पलमें अनेक बदलें, सुंदर सरूप कानन ॥ १८५

इन आभूषणोंमें मोती, कर्णफूल, कुण्डल आदि अनेक हैं. मात्र कानके आभूषणोंमें भी पल मात्रमें अनेक प्रकारके रङ्ग परिवर्तित होते हुए दिखाई देते हैं.

जवेर कहे मैं अरस के, और जवेर तो जिमी से होत ।

सो हक बका के अंग को, कैसी देखावे जोत ॥ १८६

मैंने परमधामके रत्नोंका वर्णन किया है, रत्न तो भूमिसे पैदा होते हैं. वे श्रीराजजीके अङ्गोंकी शोभाको कैसे द्योतित (प्रकाशित) कर सकते हैं ?

और नई पैदास अरस में नहीं, ना पुरानी कबूं होए ।

या रसांग या जवेर, जिन जानो अरस में दोए ॥ १८७

परमधाममें कोई नई वस्तु उत्पन्न नहीं होती और न ही कोई वस्तु कभी पुरानी होती है। वहाँके धातु या रत्न क्यों न हों उनमें नया अथवा पुराना दो भाव रहता ही नहीं है।

अरस साहेबी बुजरक, तिनको नाहीं पार ।

ए नूर के एक पलथें, कै उपजे कोट संसार ॥ १८८

परमधाममें श्रीराजजीका प्रभुत्व अत्यन्त श्रेष्ठ कहलाता है, जिनका कोई पारावार ही नहीं है। उनके प्रकाशके मात्र एक अङ्ग (अक्षरब्रह्म) के पल मात्रसे भी करोड़ों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं।

सो नूर नूरजमाल के, नित आवें दीदार ।

तिन हक के वस्तर भूषन, ए मोमिन जाने विचार ॥ १८९

ऐसे समर्थ अक्षरब्रह्म भी नित्यप्रति अक्षरातीतके दर्शनके लिए आते हैं। उन अक्षरातीत परब्रह्म परमात्माके वस्त्र तथा आभूषणोंके विषयमें मात्र ब्रह्मात्माएँ ही विचार कर सकती हैं।

जिन मोमिन की सिफायत, करी होए मेहेदी महंमद ।

सो जाने अरस बारीकियां, और क्या जाने दुनी जो रद ॥ १९०

जिन ब्रह्मात्माओंकी महिमा स्वयं महदी मुहम्मदने गाई है, वे ही परमधामके सूक्ष्म रहस्योंको जान सकती हैं। शेष नश्वर जगतके जीव उसे क्या जान सकते हैं ?

पेहेनावा नूरजमाल का, वस्तर या भूषन ।

ज्यों नूर का जहूर, ए जानत अरस मोमन ॥ १९१

श्रीराजजीके परिधानमें वस्त्र तथा आभूषणोंके देदीप्यमान प्रकाशके सन्दर्भमें परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जानकारी रखती हैं।

ए कबूं न जाहेर दुनी में, अरस बका हक जात ।

सो इन जुबां इत क्या कहूं, जो इन सरूप को सोभात ॥ १९२

श्रीराजजीकी अङ्ग स्वरूपा परमधामकी आत्माएँ इस नश्वर जगतमें कभी भी

अवतरित नहीं हुई थीं। इसीलिए इस जिह्वाके द्वारा उनकी महिमाका वर्णन कैसे करें जो उनकी दिव्य शोभाके अनुरूप हो.

वस्तर भूषण हक के, ए केहेनी में न आवत ।
सिनगार करें दिल चाह्या, जो सबों को भावत ॥ १९३

श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभा शब्दके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती। वे सदैव अपनी इच्छानुसार शृङ्खार करते हैं जो सभी ब्रह्मात्माओंको अतिशय प्रिय लगता है।

तो ए क्यों आवे बानी में, कर देखो सहूर हक ।
ए अरस तनों विचारिए, तुम लीजो बुध माफक ॥ १९४

श्रीराजजीके शृङ्खारकी शोभा शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त की जा सकती है ? इस पर तारतम ज्ञानके द्वारा विचार करो। इस विषयमें पर-आत्माके द्वारा विचार कर अपनी बुद्धिके अनुसार उसे हृदयङ्गम करो।

अरस में भी रुहें लेत हैं, जैसी खाहिस जिन ।
रुह जैसा देख्या चाहे, तिन तैसा होत दरसन ॥ १९५

परमधाममें भी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीसे अपनी इच्छानुसार आनन्द प्राप्त करती हैं। वे श्रीराजजीके जैसे शृङ्खारके दर्शन करना चाहती हैं उसी प्रकारके दर्शन उन्हें प्राप्त होते हैं।

वस्तर भूषण किन ना किए, हैं नूर हक अंग के ।
ए क्यों आवें इन केहेनी में, अंग साँई के सोभावे जे ॥ १९६

श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषण किसीके द्वारा भी बनाए गए नहीं हैं। वे तो श्रीराजजीके तेजोमय अङ्गके ही किरण स्वरूप हैं। ये वस्त्र तथा आभूषण श्रीराजजीके अङ्गोंको सुशोभित करते हैं उन्हें शब्दोंके द्वारा कैसे व्यक्त किया जाए ?

अपार सूरत साहेब की, अपार साहेब के अंग ।
अपार वस्तर भूषण, जो रेहेत सदा अंगों संग ॥ १९७

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूप, उनके अङ्ग तथा वस्त्राभूषण आदिकी शोभा

अपरंपर है. ये वस्त्र तथा आभूषण सर्वदा उनके अङ्गोंमें सुशोभित हैं.

जो सोभा हक सूरत की, सो क्यों पुरानी होए ।

नई पुरानी तित कहावत, जित कहियत हैं दोए ॥ १९८

जो शोभा श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपकी है वह कैसे पुरानी हो सकती है ?
जहाँ पर दो भाव (द्वैत) रहता है वहाँ तो किसीको नया तथा किसीको पुराना
कहा जाता है.

इत कबूं न होए पुराना, ना पैदा कबूं नया ।

दीदार करें रुहें छिन में, छिन छिन दिल चाहा ॥ १९९

परमधाममें कभी भी पुरातन (पुराना) नहीं होता है और न ही कोई नई वस्तु
उत्पन्न होती है. वहाँ तो ब्रह्मात्माएँ अपनी इच्छानुसार क्षण-क्षणमें
श्रीराजजीके नूतन शृङ्खारके दर्शन करती हैं.

जामा पटुका और इजार, ए सबे हैं एक रस ।

कंठ हार सोभा जामे पर, जानों एक दूजे पें सरस ॥ २००

श्रीराजजीके शृङ्खारमें जामा, पटुका, इजार आदि सभी एक समान रसपूर्ण
हैं. जामे पर सुशोभित कण्ठाहारोंकी शोभा भी एक दूसरेसे अधिक सुन्दर
लगती है.

कंठ तलें हार दुगदुगी, कै विध विध के विवेक ।

कै रंग जंग जोतें करें, देखत अलेखे रस एक ॥ २०१

कण्ठाहारके नीचे दुगदुगीकी शोभा है. उसमें विभिन्न प्रकारकी विशेषताएँ हैं.
उसमें जड़े हुए अनेक रङ्गोंके रत्न प्रकाशित होते हैं, जिनकी किरणें अनन्त
होते हुए भी एक रस दिखाई देती हैं.

जुड बैठी जामे पर चादर, सोभा याही के मान ।

ए नाम लेत मैं जुदे जुदे, हक सोभा देख सुभान ॥ २०२

जामाके ऊपर चादरकी शोभा जामेकी भाँति अद्वितीय लगती है. वस्तुतः
श्रीराजजीकी शोभा देखकर ही मैं उनके अलग-अलग वस्त्रोंका नाम ले रहा
हूँ. यह सभी उनकी ही शोभा है.

बगलों कोतकी कटाव, और बंध बेल गिरवान ।

रंग जुदे जुदे झलकत, रस एकै सब परवान ॥ २०३

जामेके दोनों ओर पार्श्वभागमें केवड़ेके फूलके समान चित्रकारी है एवं किनारे पर लगी हुई तनीमें भी बेलियाँ सुशोभित हैं। उनमें विभिन्न प्रकारके रङ्ग झलकते हैं किन्तु सभी एक समान रसानुभूति प्रदान करते हैं।

बांहे बाजूबंध सोभित, रंग केते कहूं गिन ।

तेज जोत लरें आकास में, क्यों असल निरने होए तिन ॥ २०४

भुजाओंमें भुजबन्ध सुशोभित हैं, उनमें समाविष्ट कितने रङ्गोंका नाम लिया जाए ? उनकी तेजोमयी किरणें आकाशमें परस्पर स्पर्धा करती हैं तब उनके मूल रङ्गका निर्णय ही नहीं हो सकता है।

क्यों कहूं सोभा फुंदन, लटकत हैं एक जुगत ।

आहार देत हैं आसिकों, देख देख न होए त्रपत ॥ २०५

भुजबन्धमें लटकते हुए फुँदनोंकी शोभाको किन शब्दोंमें व्यक्त किया जाए ? श्रीराजजी अपनी अनुरागिनी आत्माओंको यही आहार देते हैं। इस अनुपम शोभाको देख कर आत्माएँ तृप्त नहीं होती हैं।

या विध कांडों पोहोंचियां, या विध कांडों बल ।

कै ऊपर रंग जंग करें, तामें गिने न जाए असल ॥ २०६

इसी प्रकार श्रीराजजीकी कलाईमें पहने हुए कड़े तथा करकमलकी पहुँची शोभायमान हैं। कड़ेके बलका तो वर्णन ही नहीं हो सकता है। उससे निकलती हुई विभिन्न रङ्गकी किरणें स्पर्धा करती हैं जिनसे वास्तविक रङ्गोंकी गणना करना कठिन हो जाता है।

हस्त कमल अति कोमल, उजल हथेली लाल ।

केहेते लीकें सलूकियां, हाए हाए लगत न हैडें भाल ॥ २०७

श्रीराजजीके हस्तकमल अत्यन्त सुकोमल हैं। लालिमायुक्त हथेलीका रङ्ग अत्यन्त उज्ज्वल है। हथेलियोंमें सुन्दर रेखाएँ सुशोभित हैं जिनका वर्णन करते हुए यह हृदय घायल भी नहीं होता है !

पतली पांचों अंगुरियां, पांचों जुदी जुदी जुगत ।
जुदे जुदे रंग नंग मुंदरी, सोभा न पोहोंचे सिफत ॥ २०८

हस्तकमलकी पाँचों पतली अङ्गुलियाँ अलग-अलग सुशोभित हैं. इनमें
अलग-अलग रङ्गके रत्नोंकी मुद्रिकाएँ सुशोभित हैं, जिनकी शोभाका कोई
पारावार नहीं है.

निरमल अंगुरियों नख, ताकी जोत भरी आकास ।
सबद न इन आगूं चले, क्यों कहूं अरस प्रकास ॥ २०९

इन अङ्गुलियोंके नख अत्यन्त निर्मल हैं. उनसे निकलती हुई ज्योति पूरे
आकाशमें व्यास हो जाती है. ये शब्द इससे अधिक वर्णन नहीं कर सकते
हैं क्योंकि परमधामके प्रकाशके विषयमें इससे अधिक क्या कहा जाए ?

अब चरन कमल चित देय के, बैठ बीच खिलवत ।
देख रुह नैन खोल के, ज्यों आवे अरस लजत ॥ २१०

हे आत्मा ! अब श्रीराजजीके चरण कमलोंका चिन्तन कर स्वयं
मूलमिलावामें जागृत हो जा. अब अपनी आत्मदृष्टिको खोल जिससे तुझे
परमधामका आनन्द प्राप्त हो जाए.

इत बैठे निरख चरन को, देख चकलाई चित दे ।
नरम तली अति उजल, रुह तेरा सुखदायक ए ॥ २११

यहीं पर बैठकर श्रीराजजीकी चरणकमलोंकी सुन्दरताको देख. उनके चरण
तल अत्यन्त सुकोमल एवं अति उज्ज्वल हैं. हे आत्मा ! ये ही चरण कमल
तुझे आनन्द प्रदान करनेवाले हैं.

जोत देखी चरन नखकी, जाए लगी आसमान ।
चीर चली सब जोत को, कोई ना इन के मान ॥ १२१

इन चरणोंके नखोंकी ज्योतिको देख, जो पूरे आकाशमें व्यास हुई अन्य
ज्योतिको चीरकर आगे बढ़ रही है. इसके समान अन्य कोई प्रकाश नहीं
है.

तेज कोई ना सेहे सके, बिना अरस रूह मोमन ।
तेजें उडे परदा अंधेरी, ए सहें बका अरस तन ॥ २१३

ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी इन नखोंके तेजको सहन नहीं कर सकता है. इस तेजसे तो अज्ञानका आवरण ही दूर हो जाता है. इसलिए परमधामके मूल तन (पर-आत्मा)से ही इनके प्रकाशका सहन हो सकता है.

अरस तन की ए बैठक, ए जोतै के सीचेल ।
ए अरवा तन सब अरस के, इनों नजरों रहे ना खेल ॥ २१४

वस्तुतः श्रीराजजीके ये चरण कमल ही पर आत्माकी बैठक हैं. इनके ज्योतिर्मय प्रकाशसे ही इनका सिङ्घन हुआ है. दिव्य परमधामके इन पर-आत्माके समक्ष नश्वर खेलका कोई अस्तित्व ही नहीं है.

पांउ देख देख भूषन, कै विध सोभा करत ।
सो नए नए रूप अनेक रंगों, छिन छिन में कै फिरत ॥ २१५

श्रीराजजीके चरण कमलोंको देखकर इनमें सुशोभित आभूषणोंको देखो, जो विभिन्न प्रकारसे सुशोभित हैं. इन आभूषणोंमें क्षण-क्षणमें नूतन रूप तथा विभिन्न रङ्ग बदलते हुए दिखाई देते हैं.

चारों जोडे चरन तो कहूं, जो घडी साईंत ठेहराए ।
छिन में करें कोट रोसनी, सो क्यों आवे माहें जुबांए ॥ २१६

इन श्रीचरणोंमें धारण किए हुए चारों आभूषणोंकी शोभाका वर्णन तभी हो सकता है जब वह क्षणमात्रके लिए भी स्थिर हो जाती हो. किन्तु उनमें-से क्षणमात्रमें ही करोड़ों प्रकारकी किरणें निकलती हैं इसलिए जिह्वाके द्वारा उस शोभाका वर्णन नहीं हो सकता है.

हरी इजार माहें कै रंग, ऊपर जामा दांवन सुपेत ।
कै रंग झाँई देख के, अरस रूहें सुख लेत ॥ २१७

श्रीराजजीके वस्त्रोंमें हरे रङ्गकी इजारमें विभिन्न रङ्गोंकी आभा झलकती है. उसके ऊपर श्वेत रङ्गके जामेकी दामन झलकती है. इससे झलकती हुई

विभिन्न रङ्गोंकी आभा देखकर परमधामकी आत्माएँ अपार आनन्दका अनुभव करती हैं।

फुँदन बंध अति सोभित, माहें रंग अनेक झलकत ।

ए सेत हरे के बीच में, माहें नरम झाबे खलकत ॥ २१८

इजारबन्दके कोनों पर बँधे फुँदने अत्यन्त शोभायमान हैं। इनमें अनेकों रङ्ग झिलमिलाते हैं। श्वेत रङ्गका जामा एवं हरे रङ्गके इजारके मध्य इजारबन्दके फुँदनोंके गुच्छे चमकते हुए दिखाई देते हैं।

जामे दांवन सेत झलकत, जोत उठत आकास ।

और जोत चढ़ी करती जंग, पीत पटुके की प्रकास ॥ २१९

श्वेत जामेका घेरा झिलमिलाता हुआ सुन्दर प्रतीत होता है। इससे उठती हुई किरणें आकाशमें व्यास होती हैं। इनकी ज्योति आकाश तक पहुँचकर पीत रङ्गके पटुकेके प्रकाशसे स्पर्धा करती है।

हार सोभित हैडे पर, बाजूबंध पोहोंची कडे ।

सुन्दर सरूप सिर मुकट, दिल आसिकों देखत खडे ॥ २२०

श्रीराजजीका कण्ठहार वक्षस्थल पर सुशोभित है। दोनों भुजाओंमें भुजबन्ध, हस्तकमल पर पहुँची तथा कलाई पर कडे सुशोभित हैं। सिर पर सुन्दर मुकुट सुशोभित है। इस अनुपम शोभाको देखकर ब्रह्मात्माओंका हृदय स्थिर हो जाता है।

चोली चादर हार झलकत, आकास रहो भराए ।

तो सोभा मुख मुकट की, किन विध कही जाए ॥ २२१

जामेकी चोली पर सुशोभित चादरके नीचे कण्ठहार झलकते हैं। उनकी ज्योति ही पूरे आकाशमें छा जाती है, फिर श्रीराजजीके प्रभापूर्ण मुखमण्डल तथा मुकुटकी अद्वितीय शोभाका वर्णन किस प्रकार हो सकता है ?

मीठी सूरत किसोर की, गौर लाल मुख अधुर ।

ए आसिक नीके निरखत, मुख बानी बोलत मधुर ॥ २२२

श्रीराजजीकी किशोर अवस्था माधुर्यपूर्ण है। गौरवर्ण युक्त मुखमण्डल पर

लालिमायुक्त अधर सुशोभित है. जब श्रीराजजी अपने मुखारविन्दसे मधुर वाणी बोलते हैं तब अनुरागिनी आत्माएँ मुखारविन्दके भलीभाँति दर्शन करती हैं.

चारों चरन बराबर, सुभान और बड़ी रुह जी ।

गौर सब गुन पूरन, सुंदर सोभा और सलूकी ॥ २२३

श्रीराजजी तथा श्यामाजीके चारों चरण समान शोभायुक्त हैं. गौरवर्णके इन चरणोंमें सब प्रकारके गुण परिपूर्ण हैं. इनकी सुन्दर शोभा एवं सुकोमलताका वर्णन नहीं हो सकता है.

तेज जोत नूर भरे, लाल तली कोमल ।

लाल लांके लीके क्यों कहूं, रुह निरखे नेत्र निरमल ॥ २२४

ये चरणकमल तेजोमय आभासे परिपूर्ण हैं. इसी प्रकार चरणतल भी लालिमायुक्त तथा सुकोमल हैं. चरणतलकी गहराई भी लालिमायुक्त है. उनकी रेखाएँ अत्यन्त सुन्दर हैं. ब्रह्मात्माएँ अपनी निर्मल दृष्टिसे इन चरणकमलोंके दर्शन करती हैं.

चारों तरफों चकलाई, फना अद्भुत रुह खैंचत ।

एडियां अति अचरज, इत आसिक तले बसत ॥ २२५

इन चरण कमलोंके पञ्जेकी चारों ओरकी अनुपम सुन्दरता ब्रह्मात्माओंको स्वतः आकृष्ट करती है. इसी प्रकार एडियोंके शोभा भी आश्र्य जनक है. अनुरागिनी आत्माएँ सर्वदा इन्हीं चरणोंमें रहती हैं.

चारों चरन अति नाजुक, जो देखूं सोई सरस ।

ए अंग नाहीं तत्व के, याकी जात रुह अरस ॥ २२६

ये चारों चरणकमल अत्यन्त सुकोमल हैं. इनमें जिसकी ओर दृष्टि है वही अधिक सुन्दर दिखाई देता है. ये चरणकमल पाञ्चभौतिक तत्त्वोंके नहीं अपितु अखण्ड परमधामके हैं.

ए मेहर करें चरन जिन पर, देत हिरदे पूरन सरूप ।

जुगल किसोर चित चूभत, सुख सुंदर रूप अनूप ॥ २२७

इन चरणकमलोंकी कृपा जिन पर होती है उनके हृदयमें श्रीराजश्यामाजीका सुन्दर एवं अनुपम स्वरूप पूर्णरूपसे अङ्कित हो जाता है.

जुगल किशोर अति सुन्दर, बैठें दोऊ एक तखत ।
चरन तले रुहों मिलावा, बीच बका खिलवत ॥ २२८

युगलकिशोर (श्रीराजश्यामाजी) दोनों ही परमधाम-मूलमिलावामें अत्यन्त सुन्दर सिंहासन पर विराजमान हैं। सभी ब्रह्मात्माएँ इनके चरणोंमें मिलकर बैठी हैं।

महामत कहें मेहेबूब की, जेती अरस सूरत ।
सो सब बैठीं कदमों तले, अपनी ए निसबत ॥ २२९
महामति कहते हैं, प्रियतम धनी श्रीराजजीकी जितनी अङ्गनाएँ हैं वे सभी इन्हीं चरणोंमें बैठी हुई हैं। वस्तुतः हम सभी आत्माओंका मूल सम्बन्ध इन्हीं चरणकमलोंसे है।

प्रकरण २१ चौपाई १४४६

सिनगार कलस, तिन सिनगार वरनन, विरहा रस
क्यों वरनों हक सूरत, अब लों कही न किन ।
ए झूठी देह क्यों रहे, सुनते एह वरनन ॥ १
पूर्णब्रह्म परमात्माके स्वरूपका वर्णन कैसे किया जाए ? जिसका वर्णन आज तक किसीने भी नहीं किया है। इन अखण्ड स्वरूपका वर्णन सुनकर यह नश्वर शरीर कैसे टिका रह सकता है ?

वरनन आसिक कर ना सके, और कोई पोहोंचे न आसिक बिन ।
हक जाहेर क्यों होवहीं, देखतहीं उडे तन ॥ २
अनुरागिनी आत्मा अपने प्रियतम धनीके स्वरूपका वर्णन नहीं कर सकती है और उसके अतिरिक्त कोई भी तो उनके पास नहीं पहुँच सकता है। इसलिए पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप इस जगतमें कैसे प्रकट हो सकता है, उनके दर्शनमात्रसे ही नश्वर शरीर उड़ जाता है।

हक देखें वजूद ना रहे, ज्यों दारू आग से उडत ।
यों वाहेदत देखें दूसरा, पाव पल अंग ना टिकत ॥ ३
श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपको देखकर यह नश्वर तन उसी प्रकार उड़ जाता

है जैसे अग्निके सम्पर्कसे विस्फोटक पदार्थ (बारूद) नष्ट हो जाता है. इस प्रकार ब्रह्मात्माएँ ही श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपका दर्शन कर सकती हैं, उनके अतिरिक्त अन्य कोई भी पलके चतुर्थ अंश जितने समयके लिए भी टिक नहीं सकता है.

हक इसक आग जोरावर, इनमें मोमिन बसत ।

आग असल जिनों बतनी, यामें आठों जाम अलमस्त ॥ ४

श्रीराजजीकी प्रेमरूपी अग्नि अति प्रचण्ड है. ब्रह्मात्माएँ ही इसमें रहती हैं. जिन आत्माओंको दिव्य परमधामकी प्रेमाग्नि प्राप्त हुई है वे तो आठों प्रहर उसीमें मग्न रहती हैं.

जो निस दिन रहे आग में, ताए आगै के सब तन ।

वाको जलाए कोई ना सके, उछे आगै के बतन ॥ ५

जो आत्माएँ रात-दिन इसी प्रेमकी अग्निमें रहती हैं उनके शरीर भी अग्निके ही होते हैं. इसलिए उनको कोई भी जला नहीं सकता है. क्योंकि वे सर्वदा प्रेमाग्निके गृह परमधाममें ही पालित हैं.

आग जिमी पानी आग का, आग बीज आग अंकूर ।

फल फूल वृख आग के, आग मजकूर आग सहूर ॥ ६

प्रेमी आत्माओंके लिए पृथ्वी, जल, बीज, फल-फूल, वृक्ष आदि सभीमें प्रेमरूपी अग्नि दिखाई देती है. इनके लिए तो वार्ता तथा विचार विमर्श सभीमें सर्वत्र प्रेमकी ही अग्नि दिखाई देती है.

वृख मोमिन आग इसक, और आग इसक अरस ।

सब पीवें आग इसक रस, दिल आगै अरस परस ॥ ७

परमधामके वृक्ष, वनस्पतियाँ तथा ब्रह्मात्माएँ प्रेमाग्निका ही पान करते हैं. वहाँ पर सर्वत्र यही अग्नि व्याप्त है. वहाँके सभी पदार्थ इसीका रस पान करते हैं. सभीके हृदयमें यही अग्नि परस्पर प्रज्वलित दिखाई देती है.

घर मोमिन आग इसक में, हक अग्नि के पालेल ।

सोई इसक आग देखावने, ल्याए जो माहें खेल ॥ ८

इसी प्रेमाग्निमें ब्रह्मात्माओंका आवास है. इन सभी ब्रह्मात्माओंका पालन-

पोषण भी इसीमें हुआ है। इसीका अनुभव करवानेके लिए ही ब्रह्मात्माओंको इस नश्वर जगतमें उतारा है।

जो पैदा हुआ आग का, सो आग में जलत नाहें ।

वह वजूद आग इसक के, रहें हमेसा आग माहें ॥ ९

जिनका जन्म ही प्रेमाग्निमें हुआ है वे उसमें नहीं जलते हैं। जिनका मूल तन ही प्रेमाग्निका स्वरूप है वे सर्वदा इसीमें रहते हैं।

सोई बात करें हक अरस की, सहूर या बेसहूर ।

हुए सब विध पूरन पकव, हक अरस दिन जहूर ॥ १०

ऐसी ब्रह्मात्माएँ जागृत अवस्थामें अथवा स्वप्नावस्थामें सर्वदा श्रीराजजी तथा परमधामकी ही चर्चा करती हैं। वे सब प्रकारसे परिपक्व हो गई हैं। उनके हृदयमें तारतम ज्ञानरूपी सूर्यका उदय हुआ है।

जो हक देखें टिका रहे, सोई अरस के तन ।

सोई करें मूल मजकूर, सोई करें वरनन ॥ ११

जो परमधामकी आत्माएँ होंगी वे श्रीराजजीके स्वरूपका दर्शन कर उसे अपने हृदयमें अङ्कित कर सकेंगी एवं नित्यप्रति उसकी ही चर्चा करेंगी। ऐसी आत्माएँ ही परमधामका वर्णन कर सकेंगी।

पर ए देख्या अचरज, जो विरहा सबद सुनत ।

क्यों तन रहा जीव बिना, हाए हाए ए सुनत न अरवा उडत ॥ १२

किन्तु यह बड़े आश्वर्यकी बात है कि ऐसी ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके वियोगकी बात सुनकर कैसे इस नश्वर शरीरको धारण कर रहीं हैं? खेदकी बात है कि यह वियोग सुनकर भी उनकी आत्मा शरीरसे नहीं निकलती है।

आसिक अरवा कहावहीं, तिन मुख विरहा ना निकसत ।

जब दिल विरहा जानिया, तब आहि अंग चीर चलत ॥ १३

परमधामकी आत्माएँ अनुरागिनी कहलाती हैं। उनके मुखसे विरहका एक भी शब्द नहीं निकलता है। जब उन्हें विरहकी पहचान होती है तब उनकी एक आह शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्गको बींधकर बाहर निकल आती है।

ए हांसी कराई हुकमें, इसक दिया उड़ाए ।
मुरदा ज्यों इसक बिना, गावत विरहा लड़ाए ॥ १४

यह स्थिति श्रीराजजीके आदेशके कारण ही हुई है. उसीने ब्रह्मात्माओंके दयसे प्रेमको दूर कर उनका उपहास करवाया है. इसीलिए वे प्रेमके बिना निष्प्राण-सी होकर विरहके गीत गाने लगती हैं.

कबूं अरस रूहें ऐसी ना करें, जैसी हमसे हुई इन बेर ।
अरस रूहों को विरहा रसें, हुए बेसक न लैयां घेर ॥ १५

परमधामकी आत्माएँ ऐसी भूल कभी नहीं कर सकतीं जैसी इस बार हमसे हुई है. परमधामकी आत्माएँ तारतम ज्ञान प्राप्त कर सन्देह रहित हो गई तथापि उनको विरह रस घेर नहीं पाया.

चरन तली की जो लीकें, सो एक लीक न होए वरनन ।
तो मुख से चरन क्यों वरनवुं, जो नूरजमाल का तन ॥ १६

श्रीराजजीके चरणतलकी रेखाओंमें किसी एकका भी वर्णन नहीं हो सकता है. इसलिए इस नश्वर जिह्वाके द्वारा उनके सम्पूर्ण चरणका वर्णन कैसे हो सकता है ? ये श्रीचरण तो साक्षात् श्रीराजजीके अङ्गस्वरूप हैं.

इन चरनों विध क्यों कहूं, नाजुक निपट नरम ।
ए वरनन करते इन जुबां, हाए हाए उडत न अंग बेसरम ॥ १७

इन चरणोंकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? ये तो अत्यन्त कोमल तथा कमनीय हैं. इन चरणोंका वर्णन करते हुए खेदकी बात है कि यह शरीर क्यों निर्लज्ज होकर टिका रहता है ?

चरन केहती हों मुखथें, जो निरखती थी निस दिन ।
सो समया याद न आवहीं, क्यों न लगे कलेजें अग्नि ॥ १८

इन चरणोंका वर्णन इसीलिए किया है कि मैंने अहर्निश इनके दर्शन किए हैं. किन्तु खेद है कि अभी भी उस समयका स्मरण नहीं हो रहा है और हृदयमें विरहकी अग्नि प्रज्वलित नहीं हो रही है.

चरन अंगूठे चित दे, नैनों नखन देखती जोत ।
नजरों निमख न छोड़ती, हाए हाए सो अब लोहू भी ना रोत ॥ १९
मेरी पर-आत्मा श्रीराजजीके इन चरणोंके अद्भुष्ट तथा उनकी नखसे निकलती
हुई ज्योतिका हृदयपूर्वक दर्शन करती थी. वह इन चरणोंकी शोभाको अपनी
दृष्टिसे पलमात्रके लिए भी ओझल होने नहीं देती थी. किन्तु बड़े खेदकी
बात है कि अब इन नयनोंसे रोते हुए रक्तकी धारा भी नहीं बहती है.

नैनों अंगुरियां देखती, कोमलता हाथ लगाए ।
सो मेरे नैना नाम धराए के, हाए हाए जल बल क्यों न जाए ॥ २०
मैंने अपने कोमल हाथोंसे स्पर्शकर इन चरणोंकी अद्भुलियोंके दर्शन किए
हैं. वे मेरे नयन आज नयनोंका नाम धारण करके भी जल-बलकर क्यों नष्ट
नहीं हो रहे हैं ?

चरन तली रेखा देखती, मेरी आंखों नीके कर ।
ए कटाव किनार पर कांगरी, हाए हाए नैना जलें न नाम धर ॥ २१
मेरे ये नयन इन चरणतलकी रेखाओंको भलीभाँति देखा करते थे. इन
चरणतलके किनार पर रेखाओंमें काँगरी शोभायमान है. इस अनुपम शोभाको
देखने वाले ये मेरे नेत्र, नेत्र कहलाते हुए भी अभी तक नहीं जल रहे हैं.
रंग लाल कहूं के उजल, के देख खूबियां होत खुसाल ।
सो देखन वाले नाम धराए के, हाए हाए ओ जलें न माहें क्यों झाल ॥

२

इन चरणकमलोंका रङ्ग लालिमायुक्त कहें या उज्ज्वल कहें ? इनकी अनुपम
शोभाको देखकर हृदय अत्यन्त प्रसन्न होता है. ऐसी दिव्य शोभाके दर्शक
बनकर भी खेदकी बात है कि अभी तक ये नेत्र विरहकी अग्निमें जल-
बलकर भस्मीभूत नहीं हुए हैं.

नाजुक सलूकी मीठी लगे, नैना देखत ना त्रपताए ।
हाए हाए ए अनभव दिल क्यों भूले, ए हुकमें भी क्यों पकराए ॥ २३
इन चरणोंकी सुकोमलता अत्यन्त मधुर लगती है, जिनका दर्शन करते हुए

नेत्र तृप्त नहीं होते हैं। खेदकी बात है कि इस दिव्य अनुभवको यह हृदय कैसे भूल रहा है, श्रीराजजीके आदेशने अभी तक इस शरीरको क्यों टिका रहने दिया है ?

नाम जो लेते विरह को, मेरी रसना गई ना टूट ।

सो विरहा नैनों देख के, हाए हाए गैयां न आँखां फूट ॥ २४

श्रीराजजीके विरहका नाम लेती हुई मेरी यह रसना क्यों खण्डित नहीं हुई है ? इस विरहको देखकर मेरी ये आँखें कैसे फूट नहीं रहीं हैं ?

हक बानी कानों सुनती, कानों सुनके करती मैं बात ।

सो अवसर हिरदें याद कर, हाए हाए नूर कानों का उड न जात ॥ २५

श्रीराजजीके मधुर वचनोंको कानोंसे सुनकर मेरी पर-आत्मा उनसे वार्तालाप किया करती थी। आज उस अवसरको हृदयमें याद करने पर इन कानोंकी श्रवण शक्ति क्यों समाप्त नहीं होती है ?

क्यों कहुं चरन के भूषन, अरस जड सबें चेतन ।

सोभा सुन्दर सब दिल चाही, बोल बोए नरम रोसन ॥ २६

श्रीराजजीके चरण कमलोंके आभूषणोंका वर्णन कैसे करें ? परमधाममें सभी जड़ पदार्थ भी चेतनकी भाँति होते हैं। उनकी वाणी सुगन्धि, सुकोमलता तथा देदीप्यता आदि सम्पूर्ण शोभा हृदयकी इच्छानुसार सुशोभित रहती है।

क्या वस्तर क्या भूषन, असल अंग के नूर ।

हाए हाए रुह मेरी क्यों रही, करते एह मजकूर ॥ २७

श्रीराजजीके अङ्गोंमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषण उनके अङ्गके प्रकाश समान हैं। इनका वर्णन करते हुए मेरी आत्मा इस शरीरको धारण कर क्यों टिकी हुई है ?

रंग रेसम हेम नंग जवेर, ना तेज जोत सबद लगत ।

एही अचरज अरवाहें अरस की, ए सुनते क्यों ना उडत ॥ २८

परमधामके वस्त्र तथा आभूषणोंके रङ्ग, रेशम, हेम तथा रत्न आदिकी ज्योतिके वर्णनके लिए भी नश्वर जगतके शब्द सक्षम नहीं होते हैं। बड़े

आश्चर्यकी बात है कि परमधामकी इस महिमाको सुनकर भी ब्रह्मात्माएँ नश्वर शरीरको क्यों नहीं छोड़ रहीं हैं।

याही भांत इजार की, भांत भूषन की सब ।
रूप करें कै दिल चाहे, जैसा रूह चाहे जब ॥ २९

इसी प्रकारकी अनुपम शोभा इजार तथा अन्य आभूषणोंकी है। ये सभी उसी प्रकार सुशोभित होते हैं जैसे ब्रह्मात्माएँ चाहतीं हैं।

इजार बंध याही रस का, भांत भांत झलकत ।
देख लटकते फुँदन, हाए हाए अरवा क्यों न कढत ॥ ३०
इसी प्रकार ब्रह्मात्माओंकी इच्छाके अनुसार ही इजारबन्द भी भाँति-भाँतिसे झलकता है। उसके लटकते हुए फुँदनोंको देखकर यह आत्मा शरीरसे क्यों अलग नहीं होती है ?

चरन से कमर लग, भूषन या वस्तर ।
हेम जवेर या रेसम, सब ऐकै रस बराबर ॥ ३१
चरणकमलोंसे लेकर कटि पर्यन्तके श्रीराजजीके वस्त्र तथा आभूषण; हेम, रत्न तथा रेशम आदिके क्यों न हो, सभी एक समान आनन्दप्रद हैं।

दिल चाही नरम सोभित, दिल चाही जोत खुसबोए ।
जिन खिन जैसा दिल चाहे, सब विध दें सुख सोए ॥ ३२
हृदयकी इच्छाके अनुसार ही उनमें सुकोमलता तथा सुगन्धि है। ब्रह्मात्माएँ जिस समय जैसी चाहना रखती हैं उनको इनसे उसी समय उसी प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं।

कै रंग हैं इजार में, उठत जामें में झाँई ।
अरवा क्यों सखत हुई, दिल देख उडत क्यों नाहीं ॥ ३३
श्रीराजजीने धारण की हुई इजारमें विभिन्न रङ्ग हैं उनकी आभा जामेसे झलकती है। इस दिव्य शोभाको देखकर यह आत्मा कठोर होकर नश्वर शरीरको क्यों त्याग नहीं रही है ?

आसमान जिमी के बीच में, भरी जोत उठें कै रंग ।

घट बढ़ काहूं है नहीं, करें दिल चाहे सब जंग ॥ ३४

भूमिसे लेकर आकाश पर्यन्त व्याप्त इन वस्त्राभूषणोंकी ज्योतिसे विभिन्न रङ्गकी किरणें निकलती हैं। इनमें किसीमें भी न्यूनाधिक्य नहीं है। ये सभी हृदयकी इच्छानुसार परस्पर ढुन्डु करतीं हैं।

ए सब विध दिल देखत, करे जुबां अकल वरनन ।

तो भी अरवा ना उडी, कोई सखत अंतस्करन ॥ ३५

परमधामकी इस दिव्य शोभाको भलीभाँति देखकर नश्वर जगतकी बुद्धिके अनुरूप जिह्वाके द्वारा उसका वर्णन किया जा रहा है तो भी यह आत्मा नश्वर देहको नहीं त्याग रही है। मानों, यह अन्तःकरण ही इतना कठोर हो गया है।

दिल सखत बिना इन सरूप की, इत लजत लई न जाएं ।

ए हुकम करत कै हिकमतें, हक इत ए सुख दिया चाहें ॥ ३६

हृदयको कठोर बनाए बिना इस नश्वर जगतमें श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपका आनन्द नहीं लिया जा सकता है। यह सारा चमत्कार श्रीराजजीके आदेशका है। क्योंकि श्रीराजजी इस नश्वर जगतमें भी ब्रह्मात्माओंको अखण्ड सुख प्रदान करना चाहते हैं।

ए रूह के नैनों देखिए, नाजुक कमर निपट ।

अति देखी सुन्दर चढती, कही जाए न सोभा कट ॥ ३७

आत्मदृष्टिसे जरा देखो, श्रीराजजीकी कटि अत्यन्त कोमल तथा कृश है। इसकी सुन्दरता उत्तरोत्तर बढ़ती हुई दिखाई देती है। इसलिए इसकी शोभा शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं हो सकती।

कट कमर सलूकी देख के, नैन क्यों रहे अंग को लाग ।

ए बातें दिल से विचारते, हाए हाए लगी न दिल को आग ॥ ३८

कटिकी कमनीय शोभाको लेकर मेरे ये नयन नश्वर शरीरमें कैसे टिके हुए हैं। इस दिव्य शोभाको हृदयसे विचार करते हुए खेद है कि मेरे हृदयमें विरहकी अग्नि प्रज्ज्वलित नहीं हुई है।

ए गौर रंग लाल उजल, छाती कै विध देत तरंग ।
नाहीं निमूना जोत जवेर, जो दीजे अरस के नंग ॥ ३९

श्रीराजजीके गौर वर्णमें लालिमायुक्त उज्ज्वल वक्षस्थलसे विभिन्न प्रकारकी किरणोंकी तरङ्गें उठती हैं। वक्षस्थल पर सुशोभित कण्ठहार आदिके रत्नोंकी उपमा कहीं भी प्राप्त नहीं है क्योंकि ये तो परमधामके रत्न हैं।

हैडा हक का देख कर, मेरा जीव रह्या अंग माहें ।
हाए हाए मुरदा दिल मेरा क्यों हुआ, ए देख चलया नाहें ॥ ४०

श्रीराजजीके सुन्दर वक्षस्थलके दर्शन कर मेरी आत्मा उसीमें स्थिर रह गई है। खेदकी बात है मेरा हृदय मृतककी भाँति क्यों हो गया है, इस अनुपम शोभाको देखकर यह जीव क्यों नहीं चला गया ?

हक हैडा देख कर, मेरे हैडे रहत क्यों दम ।
मांग्या सुख इत देवे को, सो राखत मासूक हुकम ॥ ४१

श्रीराजजीके वक्षस्थलके दर्शनकर मेरे हृदयकी घड़कने क्यों नहीं रुक जाती हैं ? वस्तुतः हमारी माँगके अनुरूप सुख प्रदान करनेके लिए ही श्रीराजजीका आदेश इस शरीरको यहाँ पर टिकाकर रख रहा है।

हाथ पांऊ मेरे क्यों रहे, देख हक हाथ पाउ ।
हाए हाए ए जुलम क्यों सह्या, क्यों भूले अवसर दाउ ॥ ४२

श्रीराजजीके हस्तकमल एवं श्रीचरणके दर्शन कर मेरे ये हाथ, पाँव इस शरीरमें कैसे टिके हुए हैं ? खेदकी बात है कि हमसे इतना बड़ा अपराध क्यों हुआ ? इस अमूल्य अवसरको कैसे भूला दिया ?

चकलाई दोऊ खंभन की, अंग उत्तरता सलूक ।
देख कमर कट पतली, हाए हाए दिल होत ना टूक टूक ॥ ४३

श्रीराजजीके दोनों स्कंध प्रदेशकी सुन्दरता, उससे नीचेके अङ्गोंकी सुकोमलता, कटिप्रदेशकी कृशता आदि देखकर हाय ! मेरे हृदयके टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो रहे हैं ?

मैं देख्या अंग जामे बिना, नाजुक जोत नरम ।
ए कहेनी में न आवहीं, ए अंग होए न मांस चरम ॥ ४४
मैंने श्रीराजजीके अङ्गोंको जामा आदि वस्त्र धारण किए बिना भी दर्शन किया है. उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग अत्यन्त कमनीय एवं सुकोमल हैं. शब्दोंके द्वारा इनका वर्णन नहीं हो सकता है क्योंकि ये अङ्ग मांस तथा चर्मके द्वारा बने हुए नहीं हैं.

जामा दांवन बाहें चोली, सिंध सागर रल्या मानों खीर ।
जोत भरी जिमी आसमान, मानों चलसी ऊपर चीर ॥ ४५
जामेका घेरा, बाहें तथा घेरेके ऊपरका भाग, चोली आदि सभी इस प्रकार सुशोभित हैं मानों क्षीर (दूध) का सागर शोभायमान हो रहा हो. इनकी ज्योतिर्मयी किरणें ऐसी लगती हैं मानों भूमिसे लेकर पूरे आकाशको चीरती हुई ऊपरकी ओर बढ़ रही हैं.

चीन मोहोरी बगल या बीच, गिरवान कोतकी नक्स ।
सब जामा जानों के भूषन, ठौर एक दूजेपे सरस ॥ ४६
जामेकी बाहोंकी मोहरी पर बनी चुन्नटों तथा दोनों पार्श्वभागमें केवड़ेके फूलकी सुन्दर चित्रकारी सुशोभित है. ये सभी चित्रकारी जामेके आभूषणकी भाँति एक दूसरेसे अधिक सुशोभित हैं.

जब जैसा दिल चाहत, तिन खिन तैसा देखत ।
वस्तर भूषन हक अंग के, कहेनी में न आवत ॥ ४७
ब्रह्मात्माओंका हृदय जब जैसी शोभाका दर्शन करना चाहता है उस समय वैसी ही शोभा दिखाई देती है. इसलिए श्रीराजजीके अङ्गोंमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषणोंकी शोभाका वर्णन शब्दोंके द्वारा नहीं हो सकता है.

ए वस्तर भूषन भांत और हैं, अरस अंग का नूर ।
जो सोभा देत इन अंग को, सो क्यों आवे माहें सहूर ॥ ४८
इन वस्त्र तथा आभूषणोंकी सुन्दरता ही भिन्न प्रकारकी है. क्योंकि ये श्रीराजजीके अङ्गोंके ही तेज स्वरूप हैं. जिनसे श्रीराजजीके अङ्ग सुशोभित होते हैं, उनका वर्णन कैसे हो सकता है ?

और क्या चीज ऐसी अरस में, जो सोभा देवे सरूप कों ।

हक सरभर कछू न आवहीं, रुह देखे विचार दिल मों ॥ ४९

परमधाममें ऐसी अन्य कौन-सी वस्तु है जो श्रीराजजीके स्वरूपको शोभा देती है. हृदय पूर्वक विचार करें तो ज्ञात होगा कि श्रीराजजीके समक्ष अन्य किसी भी वस्तुकी तुलना नहीं हो सकती है.

ए निपट बात बारीक है, अरस रुहें करना विचार ।

और कोई होवे तो करे, बात अलेखे अपार ॥ ५०

ये बातें अत्यन्त गूढ़ हैं. परमधामकी आत्माओंको ही इन पर विचार करना है. उनके अतिरिक्त अन्य कोई तो है ही नहीं जो इस पर विचार कर सके. श्रीराजजीकी दिव्य शोभाकी बात शब्दातीत तथा अपरम्पार है.

सोभा हक के अंग की, सो अंग ही की सोभा अंग ।

ऐसी चीज कोई है नहीं, जो सोभे इन अंग संग ॥ ५१

श्रीराजजीके दिव्य अङ्गोंमें सुशोभित वस्त्र तथा आभूषणोंकी अनुपम शोभा उनके ही अङ्गोंकी शोभा है. अन्यथा ऐसी कोई वस्तु ही नहीं है जो इन अङ्गोंको सुशोभित कर सके.

कहूं पटुके की सलूकी, के ए भूषन कहूं कमर ।

ए छब फब दिल देख के, न जानों रुह रेहेत क्यों कर ॥ ५२

श्रीराजजीकी कटि पर बँधे हुए पटुकाकी सुन्दरता इतनी अद्भुत है कि यह कटिके आभूषणकी भाँति सुशोभित है. इसकी सुन्दर छविको हृदयपूर्वक देखकर यह आत्मा कैसे शरीर धारण कर रही है ?

ए कह्या जाए न वस्तर भूषन, ए चीज दुनियां के ।

जो सोभा देत हक अंग को, ताए क्यों नाम धरिए ए ॥ ५३

ये वस्त्र तथा आभूषण नश्वर जगतके वस्त्र तथा आभूषणोंकी भाँति नहीं हैं. जो श्रीराजजीके अङ्गों पर सुशोभित है उनको नश्वर जगतके वस्त्राभूषणोंकी भाँति कैसे कहा जा सकता है ?

हक के अंग का नूर जो, ए रुहों अरस में सुध होत ।

इत सबद न कोई पोहोंचहीं, जो कोट रोसन कहूं जोत ॥ ५४

ये तो श्रीराजजीके ही अङ्गके प्रकाश स्वरूप हैं. इनकी जानकारी परमधामकी ब्रह्मात्माओंको ही होती है. इनकी शोभाको व्यक्त करनेके लिए यहाँके कोई भी शब्द सक्षम नहीं हैं. चाहे करोंड़ों सूर्योंकी भी उपमा क्यों न दी जाए !

नख अंगूरी अंगूठे, कोई दिया न निमूना जाए ।

जोत क्यों कहूं इन मुख, रहे अंबर जिमी भराए ॥ ५५

इस प्रकार अङ्गुष्ठ तथा अङ्गुलियोंके नखोंकी तेजस्विताके लिए भी कोई उपमा नहीं दी जा सकती है. इनसे निकलती हुई ज्योतिका वर्णन कैसे करें ? वह तो आकाश तथा भूमिमें सर्वत्र व्याप्त है.

पतली अंगुरियाँ उजल, सोभा क्यों कहूं मुंदरियों मुख ।

ए देखें रुह मोमिन, सोई जाने ए सुख ॥ ५६

ये अङ्गुलियाँ पतली तथा उज्ज्वल हैं. उनमें धारण की हुई मुद्रिकाकी शोभाका वर्णन कैसे करें ? जो ब्रह्मात्माएँ इनके दर्शन करती हैं वे ही इनसे प्राप्त सुखोंका अनुभव कर सकती हैं.

लीकें हथेली उजल, सलूकी पोहोंचों ऊपर ।

ए बेवरा केहेते अकल, हाए हाए अरवा रेहेत क्यों कर ॥ ५७

हस्तकमलकी रेखाएँ अति उज्ज्वल हैं एवं पञ्चे पर सुशोभित पहुँची भी अति सुन्दर शोभायुक्त है. बुद्धिके द्वारा इनकी सुन्दरताका निरूपण करते हुए खेदकी बात है कि यह आत्मा नश्वर शरीरको कैसे धारण कर रह रही है ?

पोहोंची कांडों कडे झलकत, हेम जवेर कै रंग रस ।

दिल चाहे रूप रंग ल्यावहीं, जो देखिए सोई सरस ॥ ५८

यह सुन्दर पहुँची तथा कलाईकी कड़ी एवं कडे आदि अति सुन्दर झलक रहे हैं. इनमें विभिन्न रङ्गोंके रत्न स्वर्णमें जडे हुए हैं. ब्रह्मात्माओंकी इच्छानुसार इनका रूप तथा रङ्ग दिखाई देता है. जिस रूप तथा रङ्गको देखते हैं वही सुन्दर प्रतीत होता है.

मोहोरी चूड़ी बाँहें बाजूबंध, सोभा बारीक कै वरनन ।

नाम लेत इन चीज का, हाए हाए अरवा उडत ना मोमन ॥ ५९

जामेकी बाँहोंकी मोहरीकी चुन्नटें, चूड़ी तथा भुजबन्ध आदिकी सूक्ष्म शोभा अद्वितीय है जिसका वर्णन नहीं हो सकता है। इन अनुपम वस्तुओंका नाम लेते हुए भी खेदकी बात है यह आत्मा शरीरको नहीं छोड़ रही है।

हक हुकम राखत जोरावरी, बात आई ऊपर हुकम ।

ना तो रहे ना सुन वचन, पर ज्यों जाने त्यों करें खसम ॥ ६०

वस्तुतः श्रीराजजीका आदेश ही इतना समर्थ है कि वही इस शरीरको टिका कर रख रहा है। इसलिए सब कुछ इसी आदेश पर निर्भर है। अन्यथा इन वचनोंको सुनकर यह आत्मा कैसे शरीरमें रह सकती है? किन्तु श्रीराजजी जैसा चाहते हैं वे अपने आदेशके द्वारा वैसा ही करवाते हैं।

सोभा लेत हैडे खभे, कर हेत सुनत श्रवन ।

विचार किए जीवरा उडे, या उडे देख भूषन ॥ ६१

श्रीराजजीका वक्षस्थल तथा स्कन्धप्रदेश अत्यन्त शोभायुक्त हैं। वे आत्माओंकी बातें बड़े प्रेमसे सुनते हैं। उनकी अनुपम छविका विचार मात्र करनेसे अथवा उनके आभूषणोंके दर्शन मात्रसे ही यह जीव शरीरको छोड़ सकता है।

गौर हरवटी अति सुंदर, या देख के लांक सलूक ।

लाल अधुर देख ना गया, लोहू मेरे अंग का सूक ॥ ६२

गौरवर्णका चिबुक अत्यन्त सुन्दर शोभायुक्त है। उसके ऊपरकी गहराई भी अति सुन्दर है। उनके लाल अधरोष्ठको देखकर मेरे शरीरका रक्त क्यों नहीं सूख जाता है?

मुख चौक छवि सलूकियां, सुंदर अति सरूप ।

गाल लाल अति उजल, सुखदायक सोभा अनूप ॥ ६३

इस प्रकार श्रीराजजीके मुखमण्डलकी अनुपम छवि अत्यन्त सुकोमल तथा सुन्दरता युक्त है। लालिमायुक्त उनके कपोल अत्यन्त उज्ज्वल हैं। उनकी यह अनुपम शोभा अति सुखदायी है।

निलवट तिलक नासिका, रंग पल में अनेक देखाए ।

दंत बीड़ी मुख मोरत, हाए हाए जीवरा उड न जाए ॥ ६४

नासिकाके ऊपर ललाट प्रदेश पर सुशोभित तिलकसे पल-पलमें अनेक रङ्गोंकी आभा झलकती है. वे दाँतोंसे पानका बीड़ा चबाते हैं तब उनकी अनुपम शोभाको देखकर यह जीव क्यों नहीं उड़ जाता है ?

रंग नासिका की मैं क्यों कहूं, गुन सलूक अद्भूत ।

सुन ब्रह्माड को फोड के, अरस वास लेत बीच नासूत ॥ ६५

नासिकाके रङ्ग, शोभा तथा अद्भुत गुणोंका वर्णन कैसे किया जाए ? उसकी सुगन्धि शून्य-निराकार सहित पूरे ब्रह्माण्डको छेद कर नश्वर जगत तक पहुँच जाती है.

नैन सैन जो करत हैं, सामी रुह मोमन ।

ए सैन दिल लेय के, हाए हाए चिराए न गया ए तन ॥ ६६

जब श्रीराजजी अपने सम्मुख बैठी हुई ब्रह्मप्रियाओंके नयनोंसे नयन मिलाकर साङ्केतिक बात करते हैं तो उनके सङ्केतोंको हृदयमें धारण करने पर यह नश्वर तन क्यों नहीं फट जाता है ?

ए नैना नूर जमाल के, देख सलोने सलूक ।

ए सुन नैन विछोडा मोमिन, हाए हाए हो न गए भूक भूक ॥ ६७

श्रीराजजीके ये नयनकमल अत्यन्त मनोहर एवं सुन्दर लगते हैं. इन नयनोंका वियोग सुनकर ब्रह्मात्माओंका हृदय क्यों खण्डित नहीं होता है ?

अंबर धरा के बीच में, केस लवने नूर झलकत ।

ए सोभा मुख क्यों कहूं, कानों मोती लाल लटकत ॥ ६८

श्रीराजजीके श्यामल कुन्तल तथा कानके पृष्ठभागका प्रकाश परमधाममें भूमिसे लेकर आकाश तक फैल जाता है. श्रवणअङ्गोंमें सुशोभित कुण्डलमें माणिक्य तथा मोती लटक रहे हैं. इस दिव्य शोभाका वर्णन जिह्वाके द्वारा कैसे किया जाए ?

कानन मोती केहेत हों, पल में बदलत भूषन ।
आसिक देखे कै भाँतें, सुख देवें दिल रोसन ॥ ६९

अभी तो श्रवणअङ्गोंमें सुशोभित कुण्डलमें जड़ायमान मोतीका वर्णन किया है किन्तु इन अङ्गोंमें पल-पलमें नए-नए आभूषण परिवर्तित होते हैं। अनुरागिनी आत्माएँ विभिन्न प्रकारसे इस शोभाके दर्शन कर हृदयको प्रकाशित करती हुई आनन्दका अनुभव करती हैं।

कानों कडी गठौरी मुरकी, जुगत जिनस नहीं पार ।
नाम नंग रंग रसायन क्यों कहूं, रूप छिन में बदलें बेसुमार ॥ ७०
श्रवणअङ्गोंमें धारण की हुई कड़ी, बाली एवं मुरकीकी छविका कोई पारावार नहीं है। इनमें जड़ित रलों तथा धातु (रसायनों) के रङ्गोंका वर्णन कैसे करें ? क्षण-क्षणमें इनके अनन्त रूप परिवर्तित होते हैं।

उजल निलाट लाल तिलक, क्यों कहूं सोभा असल ।
सुंदर सलूकी सरूप की, माहें आवत ना अकल ॥ ७१
उज्ज्वल ललाट पर सुशोभित लाल तिलककी शोभा कैसे व्यक्त की जाए ? श्रीराजजीके स्वरूपकी सुन्दरताका वर्णन सांसारिक बुद्धिसे सम्भव ही नहीं है।

पाग कही सिर हक के, और कहा सिर मुकट ।
हाए हाए जीवरा क्यों रहा, खुलते हिरदे ए पट ॥ ७२
इस प्रकार श्रीराजजीके सिर पर सुशोभित पाग तथा मुकुटकी शोभाका वर्णन किया। हृदयके अन्तर्पट खोलकर इनके दर्शन करने पर भी हाय ! यह जीव शरीरमें कैसे टिक रहा है ?

कलंगी दुगदुगी तो कहूं, जो पगड़ी होए और रस ।
वस्तर भूषन या अंग तीनों, हर एक पे एक सरस ॥ ७३
कलंगी तथा दुगदुगीकी अद्वितीय शोभाका वर्णन पृथक् रूपसे तभी किया जा सकता है जब वे पगड़ीसे भिन्न प्रकारके हों। श्रीराजजीके वस्त्र, आभूषण तथा अङ्ग इन तीनोंकी शोभा एक दूसरेसे अधिक सुन्दर हैं।

ताथें रस तो सब एक है, तामें अनेक रंग ।
कलंगी दुगदुगी ठौर अपने, करत माहों माहों जंग ॥ ७४

इसलिए इन सभीमें एक ही रस है, मात्र रङ्ग ही अलग-अलग हैं. कलङ्गी तथा दुगदुगी भी अपने स्थान पर सुशोभित हैं. उनसे निकलती हुई किरणें परस्पर स्पर्धा करती हैं.

मोमिन असल सूरत अरस में, अबलों न जाहेर कित ।
खोज खोज कै बुजरक गए, सो अरस रुहें ल्याई हकीकत ॥ ७५

ब्रह्मात्माओंका मूल स्वरूप दिव्य परमधाममें है. इस जगतमें आज तक इसका वर्णन नहीं हुआ था. अनेक साधकोंने अखण्ड धामकी खोज की किन्तु परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही उनका विवरण लेकर यहाँ पर प्रकट हुई हैं.

नूर खूबी कही केसन की, हक सरूप की इत ।
हाए हाए मेरा अंग मुरदा ना हुआ, केहेते बका निसबत ॥ ७६

मैंने यहाँ पर श्रीराजजीके श्यामल कुन्तलकी शोभाका वर्णन किया है.
धामधनीकी अङ्गना होनेकी पहचान होने पर भी उनकी शोभाका वर्णन करते हुए मेरा अङ्ग निष्प्राण क्यों नहीं हुआ ?

नख सिख लों वरनन किया, और गाया लडाए लडाए ।
मोमिन चाहिए विरहा सुनते, तबहीं अरवा उड जाए ॥ ७७

मैंने नखसे लेकर शिखा तक श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपका भाँति-भाँतिसे वर्णन किया. ब्रह्मात्माओंको चाहिए कि अपने प्रियतमके विरहकी बातें सुनते ही उनके प्राण तत्काल उड़ जाएँ.

जो पर आत्म पोहोंचे नहीं, सो क्यों पोहोंचे हक अंग कों ।
आसिक और मासूक, कैसी तफावत इनमों ॥ ७८

जो शब्द पर-आत्मा तक भी नहीं पहुँचते हैं उनके द्वारा श्रीराजजीके अङ्गोंका वर्णन कैसे हो सकता है ? क्योंकि अनुरागिनी आत्मा तथा प्रियतम धनी दोनोंमें कोई अन्तर ही नहीं है.

नाजुक सोभा हक की, जो रूह के आवे नजर ।
तो अबहीं तोको अरस की, होए जाए फजर ॥ ७९
हे आत्मा ! श्री राजजीकी कमनीय शोभा यदि आत्म-दृष्टिमें आ जाए तो
तुझे तत्काल ही परमधामका अनुभव होने लग जाएगा.

ज्यों सूरत दिल देखत, त्यों रूह जो देखे सूरत ।
तो बेर नहीं रूह लजत, तेरे अंग जात निसबत ॥ ८०
जैसे तेरी पर आत्माका हृदय श्रीराजजीके स्वरूपके दर्शन करता है उसी
प्रकार इस नश्वर तनका हृदय भी उनके स्वरूपके दर्शन करने लग जाए तो
आत्माको आनन्दका अनुभव करनेमें कोई समय नहीं लगेगा. क्योंकि तेरे
मूल अङ्ग (पर-आत्मा) का सम्बन्ध श्रीराजजीके साथ ही है.

फरक नहीं दिल रूह के, ए तो दोऊ रहे हिल मिल ।
अरस में जो रूह है, तो हकें कहा अरस दिल ॥ ८१
पर-आत्माके हृदय और आत्माके इस नश्वर तनके हृदयमें कोई अन्तर नहीं
है. दोनों परस्पर हिलमिल कर रह सकते हैं. जिन आत्माओंके मूल स्वरूप
परमधाममें हैं उनके हृदयको ही श्रीराजजीने अपना परमधाम कहा है.

तेरा दिल लग्या ज्यों सूरत को, त्यों जो सूरतें रूह लगें ।
तो अबहीं ले रूह लजत, एक पलक में जगें ॥ ८२
जैसे तेरी पर-आत्माका हृदय श्रीराजजीके स्वरूपके दर्शन करता है उसी
प्रकार तेरे नश्वर शरीरका यह हृदय भी उनके स्वरूपके दर्शन करना चाहे
तो उसे तत्काल परम आनन्दका अनुभव होने लगेगा और पल मात्रमें ही
आत्मा जागृत हो जाएगी.

रूह तो तेरी दिल बीच में, तो कहा दिल अरस ।
सेहेरग से नजीक तो कहा, जो रूह दिल अरस परस ॥ ८३
तेरी आत्मा तो पर-आत्माके हृदयमें ही है. इसीलिए उसके हृदयको परमधाम
कहा गया है. पर-आत्मा और इस आत्माके द्वारा धारण किए गए नश्वर
शरीरका हृदय परस्पर एकाकार होनेके कारण ही श्रीराजजीको प्राणनलीसे भी
अति निकट कहा है.

सूरत कहेते हक की, आगूं रुह मोमन ।

हाए हाए रुह मुरग ना उड़ा, वरनन करते अरस तन ॥ ८४

इन ब्रह्मात्माओंके समक्ष श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपके वर्णन करते हुए हाय !
यह आत्मारूपी पक्षी शरीरको छोड़ कर क्यों नहीं उड़ रहा है ?

आगूं अरवाहें अरस की, करी बातें हक जुबान ।

हाए हाए तन मेरा क्यों रह्या, करते खिलवत बयान ॥ ८५

मैंने इस संसारमें परमधामकी आत्माओंके समक्ष श्रीराजजीके चिन्मय स्वरूपका वर्णन किया है. बड़े खेदकी बात है कि उनके साथकी एकान्त चर्चाका वर्णन करते हुए यह नश्वर तन अभी तक क्यों टिक रहा है ?

रुहें रहें अरस दरगाह में, जो दरगाह नूर जमाल ।

ए करते बयान खिलवत का, हाए हाए रुह रही किन हाल ॥ ८६

ब्रह्मात्माएँ मूलतः अक्षरातीत पूर्णब्रह्म परमात्माके चरणोंमें परमधाम मूलमिलावामें विराजमान हैं. मैंने इसी मूल मिलावाका यथार्थ वर्णन किया है तथापि खेदकी बात है यह आत्मा अभी तक इस शरीरको क्यों धारण कर रही है ?

फेर फेर मेहेबूब देखिए, लगे मीठडा मुख मासूक ।

अंग गौर जोत अंबर लों, छवि देख दिल होत न भूक भूक ॥ ८७

प्रियतम धनीके स्वरूपको वारंवार देखते हुए उनका मुख मण्डल अत्यन्त माधुर्यपूर्ण लगता है. उनके गौर वर्णके अङ्गोंकी ज्योति आकाश तक व्याप है. इस अनुपम शोभाके दर्शन करते हुए यह हृदय खण्डित क्यों नहीं होता है ?

रूप रंग अंग छवि सलूकी, कहे वस्तर भूषन ।

ए कहेते अरवा ना उड़ी, हाए हाए कैसी हुजत मोमन ॥ ८८

मैंने श्रीराजजीके रूपलावण्य तथा अङ्गोंकी अनुपम छवि एवं वस्त्र तथा आभूषणोंका वर्णन किया है. इतना होने पर भी यह आत्मा नश्वर शरीरको नहीं छोड़ रही है. खेदकी बात है कि मैं श्रीराजजीके अभिन्न अङ्ग होनेका अधिकार कैसे व्यक्त कर रहा हूँ ?

पांड लीक केहेते अरवा उडे, क्यों वरनवी हक सूरत ।

बंध बंध छूट ना गए, हाए हाए कैसी अरस हुजत ॥ ८९

श्री राजजीके चरणतलकी रेखाओंका वर्णन करते हुए ही शरीरको छोड़ देना चाहिए. किन्तु मुझसे उनके दिव्य स्वरूपका वर्णन कैसे हुआ ? यह वर्णन करते हुए इस नश्वर शरीरके रन्ध-रन्ध क्यों टूट नहीं गए ? श्रीराजजीके अभिन्न अङ्ग होनेका यह कैसा अधिकार है ?

कहा गौर मुख मासूक का, और निलवट असल तिलक ।

हाए हाए ए बयान करते क्यों जिए, हम में रही नहीं रंचक ॥ ९०

श्रीराजजीके गौर वर्णके मुखमण्डल तथा ललाट पर सुशोभित तिलकका वर्णन करते हुए मुझे उनके सम्बन्धकी लेश मात्र भी सुधि नहीं हुई.

वरनन किया श्रवन का, जाके ताबे दिल हुकम ।

मासूक अंग वरनवते, हाए हाए मोमिन रहे क्यों हम ॥ ९१

मैंने श्रीराजजीके श्रवण अङ्गका वर्णन किया, जिनके अधीन उनका हृदय एवं आदेश रहते हैं. अपने प्रियतम धनीके दिव्य अङ्गोंका वर्णन करते समय हम ब्रह्मात्माओंका यह शरीर कैसे टिक रहा ?

कहे गौर गलस्थल हक के, कै छबि नाजुक कोमलता ।

हाए हाए रुह इत क्यों रही, मुख देख मासूक बका ॥ ९२

मैंने श्रीराजजीके लालिमायुक्त कपोलोंके गौर वर्ण तथा उनकी कमनीयता एवं सुकोमलतायुक्त छविका वर्णन किया. अपने प्रियतम धनीके मुखारविन्दके दर्शन करते हुए यह आत्मा नश्वर शरीरमें कैसे अटकी रही ?

बड़ी रुहें देख्या हक को, हकें देख्या सामी भर नैन ।

हाए हाए बात करते जीव क्यों रह्या, एह देख नैनकी सैन ॥ ९३

श्रीश्यामाजीने श्रीराजजीकी ओर उत्कण्ठापूर्वक देखा एवं श्रीराजजीने भी श्यामाजीके प्रति नयन भरकर दृष्टि डाली. इस प्रकार नयनोंके सङ्केतोंके द्वारा ही परस्पर हृदयके भावोंको व्यक्त करते हुए देखकर भी हाय ! मेरी यह आत्मा इस शरीरमें कैसे स्थिर रह गई ?

भाँह स्याह नैन अनियां कही, कहा जोड गौर अंग ।

हाए हाए तन हुकमें क्यों रख्या, हुआ कतल न होते जंग ॥ १४

मैंने श्रीराजजीके नैनोंकी श्यामल भृकुटी एवं बाणके समान तीक्ष्ण कोणोंका
वर्णन करते हुए उनके अङ्गोंके गौर वर्णका वर्णन किया. इन अङ्गोंसे उठती
हुई किरणोंकी स्पर्धाको देखकर भी श्रीराजजीके आदेशने इस शरीरको कैसे
जीवित रखा है ?

देखी निरमलता दंतन की, न आवे मिसाल लाल मानिक ।

ज्यों देखत बीच चसमों, त्यों देखी जाए जुबां मुतलक ॥ १५

श्रीराजजीकी दन्तावलिकी निर्मलताके दर्शन भी मैंने ही किए हैं. उनके समक्ष
लालिमायुक्त माणिक्यकी उपमा भी उपयुक्त नहीं है. जिस प्रकार आँखों पर
लगे चश्मेंके काँचसे सब कुछ स्पष्ट दिखाई देता है उसी प्रकार इन
दन्तावलिसे अन्दरकी जिह्वा निश्चय ही स्पष्ट दिखाई देती है.

कबूं हीरा कबूं मानिक, अंग रंग सोभा कै लेत ।

दोऊ निरमल ऐनक ज्यों, परे होए सो देखाई देत ॥ १६

यह दन्तावलि कभी हीरेकी भाँति श्वेत तथा कभी माणिक्यकी भाँति
लालिमायुक्त देखाई देती है. इसमें अनेक रङ्गोंकी शोभा झलकती है. ये दोनों
ही रत्न ऐनककी भाँति इतने निर्मल हैं कि उनसे परे जो कुछ भी है वह
सब दिखाई देता है.

लालक इन अधुर की, हक कबूं दिलों देखावत ।

बंध बंध जुदे हुए ना पडे, मेरा हैडा निपट सखत ॥ १७

श्रीराजजीके अधरोष्ठकी लालिमा कभी-कभी मेरे हृदयमें प्रतिबिम्बित होती
है. इतना होने पर भी मेरा हृदय इतना कठोर हो गया है कि इस तनके रन्ध्र-
रन्ध्र अलग-अलग नहीं हो रहे हैं.

हक मुख सलूकी क्यों कहूं, छवि सोभित गौर गाल ।

वरनन करते ए सूरत, हाए हाए लगी न हैडे भाल ॥ १८

श्रीराजजीके मुखमण्डलकी सुन्दरता एवं गौरवर्णयुक्त कपोलोंकी छविका

वर्णन कैसे करें ? ऐसे चिन्मय स्वरूपका वर्णन करते समय हृदयमें चोट क्यों नहीं पहुँची है ?

मैं कही जो मुख माडनी, और कहा मुख सलूक ।
ए कहेते सलूकी मेरा अंग, हाए हाए हो न गया टूक टूक ॥ १९

मैंने श्रीराजजीके मुखमण्डलको महिमामण्डित कर उनकी दिव्य शोभाका वर्णन किया। इस छविकी मृदुलताका वर्णन करते हुए मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्ग क्यों विखण्डित नहीं हुए हैं ?

कही गौर हरवटी हक की, लांक पर लाल अधुर ।
कही दंत जुबां बीड़ी मुख, हाए हाए रुह क्यों रही सुन मधुर ॥ १००
इस मुखमण्डल पर सुशोभित गौर वर्णका चिबुक एवं उसके ऊपरकी गहराईसे ऊपर लालिमायुक्त अधरोष्ठ सुशोभित हैं। इसके साथ ही दन्तावलि, जिहा तथा मुखागविन्दमें सुशोभित पानकी बीड़ाका वर्णन किया है। उनकी माधुर्यपूर्ण वाणीको सुनकर मेरी यह आत्मा कैसे स्थिर रह गई है ?

लाल अधुर कहे मासूक के, सो दिलें भी देखी लालक ।
ए देख लोहू मेरा क्यों रहा, सूक न गया माहें पलक ॥ १०१

मैंने श्रीराजजीके लाल अधरोष्ठका वर्णन किया एवं मेरे हृदयने भी उस लालिमाको देखा है। यह देखने पर भी मेरे शरीरमें रक्त क्यों बह रहा है ? वह पल मात्रमें ही क्यों नहीं सूख गया ?

कंठ खभे बंध बंध का, नख सिख किया वरनन ।
हाए हाए जीवरा मेरा क्यों रहा, टूट्या न अंतसकरन ॥ १०२
श्रीराजजीके कण्ठ, दोनों स्कन्धप्रदेश सहित नखसे लेकर शिखा पर्यन्तके रन्ध्र-रन्ध्रका मैंने वर्णन किया है। इस अनुपम छविका वर्णन करते हुए मेरी आत्मा नश्वर शरीरमें कैसे स्थिर रही ? उसका अन्तःकरण क्यों खण्डित नहीं हुआ ?

वरनन किया बका हक का, मैं हुकम लिया दिल ल्याए ।
कहेते हैडे की सलूकी, हाए हाए मेरी छाती न गई चिराए ॥ १०३
श्रीराजजीके आदेशको शिरोधार्य कर मैंने उनके अखण्ड स्वरूपका वर्णन

किया है. उनके वक्षस्थलकी सुन्दरताका वर्णन करते हुए मेरा हृदय क्यों
विदीर्ण नहीं हुआ ?

हकें अरस किया दिल मोमिन, ए मता आया हक दिल सें ।

हकें दिल दिया किया लिख्या, हाए हाए मोमिन डूब न मुए इनमें ॥ १०४
श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके हृदयको अपना परमधाम बनाया है. इसलिए
श्रीराजजीके हृदयसे ही उनके हृदयमें परमधामकी सम्पदा आई है. आस
ग्रन्थोंमें उल्लेख है कि श्रीराजजीने अपने हृदयकी सम्पत्ति देकर ब्रह्मात्माओंके
हृदयको अपना धाम बनाया है. इतना होने पर भी खेदकी बात है कि
ब्रह्मात्माएँ इसमें विलीन नहीं हुईं.

हार कहे हैडे पर, जोत भरी जिमी आसमान ।

हाए हाए दिल मुरदा जल ना गया, नूर एता होते सुभान ॥ १०५
मैंने श्रीराजजीके वक्षस्थल पर सुशोभित हारका वर्णन किया जिसकी ज्योति
पूरे आकाशमें व्यास है. श्रीराजजीके इस प्रखर प्रकाशको देखकर भी मेरे
नश्वर शरीरका यह हृदय जलकर भस्म नहीं हुआ.

कट पेट पांसे कहे हक के, ले दिल के बीच नजर ।

हाए हाए ख्वाबी तन क्यों रह्या, ए दिल को लेकर ॥ १०६
मैंने हृदयमें चिन्तन करते हुए अपनी आत्मदृष्टिसे देखकर श्रीराजजीकी
कटि, उदर तथा पसलियोंका वर्णन किया है. इस अनुपम छविको हृदयङ्गम
करते हुए भी मेरा यह नश्वर शरीर कैसे टिका है ?

कांध पीठ लीक सलूकी, कही इलमें दिल दे ।

हाए हाए हुकमें ए तन क्यों रख्या, जो हुकम बैठा हुजत रूह ले ॥ १०७
मैंने जागृत बुद्धिके ज्ञानको हृदयङ्गम कर श्रीराजजीका स्कन्धप्रदेश, पृष्ठभाग
तथा उसकी गहराईकी सुन्दरताका वर्णन किया. इतना होने पर भी
श्रीराजजीके आदेशने इस शरीरको अभी तक क्यों खड़ा रखा है ? यह
आदेश ही परमधामकी आत्माका अधिकार लेकर बैठा हुआ है.

अरस जवेर की क्यों कहूं, देखे बाजूबंध के नंग ।

जिमीसे आसमान लग, हाए हाए जीव कतल न हुआ देख जंग ॥ १०८

परमधामके रत्नोंके विषयमें क्या कहा जाए ? मैंने श्रीराजजीके भुजबन्धमें जड़े हुए रत्नोंका वर्णन किया है, जिनकी किरणें भूमिसे लेकर आकाश तक व्यास है. उनकी स्पर्धाको देखकर यह जीव क्यों नष्ट नहीं हुआ ?

हक हाथों की वरनन करी, मछे कोनी कलाई कांडे ।

ए सुन जीव क्यों रेहेत है, ले खाब झूठे भांडे ॥ १०९

मैंने श्रीराजजीके हस्तकमलोंका वर्णन करते हुए उनकी कोहनी, कोहनीके ऊपरका भाग (मछे), कलाई आदिकी शोभाका वर्णन किया. आश्चर्यकी बात है कि इस दिव्य शोभाका वर्णन सुनकर भी यह जीव इस स्वप्नवत् शरीरको लेकर क्यों खड़ा रह गया है ?

पोहोंचे लीकें हथेलियाँ, छवि अंगुरियाँ नख तेज ।

देखो अचरज मुख केहेते, हो न गया रेजा रेज ॥ ११०

इसी प्रकार हस्तकमलका पृष्ठभाग (पहुँचा), हथेलियाँ, उनकी रेखाएँ, अङ्गुलियाँ, उनके नख, नखका तेज इत्यादिकी सुन्दर शोभाका वर्णन किया. इस शोभाका वर्णन करते हुए मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्ग क्यों टुकड़े-टुकड़े नहीं हुए ?

रंग सलूकी भूषन, देख कांडों हाथों के ।

ए जोत ले जीव ना उड़ा, हाए हाए बडा अचंभा ए ॥ १११

हस्तकमलमें धारण किए हुए आभूषणोंकी सुन्दरता तथा हाथोंकी कलाई आदिकी ज्योति देखकर यह जीव क्यों नहीं उड़ गया ? यह आश्चर्यकी बात है.

कै रंग इजार मासूक की, दांवन में झाँई लेत ।

छेडे पटुके दांवन पर, हाए हाए दिल अजूँ न घाव देत ॥ ११२

श्रीराजजीकी इजारके अनेक रङ्ग श्वेतरङ्गके जामेके घेरेसे झलकते हुए दिखाई देते हैं. इस पर पटुकेका छोर सुशोभित है. इन वस्त्रोंकी अनुपम शोभाको देखकर अभी तक हृदय घायल नहीं हो रहा है.

चरन कमल मासूक के, चित में चूर्भे जिन ।

ए छवि सलूकी भूषन, क्यों कर छोड़े मोमिन ॥ ११३

जिन अनुरागिनी आत्माओंके हृदयमें अपने प्रियतम धनीके श्रीचरणोंकी छवि अङ्कित हो गई है वे उनके सुन्दर आभूषणोंकी छविको अपने हृदयसे कैसे हटा सकती हैं ?

ए चरन आवें जिन दिल में, सो दिल अरस मुतलक ।

कै मुतलक बातें अरस की, दिल सब विध हुआ बेसक ॥ ११४

ये चरणकमल जिनके हृदयमें अङ्कित हो गए हैं निश्चय ही उनका हृदय परमधामकी संज्ञासे विभूषित हुआ है. ऐसी ब्रह्मात्माएँ परमधामके गूढ़ रहस्योंको समझ जाती हैं एवं उनका हृदय पूर्णरूपेण सन्देह रहित हो जाता है.

क्यों कहूं खूबी चरन की, और खूबी भूषन ।

अदभुत सोभा हक की, क्यों न होए अरस तन ॥ ११५

इस प्रकार श्रीराजजीके चरणों, तथा उनके आभूषणोंकी शोभाका वर्णन कैसे किया जाए ? उनकी शोभा ही अद्भुत है. वस्तुतः परमधामके स्वरूपकी शोभा इतनी अद्वितीय क्यों नहीं होगी ?

चकलाई इन चरन की, भूषन छवि अनूपम ।

दिल ताही के आवसी, जाको मुतलक मेहेर खसम ॥ ११६

इन श्रीचरणोंकी सुन्दरता तथा उनमें धारण किए हुए आभूषणोंकी अनुपम छवि उन्हीं ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अङ्कित होती है जिनके ऊपर निश्चय ही श्रीराजजीकी अपार कृपा है.

जो होवे अरवा अरस की, सो इन कदम तलें बसत ।

सराब चढे दिल आवत, सो रुह निस दिन रहे अलमस्त ॥ ११७

जो आत्माएँ परमधामकी होंगी वे सदैव इन्हीं श्रीचरणोंकी छत्रछायामें रहती हैं. इन श्रीचरणोंकी छवि अङ्कित होते ही ब्रह्मात्माओंके हृदयमें मस्ती आ जाती है जिससे वे अहर्निश अलमस्त हो जाती हैं.

निमग्न न छोडे चरन को, मोमिन रूह जो कोए ।

निस दिन रहे खुमार में, आवत है चरन बोए ॥ ११८

इसलिए जो परमधामकी ब्रह्मात्मा एँ होंगी वे इन चरणोंको पलमात्रके लिए भी नहीं छोड़ेंगी। वे तो अहर्निश इन्हीं चरणोंके चिन्तनमें निमग्न रहती हैं तथा सर्वदा उनको इन चरणोंकी सुगन्ध प्राप्त होती है।

मासूक के चरनों का, किया बेवरा वरनन ।

जीव उड्या चाहिए केहेते लीक, हाए हाए क्यों रहे मोमिन तन ॥ ११९

इस प्रकार प्रियतम धनी श्रीराजजीके चरणोंका विवरण दिया है। इन चरण तलकी रेखाओंका वर्णन करते हुए इस जीवको शरीर छोड़ देना चाहिए। बड़े खेदकी बात है कि अभी भी ब्रह्मात्मा एँ शरीरको यथावत् धारण कर रहीं हैं।

हाथ पांड मुख हैयडा, वस्तर भूषन हक सूरत ।

ए ले ले अरस बारीकियां, हाए हाए रूह क्यों न जागत ॥ १२०

श्रीराजजीके दिव्य स्वरूपके हस्तकमल, चरणारविन्द, मुखमण्डल, वक्षस्थल तथा वक्षाभूषण आदिकी सूक्ष्मताको हृदयझम कर यह आत्मा अब तक क्यों जागृत नहीं हो रही है ?

जो जोत कहूं अंग नंग की, देऊं निमूना नरम पसम ।

ए तो अरस पथर या जानवर, सो क्यों पोहोंचे पर आतम ॥ १२१

यदि मैं श्रीराजजीके अङ्गों पर सुशोभित आभूषणोंके रत्नोंकी ज्योति एवं सुकोमलताको रेशम आदिका उदाहरण दूँ तो भी यह सार्थक नहीं होगा। परमधामके रत्न तथा पशुपक्षी आदिकी उपमा पर-आत्माके लिए भी नहीं दी जा सकती है।

जो पर आतम पोहोंचे नहीं, सो क्यों पोहोंचे हक अंग कों।

खेलौने और खावंद, बड़ी तफावत इन मों ॥ १२२

जो उपमाएँ पर आत्माके लिए भी नहीं दी जा सकती तो वे श्रीराजजीके

अङ्गोंके लिए कैसे दी जाएँगी ? स्वयं श्री राजजी तथा उनके लीलापत्र (खिलौने) में बहुत बड़ा अन्तर होता है.

जित आदि अंत न पाइए, तित तेहेकीक होए क्यों कर ।

इत सबद फना का क्या कहे, जित पाइए न अव्वल आखर ॥ १२३

जहाँ पर आदि तथा अन्त कुछ होता ही नहीं है वहाँ पर वास्तविकताका निरूपण कैसे हो सकता है ? इस स्वप्नवत् जगतके शब्द उस अनन्त शोभाका वर्णन कैसे कर सकते हैं ? जिसका आदि तथा अन्त किसीने भी अभी तक प्राप्त नहीं किया है.

ए निरने करना अरस का, तिन में भी हक जात ।

इत नूर अकल भी क्या करे, जित लुदंनी गोते खात ॥ १२४

इस प्रकार परमधामका निरूपण करना है, उसमें भी श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका निरूपण तो निश्चय ही अति कठिन है. इसके लिए अक्षरब्रह्मकी स्वप्नकी बुद्धि क्या कर पाएगी जब जागृत बुद्धिका (तारतम) ज्ञान भी पूर्णतया निरूपण नहीं कर सकता (मात्र वर्णन ही कर सकता है).

जवेर पैदा जिमीय से, सो भी नहीं कह्या अरस में ।

चौदे तबक उडावे अरस कंकरी, इत भी बोलना नहीं ताथे ॥ १२५

परमधाममें ऐसा भी नहीं होता है कि वहाँकी भूमिसे रत्न आदि निकलते हों (वे सभी रत्न श्रीराजजीके अङ्गोंसे ही सुशोभित हैं). परमधामके मात्र एक कणके समक्ष ही इन चौदह लोकोंका कोई अस्तित्व नहीं रहता है. इसलिए संसारकी किसी भी वस्तुसे परमधामकी तुलना करना उचित नहीं है.

जित चौज नई पैदा नहीं, ना कबूं पुरानी होए ।

तित सबद जुबां जो बोलिए, सो ठौर न रही कोए ॥ १२६

जहाँ पर न कोई नई वस्तुका निर्माण होता है और न ही कोई वस्तु कभी पुरानी होती है. ऐसे परमधामकी उपमाके लिए नश्वर जगतके शब्द तथा जिह्वाका कोई स्थान ही नहीं है.

जो कहूँ हक दिल माफक, तो इत भी सबद बंधाए ।

ताथें अरस बारीकियां, सो किसी विध कही न जाए ॥ १२७

यदि मैं ऐसा कहूँ कि ये सभी वस्तुएँ श्रीराजजीकी इच्छाके अनुरूप हैं तो भी नश्वर जगतके ये शब्द नश्वरताकी सीमामें ही बँध जाते हैं। इसलिए परमधामका गूढ़ रहस्य किसी भी प्रकारसे व्यक्त नहीं हो सकता है।

चुप किए भी ना बने, हुक्म इलम आया इत ।

और काम इनको नहीं, जो अरस अरवा लै हुजत ॥ १२८

किन्तु मौन रहना भी सम्भव नहीं है क्योंकि श्रीराजजीका आदेश एवं ज्ञानका अवतरण हो गया है। जिन्होंने स्वयंको ब्रह्मात्मा होनेका अधिकार जताया है उनका अन्य कोई कार्य भी तो नहीं है।

इलम कहा जो लुदंनी, सो तो हक का मुतलक ।

इत मोमिन मिल पूछसी, क्यों रही रुहों को सक ॥ १२९

जो ब्रह्मज्ञान तारतम ज्ञान (इलम ए लुदनी) कहलाता है वह तो निश्चय ही श्रीराजजीके द्वारा ही प्रदान किया हुआ है। अब ब्रह्मात्माएँ मिलकर परस्पर पूछ सकती हैं कि ऐसे दिव्य ज्ञानको प्राप्त करने पर भी अभी तक उनके हृदयमें सन्देह कैसे शेष रह गए हैं ?

जो अरस बातें सक हमको, तो हकें क्यों कहा अरस कलूब ।

मोमिन कहे बीच वाहेदत, इन आसिकों हक मेहेबूब ॥ १३०

यदि हम ब्रह्मात्माओंके हृदयमें ही परमधामके प्रति सन्देह हो तो हमारे हृदयको श्रीराजजीने कैसे परमधाम कहा है ? ब्रह्मात्माएँ तो अद्वैत परमधामकी कही गई हैं और श्रीराजजी इन अनुरागिनियोंके प्रियतम धनी हैं।

मेहेबूब आसिक एक कहे, वाहेदत भी एक केहेलाए ।

अरस भी दिल मोमिन कहा, ए तो मिली तीनों विध आए ॥ १३१

प्रियतम धनी एवं अनुरागिनी आत्माएँ एक ही स्वरूप हैं। इनको ही एकात्मभाव अथवा अद्वैत स्वरूप कहा गया है। इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको ही परमधाम कहा है। इस प्रकार ये तीनों (ब्रह्मात्माएँ, श्रीराजजी तथा परमधाम) मिलकर एक ही स्वरूप हैं।

और भी कहूं सो सुनो, मोमिन अरस से आए उत्तर ।

इलम दिया हकें अपना, अब इनों जुदे कहिए क्यों कर ॥ १३२

मुझे और भी कहना है, उसे सुनो ! ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें परमधामसे अवतरित हुई हैं. स्वयं श्रीराजजीने इन्हें अपना ब्रह्मज्ञान प्रदान किया है. इसलिए इनको उनसे भिन्न कैसे कहा जाए ?

फुरमान आया इनों पर, अहंमद इनों सिरदार ।

हक बिना कछुए ना रखें, इनों दुनियां करी मुरदार ॥ १३३

इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए कुरानके द्वारा सन्देश भेजा गया है. सदगुरु श्रीदेवचन्द्रजी इनके शिरोमणि हैं. इनके हृदयमें श्रीराजजीके अतिरिक्त अन्य किसीका स्थान नहीं है. इन्होंने जगतको मृतप्रायः (अस्तित्वहीन) समझा है.

ए सब बुजरकी इनों की, क्यों जुदे कहिए वाहेदत ।

इनें कुनकी दुनी क्या जानहीं, रुहें अरस हक निसबत ॥ १३४

यह सम्पूर्ण श्रेष्ठता ब्रह्मात्माओंकी है. इसलिए इनको श्रीराजजीसे भिन्न कैसे कहा जाए ? परमात्माके द्वारा 'हो जा' (कुन) कहने मात्रसे उत्पन्न नश्वर जगतके जीव उनके विषयमें क्या जान सकते हैं ? परमधामकी इन आत्माओंका मूल सम्बन्ध ही श्रीराजजीसे है.

तिनसे अरस मता क्यों छिपा रहे, जो दिल अरस कह्हा मोमन ।

एक जरा न छिपे दिल से, ए देखो फुरमान वचन ॥ १३५

इसलिए इन ब्रह्मात्माओंसे परमधामकी निधि कैसे गुस रह सकती है, जिनके हृदयको ही परमधाम कहा गया है. इनसे परमधामका कोई भी रहस्य अज्ञात नहीं रहता है. कुरानमें यह स्पष्ट उल्लेख है.

बका पट किने न खोलिया, अब्बल से आज दिन ।

हाए हाए तन न हुआ टुकडे, करते जाहेर ए वतन ॥ १३६

सृष्टिके आदिसे लेकर आज तक किसीने भी अखण्डके द्वार नहीं खोले हैं. ऐसे दिव्य परमधामके रहस्योंको स्पष्ट करते हुए खेदकी बात है कि यह शरीर टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हुआ ?

अरस बका द्वार खोल के, करी जाहेर हक सूरत ।
अंग मेरा रह्या अचरजें, द्वार खोलते वाहेदत ॥ १३७

मैंने अखण्ड परमधामके द्वार खोलकर श्रीराजजीके स्वरूपका वर्णन किया है. किन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि इस अद्वैत भूमिकाके द्वार खोलते हुए मेरा यह नश्वर तन वैसे ही बना रहा.

मेरी रुहें कह्या आगे रुहन, सुन्या मैं हक के मुख इलम ।
ए बात केहते तन ना फट्या, हाए हाए ए देख्या बड़ा जुलम ॥ १३८

मेरी आत्माने अन्य ब्रह्मात्माओंके समक्ष यह कहा कि मैंने श्रीराजजीके मुखारविन्दसे जागृतबुद्धिका ज्ञान प्राप्त किया है. यह कहते हुए मेरे शरीरके टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हुए ? खेदकी बात है कि इतना बड़ा अनर्थ क्यों हुआ ?

यों चाहिए मोमिन को, रुह उडे सुनते हक नाम ।
बेसक अरस से होए के, क्यों खाए पिए करे आराम ॥ १३९

ब्रह्मात्माओंको चाहिए कि वे श्रीराजजीके नामका श्रवण करते ही अपने नश्वर शरीरको उड़ा दें. तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामके विषयमें सन्देह रहित होने पर भी वे खानपान एवं आराममें ही कैसे मग्न रह सकती हैं ?

हक अरस याद आवते, रुह उड न पोहोंचे खिलवत ।
बेसक होए पीछे रहे, हाए हाए कैसी ए निसबत ॥ १४०

श्रीराजजी तथा परमधामका स्मरण होने पर भी जो आत्मा परमधाममें जागृत नहीं होती है अर्थात् सन्देह रहित होने पर भी नश्वर जगतमें ही रहती है उसका सम्बन्ध कैसे श्रीराजजीके साथ माना जाए ? यह आश्चर्यकी बात है.

क्यों न खेलावें खिलवत में, रुह अपनी रात दिन ।
हक इलमें अजूँ जागी नहीं, कहावें अरस अरवा तन ॥ १४१

अपने धनीकी पहचान होने पर भी यह आत्मा अहर्निश परमधाम मूलमिलावाका आनन्द प्राप्त नहीं करती तो यही कहना चाहिए कि ब्रह्मज्ञान प्राप्त होने पर भी वह अभी तक जागृत नहीं हुई है, मात्र परमधामकी आत्मा ही कहलाती है. (जागृत आत्मा नहीं).

बैठ इन ख्वाब जिमीय में, कहे अरस अजीम का बातन ।

हड़ी हड़ी जुदी होए ना पड़ी, तो कैसी रुह मोमन ॥ १४२

इस नश्वर जगतमें बैठकर परमधामके गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट करते हुए जिसके अस्थिपञ्चर अलग-अलग नहीं होते हैं वह आत्मा कैसे ब्रह्मसृष्टि कहलाएगी ?

याद न जेता हक अरस, एही मोमिनों बड़ा कुफर ।

हक वाहेदत इलम चीन्ह के, अजूँ क्यों देखे दुनी नजर ॥ १४३

यदि ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजी तथा परमधामको याद नहीं करती हैं तो यह उनकी सबसे बड़ी कृतघ्नता है। तारतम ज्ञानके द्वारा श्रीराजजी तथा मूलमिलावेकी पहचान होने पर भी उनकी दृष्टि अभी तक नश्वर जगतकी ओर ही क्यों लगी हुई है ?

सुनते नाम हक अरस का, तबहीं अरवा उड़ जात ।

हाए हाए ए बल देख्या हुकम का, अजूँ एही करावे बात ॥ १४४

श्रीराजजी तथा परमधामका नाम सुनते ही उनकी आत्मा नश्वर शरीरको त्यागकर तत्काल उड़ जानी चाहिए। किन्तु खेदकी बात है, यह सब श्रीराजजीके आदेशका ही प्रताप है कि अभी तक वही हमसे ऐसी बातें करवा रहा है।

वस्तर और भूषन कहे, हक अंग वाहेदत के ।

ए केहेते बारीकियां अरस की, हाए हाए तन उड्या न ख्वाबी ए ॥ १४५

मैंने श्रीराजजीके अद्वैत स्वरूपके अङ्गोंके वक्त्र तथा आभूषणोंका वर्णन किया है। परमधामकी इन सूक्ष्मताका वर्णन करते हुए यह नश्वर शरीर क्यों नहीं उड़ जाता ?

बेसक इलम ले दिल में, वरनन किया बेसक ।

हुए बेसक रुह ना उड़ी, हाए हाए पोहोंची ना खिलवत हक ॥ १४६

सन्देह निवारक तारतम ज्ञानको हृदयमें लेकर मैंने श्रीराजजी तथा परमधामका वर्णन किया। खेद है कि इतना होने पर भी यह आत्मा सन्देह रहित होकर मूलमिलावामें क्यों नहीं पहुँच रही है !

कहे इलम रूहें इत हैं नहीं, है हुकम तो हक का ।
हुए बेसक हुकम क्यों रहे, ले हुज्जत रूह बका ॥ १४७

तारतम ज्ञानने यह स्पष्ट किया है कि ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें नहीं आई हैं। श्रीराजजीका आदेश ही सब कुछ कर रहा है। तारतम ज्ञानके द्वारा सन्देह रहित होने पर भी श्रीराजजीका यह आदेश अखण्ड परमधामकी आत्माओंका अधिकार लेकर इस नश्वर जगतमें कैसे रह सकता है ?

बेसक हुए जो अरस से, और बेसक हुए वाहेदत ।
मुतलक इलम पाए के, हाए हाए हुकम क्यों रह्या ले हुजत ॥ १४८

अब तो ब्रह्मात्माएँ परमधामके प्रति सन्देह रहित हो गई हैं। श्रीराजजीकी अङ्गना होनेके विषयमें भी उनको कोई सन्देह नहीं है। निश्चय ही ब्रह्मज्ञान प्राप्त होने पर भी श्रीराजजीका आदेश हमारे नामका अधिकार लेकर इस जगतमें कैसे रह रहा है ?

नैन रहे नैन देख के, एही बड़ा जुलम ।
न जानों क्यों सुरखरू, करसी हक हुकम ॥ १४९

श्रीराजजीके नेत्रकमलोंकी अनुपम छविके दर्शन करने पर भी मेरे ये नयन स्वप्नवत् जगतमें टिके हुए हैं, यही सबसे बड़ा अनर्थ है। न जाने श्रीराजजीका आदेश इन नेत्रोंको कब सम्मान प्रदान करेगा ?

ए विरहा सुन श्रवन रहे, लगी न सीखा कान ।
हाए हाए वजूद न गल गया, सुन विरहा हादी सुभान ॥ १५०

श्रीराजजीके विरहको सुनकर ये श्रवण अङ्ग कैसे टिके रहे हैं ? गरम शलाकाओंसे ये क्यों बीधे नहीं गए ? खेदकी बात है कि श्रीराजजी तथा श्यामाजीके वियोगको सुनकर भी यह शरीर अभी तक क्यों नहीं गला है ?

संध संध टूटी नहीं, सुनते विरहा सुकन ।
रोम रोम इन तन के, क्यों न लगी अंग अगिन ॥ १५१

विरहके इन वचनोंको सुनकर शरीरके रन्ध-रन्ध विछिन्न क्यों नहीं हुए, इसके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंके रोम-रोममें आग क्यों नहीं लगी ?

बातें इन विरह की, मैं गाई अंग अंग कर ।

अचरज इन निसबतें, अरवा ना गई जर बर ॥ १५२

मैंने रोम-रोमसे यह विरहगाथा गई है तथापि आश्वर्यकी बात यह है कि इस सम्बन्धको जानकर भी मेरी आत्मा जल-बलकर भस्मीभूत नहीं हुई है.

मेरे अंग सबे उड़ ना गए, सब देख हक के अंग ।

सेज सुरंगी हक छोड़ के, रही पकड़ मुरदे का संग ॥ १५३

श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंके दर्शन कर इस नश्वर तनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग क्यों नहीं उड़ गए ? मैंने अखण्ड सुखशश्याको छोड़कर इस नश्वर तनके प्रति आसक्ति बनाए रखी है.

क्यों न उड़ी अकल अंग थे, जो वरनन किया अरस हक ।

ए पूरी हांसी बीच अरस के, माहें गिरो आसिक ॥ १५४

दिव्य परमधाम तथा श्रीराजजीके अङ्गोंका वर्णन करने पर भी मेरी बुद्धि नश्वर शरीरसे क्यों नहीं उड़ गई ? परमधाममें ब्रह्मात्माओंके मध्य इसी बातकी सबसे बड़ी हँसी होगी.

करी हांसी हकें हम पर, ता विधसों चले न किन ।

अब सों क्यों न बनि आवहीं, जो रोऊं पछताऊं रात दिन ॥ १५५

श्रीराजजीने हम सभी ब्रह्मात्माओंका बड़ा उपहास किया है. क्योंकि हम अपने वचनके अनुसार नहीं चल सकीं. यदि मैं अहर्निश पश्चात्ताप कर रोने लग जाऊँ तो भी व्यतीत हुई वह घड़ी अब पुनः लौट कर नहीं आएगी.

सोई देखी जो कछू देखाई, अब देखसी जो देखाओगे ।

हंसो खेलो जानो त्यों करो, बीच अरस खिलवत के ॥ १५६

हे धनी ! हमने वही दृश्य देखें हैं जिनको आपने दिखाया है और भविष्यमें भी वही देखेंगे जो आप दिखाएँगे. अब आप हमें मूलमिलावामें बैठाकर हमारा उपहास करें, हमें और खेल दिखाएँ अथवा जो आपको ठीक लगे वैसा ही करें.

मोमन दिल अरस कर के, आए बैठे दिल माहें ।
खुदी रुहों इत ना रही, इत गुनाह मोमिनों सिर नाहें ॥ १५७
ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम बनाकर श्रीराजजी स्वयं उनके हृदयमें आकर बैठ गए हैं। इसलिए अब ब्रह्मात्माओंमें कोई अहंभाव नहीं रहा है और उनके सिर पर अब कोई दोष भी नहीं रहा है।

फेर हिसाब कर जो देखिए, तो गुनाह रुहों आवत ।
ए बेवरा है कलस में, मोमिन लेसी देख तित ॥ १५८
पुनः विचार कर देखते हैं तो ब्रह्मात्माओंके अवश्य दोष लगता है। इसका सम्पूर्ण विवरण कलश ग्रन्थमें दिया गया है। ब्रह्मात्माएँ उसे पढ़कर इस सत्यको जान लेंगी।

रुहें मोमिन इत आई नहीं, तिन वास्ते नहीं गुना ।
पर एता गुनाह लगत है, इनों में जेता हिसा अरस का ॥ १५९
वास्तवमें ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आई ही नहीं हैं। इसलिए उन्हें किसी भी प्रकारका दोष नहीं लगता है। किन्तु इतना दोष उन्हें अवश्य लगेगा जितना अंश उनमें परमधामका है।

महामत कहे मोमिनों पर, करी हांसी हुकमें ।
ना तो अरवाहें इत क्यों रहें, बेसक होए हक से ॥ १६०
महामति कहते हैं, श्रीराजजीके आदेशने ही ब्रह्मात्माओंके साथ ऐसा उपहास किया है। अन्यथा श्रीराजजीके द्वारा तारतम ज्ञान प्राप्त कर लेने पर ब्रह्मात्माएँ निःशङ्क होकर इस जगतमें कैसे रह सकतीं हैं ?

प्रकरण २२ चौपाई १६०६

मोमिन दुनीका बेवरा

अरवा आसिक जो अरसकी, ताके हिरदे हक सूरत ।
निमख न न्यारी हो सके, मेहेबूब की मूरत ॥ १
परमधामकी अनुरागिनी आत्माओंके हृदयमें स्वयं श्रीराजजी विराजमान हैं इसलिए वे अपने प्रियतम धनीकी छविसे क्षणमात्रके लिए भी दूर नहीं हो सकतीं।

और न पावे पैठने, इत बका बीच खिलवत ।
बका अरस अजीम में, कौन आवे बिना निसबत ॥ २

इन ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई भी मूलमिलावामें प्रवेश नहीं कर सकता. वस्तुतः श्रीराजजीकी अङ्गनाके बिना इस दिव्य परमधाममें अन्य कौन आ सकता है ?

और तो कोई है नहीं, बिना एक हक जात ।
जात माहें हक वाहेदत, हक हादी गिरो केहेलात ॥ ३
श्रीराजजीकी अङ्गनाओंके अतिरिक्त परमधाममें अन्य कोई नहीं है. अद्वैत परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी एवं ब्रह्मात्माएँ सदा सर्वदा एकात्मभावसे रहते हैं.

वस्तर भूषन पेहर के, मेरे दिल में बैठे आए ।
हकें सोई किया अरस अपना, रुह टूक टूक होए बल जाए ॥ ४
श्रीराजजी वस्त्र तथा आभूषणोंको धारण कर मेरे हृदयमें आकर विराजमान हुए हैं. उन्होंने मेरे हृदयको अपना परमधाम बनाया है. इसलिए मेरी आत्मा उनके श्रीचरणोंमें समर्पित हो जाती है.

दै बडाई मेरे दिल को, हक बैठे अरस कर ।
अपनी अंगना जो अरस की, रुह क्यों न खोले नजर ॥ ५
उन्होंने मेरे हृदयको इस प्रकार महता दी कि उसे अपना परमधाम बनाकर स्वयं उसमें आकर विराजमान हो गए. अब उनकी अङ्गना स्वरूप परमधामकी यह आत्मा अपनी दृष्टि क्यों नहीं खोलती है ?

दम न छोडे मासूक को, मेरी रुह की एह निसबत ।
क्यों बातें याद दिए न आवहीं, जो करियां बीच खिलवत ॥ ६
मेरी आत्मा एक क्षणके लिए भी अपने प्रियतम धनीसे दूर नहीं हो सकती क्योंकि इसका मूल सम्बन्ध उन्हींके साथ है. किन्तु मूलमिलावामें प्रेम सम्बादके समय जो चर्चाएँ हुई थीं उनका स्मरण करवाने पर भी अभी तक क्यों स्मरण नहीं हो रहा है ?

जाको अनभव होए इन सुख को, ताए अलबत आवे याद ।

अरस की रुहों को इसक का, क्यों भूले रस मीठा स्वाद ॥ ७

जिन आत्माओंको परमधामके इन सुखोंका अनुभव हुआ हो उनको तो
अवश्य इसका स्मरण होना चाहिए. क्योंकि परमधामकी आत्माएँ प्रेमकी
मधुर आस्वादनको कैसे भूल सकती हैं ?

रुह केहेलाए छोडे क्यों अपना, क्यों याद दिए जाए भूल ।

हकें याही वास्ते, भेज्या अपना नूरी रसूल ॥ ८

परमधामकी आत्मा कहला कर हम अपने आत्मभावको क्यों छोड़ दें ?
वारंवार याद करवाने पर भी हम क्यों भूल रहीं हैं ? श्रीराजजीने इसी लिए
अपने तेज स्वरूप रसूलको भेजा है.

हम अरवाहें जो अरस की, तिन सब अंगों इसक ।

सो क्यों जावे हमसें, जो आडा होए न हुकम हक ॥ ९

हम जितनी परमधामकी आत्माएँ हैं उन सभीके अङ्ग प्रेमसे परिपूर्ण हैं.
इसलिए यदि श्रीराजजीका आदेश व्यवधान स्वरूप नहीं होता तो हम उस
प्रेमको कैसे भूल सकतीं ?

ए निसबत नूरजमाल से, जो रुह को पोहोंचे रंचक ।

तो लाड अरस अजीम के, क्यों भूले मुतलक ॥ १०

श्रीराजजीके साथके सम्बन्धकी यदि थोड़ी-सी सुधि भी आत्माको हो जाती
तो वह परमधामके प्रेम तथा आनन्दको कैसे भूल सकती ?

पर हुआ हाथ हुकम के, जो हुकम देवे याद ।

हुकमें पेहेचान होवहीं, हुकमें आवे स्वाद ॥ ११

किन्तु यह सब श्रीराजजीके आदेश पर ही निर्भर है. यदि उनका आदेश इस
सम्बन्धका स्मरण करवाना चाहें तो ही यह सम्बन्ध स्मरण हो आएगा.
क्योंकि श्रीराजजीके आदेशसे ही इस सम्बन्धकी पहचान होती है और उसी
आदेशके फलस्वरूप परमधामके प्रेमका स्वाद प्राप्त हो सकता है.

कबूल करी हम हांसी को, और अपनी मानी भूल ।

सब सुध पाईं कुंजी से, और फुरमान रसूल ॥ १२

हमने अपने ऊपर हो रहे उपहासको स्वीकार कर अपनी भूलको भी स्वीकार कर लिया है। अब तारतम ज्ञानके द्वारा सम्पूर्ण सुधि प्राप्त हो गई है एवं रसूल मुहम्मदके वचनोंका भी स्पष्टीकरण हो गया है।

अब हुई पेहेचान हुकम की, एक जरा रही न सक ।

बोझ हम सिर ना रह्या, हक इलमें देखाया मुतलक ॥ १३

इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि अब श्रीराजजीके आदेशकी पूर्ण पहचान हो गई है। तारतम ज्ञानने यह सब स्पष्ट कर दिया है कि अब हमारे सिर पर किसी भी प्रकारका दायित्व नहीं रहा है।

अब भूल हमारी जरा नहीं, और हक कर थके हांसी ।

बात आई सिर हुकम के, अब काहे बिलखे रूह खासी ॥ १४

अब हमारी भूल लेश मात्र भी नहीं है। श्रीराजजी भी हमारा उपहास करते हुए थक गए हैं। अब तो सम्पूर्ण दायित्व श्रीराजजीके आदेश पर निर्भर है। इसलिए परमधामकी आत्माएँ क्यों व्याकुल हों ?

देखना था सो सब देख्या, हक इसक और पातसाई ।

और हांसी रूहों इसक पर, सब देखी जो देखाई ॥ १५

इस नश्वर जगतमें आकर श्रीराजजीके प्रेम तथा प्रभुताके सम्बन्धमें जो कुछ देखना (समझना) था वह सब देख लिया है। श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके प्रेम पर जिस प्रकार उपहास करना चाहते थे वह भी उन्होंने जैसा दिखाया उसी प्रकार देख लिया है।

क्यों न होए हुकम को हुकम, जो पेहेले किया इसदाए ।

हुई उमेद सब की पूर्न, अब क्यों न दीजे रूहें जगाए ॥ १६

श्री राजजीने ब्रह्मात्माओंको खेल दिखानेके लिए सर्वप्रथम जो आदेश दिया था अब उनको जागृत करनेके लिए दूसरा आदेश क्यों नहीं दे रहे हैं ? अब तो सभीकी इच्छाएँ पूर्ण हो चुकी हैं। इसलिए अब वे अपनी आत्माओंको क्यों जागृत नहीं कर रहे हैं ?

लाड हमारे अरस के, हम से न छूटें छिन ।
अकस हमारे के अकस, क्यों लगे दाग तिन ॥ १७

हम ब्रह्मात्माओंसे क्षणमात्रके लिए भी परमधामका शाश्वत प्रेम नहीं छूटा है.
इसलिए हमारी (पर-आत्माकी) सुरता द्वारा धारण किए गए इन नश्वर तनको
भी विस्मृतिरूपी दोष (दाग) क्यों लगे ?

अब जो दिन राखो खेल में, सो याही के कारन ।
इसक दे बोलाओगे, ऐसा हुकमें देखें मोमन ॥ १८

हे धनी ! अब आप हमें जितने दिनों तक इस खेलमें रखेंगे वह सब हमें
दोषी बनानेके लिए ही है. आप कब हमें अपना प्रेम प्रदान कर पुनः अपने
श्रीचरणोंमें बुलाएँगे ? ये ब्रह्मात्माएँ आपके ऐसे आदेशकी प्रतीक्षा कर रहीं
हैं.

एक तिनका हमारे अरस का, उडावे चौदे तबक ।
तो क्यों न उडे रुह अकसें, बल इलम लिए हक ॥ १९

परमधामके मात्र एक तृणके समक्ष इन चौदह लोकोंका कोई अस्तित्व नहीं
रहता तो फिर पर-आत्माकी ये सुरताएँ जागृत बुद्धिका ज्ञान प्राप्त करने पर
भी इन नश्वर शरीरको छोड़कर क्यों परमधामकी ओर चली नहीं जातीं हैं.

जो कदी कहोगे रुहें इत ना हुती, ए तो हुकमें किया यों ।
तो नाम हमारे धर के, हुकम करे यों क्यों ॥ २०

यदि आप यह कहें कि ब्रह्मात्माएँ तो इस नश्वर जगतमें कभी भी नहीं आईं
हैं. यह तो मात्र आदेश ही उन्हें यहाँ आनेका अनुभव करवा रहा है. तो फिर
हमारे नामोंको धारण कर आपका यह आदेश ऐसा खेल क्यों कर रहा है ?

जो कदी हम आइयां नहीं, तो नाम तो हमारे धरे ।
और तिन में हुकम हक का, हक तासों ऐसी क्यों करें ॥ २१

यदि हम इस नश्वर जगतमें कभी भी नहीं आईं हैं तो भी यहाँ पर श्रीराजजीके
आदेशने हमारे नाम तो धारण किए ही हैं. इन स्वप्नवत् शरीरोंमें भी वही

आदेश समाया हुआ है. इसलिए श्रीराजजी ऐसी लीला कर इन नामोंको क्यों
दोषी बना रहे हैं.

अब तो सब ही करोगे, टालने हमारे दाग ।
तुम रखियां ऐसा जान के, ना तो क्यों रहें पीछे हम जाग ॥ २२
हे धनी ! अब तो हमारे दोषोंको मिटानेके लिए आप ही सब कुछ करेंगे.
क्योंकि सम्पूर्ण जानकारी देकर भी आप ही हमें इन नश्वर शरीरोंको धारण
करवा रहे हैं. अन्यथा जागृत हो जानेके बाद हम इस संसारमें कैसे रह
सकतीं थीं ?

हुक्म पर ले डारोगे, तेहेकीक कराओगे दिल ।
दाग अकसों क्यों मिटे, जो हमारे नामों किए सब मिल ॥ २३
यदि हमारे हृदयको सन्तोष दिलानेके लिए आप यह सम्पूर्ण दायित्व अपने
आदेशके ऊपर डाल देंगे तो भी हमारी सुरताने धारण किए हुए शरीरके नाम
पर जो दोषारोपण हुआ है वह कैसे मिटेगा ?

जो कदी ए दाग धोए डारोगे, मनसा वाचा करमन ।
अकस हमारे नाम के, कदी रुहें बाते तो करसी वतन ॥ २४
यदि मन, वचन एवं कर्मके द्वारा इन दोषोंको आप मिटा भी देंगे तो भी
हमारे नामके इन नश्वर शरीरोंके विषयमें परमधारमें पर-आत्माएँ अवश्य
बातें करेंगी.

इन बात की हाँसियां, अकस नाम भी क्यों सहें ।
हक विरहा बात सुन के, झूठी देह पकड क्यों रहें ॥ २५
हमारे प्रतिबिम्बके ये नाम (सुरताएँ) भी इस सम्बन्धका उपहास कैसे सहन
करेंगे ? अपने प्रियतम धनीके वियोगकी बात सुनकर भी हम नश्वर शरीरको
कैसे टिका कर रख पाएँगी ?

सो मैं गाया याद कर कर, कबूं पाया न विरहा रस ।
नाम सहें ना हुक्म सहें, ना कछूं सहें अकस ॥ २६
मैंने आपके प्रेमका स्मरण करते हुए उसे गा-गाकर ब्रह्मात्माओंको जागृत

करनेका प्रयत्न किया किन्तु आपके विरहका रस भी कभी प्राप्त नहीं कर सका. अब आपके विस्मृतिरूपी दोषको न हमारे प्रतिबिम्ब (सुरताएँ) सहन कर सकते हैं और न ही आपका आदेश सहन कर सकता है.

और हांसी सब सोहेली, पर ए हांसी सही न जाए ।

अकस भी ना सेहे सकें, जब इलमें दिए पढाए ॥ २७

अन्य सब प्रकारके उपहास सहनीय हैं. किन्तु इस दोषारोपण पर होने वाली हँसी असहनीय होगी. जब तारतम ज्ञानके द्वारा पहचान करवा दी है तो हमारे प्रतिबिम्ब (सुरताएँ) भी इस उपहासको सहन नहीं कर पाएँगे.

ना रहा इसक अपना, ना रहा बनत सों ।

हक सों भी ना रहा, तो कहा कहूं हुकम कों ॥ २८

इस नश्वर जगतमें आने पर हममें न वह शाश्वत प्रेम रहा, न परमधामसे कोई सम्बन्ध रहा, न अपने धामधनीसे ही कोई सम्बन्ध रहा. इसलिए अब आदेशको क्या दोष दिया जाए ?

तुम्हीं आप देखाइया, पेहेचान तुम इलम ।

तुम्हीं दई हिंमत, तुम्हीं पकडाए कदम ॥ २९

हे धनी ! आपने ही तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत करते हुए स्वयंकी पहचान करवाई. आपने ही हमें साहस प्रदान कर अपने श्रीचरणोंको ग्रहण करवाया.

तुम्हीं इसक देत हो, तुम्हीं दिया जोस ।

सोहोबत भी तुम्हीं दई, तुम्हीं ल्यावत माहें होस ॥ ३०

आप ही हमें अपना प्रेम प्रदान करनेवाले हैं एवं आपने ही हमें आवेश (जोश) दिया है. आप ही अपना साहचर्य प्रदान कर हमें जागृत करनेवाले हैं.

तुम्हीं उत्तर आए अरस से, इत तुम्हीं कियो मिलाप ।

तुम्हीं दई सुध अरस की, ज्यों अरस में हो आप ॥ ३१

हे धनी ! आप ही परमधामसे अवतरित होकर सद्गुरुके रूपमें यहाँ पर आए हैं. आपने ही यहाँ आकर हम ब्रह्मात्माओंसे मिलाप किया. आपने ही हमें

परमधामकी ऐसी सुधि प्रदान की कि मानों परमधाममें ही आप हमारे समक्ष विराजमान हैं।

तुमहीं देखाई निसबत, तुमहीं देखाई खिलवत ।

तुमहीं देखाया सुख कायम, तुमहीं देखाई वाहेदत ॥ ३२

आपने ही हमें अपने सम्बन्धोंका अनुभव करवाया एवं मूल मिलावाका साक्षात्कार करवाया। आपने ही परमधामके शाश्वत सुखोंको दिखाते हुए एकात्मभावका अनुभव करवाया है।

खेल भी तुम देखाइया, दई फरामोसी भी तुम ।

तुमहीं जगावत जुगतें, कोई नहीं तुम बिना खसम ॥ ३३

यह खेल भी आपने ही दिखाया एवं हमारे हृदय पर भ्रमका आवरण भी आपने ही डाला। अब आप ही हमें युक्तिपूर्वक जागृत कर रहे हैं, इसलिए हे धनी ! आपके अतिरिक्त अन्य कोई है ही नहीं।

काहूं तरफ न देखाई अपनी, यों रहे चौदे तबक से दूर ।

सो सेहेरग सें नजीक तुमहीं, हमको लिए कदमों हजूर ॥ ३४

आपने आज तक किसीको भी अपनी दिशा नहीं बताई है। इस प्रकार आप इन चौदह लोकोंसे दूर रहे हैं। अब आपने हमें तारतम ज्ञानके द्वारा ऐसा अनुभव करवाया कि आप स्वयं हमारी प्राणनलीसे भी अति निकट हैं। इस प्रकार आपने हमें अपने चरणोंमें जागृत कर लिया है।

मैं भी इत हों नहीं, ए भी कहावत तुम ।

जब दूजे कर बैठाओगे, तब खसम को कहेंगे हम ॥ ३५

मैं स्वयं इस नश्वर जगतमें नहीं हूँ यह भी आप ही कहला रहे हैं। यदि आप हमें स्वयंसे दूर करवाएँगे तभी हम आपसे कुछ कहनेका प्रयत्न करेंगे।

दूजे तो हम हैं नहीं, ए बोले बेवरा वाहेदतका ।

ज्यों खेलावत त्यों खेलत, ना तो क्या जाने बात बका ॥ ३६

वस्तुतः हम आपसे भिन्न नहीं हैं, परमधामके एकात्मभावका विवरण यही

कह रहा है. आप जैसे हमें खेलाते हैं हम उसीके अनुरूप खेलते हैं अन्यथा नश्वर खेलको देखते हुए हम अखण्ड धामकी बातें कैसे जान पाते ?

ना तो नींद उडे तन सुपना, ए रेहेवे क्यों कर ।
देखो अचरज अदभुत, धड बोले सिर बिगर ॥ ३७

अन्यथा अज्ञानका आवरण दूर हो जाने पर यह स्वप्नका शरीर कैसे धारण किया रहता. यह बड़े आश्र्यकी बात है कि सिरके बिना ही यह शरीर बोल रहा है अर्थात् नश्वर तनसे परमधामकी बातें हो रहीं हैं.

धड एक दोए सुकन कहे, तित अचरज बडा होए ।
ए तन बिन बोले रूह अरस की, कहे बानी बिना हिसाबें सोए ॥ ३८
यदि बिना सिरका शरीर दो-चार बातें कहने लगे तो बड़ा आश्र्य होने लगेगा. किन्तु परमधामकी आत्माके बिना ही यह नश्वर तन (मात्र सुरताके द्वारा) परमधामका अपार वर्णन कर रहा है.

सो भी बानी नहीं फना मिने, अरस बका खोल्या द्वार ।
जो अब लग किने ना खोलिया, कै हुए पैगंमर अवतार ॥ ३९
वह वाणी भी नश्वर जगतकी नहीं है, उसने परमधामके अखण्ड द्वार खोल दिए हैं. आज तक किने पैगम्बर अथवा अवतार हुए वे भी अभी तक अखण्डके द्वारोंको नहीं खोल सके थे.

अरस रूहें पेहेचान जाहेर, इनों कौल फैल हाल पार ।
सोई जाने पार वतनी, जाको बातून रूहसों विचार ॥ ४०
परमधामकी आत्माओंकी पहचान स्पष्ट है कि उनके कथन, कर्म तथा मनःस्थिति नश्वर जगतकी सीमासे परेकी होती है. वे ही परमधामकी बातें जान सकतीं हैं जिनकी आत्मदृष्टि खुल गई है.

सो पट बका खोलिया, और बोले न बका बिन ।
इनों पीठ दै चौदे तबकों, करें जाहेर अरस रोसन ॥ ४१
इन ब्रह्मात्माओंने पारके द्वार खोल दिए हैं. ये अखण्ड परमधामके अतिरिक्त

अन्य कोई बात नहीं करती हैं। इन्होंने चौदह लोकोंके सुखोंसे विमुख होकर दिव्य परमधामकी पहचान करवाई है।

चौदे तबक की दुनी में, बका तरफ न पाई किन ।

सो सबों ने देखिया, किया जाहेर बका हक दिन ॥ ४२

इन चौदह लोकोंके जीवोंमें आज तक किसीको भी परमधामकी दिशा प्राप्त नहीं हुई थी। अब ब्रह्मात्माओंने ब्रह्मज्ञानका प्रभात कर दिया है जिससे सभीने परमधामकी दिशा जान ली।

बेवरा किया फुरमान में, और हृदीसें महंमद ।

जिनें खुली हकीकत मारफत, सोई जाने बातून सबद ॥ ४३

रसूल मुहम्मदने कुरान तथा हदीस आदिमें इस प्रकारका विवरण दिया है। जिनको तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामकी यथार्थताकी पहचान हो गई है वे ही इन अप्रकट रहस्योंको स्पष्ट समझ सकते हैं।

महंमद सिखापन ए दई, जो उतरी अरवाहें सिरदार ।

हक बका सिर लीजियो, छोडो दुनियां कर मुरदार ॥ ४४

ब्रह्मात्माओंकी शिरोमणि श्रीश्यामाजीने सदगुरुके रूपमें प्रकट होकर यह सम्पूर्ण जानकारी दी है। इसलिए अब अखण्ड परमधामको शिरोधार्य कर संसारको मृतप्रायः समझते हुए उसे छोड़ दें।

महंमद कहे ऐ मोमिनों, ए अरस अरवाहों रीत ।

हक बका ल्यो दिल में, छोडो दुनियां कर पलीत ॥ ४५

सदगुरुने ब्रह्मात्माओंके लिए यही कहा है कि परमधामकी ब्रह्मात्माओंकी यही रीति है। अब अपने हृदयमें अखण्ड परमधामका स्मरण कर इस नश्वर संसारको अपवित्र समझकर इसे त्याग दें।

अरस रुहें मोमिनों, लई महंमद हिदायत ।

चौदे तबकों पीठ दे, आए माहें हक खिलवत ॥ ४६

परमधामकी इन ब्रह्मात्माओंने सदगुरुके निर्देशोंका पालन किया और वे चौदह लोकोंसे विमुख होकर मूलमिलावामें जागृत हो उठीं हैं।

कहे महंमद अरस रहें, तुम मछली हौज कौसर ।

जो जीव दुनी मुरदार के, सो रहें ना तिन बिगर ॥ ४७

सद्गुरु ब्रह्मात्माओंके लिए ऐसा कहते थे कि तुम तो हौजकौसरमें रहने वाली मछलीकी भाँति हो. नश्वर जगतके जीव ही अस्तित्वहीन इस जगतके बिना नहीं रह सकते हैं.

अरस अल्ला दिल मोमिन, और दुनी दिल सैतान ।

दे साहेदी महंमद हवीसें, और हक फुरमान ॥ ४८

ब्रह्मात्माओंका हृदय परमात्माका धाम है एवं नश्वर जगतके जीवोंके हृदय पर दुष्ट मनका शासन है. रसूल मुहम्मदने कुरान तथा हवीस ग्रन्थोंके द्वारा इसकी साक्षी दी है.

कहे कुरान दूजा कछुए नहीं, एक हक न्यामत वाहेदत ।

और हराम सब जानियो, जो कछू दुनी लजत ॥ ४९

कुरानमें स्पष्ट उल्लेख है कि परब्रह्म परमात्माके अद्वैत परमधामके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है. इस नश्वर जगतके स्वादको तो सर्वदा निषिद्ध (हराम) समझना चाहिए.

दुनी दोजख दरिया मछली, पातसाह सैतान दिल पर ।

हराम खात है इबलीस, तिन तले दुनी का घर ॥ ५०

नश्वर जगतके जीव तो भवसागरकी मछलीकी भाँति नरकाग्निमें जलने वाले हैं. उनके हृदयमें शैतानका शासन है. उनका दुष्ट मन निषिद्ध वस्तुओंकी ओर ही आकृष्ट होता है. नश्वर जगतके प्राणी उसीके अधीन होकर अपना कार्य करते हैं.

औलिया लिला दोस्त, मोमिन बीच खिलवत ।

ए अरवाहें अरस की, इनों दिल में हक सूरत ॥ ५१

परमात्माके साथ मैत्रीभाव रखनेवाली ब्रह्मात्माएँ मूलतः परमधाम मूलमिलावेमें हैं. ये स्वयं परमधामकी आत्माएँ हैं. इसलिए इनके हृदयमें श्रीराजजीका स्वरूप विद्यमान है.

तो अरस कहा दिल मोमिन, सो कायम हक वतन ।
रुहें कही दरगाह की, जित असल मोमिनों तन ॥५२

इसीलिए इनके हृदयके परमधाम कहा है क्योंकि परमधाम तो शाश्वत भूमिका है. इन ब्रह्मात्माओंको भी दिव्य परमधामकी रहनेवाली कहा है जहाँ पर इनकी परआत्मा (मूलतन) विराजमान हैं.

आदम नसल हवा बिना, ज्यों मछली जल बिन ।
यों असल न छूटे अपनी, कही जुलमत दुनी वतन ॥५३
जिस प्रकार मछली जलके बिना नहीं रह सकती उसी प्रकार नश्वर जगतके जीव मायाके बिना नहीं रह सकते इस प्रकार किसीसे भी अपना मूल स्वभाव नहीं छूट सकता इसीलिए नश्वर जगतके जीवोंका मूल घर शून्य निराकार माना गया है.

मोमिन अरस बका बिना, रेहे ना सकें एक पल ।
जो हौज कौसर की मछली, तिन हैयाती वह जल ॥५४
ब्रह्मात्माएँ अखण्ड परमधामके बिना क्षणमात्रके लिए भी नहीं रह सकती हैं. जो हौजकौसरकी मछलीकी भाँति हैं उनका जीवन ही अखण्ड परमधामका (प्रेमरूपी) जल है.

मोमिन और दुनी के, कहा जाहेर बड़ा फरक ।
करे दुनी आहार फना मिने, अरस मोमिन बका हक ॥५५
ब्रह्मात्माओं एवं नश्वर जगतके जीवोंमें यही सबसे बड़ा अन्तर है. नश्वर जीव नश्वर जगतका ही सेवन करते हैं और ब्रह्मात्माएँ अखण्ड परमधामकी ओर उन्मुख रहती हैं.

आए मोमिन नूर बिलंद से, और दुनियां कही जुलमत ।
यों जाहेर लिख्या फुरमान में, पर किन पाई न तफावत ॥५६
ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधामसे अवतरित हुई हैं किन्तु संसारके जीवोंको शून्य-निराकारसे उत्पन्न माना गया है. कुरानमें इस प्रकारकी स्पष्टता की गई है तथापि किसीको भी यह अन्तर ज्ञात नहीं है.

ए तो जाहेर कुरान पुकारहीं, और महमद हदीस ।

ए बेवरा क्या जानहीं, जिन नसलें लिख्या इबलीस ॥ ५७

कुरान तथा हदीस आदि ग्रन्थोंमें यह स्पष्ट उल्लेख है किन्तु जिनके पूरे वंश पर शैतानका एकाधिकार है ऐसे नश्वर जीव इस सत्यताका निरूपण कैसे कर सकते हैं ?

जो मोमिन होते इन दुनी के, तो करते दुनी की बात ।

चलते चाल इन दुनी की, जो होते इन की जात ॥ ५८

यदि ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतकी ही होतीं तो वे भी मात्र इसी जगतकी ही बातें करतीं। यदि वे मायाके अंशरूप होतीं तो भी नश्वर जगतके जीवोंकी भाँति झूठ प्रपञ्चका ही कार्य किया करतीं।

जो यारी होती मोमिन दुनी सों, तो दुनीको न करते मुरदार ।

रुहें इनसे जुदी तो हुई, जो हम नहीं इन के यार ॥ ५९

यदि इन ब्रह्मात्माओंका मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध नश्वर जगतसे होता तो वे इस नश्वर जगतको मृततुल्य नहीं समझतीं। ब्रह्मात्माएँ इन नश्वर जीवोंसे भिन्न इसीलिए हैं कि इनके साथ इनकी कोई मित्रता नहीं है।

दुनी चलना इन जिमी का, चलना हमारा आसमान ।

मोमिन दुनी बड़ी तफावत, ए जाने मोमिन विध सुभान ॥ ६०

इन नश्वर जीवोंका व्यवहार इसी जगतके अनुरूप होता है किन्तु हमारा व्यवहार दिव्य परमधामके अनुरूप है। इस प्रकार ब्रह्मात्माओं तथा नश्वर जगतके जीवोंमें बहुत बड़ा अन्तर है। श्रीराजजी द्वारा बनाए गए इस विधान को ब्रह्मात्माएँ ही जानतीं हैं।

हादी मिल्या बोहोतों को, कोई ले न सक्या हादी चाल ।

चलना हादी का सोई चले, जो होवे इन मिसाल ॥ ६१

अनेक आत्माएँ सद्गुरुसे मिलीं किन्तु उनमें कोई भी उनके आचरणका अनुसरण न कर सकीं। जो आत्माएँ सद्गुरुके अनुरूप ब्रह्म आत्माकी कोटिकी होंगी वे ही उनका अनुसरण कर सकतीं हैं।

चलना हादी के पीछल, रखना कदम पर कदम ।
आदमी चले न चाल रुह की, इत दुनी मार न सके दम ॥ ६२

सदगुरुका अनुसरण करते हुए उनके पदचिह्नों पर चलना हर किसीसे सम्भव
नहीं हो सकता है. सामान्य मनुष्य ब्रह्मात्माओंके आचरणके अनुरूप नहीं
चल सकते हैं इसलिए नश्वर जगतके लोग उस मार्ग पर चलनेका साहस
ही नहीं कर सकते.

आदमी छोड वजूद को, ले सके न रुहकी चाल ।
दुनीयां बंदी हवाएकी, मोमिन बंदे नूरजमाल ॥ ६३

नश्वर जगतके जीव शारीरिक गति (कर्मकाण्ड) को छोड़कर ब्रह्मात्माओंके
अनुरूप नहीं चल सकते हैं. क्योंकि ये सभी जीव शून्य-निराकारके पूजक
कहलाते हैं जबकि ब्रह्मात्माएँ अक्षरातीत परब्रह्म परमात्माकी उपासना करतीं
हैं.

रुहें आइयां बीच दुनी के, धरे नासूती वजूद ।
रुहें चाल न छोड़ें अपनी, जो कदी आइयां बीच नाबूद ॥ ६४

परमधामकी ब्रह्मात्माओंने इस नश्वर जगतमें अवतरित होकर नश्वर शरीर
धारण किया है. वे किसी कारणसे इस जगतमें आ भी गई तो भी अपने
आचरणको कभी भी नहीं छोड़ सकती हैं.

दुनी रुहें एही तफावत, चाल एक दूजे की लई न जाए ।
रुह मोमिन पर ईमान के, दुनी पर बिन क्यों उडाए ॥ ६५

नश्वर जगतके जीव एवं ब्रह्मात्माओंमें यही अन्तर है कि वे एक दूसरेके
आचरणका अनुसरण नहीं कर सकते. क्योंकि ब्रह्मात्माओंके पास उड़ान
भरनेके लिए परमात्माके प्रति अटूट विश्वासरूपी पङ्कु हैं किन्तु सामान्य जीव
विश्वासरूपी पङ्कुके बिना उड़ान ही नहीं भर सकते हैं.

करना दीदार हक का, एही मोमिनों ताम ।
पानी पीवना दोस्ती हक की, इनों एही सुख आराम ॥ ६६

श्रीराजजीके दर्शन प्राप्त करना ही ब्रह्मात्माओंका प्रमुख आहार (ध्येय) है.

श्रीराजजीके साथका मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध ही उनके लिए जलपान है. इसीसे इनको अखण्ड सुखका अनुभव होता है.

मोमिन तब लग बंदगी, जोलों आया नहीं इसक ।

इसक आए पीछे बंदगी, ए जाने मासूक या आसिक ॥ ६७

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें जब तक प्रेमभाव जागृत नहीं होता तभी तक वे औपचारिक पूजा-अर्चनामें लगीं रहतीं हैं. प्रेमभाव जागृत हो जानेके पश्चात् औपचारिक पूजाका महत्व नहीं रहता. इस रहस्यको अनुरागिनी आत्माएँ तथा प्रियतम धनी ही जानते हैं.

आसिक की एही बंदगी, जाहेर न जाने कोए ।

और आसिक भी न बूझहीं, एक होत दोऊ से सोए ॥ ६८

ब्रह्मात्माओंकी वन्दना ही शाश्वत प्रेम है. इसे प्रत्यक्ष रूपमें कोई नहीं समझ सकता है. अनुरागिनी आत्माएँ भी यह नहीं समझ सकतीं हैं कि प्रेमके कारण हम अपने प्रियतमसे अभिन्न (एकाकार) कैसे हो गईं हैं ?

ए जाहेर है तफावत, जो कर देखो सहूर ।

दुनियां सहूर भी ना कर सके, क्या करे बिना जहूर ॥ ६९

विचारपूर्वक देखो ! इस प्रकार सामान्य जीव तथा ब्रह्मात्माओंमें स्पष्ट अन्तर है. सामान्य जीव तो परमधामके विषयमें विचार भी नहीं कर सकते हैं. क्योंकि तारतम ज्ञानके प्रकाशके बिना वे कर ही क्या सकते हैं ?

मोमिन खाना अरस में, हुआ दुनी जिमी में आहार ।

दुनी रोजगार नासूती, जो मोमिनों करी मुरदार ॥ ७०

परमधामकी अनुभूतिसे ही ब्रह्मात्माओंको तृप्ति होती है जबकि नश्वर जगतके जीव छल-प्रपञ्चका आहार चाहते हैं. ये जीव नश्वर व्यवहारमें ही लगे रहते हैं जिनको ब्रह्मात्माओंने मृततुल्य माना है.

मोमिन उतरे नूर बिलंद से, कही दुनी आई जुलमत ।

जो देखो वेद कतेब को, तो जाहेर है तफावत ॥ ७१

ब्रह्मात्माएँ परमधामसे अवतरित हुई हैं जबकि सामान्य जीवोंकी उत्पत्ति शून्य

निराकारसे हुई है. वेद तथा कतेब आदि ग्रन्थोंका अध्ययन करने पर यह अन्तर स्पष्ट दिखाई देता है.

मोमिन लिखे आसमानी, दुनियां जिमी की कही ।
ना तो वजूद दोऊ आदमी, ए तफावत क्यों भई ॥ ७२

इन आस ग्रन्थोंमें ब्रह्मात्माओंको आकाशी अर्थात् दिव्यधामके रहनेवाली कहा है जबकि सामान्य जीवोंको नश्वर जगतके जीव कहा है. अन्यथा दोनोंका शरीर तो मनुष्यका है फिर दोनोंमें इतना अन्तर क्यों होता ?

कहे पर इसक ईमान के, सो मोमिन छोड़ें न पल ।
सो दुनी को है नहीं, उत पांउ न सके चल ॥ ७३

ऊँचे आकाशमें उड़ान भरकर परमधामका अनुभव करनेके लिए ब्रह्मात्माओंके पास प्रेम एवं श्रद्धा (विश्वास) रूपी पहुँच कहे गए हैं. इसलिए ब्रह्मात्माएँ पलमात्रके लिए भी प्रेम एवं श्रद्धासे विचलित नहीं होती हैं. किन्तु नश्वर जगतके जीवोंके पास प्रेम एवं विश्वास ही नहीं है, इसलिए वे पाँवके बल पर चलकर परमधामकी ओर नहीं जा सकते हैं.

हकें फुरमाया चौदे तबक, है चरकीन का चरकीन ।
सो छोड़ें एक मोमिन, जिनमें इसक यकीन ॥ ७४

कुरानमें इस प्रकारका उल्लेख है कि ये चौदह लोक (के सुख) त्याज्यसे भी त्याज्य हैं. इसलिए जिन ब्रह्मात्माओंमें प्रेम और विश्वास है वे ही इन लोकोंके सुखोंको त्याग सकती हैं.

सो दुनी को है नहीं, जासों उड़ पोहोंचे पार ।
ईमान इसक जो होवहीं, तो क्यों रहे बीच मुरदार ॥ ७५

नश्वर जगतके जीवोंके पास प्रेम एवं श्रद्धारूपी पहुँच नहीं हैं जिससे वे पारका उड़ान नहीं भर सकते. यदि उनके पास प्रेम और श्रद्धा होती तो वे इस स्वप्नवत् जगतमें ही क्यों रह जाते ?

ऊपर तलें अरस ना कह्या, अरस कह्या मोमिन कलूब ।
ए जाने रुहें अरस की, जिन का हक मेहेबूब ॥ ७६

वस्तुतः परमधाम न ऊपर है और न ही नीचे है. इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको

ही परमधाम कहा है। इस रहस्यको परमधामकी आत्माएँ ही जानतीं हैं, जिनके प्रियतम धनी पूर्णब्रह्म परमात्मा हैं।

दुनी दिल मजाजी कह्या, मोमिन हकीकी दिल ।
बिना तरफ दुनी क्यों पावहीं, जो अरसें रहे हिलमिल ॥ ७७

नश्वर जगतके जीवोंके हृदयको असत्यप्रिय माना है, जबकि ब्रह्मात्माओंका हृदय ब्रह्ममय (हकीकी) है। परमात्माकी दिशाका ज्ञान हुए बिना इन नश्वर जीवोंको ब्रह्मात्माओंकी भाँति परमात्माका प्रेम प्राप्त नहीं हो सकता है। ब्रह्मात्माएँ तो दिव्य परमधाममें श्रीराजजीके साथ हिल मिलकर रहतीं हैं।

वेद कतेब पठ पठ गए, किन पाई न हक तरफ ।
खबर अरस बका की, कोई बोल्या न एक हरफ ॥ ७८

अनेक लोगोंने वेद तथा कतेब ग्रन्थोंका अध्ययन किया है किन्तु उनमें किसीको भी परमात्माकी दिशा प्राप्त नहीं हुई। इसलिए वे अखण्ड परमधामके विषयमें एक शब्द भी नहीं कह सके।

इंतहाए नहीं अरस भोम का, सब चीजों नहीं सुमार ।
ऊपर तलें माहें बाहेर, दसों दिसा नहीं पार ॥ ७९

परमधामकी भूमिका कोई पारावार नहीं है। वहाँकी सभी सामग्रियाँ अपरिमित हैं। वहाँ पर ऊपर, नीचे, बाहर, अन्दर दसों दिशाओंमें किसी भी वस्तुका कोई पारावार नहीं है।

तो भी दुनियां अरस देखे नहीं, जो यों देखावत कतेब वेद ।
पावे न लाम इलम बिना, कोई इन विध का है भेद ॥ ८०

नश्वर जगतके जीव परमधामकी ओर उन्मुख नहीं हो सकते हैं, यद्यपि वेद तथा कतेब ग्रन्थोंने परमधामकी ओर सङ्केत किया है। सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी द्वारा प्राप्त तारतम ज्ञानके बिना कोई भी परमधामकी यथार्थता नहीं जान सकता है। यह रहस्य ही कुछ इस प्रकारका है।

सुध दई महंमदने, अरस पाइए मोमिन बीच दिल ।
जिनपें इलम हक का, दिल अरस रहे हिल मिल ॥ ८१
श्रीश्यामाजीने सद्गुरुके रूपमें प्रकट होकर यह सुधि दी है कि ब्रह्मात्माओंके

हृदयमें ही परमधामके दर्शन हो सकते हैं। जिनके लिए ब्रह्मज्ञान अवतरित हुआ है वे धामहृदया आत्माएँ श्रीराजजीके साथ हिल मिलकर रहती हैं।

दुनी जाने मोमिन दुनी से, ए नहीं बीच इन खलक ।

एता भी ना समझे, पुकारत कलाम हक ॥ ८२

सामान्य जीव यही समझते हैं कि ब्रह्मात्माएँ इसी संसारसे उत्पन्न हुई हैं। वस्तुतः ये नश्वर जगतके जीवोंके मध्यमें नहीं हैं। कुरान भी वारंवार यही कह रहा है तथापि वे इस रहस्यको नहीं समझते हैं।

कहे मोमिन उतरे अरस से, इनों दिलमें हक सूरत ।

ए अरस में अरस इन दिल में, यों हिल मिल बीच खिलवत ॥ ८३

कुरानमें यह स्पष्ट उल्लेख है कि ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधामसे अवतरित हुई हैं। इनके हृदयमें श्रीराजजीकी छवि अङ्कित है। ये स्वयं परमधाममें हैं एवं इनके हृदयमें परमधाम है। इस प्रकार ये परमधाममें श्री राजजीके चरणोंमें हिल मिलकर रहती हैं।

खुली मुसाफ हकीकत, तिन इतहीं हक वाहेदत ।

अरस बरकत सब इतहीं, इतहीं हक निसबत ॥ ८४

इन्हीं ब्रह्मात्माओंके लिए कुरानकी यथार्थता स्पष्ट हुई है। ये ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें होती हुई भी परमधाम मूलमिलावाके आनन्दका अनुभव करती हैं। उन्हें परमधामकी सम्पूर्ण निधि यहीं पर प्राप्त हुई है। उन्हें यहीं बैठे-बैठे श्रीराजजीके साथके सम्बन्धका अनुभव होता है।

इतहीं न्यामत मोमिनों, सब खुली जो इसारत ।

इतहीं मेला रूहों असल, इतहीं रूहों क्यामत ॥ ८५

इन ब्रह्मात्माओंको परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदाका अनुभव यहीं पर हुआ है। कुरानके गूढ़ रहस्य भी इन्हींको स्पष्ट हुए हैं। उन्हें परमधामके मूल मिलनका अनुभव हुआ एवं यहीं पर उनकी आत्माएँ जागृत हुईं।

ए बारीक बातें रूह मोमिनों, सो समझें रूह मोमिन ।

सो आदमी कहे हैवान, जो इसक ईमान बिन ॥ ८६

ब्रह्मात्माओंके इन गूढ़ रहस्योंको ब्रह्मात्माएँ ही समझती हैं। जिनके पास प्रेम

और श्रद्धा नहीं है ऐसे व्यक्तिओंको पशुकी संज्ञा दी गई है।

दुनी जाने तन मोमिन, बैठे हैं हम माहें ।
बोलत हैं बानी बका, ए रुहें तन दुनी में नहें ॥ ८७

सामान्य मनुष्य यही समझते हैं कि ब्रह्मात्माएँ भी हमारे समान शरीर धारण कर हमारे मध्यमें ही बैठी हुई हैं। किन्तु ब्रह्मात्माएँ तो सदैव अखण्ड परमधामकी ही चर्चा करती हैं। इनका मूल तन (पर-आत्मा) इस जगतमें नहीं है।

रुहें तन माहें अरस बका, और अरस में बैठे बोलत ।
तो नजीक कहे सेहरग से, देखो मोमिनों हक हिकमत ॥ ८८

इन ब्रह्मात्माओंका मूल तन (पर-आत्मा) दिव्य परमधाममें है। इसलिए वे परमधाममें ही बैठी हुई बोलती हैं। श्रीराजजी उनके लिए प्राणनलीसे भी अति निकट हैं। हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीकी इस कला-कौशलको भलीभाँति देखो।

इनों तन असल अरस में, इनों दिल में जो आवत ।
सोई इनों के अकस में, सुकन सोई निकसत ॥ ८९

इनका मूलतन दिव्य परमधाममें है। इसलिए इनके हृदयमें जो बात आती है वही इनकी सुरताओं द्वारा धारण किए हुए शरीरकी वाणीके द्वारा निकलती है।

मोमिन तन असल से, अरस मता कछू न छिपत ।
तो बका सूरज फुरमान में, कह्हा फजर होसी इत ॥ ९०
ब्रह्मात्माओंकी पर आत्मा परमधाममें होनेसे उनसे परमधामकी कोई भी सम्पदा अज्ञात नहीं है। इसीलिए इनको कुरानमें अखण्ड (शाश्वत) सूर्यकी उपमा दी है और कहा है कि इनके अवतरणसे नश्वर जगतमें भी अज्ञानरूपी अन्धकार मिटकर ब्रह्मज्ञानका प्रभात होगा।

ए बारीक बातें अरस की, जो गुजरी माहें वाहेदत ।
हक हादी और मोमिन, सो जाहेर हुई खिलवत ॥ ९१
परमधामकी ये गूढ़ बातें हैं जो श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके मध्य

प्रेम सम्बादके समय हुई हैं। अब यह गूढ़ रहस्य स्पष्ट हो गया है।

तो दुनियां होसी हैयाती, ले मोमिनों बका बरकत ।

ए बात दुनी क्यों बूझहीं, ओ जात हक निसबत ॥ १२

इन ब्रह्मात्माओंकी अमूल्य निधिके प्रतापसे संसारके जीवोंको भी अखण्ड सुखका अनुभव होगा। इस रहस्यको जगतके जीव कैसे समझ सकते हैं, ब्रह्मात्माएँ तो स्वयं श्रीराजजीकी अङ्गनाएँ हैं।

ए हक मता रूह मोमिन, इनों ताले लिखी न्यामत ।

सो क्यों कर दुनियां समझें, कही असल जाकी जुलमत ॥ १३

परमधामकी इन सम्पदाओंका सौभाग्य इन ब्रह्मात्माओंको ही प्राप्त है। इस रहस्यको सामान्य जीव कैसे समझ सकेंगे ? जिनकी उत्पत्ति ही शून्य निराकारसे हुई है।

आब हैयाती बका मिने, झूठी जिमी आवे क्योंकर ।

दिल आवे अरस मोमिन के, और न कोई कादर ॥ १४

पूरे जगतको अमरत्व प्रदान करने वाला प्रेमरूपी अखण्ड जल (हैयाती आब) परमधाममें ही है। वह इस नश्वर जगतमें कैसे आ सकता है ? प्रेमकी यह धारा ब्रह्मात्माओंके हृदयमें ही प्रवाहित हो सकती है। उनके बिना अन्य कोई भी इसे धारण करनेमें समर्थ नहीं है।

ए मोहेरे जो खेल के, झूठे खाकी नाबूद ।

आब हैयाती पीय के, क्यों होसी बका बूद ॥ १५

इस नश्वर खेलके पात्र समान ये जीव क्षणभङ्गर शरीर धारण किए हुए हैं। इसलिए वे शाश्वत प्रेमका पान करने पर भी कैसे अखण्ड हो सकते हैं ?

ए मोहेरे पैदा जो खेल के, हक मोमिन देखावत ।

याही बराबर अकस, मोमिनों के बका बोलत ॥ १६

श्रीराजजी खेलके पात्र समान इन जीवोंको उत्पन्न कर ब्रह्मात्माओंको अपना खेल दिखा रहे हैं। ब्रह्मात्माओंकी सुरताने भी इन्हीं जीवोंके समान नश्वर

शरीर धारण किया है किन्तु वे इसी नश्वर शरीरके द्वारा भी अखण्ड परमधामकी वाणी उच्चारण करती हैं।

जो तन अरस में मोमिनों, सो मता अकसों पोहोंचावत ।

सो अकसों से बीच दुनी के, मोमिन मेहर करत ॥ १७

ब्रह्मात्माओंकी पर-आत्मा परमधाममें विराजमान है। उसीसे स्वप्नवत् शरीरके हृदयमें परमधामकी सम्पदा पहुँचती हैं। इसलिए ब्रह्मात्माएँ इन्हीं प्रतिबिम्बरूप शरीरके द्वारा नश्वर जगतके जीवोंके ऊपर कृपाकी वर्षा करती हैं।

आब हैयाती इन विध, अरस से रुहें ल्यावत ।

ए बरकत रुहअल्लाह की, यों अरस मता आया इत ॥ १८

इस प्रकार ब्रह्मात्माएँ परमधामसे इस नश्वर जगतमें शाश्वत प्रेम ले आई हैं। यह सम्पूर्ण शक्ति श्यामाजी स्वरूप सदगुरु श्री देवचन्द्रजीकी है, उन्हींके द्वारा इस जगतमें दिव्य परमधामकी प्रेमरूपी सम्पदा अवतरित हुई है।

और बरकत महंमद की, साहेदी देत फुरमान ।

तिन साहेदी से इमान, पोहोंच्या सकल जहान ॥ १९

दूसरी शक्ति रसूल मुहम्मदकी है। उन्होंने कुरानके द्वारा इस रहस्यकी साक्षी दी है। इस साक्षीके द्वारा संसारके सामान्य लोगोंको भी परमात्माके प्रति विश्वास उत्पन्न होगा।

ए इलम जाने रुहें अरस की, और न काहूँ खबर ।

खेल मोहोरे तो कछू हैं नहीं, एक जरे भी बराबर ॥ १००

इस ब्रह्मज्ञानको परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही जानतीं हैं। अन्य किसीको भी इसकी सुधि नहीं है। क्योंकि खेलके पात्रके समान इन जीवोंका तो एक कणके समान भी कोई अस्तित्व ही नहीं है।

ए खाकी बुत सब नाबूद, इनको कायम किए मोमन ।

आब हैयाती अरस की, पिलाए के सबन ॥ १०१

नश्वर शरीरधारी ये जीव अस्तित्वहीन हैं। इनको ब्रह्मात्माओंने ही शाश्वत प्रेमका पान करवाकर मुक्तिस्थलोंमें अखण्ड कर दिया है।

ऐसा मता मोमिन, अरस सेती ल्यावत ।

बुत खाकी सरभर रूहों की, समझे बिना करत ॥ १०२

ब्रह्मात्माएँ ऐसा ब्रह्मज्ञान लेकर परमधामसे आई हैं, किन्तु नश्वर शरीरधारी सामान्य जीव समझे बिना ही ब्रह्मात्माओंके साथ समानता (समान होने) का दम्भ रखते हैं.

अरस इलम हुआ जाहेर, जब सब हुए रोसन ।

तब अंधेरी और उजाला, जुदे हुए रात दिन ॥ १०३

जब इस जगतमें ब्रह्मज्ञान प्रकट हो गया तब सर्वत्र उसका प्रकाश फैल गया. अब सत्य और असत्य अर्थात् दिन और रातकी स्पष्ट पहचान हो गई है.

अरस तो दूर है नहीं, कहे दोऊ कतेब वेद ।

अरस में रूहें दुनी फना जिमी, ए इलम लुदनी जाने भेद ॥ १०४

वेद तथा कतेब दोनों यही कहते हैं कि परमधाम दूर नहीं है. ब्रह्मात्माएँ परमधाममें रहती हैं एवं सामान्य जीव नश्वर जगतमें रहते हैं. इस गूढ़ रहस्यको तारतम ज्ञानने ही स्पष्ट किया है.

पर ए सुध दुनी में नहीं, तो क्या जाने कित अरस ।

क्यों हक क्यों हादी रूहें, क्यों दिल मोमिन अरस परस ॥ १०५

किन्तु ब्रह्मज्ञानकी सुधि जगतमें न होनेसे यहाँके लोग कैसे जान सकें कि परमधाम किस दिशामें है ? वे श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके परस्पर एकात्म भावको किस प्रकार समझ सकेंगे ?

बका जिमी जल तेज वाए, और बका आसमान ।

आपन बैठे वाही अरस में, पर नजरों देखें जहान ॥ १०६

परमधामकी भूमि, जल, तेज, वायु तथा आकाश आदि सभी तत्त्व अखण्ड हैं. इसी अखण्ड परमधाममें बैठकर हम इस नश्वर जगतका खेल देख रहे हैं.

जहान तो कछू है नहीं, है अरस बका हक ।

हक इलम ले देखिए, तो होइए अरस माफक ॥ १०७

वस्तुतः नश्वर जगतका कोई अस्तित्व ही नहीं है, केवल श्रीराजजीका

परमधाम ही अखण्ड है। तारतम ज्ञानके द्वारा विचार करने पर हमें ज्ञात होगा कि हम स्वयं भी परमधामके अनुरूप ही अखण्ड हैं।

नाबूद कही जो दुनियां, तिनकी नजर भी नाबूद ।

अरस रुहें हक इलमें, ए आसिकै देखे मेहेबूब ॥ १०८

नश्वर जगतके जीव क्षणभङ्गुर होनेसे उनकी दृष्टि भी क्षणभङ्गुर जगतकी ओर ही होती है। किन्तु परमधामकी ब्रह्मात्माओंकी दृष्टि तारतम ज्ञानको प्राप्त कर अपने प्रियतम धनीके स्वरूपमें स्थिर हो जाती है।

इत आंखें चाहिए हक इलम की, तो हक देखिए नैना बातन ।

नैना बातून खुलें हक इलमें, ए सहूर है बीच मोमन ॥ १०९

इस जगतमें भी परब्रह्म परमात्माके दर्शनके लिए उनके द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानरूपी दृष्टिकी आवश्यकता रहती है। तभी अन्तर्दृष्टिको खोलकर उनके दिव्य स्वरूपके दर्शन किए जा सकते हैं। यह अन्तर्दृष्टि तारतम ज्ञानके द्वारा ही खुल सकती है। यह विवेक ब्रह्मात्माओंमें ही है।

जिन बेचून बेचगून नजरों, ताए खबर न इलम हक ।

हक इलम देखावे मासूक, इन हाल मोमिन कहे आसिक ॥ ११०

जिन जीवोंकी दृष्टि शून्य-निराकारमें ही रहती है, उन्हें ब्रह्मज्ञानकी सुधि नहीं होती है। वस्तुतः ब्रह्मज्ञान ही ब्रह्मात्माओंको अपने प्रियतम धनीके दर्शन करवाता है। इसलिए वे अनुरागिनी कहलातीं हैं।

कहे पांच तत्त्व ख्वाब के, तामें बुजरक केहेलाए कै लाख ।

पर अरस बका हक ठौर की, कहूं जरा न पाइए साख ॥ १११

इस जगतके पाँचों तत्त्व (पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश) स्वप्नवत् कहे गए हैं। इस जगतमें आज तक अनेकों ज्ञानीजन हुए किन्तु उनमें-से किसीको भी परमधाम एवं परब्रह्म परमात्माकी दिशाके सम्बन्धमें ज्ञान नहीं था। इसीलिए उन्होंने परमात्माकी थोड़ी-सी साक्षी भी नहीं दी।

ख्वाब पैदा बका जिमी से, पर देखे न बका कों ।

एक जरा बका आवे ख्वाब में, तो सब ख्वाब उडे तिनसों ॥ ११२

वस्तुतः यह नश्वर जगत भी अखण्ड परमधामकी ही देन है किन्तु यहाँके

जीव अखण्डको प्राप्त नहीं कर सकते हैं। यदि अखण्ड परमधामका मात्र एक कण भी इस नश्वर जगतमें आ जाए तो यह स्वप्नवत् जगत उसी समय अस्तित्वहीन हो जाएगा।

ना तो ख्वाब जिमी बका जिमीसों, एक जरा न तफावत ।
पर झूठ न रहे सांच नजरों, आँखें खुलते ख्वाब उडत ॥ ११३

अन्यथा स्वप्नवत् जगतकी भूमि तथा परमधामकी भूमिमें लेशमात्र भी अन्तर नहीं रहता। किन्तु सत्यकी दृष्टिमें मिथ्याका कोई अस्तित्व ही नहीं है, आँख खुलते ही सारा स्वप्न भङ्ग हो जाता है।

ए जाहेर दुनी जो ख्वाब की, करें मोमिनों की सरभर ।
हक देखे जो ना टिके, ताए दूजा कहिए क्यों कर ॥ ११४
ये स्वप्नवत् जगतके प्राणी ब्रह्मात्माओंकी समानता रखना चाहते हैं। सत्यके समक्ष जो टिक ही नहीं सकते हैं उनको दूसरा भी कैसे कहा जाए ?

हक देखें जो खडा रहे, तो दूजा कह्या जाए ।
दम ख्वाबी दूजे क्यों कहिए, जो नींद उडे उड जाए ॥ ११५
सत्यके सामने जो स्थिर रहे उसीको दूसरा कहा जा सकता है। इस स्वप्नके जीवोंको दूसरे कैसे कहा जाए ? जो नींदके समाप्त होते ही अस्तित्वहीन हो जाते हैं।

ए इलमें सुनो अरस बारीकियां, जो सहे अरस हक रोसन ।
ताए भी दूजा क्यों कहिए, कहे कुल मोमिन वाहेद तन ॥ ११६
तारतम ज्ञानरूपी जागृत बुद्धिके द्वारा परमधामके इन गूढ़ रहस्योंको सुनो ! जो परमधामके दिव्य प्रकाशको सह सकते हैं उन ब्रह्मात्माओंको भी दूसरे कैसे कहा जाए ? वे तो मूल रूपसे श्रीराजजीके ही अद्वैत स्वरूपमें हैं।

हक हादी रुहें मोमिन, ए अरस में वाहेदत ।
पर ए जाने अरवाहें अरस की, जो रुहें हक खिलवत ॥ ११७
परमधाममें श्रीराजजी, श्यामाजी एवं ब्रह्मात्माएँ अद्वैत स्वरूप हैं। किन्तु इस

रहस्यको परमधामकी आत्माएँ ही जान सकती हैं जो मूलमिलावामें श्रीराजजीके समक्ष बैठी हुई हैं।

इतहीं कजा होएसी, इतहीं होसी भिस्त ।
दोजख इतहीं होएसी, दुनी तले नूर नजर क्यामत ॥ ११८

यदि ब्रह्मज्ञानके द्वारा विचार किया जाए तो यहीं पर सबको न्याय प्राप्त होगा। यहीं पर सभीको अखण्ड मुक्तिस्थलका सुख प्राप्त होगा। यहीं पर नरकाग्निमें जलकर जीव पवित्र होंगे एवं अक्षरब्रह्म उन्हें अपनी दृष्टिमें स्थिर (अखण्ड) करेंगे।

दम ख्वाबी देखें क्यों बका को, कर देखो सहूर ।
ख्वाब दुनी तब क्यों रहे, जब हुआ दिन बका जहूर ॥ ११९

जरा विचार करके तो देखो। नश्वर जगतके ये जीव अखण्डको कैसे देख सकते हैं। जब अखण्ड परमधामका ज्ञान प्रकट हो गया है तब स्वप्नवत् जगतका अस्तित्व कैसे रहेगा ?

दुनी मगज न जाने मुसाफ का, तो देखें अरस को दूर ।
जो जाने हक इलम को, तो देखें मोमिन हक हजूर ॥ १२०

नश्वर जगतके जीव कुरानादि धर्मग्रन्थोंका रहस्य भी नहीं समझते हैं इसलिए परमधामको दूर समझते हैं। जो ब्रह्मज्ञानको जानती हैं वे ब्रह्मात्माएँ ही स्वयंको श्रीराजजीके निकट पाती हैं।

भिस्त दोजख दोऊ जाहेर, ए लिख्या माहें फुरमान ।
तिन छोड़ी दुनियां हराम कर, जिनों हुई हक पेहेचान ॥ १२१

कुरानके अन्तर्गत मुक्तिस्थल तथा नरकके विषयमें स्पष्ट उल्लेख है। जिनको पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान हो गई है वे आत्माएँ नश्वर जगतको हेय समझकर उससे विमुख हो जाती हैं।

तो तरक करी इनों दुनियां, जो अरस दिल मोमन ।
दुनी जलसी इत दोजख, जब दिन हुआ बका रोसन ॥ १२२

इन धामहृदया ब्रह्मात्माओंने नश्वर जगतको हेय समझकर उसे त्याग दिया

है. अब ब्रह्मज्ञानरूपी सूर्य उदय हो गया है इसलिए नश्वर जगतके जीव भी पश्चात्तापरूपी नरकाग्निमें जलेंगे.

हकें दिया लुंदनी जिनको, सो बैठे अरस में बेसक ।

जब कौल पोहोंच्या सरत का, तब होसी दुनी इत दोजक ॥ १२३

श्रीराजजीने जिन ब्रह्मात्माओंको जागृत बुद्धिका ज्ञान प्रदान किया है वे निश्चय ही परमधारमें बैठी हुई हैं. अब श्रीराजजीके वचनोंके अनुसार आत्म-जागृतिका समय आ गया है इसलिए संसारके जीवोंको पश्चात्तापका अपार दुःख होगा.

अरस नासूत दोऊ इतहीं, होसी जाहेर अपनी सरत ।

देखें मोमिन दुनी जलती, बीच बैठे अपनी भिस्त ॥ १२४

निश्चित समय पर इसी नश्वर जगतमें परमधारम तथा स्वप्नवत् जगतकी स्पष्टता हो जाएगी. उस समय ब्रह्मात्माएँ अपने धारमें बैठी-बैठी नश्वर जगतके जीवोंको पश्चात्तापकी अग्निमें जलते हुए देखेंगी.

काफर देखें मोमिनों भिस्त में, आप पडे बीच दोजक ।

सुख मोमिनों का देख के, जलसी आग अधिक ॥ १२५

उस समय नास्तिक लोग स्वयंको नरकाग्निमें जलते हुए एवं ब्रह्मात्माओंको अखण्ड सुख प्राप्त करते हुए देखेंगे. उस समय ब्रह्मात्माओंके अपार आनन्दको देखकर उन्हें और भी अधिक सन्ताप होगा.

मोमिन दुनी दोऊ आदमी, हुई तफावत क्यों कर ।

ए बेवरा है फुरमान में, पर कोई पावे न हादी बिगर ॥ १२६

ब्रह्मात्माएँ तथा अन्य जीव मनुष्यकी भाँति ही दिखाई देते हैं. उन दोनोंमें किस प्रकारका अन्तर है, यह सम्पूर्ण विवरण कुरानमें दिया गया है किन्तु सद्गुरुके बिना इस रहस्यको कोई भी नहीं जान सकता है.

बीते नबे साल हजार पर, मुसाफ मगज न पाया किन ।

तो गए एते दिन रात में, हुआ जाहेर न बका दिन ॥ १२७

रसूल मुहम्मदके पश्चात् एक हजार नब्बे वर्ष व्यतीत हो गए किन्तु आज तक

कुरानके गूढ़ रहस्य कोई भी समझ नहीं पाया। इसलिए इतने दिनों तक अज्ञानताकी रात्रि छायी रही ब्रह्मज्ञान रूपी प्रभातका उदय ही नहीं हुआ।

मोमिन उतरे अरस से, इनों दिल में हक सूरत ।

तो अरस कह्या दिल मोमिन, खोली हक हकीकत मारफत ॥ १२८

ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधामसे अवतरित हुई हैं। इनके हृदयमें परब्रह्म परमात्माका स्वरूप अङ्कित है। इसलिए इनके हृदयको परमधाम कहा गया है। उन्होंने ही परब्रह्म परमात्माकी यथार्थता तथा पहचान प्रकट की है।

दुनी दिल पर इबलीस, और पैदास कही जुलमत ।

काम हाल इनों अंधेर में, हवा को खुदा कर पूजत ॥ १२९

नश्वर जगतके जीवोंके हृदय पर शैतानरूप इबलीस (मन) का साप्राज्य है। इनकी उत्पत्ति शून्य निराकारसे हुई है। इसीलिए इनके आचरण तथा मनःस्थिति अन्धकारपूर्ण हैं। यही कारण है कि वे शून्य-निराकार (माया) को ही परमात्मा समझकर उसकी पूजा करते हैं।

कुलफ हवा का दुनी के, दिल आँखों कानों पर ।

ईमान क्यों न आए सके, लिख्या फुरमान में यों कर ॥ १३०

इन जीवोंके हृदय, कान तथा आँखों पर निराकार (माया) का ही आवरण है। इसीलिए इनको परमात्माके प्रति विश्वास नहीं होता है। इस प्रकार कुरानमें इनके विषयमें स्पष्ट उल्लेख है।

कौल फैल हाल मोमिन के नूर में, रुहअल्ला आया इनों पर ।

दिया इलम लुदंनी इन को, खोलने मुसाफ खातर ॥ १३१

ब्रह्मात्माओंकी वाणी, आचरण तथा मन अखण्ड परमधामकी ओर हैं। श्रीश्यामाजी इनके लिए ही सन्देश लेकर सद्गुरुके रूपमें आई हैं। इसीलिए कुरानके गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट करनेके लिए इन्हें जागृत बुद्धिका (तारतम) ज्ञान प्रदान किया है।

राह तौहीद पाई इनों ने, जो राह मुस्तकीम सरात ।

ए मेहर मोमिनों पर तो भई, जो तले कदम हक जात ॥ १३२

इनको ही अद्वैत परमधामका मार्ग प्राप्त हुआ है, जो सर्वश्रेष्ठ मार्ग (मुस्तकीम

सिरात) कहलाता है. ये ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके ही चरणोंमें हैं, इसीलिए इन पर इतनी बड़ी कृपा हुई है.

हुई लानत अजाजील को, सो उलट लगी सब जहान ।

इबलीस लिख्या दुनी नसलें, कही ए विध माहें कुरान ॥ १३३

देवदूत अजाजीलको परमात्माका आदेश न माननेसे जो धिक्कार मिली है उसीके कारण संसारके सभी लोग धिक्कारके पात्र बने हैं. कुरानमें स्पष्ट उल्लेख है कि नश्वर जगतके जीवोंके हृदय पर दुष्ट इब्लीस (मन) का साम्राज्य है.

देसी पैगंबर की साहेदी, गिरो अदल से उठाई जे ।

करी हक्के हिदायत इन को, कहे बहतर नारी एक नाजी ए ॥ १३४

संसारके जीवोंको न्याय देकर परमात्माने इन ब्रह्मात्माओंको अपनी शरणमें ले लिया है. इनको ही परमात्माने अपना निर्देशन दिया है जिससे ये नाजी (श्रेष्ठ) समुदायमें मानी जाएँगी और शेष बहतर नारी (नरकगामी) समुदायके माने जाएँगे.

तन मोमिन असल अरस में, आडी नींद हुई फरामोस ।

सो नींद वजूद ले उड़ा, तब मूल तन आया माहें होस ॥ १३५

ब्रह्मात्माओंके मूल तन (परात्मा) परमधारमें हैं. उनके हृदय पर भ्रमका आवरण डाल दिया है. जब उनके स्वप्नवत् शरीर मिट जाएँगे तब पर आत्माके हृदयसे भी भ्रमका आवरण दूर हो जाएगा एवं वे जागृत हो जाएँगी.

दुनी तन जुलमत से, इन की असल न बका में ।

जब फारमोसी उड़ी जुलमत, तब जरा न रह्या दुनी सें ॥ १३६

इन नश्वर जगतके जीवोंकी उत्पत्ति शून्य निराकारसे है. इनका मूल अखण्डमें नहीं है. जब यह भ्रमरूपी निद्रा उड़ जाएगी तब इन जीवोंका नाम मात्र भी शेष नहीं रहेगा.

अरवाहें जो सुपन की, देखें न जागृत कों ।

जो होए जागृत में असल, सो आवें जागृत माँ ॥ १३७

स्वप्नवत् जगतके जीव जागृत अवस्थाकी आत्माको देख नहीं पाते हैं. जिन

आत्माओंका मूल परमधारमें हैं वे ही जागृत होकर अपने मूलमें समाहित हो सकती हैं।

कही दुनियां हुई कुंन सों, सो जुलमत उड़े उडत ।
ताको भिस्त देसी हादी हुकमें, गिरो मोमिनों की बरकत ॥ १३८

जगतके जीवोंकी उत्पत्ति परमात्माके द्वारा 'हो जा' (कुन) कहनेसे हुई है। इसलिए भ्रमका आवरण मिटते ही उनका अस्तित्व भी समाप्त हो जाएगा। सद्गुरुके आदेशके कारण ब्रह्मात्माएँ ऐसी जीवोंको अखण्ड स्थलका सुख प्रदान करेंगी। वस्तुतः ब्रह्मात्माओंमें ही ऐसी शक्ति है।

सिफत करेंगे सब कोई, दुनी भिस्त की जे ।
हक हादी रुहें वाहेदत, भिस्त हुई इनों वास्ते ॥ १३९

नश्वर जगतके जीव मुक्तिस्थलका सुख प्राप्त करने पर ब्रह्मात्माओंकी प्रशंसा करेंगे। श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ अद्वैत स्वरूप हैं। इसलिए ब्रह्मात्माओंके द्वारा इन जीवोंको मुक्तिस्थलका सुख प्राप्त हुआ है।

खुदाए कर पूजेंगे, बका मिने बेसक ।
पाक होसी हक इलम सों, करें बंदगी होए आसिक ॥ १४०

ये जीव मुक्तिस्थलमें बैठकर हम ब्रह्मात्माओंको परमात्मा समझकर हमारी पूजा करेंगे। तारतम ज्ञानके द्वारा पवित्र होकर वे अनुरागी बनकर हमारी पूजा करेंगे।

मोमिन उतरे अरस अजीम से, दुनी तिन सों करे जिद ।
ए अरस से आये हक पूजत, दुनी पूजना हवा लग हद ॥ १४१

ब्रह्मात्माएँ परमधारमसे अवतरित हुई हैं। नश्वर जगतके जीव उनके साथ हठपूर्वक कलह भी करेंगे। परमधारमसे आई हुई होनेसे ये परब्रह्म परमात्माकी पूजा करती हैं किन्तु संसारके इन जीवोंकी बुद्धि निराकारकी सीमा तक सीमित हो जानेसे वे निराकारकी ही पूजा करते हैं।

दुनियां दिल इब्लीस कह्या, हक अरस दिल मोमन ।
ए जाहेर किया बेवरा, है कुरान में रोसन ॥ १४२

इन जीवोंके हृदय पर दुष्ट इब्लीसका साम्राज्य है किन्तु ब्रह्मात्माओंका हृदय

परमधाम कहलाता है। इस प्रकारका स्पष्ट विवरण कुरानमें दिया गया है।

इब्लीस सोई बातावसी, जिन सों होसी दोजक ।

बोली चाली मोमिन अरस की, जासों पाइए बका हक ॥ १४३

यह दुष्ट मन (इब्लीस) इन जीवोंको उसी मार्गकी ओर प्रेरित करेगा जिससे उन्हें नरककी प्राप्ति होगी। किन्तु ब्रह्मात्माओंकी वाणी तथा व्यवहार परमधामके अनुरूप होनेसे उनको अखण्ड परमधामकी अनुभूति होगी।

बैठे बातें करें अरस की, सोई भिस्त भई बैठक ।

दुनी बातें करें दुनी की, आखर तित दोजक ॥ १४४

ब्रह्मात्माएँ जहाँ बैठकर अखण्ड परमधामकी चर्चा करती हैं वही बैठक उनके लिए मुक्तिस्थल है। नश्वर जगतके जीव छल-प्रपञ्च भरे जगतकी ही चर्चा करते हैं। इसलिए अन्तमें उन्हें नारकीय दुःखोंका ही अनुभव करना पड़ता है।

ए बोहोत भांत है बेवरा, मोमिन और दुनिया ।

मोमिन नजर बका मिनें, दुनी नजर बीच फना ॥ १४५

इस प्रकार ब्रह्मात्माएँ तथा नश्वर जगतके जीवोंका विवरण भिन्न-भिन्न प्रकारका है। ब्रह्मात्माओंकी दृष्टि सदैव अखण्ड परमधाममें लगी रहती है जबकि जगतके जीवोंकी दृष्टि नश्वर जगतमें ही उलझी रहती है।

कहे महामत अरस अरवाहें, किया पेहेले बेवरा फुरमान ।

जिन हुई हक हिदायत, सोई बातून करे बयान ॥ १४६

महामति कहते हैं, परमधामकी ब्रह्मात्माओंके विषयमें कुरानमें पहलेसे ही विवरण दिया है। जिन ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीका निर्देश स्वरूप तारतम ज्ञान प्राप्त हुआ है वे ही परमधामके अप्रकट रहस्योंको स्पष्ट करेंगी।

प्रकरण २३ चौपाई १७५२

हकीकत मारफत का बेवरा

सोई कहूं हकीकत मारफत, जो रखी थी गुङ्ग रसूल ।

वास्ते अरस रुहन के, जिन जावें आखर भूल ॥ १

अब मैं पूर्णब्रह्म परमात्माकी यथार्थता एवं पूर्ण पहचानकी बातको स्पष्ट

करता हूँ जिनको रसूल मुहम्मदने भी अभी तक गुस रखा था. परमधामकी ब्रह्मात्माओंके लिए ही यह स्पष्टता की जा रही है जिससे वे आत्म जागृतिके समयमें भूल न जाएँ.

फिरके बनी असराईल, हुए पीछे मूसा मेहेतर ।
एक नाजी नारी सतर, कहे फुरमान यों कर ॥ २

कुरानमें इस प्रकारका उल्लेख है कि इस्लाईलके वंशमें हजरत मुसा नामक महान पैगम्बर हुए हैं. जिनके अनुयायी एकहत्तर (७१) समुदायोंमें विभक्त हुए. उनमें एक (१) समुदाय नाजी (श्रेष्ठ) कहलाया तथा शेष सत्तर (७०) समुदाय नारी (नरकागामी) कहलाए.

याही भांत ईसा के, फिरके बहतर कहे ।
एक नाजी तिन में हुआ, और नारी इकहत्तर भए ॥ ३

इसी प्रकार हजरत ईसाके अनुयायी भी बहतर समुदायोंमें विभक्त हुए. उनमें एक नाजी कहलाया और शेष एकहत्तर नारी कहलाए.

तिहतर फिरके कहे महंमद के, बहतर नारी एक नाजी ।
नारी जलसी आग में, नाजी हिदायत हक की ॥ ४

इसी परम्परामें रसूल मुहम्मदके अनुयायी तिहतर समुदायमें विभक्त हुए हैं. उनमें एक नाजी कहलाया एवं शेष बहतर नारी कहलाए. कुरानमें इस प्रकार उल्लेख है कि ये नारी समुदायके लोग नरकाग्निमें जलेंगे और नाजी समुदायके लोगोंको परमात्माका निर्देशन प्राप्त होगा.

जाहेर पेहेचान है तिन की, ले चलत माएने बातन ।
कौल फैल चाल रुह नजर, इन्हों असल बका अरस तन ॥ ५

इस श्रेष्ठ समुदायकी पहचान स्पष्ट है कि वे धर्मग्रन्थोंके गूढ रहस्योंको हृदयङ्गम करते हैं. इनके वचन, कर्म तथा व्यवहार (रहन-सहन) आत्मदृष्टिके अनुरूप होते हैं. क्योंकि इनका मूल तन (पर-आत्मा) अखण्ड परमधाममें है.

फुरमान आया जिन पर, ए सोई जाने इसारत ।
ले मारफत बैठे अरस में, बीच बका खिलवत ॥ ६

वस्तुतः कुरानका ज्ञान जिन लोगोंके लिए आया है वे ही इसमें निर्दिष्ट
सङ्केतोंको समझ सकते हैं। वे ही परमधामकी पूर्ण पहचान कर स्वयं जागृत
होकर मूलमिलावेमें बैठे हुए अनुभव करते हैं।

ए इलम कहे खेल उड जावे, बका कंकरी के देखे ।
तो अरस रुहों की नजरों, ख्वाब रेहेवे क्यों ए ॥ ७

तारतम ज्ञान यह स्पष्ट निर्देश करता है कि अखण्ड परमधामके एक कणके
समक्ष भी जगतका यह खेल टिक नहीं सकता अर्थात् अस्तित्वहीन हो जाता
है। तो फिर परमधामकी ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिमें यह स्वप्नवत् जगत् कैसे रह
सकता है ?

तो मोमिन तन में हुकम, फैल करे लिए रुह हुजत ।
वास्ते हादी रुहन के, ए हकें करी हिकमत ॥ ८

यही कारण है कि ब्रह्मात्माओंके शरीरमें सदैव श्रीराजजीका आदेश ही
कार्यरत है। जिसके कारण ब्रह्मात्माएँ स्वयंको परमधामकी होनेका अधिकार
लेकर इस जगतमें विचरण करती हैं। श्रीराजजीने श्यामाजी तथा
ब्रह्मात्माओंके लिए ही इस नश्वर जगतकी युक्तिपूर्वक रचना की है।

तो कह्या अरस दिल मोमिन, ना मोमिन जुदे अरस सें ।
पर ए जाने अरवाहें अरस की, जो करी बेसक हक इलमें ॥ ९

ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है क्योंकि ब्रह्मात्माएँ
परमधामसे भिन्न नहीं हैं। किन्तु इस रहस्यको वे आत्माएँ ही जान सकती
हैं जो तारतम ज्ञानके द्वारा सन्देह रहित हो गई हैं।

बसरी मलकी और हकी, तीन सूरत महंमद की जे ।
ए तीनों सूरत दे साहेदी, आखर अरस देखावें ए ॥ १०

कतेब ग्रन्थोंमें इस प्रकारका उल्लेख है कि रसूल मुहम्मद द्वारा निर्दिष्ट बशरी,
मलकी एवं हकी ये तीनों स्वरूप ब्रह्मात्माओंकी धर्मग्रन्थोंकी साक्षी देकर
अन्तिम समयमें परमधामका मार्ग प्रशस्त करेंगे।

रूहों हक अरस नजरों, हुकम नजर खेल माहिं ।
अरस नजीक रूहों को खेल से, इत धोखा जरा नाहिं ॥ ११

ब्रह्मात्माओंकी दृष्टि तो सदा दिव्य परमधाम तथा श्रीराजजीकी ओर ही रहती है किन्तु श्रीराजजीके आदेशके द्वारा उनकी दृष्टि इस नश्वर जगतमें लगी हुई है. इसलिए इस संसारके खेलमें रहते हुए भी वे परमधामसे अत्यन्त निकट हैं. इस विषयमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है.

तो हक सेहेरग से नजीक, कोई जाने ना लुढ़नी बिन ।
एही लिख्या फुरमान में, यों ही रूहअल्ला कहे वचन ॥ १२
इसीलिए श्रीराजजीको प्राणनलीसे भी अति निकट कहा गया है किन्तु जागृत बुद्धिके ज्ञानके बिना यह रहस्य स्पष्ट नहीं हो सकता है. कुरानमें भी इसी प्रकारका उल्लेख है एवं सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी महाराजने भी इसी प्रकारका उपदेश दिया है.

ज्यों ज्यों होवे अरस नजीक, खेल त्यों त्यों होवे दूर ।
यों करते छूट्या खेल नजरों, तो रूहें कदम्यैं तलें हजूर ॥ १३
जैसे-जैसे आत्मदृष्टि परमधामकी ओर होती जाती है वैसे-वैसे यह नश्वर खेल दूर होता हुआ दिखाई देता है. ऐसा करते हुए ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिसे यह नश्वर खेल छूट जाएगा एवं ब्रह्मात्माएँ स्वयं जागृत होकर श्रीराजजीके चरणोंमें ही बैठी हुई अनुभव करेंगी.

नजर खेल से उतरती देखिए, त्यों अरस नजीक नजर ।
यों करते लैल मिटी रूहों, दिन हुआ अरस फजर ॥ १४
जैसे-जैसे इस नश्वर खेलसे दृष्टि हटने लगेगी वैसे ही दिव्य परमधाम निकट दिखाई देने लगेगा. ऐसा करते हुए ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिमें यह अज्ञानमयी रात मिट जाएगी एवं परमधामके दिव्य ज्ञानका प्रभात हो जाएगा.

ए जो देत देखाई वजूद, रूह मोमिन बीच नासूत ।
ए दुनी जाने इत बोलत, ए बैठें बोलें माहें लाहूत ॥ १५
इस नश्वर जगतमें ब्रह्मात्माओंने जो शरीर धारण किया हुआ है, संसारके लोग

उसीको बोलते हुए देखते हैं किन्तु ब्रह्मात्माएँ तो परमधाममें ही बैठी हुई इस शरीरके माध्यमसे बोल रहीं हैं।

तो बातून गुझ लाहूत का, जाहेर सब करत ।

ना तो अरस बका की रोसनी, क्यों होवे जाहेर इत ॥ १६

इसी कारण ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें भी परमधामके गूढ़ रहस्योंको प्रकट कर रहीं हैं। अन्यथा परमधामका दिव्य आलोक इस नश्वर जगतमें कैसे आलोकित हो सकता है ?

अरस बका हमेंसगी, हक हादी रुहें वाहेदत ।

ए तीन खेल हुए जो लैल में, ऐसा हुआ न कोई कबूं कित ॥ १७

दिव्य परमधाममें श्रीराजजी श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ सदैव एकात्म (अद्वैत) भावमें हैं। इसी रहस्यको स्पष्ट करनेके लिए इस नश्वर जगतमें व्रज, रास एवं जागनीके रूपमें तीन प्रकारकी लीलाएँ हुईं जो आज तक कभी भी नहीं हुईं थीं।

तो खाकी बुत कायम किए, जो किया वास्ते खेल उमत ।

रुहें पट दे बका बुलाए के, दै चौदे तबकों भिस्त ॥ १८

जिन ब्रह्मात्माओंके लिए इस नश्वर जगतकी रचना की है उन्हींके कारण साधारण जीवोंको अखण्ड कर दिया है। इस प्रकार ब्रह्मात्माओंको खेल दिखाकर परमधाममें जागृत किया एवं चौदह लोकोंके जीवोंको अखण्ड मुक्तिस्थलका सुख प्रदान किया।

सिफत करेंगे सब कोई, दुनी भिस्त की जे ।

हक हादी रुहें वाहेदत, भिस्त हुई इनों वास्ते ॥ १९

अब इस नश्वर जगतके जीव भी अखण्ड मुक्तिस्थलमें स्थिर होकर ब्रह्मात्माओंकी महिमाका गान करेंगे। क्योंकि इन्हीं ब्रह्मात्माओंके कारण इनको अखण्ड मुक्तिस्थल प्राप्त हुए हैं। ये ब्रह्मात्माएँ दिव्य परमधाममें श्रीराजजी तथा श्यामाजीके साथ सर्वदा एकात्मभावमें हैं।

अरस रूहें हक बिना न रहें, विरहा न सहें एक छिन ।

जब इलमें हुई अरस बेसकी, रूहें रहे न बिना वतन ॥ २०

परमधामकी आत्माएँ अपने धनीके बिना नहीं रह सकती हैं। इसलिए वे क्षणमात्रके लिए भी अपने धनीका वियोग सहन नहीं कर सकतीं। जब तारतम ज्ञानके द्वारा उन्हें दिव्य परमधामकी पूर्ण पहचान हो गई है तो वे अब अपने घरके बिना नश्वर जगतमें नहीं रह सकतीं हैं।

जो कदी मोमिन तनमें हुकम, तो हुकम भी रेहे ना इत ।

क्यों ना रहे इत हुकम, हुकम हुकम बिना क्यों फिरत ॥ २१

यदि ब्रह्मात्माओंके नश्वर शरीरमें रहकर श्रीराजजीका आदेश काम कर रहा है तो वह भी परमधामकी पहचान होने पर नश्वर जगतमें नहीं रह सकेगा। किन्तु जब तक दूसरा आदेश न हो तब तक यह कैसे लौट सकता है।

हुकम आया तन मोमिनों, लई अरस रूह हुजत ।

ले इत लजत अरस हक की, क्यों हुकम रेहे सकत ॥ २२

वस्तुतः श्रीराजजीका आदेश ही ब्रह्मात्माओंका अधिकार लेकर इन नश्वर शरीरको धारण कर रहा है। इसलिए इस नश्वर जगतमें भी श्रीराजजी एवं परमधामका आनन्द प्राप्त करने पर वह यहाँ पर कैसे रह सकेगा ?

ए हुकम सो भी मासूक का, सो क्यों जुदागी सहे ।

खिलवत वाहेदत सुध सुन, पल एक ना रहे ॥ २३

यह आदेश भी प्रियतम धनी श्रीराजजीका है। इसलिए यह उनका वियोग कैसे सहन कर सकता है। यह तो दिव्य परमधामके एकात्मभावकी सुधि प्राप्त कर पलमात्रके लिए भी श्रीराजजीसे दूर नहीं हो सकता है।

ए हुकम तिन मासूक का, जो आप उलट हुआ आसिक ।

सो हुकम विरहा ना सहे, बिना खावंद एक पलक ॥ २४

वस्तुतः यह आदेश श्रीराजजीका ही है। जो ब्रह्मात्माओंका शरीर धारण कर अनुरागी (आशिक) बन गया है। इसलिए श्रीराजजीका आदेश अपने प्रियतम धनीके बिना पलमात्रके लिए भी उनका वियोग सहन नहीं कर सकता है।

ए अरस बका बातें सुन के, एक पलक न रहें अरवाहें ।

रुहों हुकम राखे आडा पट दे, हक इत लजत देखाया चाहें ॥ २५

परमधामके इन गूढ़ रहस्योंको सुनकर ब्रह्मात्माएँ पलमात्रके लिए भी इस नश्वर जगतमें नहीं रह सकती हैं. किन्तु श्रीराजजीके आदेशने ही मोहक आवरण डालकर उन्हें इन नश्वर जगतके खेलमें होनेका अनुभव करवाया है क्योंकि श्रीराजजी इसी नश्वर जगतमें बैठाकर उन्हें परमधामके सुखोंका अनुभव करवाना चाहते हैं.

रुहों हक पें मांगी लजत, सो क्यों रहें देखे बिगर ।

कोट गुनी देखावें लजत, जो रुहों मांगी प्यार कर ॥ २६

ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजीसे स्वप्नवत् जगतके खेलका अनुभव करना चाहा था इसलिए वे इस खेलको देखे बिना कैसे रह सकतीं थीं ? ब्रह्मात्माओंने जिस खेलको प्रेमपूर्वक माँगा है श्रीराजजी उसके आनन्दको करोड़ों गुण बढ़ाकर उन्हें प्रदान कर रहे हैं.

ना तो इसक इनोंका असल, सब अंगों इसक रुहन ।

इसक उडावे अंग लजत, आया इलम वास्ते इन ॥ २७

अन्यथा ब्रह्मात्माओंका शाश्वत प्रेम है. इनके अङ्ग-प्रत्यङ्गमें वही परिपूर्ण है. वही प्रेम उनको सांसारिक सुखोंसे विमुख कर देता है क्योंकि इनके लिए ही जागृत बुद्धिका (तारतम) ज्ञान आया हुआ है.

हक को काम और कछू नहीं, देवें रुहों लाड लजत ।

ए तो बिगर चाहे सुख देत हैं, सो मांगया क्यों न पावत ॥ २८

अपनी अङ्गनाओंको अपार आनन्द प्रदान करनेके अतिरिक्त श्रीराजजीका अन्य कोई कार्य नहीं है. वे तो बिना माँगे ही सुख प्रदान करते हैं तो फिर उनसे अनुरोध करने पर क्यों प्राप्त नहीं होगा ?

सुख उपजे कै विध के, आगूँ अरस में बडा विस्तार ।

सो रुहें सब इत देखहीं, जो कर देखें नीके विचार ॥ २९

परमधाममें विभिन्न प्रकारके सुखोंका अनुभव होता है. वहाँ पर अनन्त

सुखोंका विस्तार है. यदि तारतम ज्ञानके माध्यमसे भलीभाँति विचार कर देखें तो ज्ञात होगा कि ब्रह्मात्माएँ इसी नश्वर जगतमें बैठकर परमधामके अपार सुखोंका अनुभव कर रहीं हैं.

सो बिगर कहे सुख देत हैं, ए तो रुहों मांगया मिल कर ।

इन जिमी बैठाए सुख अरस के, हक देत हैं उपरा ऊपर ॥ ३०

श्रीराजजी तो बिना माँगे ही ब्रह्मात्माओंको अपार सुख प्रदान करते हैं. किन्तु यह खेल तो सभी ब्रह्मात्माओंने मिलकर माँगा है. इसलिए श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंको इसी नश्वर जगतमें बैठाकर परमधामके अपार सुखोंका अनुभव करवाते हैं.

दुनी में बैठाए न्यारे दुनी से, किए ऐसी जुगत बनाए ।

सुख दिए दोऊ ठौर के, अरस दुनी बीच बैठाए ॥ ३१

श्रीराजजीने यह खेल इस प्रकार युक्तिपूर्वक बनाया है कि उन्होंने ब्रह्मात्माओंको सुरतारूपमें इस खेलमें भी बैठाया और मूल रूपसे इससे बहुत दूर भी रखा. इस प्रकार श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंकी सुरताको नश्वर जगतमें बैठाकर परमधामके सुखोंका अनुभव करवाते हैं और उनकी पर-आत्माको अपने चरणोंमें बैठाकर नश्वर खेल देखनेका आनन्द प्रदान करते हैं.

एक तन हमारा लाहूत में, और नासूत में और तन ।

असल तन रुहें अरस बीच में, तन नासूत में आया इजन ॥ ३२

हमारा एक (मूल) तन तो परमधाममें है और दूसरा नश्वर तन इस नश्वर जगतमें है. ब्रह्मात्माओंका मूल तन (परात्मा) तो दिव्य परमधाममें है. किन्तु श्रीराजजीका आदेश ही संसारके इस नश्वर तनमें रहकर कार्य कर रहा है.

अरस तन देखें तन नासूती, तन नासूत में जो हुक्म ।

सो सुध दै अरस अरवाहों को, इनें सेहेरग से नजीक हम ॥ ३३

हमारी पर आत्मा इस नश्वर शरीरको देख रही है जिसमें श्रीराजजीका आदेश कार्यरत है. ब्रह्मात्माओंकी सुरताओंको भी श्रीराजजीने तारतम ज्ञानके द्वारा यह सुधि प्रदान की है कि वे स्वयं हमारी प्राणनलीसे भी अधिक निकट हैं.

दुनियां चौदे तबक में, किन पाई न बका तरफ ।

तिन अरस में बैठाए हमको, जाको किन कहो ना एक हरफ ॥ ३४

इन चौदह लोकोंके जीवोंमें किसीको भी परमधामकी दिशा प्राप्त नहीं हुई है. श्रीराजजीने हमें ऐसे दिव्य परमधाममें बैठाया (जागृत किया) है, जिसके विषयमें आज तक किसीने भी एक शब्दका भी उच्चारण नहीं किया है.

जो जाहेर माएने देखिए, तो बीच पड़यो ब्रह्माण्ड ।

एता विछोडा कर दिया, हक अरस और इन पिंड ॥ ३५

यदि यथार्थ दृष्टिसे देखा जाए तो श्रीराजजी एवं हमारे बीच यह ब्रह्माण्ड ही आवरण रूप बना हुआ है. उन्होंने हमें इतना ही वियोग दिया है कि हमारे और परमधामके बीच यह नश्वर शरीर ही परदा रूप बन गया है.

हुआ विछोडा बीच ब्रह्माण्ड के, एते पडे थे हम दूर ।

सो हकें इलम ऐसा दिया, बैठे कदमों तलें हजूर ॥ ३६

हम श्रीराजजीसे विछुड़कर इस ब्रह्माण्डमें इतनी दूर आ गए. किन्तु उनके द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानने हमें इस प्रकार जागृत किया कि हम उनके ही चरणोंमें बैठे हुए अनुभव कर रहे हैं.

हुक्में कै मता पोहोंचाया, बीच ऐसी जुदागी में ।

हकें न्यामत दे अघाए, कै हांसी करियां हम सें ॥ ३७

इस प्रकार वियोग प्रदान करने पर भी श्रीराजजीके आदेशने हमें परमधामकी अनेक सामग्रियोंका अनुभव करवाया है. श्रीराजजीने अपनी अमूल्य निधि प्रदान कर हमारी मनोकामनाएँ भी पूर्ण कीं एवं अनेक प्रकारसे हमारा उपहास भी किया.

अरस अजीम की कंकरी, उडावे चौदे तबक ।

तो तिन को है क्यों कहिए, जो देख ना सके हक ॥ ३८

परमधामके एक कण मात्रके समक्ष भी यह चौदह लोकोंयुक्त ब्रह्माण्ड अस्तित्वहीन हो जाता है. अतः उसे 'है' अर्थात् सत्य कैसे कहा जाए ? जो सत्यस्वरूप श्रीराजजीको देख ही नहीं सकता है.

जो हक को देखे ना उडे, सो दूजा कहिए क्यों कर ।
ए बातें अरस वाहेदत की, पाइए हक इलमें खबर ॥ ३९

श्रीराजजीके दर्शन करने पर जिसका अस्तित्व बना रहता हो उसे उनसे भिन्न कैसे कहा जाए ? ये सभी रहस्य परमधामके एकात्मभावके हैं. इसकी सुधि जागृतबुद्धिके (तारतम) ज्ञानसे ही होती है.

हकें इलम दिया अपना, सो आया इसक वखत ।
सो इसक न देवे बढ़ने, ऐसे किए हिरदे सखत ॥ ४०

श्रीराजजीने हमें अपना तारतम ज्ञान प्रदान किया है. जिसके द्वारा हम अपने अन्तःकरणमें प्रेमको अङ्गुरित कर सकें, किन्तु उनके आदेशसे हमारे हृदयको इतना कठोर बना दिया है कि उसमें प्रेमकी अभिवृद्धि ही नहीं हो रही है.

और जित आया हक इलम, अरस दिल कहा सोए ।
हक न आवें इसक बिना, और हक बिना इसक न होए ॥ ४१

जिन ब्रह्मात्माओंमें यह ब्रह्मज्ञान अवतरित हुआ है उनको ही धामहृदया कहा है. प्रेमके बिना श्रीराजजी उनके हृदयमें नहीं आ सकते हैं और श्रीराजजीके आए बिना प्रेम भी प्रकट नहीं हो सकता है.

अरस कहिए दिल तिन का, जित है हक सहूर ।
इलम इसक दोऊ हक के, दोऊ हक रोसनी नूर ॥ ४२

उन्हीं आत्माओंके हृदयको परमधाम कहना चाहिए जिनको तारतम ज्ञान प्राप्त हुआ है. वस्तुतः ज्ञान और प्रेम दोनों ही श्रीराजजीके तेजोमय प्रकाश स्वरूप अमूल्य निधियाँ हैं.

इसक इलम बारीकियां, दिल जाने अरस मोमन ।
जो जागी होए रुह हुकमें, ताए लजत आवे अरस तन ॥ ४३

इस प्रकार प्रेम और ज्ञानके गूढ़ रहस्यको ब्रह्मात्माएँ ही जान सकतीं हैं जिनका हृदय परमधाम है. जो ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके आदेशसे जागृत हो गई हैं उन्हींको पर-आत्माका सुख प्राप्त होता है.

जो जोरा करे इसक, तन मोमिन देवे उडाए ।
दिल सखती बिना अरस अजीमकी, इत लजत लै न जाए ॥ ४४

यदि प्रेमका प्रवाह प्रबल होने लग जाए तो ब्रह्मात्माएँ नश्वर शरीरको तत्काल त्याग सकती हैं किन्तु हृदयको कठोर बनाए बिना इस नश्वर जगतमें परमधामके सुखोंका अनुभव भी नहीं किया जा सकता.

इसक नूर जमाल बिना, और जरा न कछुए चाहे ।
इसक लजत ना सुख दुख, देवे वाहेदत बीच डुबाए ॥ ४५

प्रेमकी पराकाष्ठा यही है कि उसे परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य किसीकी भी कामना नहीं रहती है. क्योंकि प्रेमके आनन्दके समक्ष सुख और दुःख किसीका भी अस्तित्व नहीं रहता है. ऐसी प्रेमी आत्मा श्रीराजजीके एकात्मभावमें ही निमग्न रहती है.

ना तो सखत दिल मोमिन के, हक करें क्यों कर ।
पर अरस लजत बीच दुनी के, लिवाए न सखती बिगर ॥ ४६
अन्यथा श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके हृदयको इतना कठोर क्यों बना देते ? किन्तु हृदयको कठोर बनाए बिना इस नश्वर जगतमें परमधामके शाश्वत आनन्दकी अनुभूति नहीं हो सकती है.

एकै नजर मोमिन की, हक सुख दिया चाहें दोए ।
रुहें अरस सुख लेवे खेल में, और खेल सुख अरस में होए ॥ ४७
ब्रह्मात्माओंकी दृष्टि एक ही है कि उन्हें परमधामका सुख प्राप्त हो, किन्तु श्रीराजजी उन्हें दोनों प्रकारके सुख प्रदान करना चाहते हैं. इसलिए ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें भी परमधामके सुखोंका अनुभव करती हैं और दिव्य परमधाममें उनकी पर-आत्मा इस संसारके सुखोंका भी अनुभव करती हैं.

हकें दई जुदागी हमको, इसक बेवरे कों ।
बिना जुदागी बेवरा, पाइए ना अरस मों ॥ ४८
श्रीराजजीने हमें प्रेमका अनुभव करवानेके लिए ही यह वियोग दिया है. क्योंकि वियोगके बिना परमधाममें प्रेमका निरूपण नहीं हो सकता था.

होए न जुदागी अरस में, तो क्यों पाइए बेवरा इसक ।

ताथे दै नेक फरामोसी, बीच अरस के हक ॥ ४९

परमधाममें वियोग नहीं होता है इसलिए वहाँ पर प्रेमका निरूपण कैसे हो ?
इसलिए श्रीराजजीने परमधाममें ही हमारे हृदय पर भ्रमका लेशमात्र आवरण
डाल दिया.

हम खेल देखें बैठे अरस में, ए जो चौदे तबक ।

रुह हमारी इत है नहीं, लई परदे में हक ॥ ५०

हम परमधाममें बैठे-बैठे इन चौदह लोकोंका खेल देख रहीं हैं. हमारी पर-
आत्मा इस नश्वर जगतमें आई ही नहीं है. मात्र उसे श्रीराजजीने भ्रमके
आवरणकी लपेटमें ले लिया है.

फेर दिया इलम अपना, जासों फरामोसी उड जाए ।

खेल में मता सब अरस का, इलमें सब विध दई बताए ॥ ५१

फिर उन्होंने अपना ज्ञान प्रदान किया जिससे यह भ्रमकी नींद उड़ जाए. साथ
ही उनके ब्रह्मज्ञानने इस नश्वर जगतमें भी परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदाओंका
अनुभव करवाया.

जो रुह हमारी आवे खेल में, तो खेल रहे क्यों कर ।

याको उडावे अरस कंकरी, झूठ क्यों रहे रुहों नजर ॥ ५२

यदि हमारी पर-आत्मा इस नश्वर जगतमें आ जाती तो जगतका अस्तित्व
ही कैसे टिका रहता ? क्योंकि परमधामका मात्र एक कण ही इस जगतको
अस्तित्वहीन कर देता है. इसलिए ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिमें यह नश्वर जगत कैसे
टिका रह सकता ?

देखत है दिल खेल को, लिए अरस रुह हुजत ।

फुरमान आया इनों पर, और इलम आया न्यामत ॥ ५३

वस्तुतः पर आत्माकी सुरता ही ब्रह्मात्माका अधिकार लेकर यह नश्वर खेल
देख रही है. इनके लिए ही कुरानका सन्देश आया है और इन्हींको जागृत
करनेके लिए तारतम ज्ञानके साथ-साथ परमधामकी अपार सम्पदाएँ प्रकट
हुई हैं.

या विध करी जो साहेब ने, हम हुए दोऊ के दरम्यान ।

सुध अरस नासूत की, दोऊ हम को देवें सुभान ॥ ५४

श्रीराजजीने ऐसा खेल दिखाया कि हम ब्रह्मात्माएँ दोनों ओर (परमधाममें भी एवं नश्वर जगतमें भी) होनेका अनुभव कर रहीं हैं। इस प्रकार श्रीराजजी हमें परमधाम तथा नश्वर जगत दोनोंकी सुधि प्रदान कर रहे हैं।

हुकम तन बीच नासूत, हम फरामोस अरस तन ।

नासूत देखें हम नजरों, अरसें पोहोंचे ना दृष्ट मन ॥ ५५

श्रीराजजीके आदेशके कारण हमारी सुरता द्वारा धारण किए हुए शरीर इस नश्वर जगतमें हैं एवं परमधाममें हमारी पर-आत्माके हृदय पर भ्रमका आवरण डाला हुआ है। हमारी पर आत्मा अपनी दृष्टिसे नश्वर जगतको देख रही है किन्तु हमारे नश्वर शरीरकी दृष्टि तथा मन परमधाम तक नहीं पहुँच सकते।

बोले हुकम दावा ले रुहन, बीच तन नासूत ।

ले सब सुध अरस इलमें, देत दुनी में लजत लाहूत ॥ ५६

श्रीराजजीका आदेश ही हमारे नश्वर शरीरमें ब्रह्मात्माका अधिकार लेकर बोल रहा है। इस प्रकार श्रीराजजी इस नश्वर जगतमें भी अपने ब्रह्मज्ञानके द्वारा परमधामकी सुधि प्रदान कर वहाँके शाश्वत सुखोंका अनुभव करवा रहे हैं।

खिलवत निसबत वाहेदत, जेती अरसों हकीकत ।

ए लजत हुकम सिर लेवहीं, अरस रुहें सिर ले हुजत ॥ ५७

श्रीराजजीके आदेशके कारण ही ब्रह्मात्माओंकी सुरताएँ ब्रह्मात्मा होनेका अधिकार लेकर इस नश्वर जगतमें भी श्रीराजजीकी अङ्गना होनेका, मूलमिलावेका तथा एकात्मभावका यथार्थ सुख अनुभव कर रहीं हैं।

यों हुकम नूरजमाल का, अरस सुख देत रुहों इत ।

चुन चुन न्यामत हक की, रुहों हुकम पोहोंचावत ॥ ५८

इस प्रकार श्रीराजजीका आदेश ब्रह्मात्माओंको इस नश्वर जगतमें भी परमधामके अपार सुखोंका अनुभव करवाता है। यह तो परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदाओंको चुन-चुनकर ब्रह्मात्माओंके पास पहुँचाता है।

कै सुख ले हक के खेल में, फेर हुकम पोहोंचावे खिलवत ।
कै अनहोंनी कर सुख दिए, हुकम जान हक निसबत ॥ ५९

इस नश्वर जगतमें भी श्रीराजजीके अपार सुखोंका अनुभव करवा कर उनका यह आदेश ब्रह्मात्माओंको मूलमिलावामें जागृत करवाता है। श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको अपनी अङ्गना समझकर अपने आदेशके द्वारा इस नश्वर जगतमें भी अनेक असम्भव कार्य सम्पन्न कर अपार सुख प्रदान किए हैं।

कै विध के सुख हुकमें, दोऊ तरफों आडा पट दे ।
अरस दुनी बीच रुहों को, दिए सुख दोऊ तरफों के ॥ ६०

श्रीराजजीके आदेशने ब्रह्मात्माओंके हृदयमें भ्रमका आवरण डालकर उन्हें परमधाम तथा इस नश्वर जगत दोनों ओरके अपार सुख प्रदान किए हैं।

ए झूठ न आवे अरस में, ना कछू रहे रुहों नजर ।
ताथें दोऊ काम इन विध, हकें किए हिकमत कर ॥ ६१

वस्तुतः इस मिथ्या जगतकी कोई भी सामग्री दिव्य परमधाममें पहुँच नहीं सकती और ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिमें भी यह नश्वर जगत नहीं रह सकता। इसलिए श्रीराजजीने बड़ी युक्तिपूर्वक ये दोनों कार्य किए हैं अर्थात् परमधाममें स्वप्नवत् जगतका अनुभव करवाया एवं ब्रह्मात्माओंको भी इस नश्वर जगतमें भ्रमित होनेका अनुभव करवाया।

जेती अरवाहें अरस की, हक सेहेरग से नजीक तिन ।
दे कुंजी अरस पट खोलिया, हादिएँ किए सब रोसन ॥ ६२

परमधामकी जितनी आत्माएँ होंगी उनसे श्रीराजजी उनके प्राणनलीसे भी अधिक निकट हैं। श्रीश्यामाजीने सद्गुरुके रूपमें प्रकट होकर तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामके पट खोलकर इस रहस्यकी पहचान करवाई है।

इलम लुदंनी पाए के, अरस रुहें हुई बेसक ।
जगाए खडे किए अरस में, बीच खिलवत खासी हक ॥ ६३

अब परमधामकी आत्माएँ तारतम ज्ञान प्राप्त कर सन्देह रहित हो गई हैं। श्रीराजजीने अपने दिव्य ज्ञानके द्वारा इन्हें परमधाम मूलमिलावेमें जागृत कर दिया है।

या तो खड़ी रहे रूह खिलवतें, या तो देवे और तवाफ ।
हौज जोए या अरस में, तूं इन विधि हो रहे साफ ॥ ६४
इसलिए हे आत्मा ! अब तू या तो परमधाम मूल मिलावेके चिन्तनमें मान हो जा या अहर्निश परमधामकी परिक्रिमा करने लग जा. हौज कौसर, यमुनाजी तथा परमधामके विभिन्न स्थानोंका चिन्तन कर, जिससे तू पवित्र हो जाएगी.

पाक पानी से न होइए, ना कोई और उपाए ।
होए पाक मदत तौहीद की, हकें लिख भेज्या बनाए ॥ ६५
जलादिके सेवन मात्रसे पवित्र नहीं हो सकते हैं और उसके अतिरिक्त इस जगतमें पवित्र होनेका अन्य कोई उपाय भी नहीं हैं. वस्तुतः अद्वैत स्वरूप श्रीराजजीकी कृपासे ही पवित्र हो सकते हैं, इस प्रकार श्रीराजजीने ही ऐसा सन्देश भिजवाया है.

फेर फेर हक अंग देखिए, ज्यों याद आवे निसबत ।
है अनभव तो एक अंग का, जो हमेसा वाहेदत ॥ ६६
अब वारंवार श्रीराजजीके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका दर्शन करो जिससे उनकी अङ्गना होनेका स्मरण हो जाए. हम ब्रह्मात्माओंको ही श्रीराजजीकी अङ्गना होनेका अनुभव है क्योंकि हम सदा सर्वदा उनके एकात्मभावमें हैं.

ताथें तूं चेत रूह अरस की, ग्रहे अपने हक के अंग ।
रहो रात दिन सोहोबत में, हक खिलवत सेवा संग ॥ ६७
इसलिए हे मेरी परमधामकी आत्मा ! तू सावचेत होकर श्रीराजजीके स्वरूपको अपने हृदयमें धारण कर. अहर्निश उनकी सेवा करते हुए उन्हींके एकान्त साहचर्य्यका अनुभव कर.

जो खावंद अरस अजीम का, ए हक नूर जमाल ।
आए तले झरोखे झांकत, दीदार को नूर जलाल ॥ ६८
ये अक्षरातीत पूर्णब्रह्म परमात्मा सर्वश्रेष्ठ परमधामके स्वामी हैं. उनके दर्शनके लिए स्वयं अक्षरब्रह्म भी रङ्गमहलके सम्मुख आते हैं और चाँदनी चौकमें खड़े होकर झरोखेकी ओर दृष्टिपात करते हैं.

जाके पलथें पैदा फना, कै दुनी जिमी आसमान ।

सो आवत दायम दीदार को, ऐसा खावंद नूर मकान ॥ ६९

जिन अक्षरब्रह्मके एक पल मात्रमें ऐसे नश्वर जगत करोड़ों बार बनकर मिट जाते हैं, ऐसे अक्षरब्रह्म अपने धनीके दर्शनके लिए अक्षरधामसे प्रतिदिन आया करते हैं.

तिन चाह्या दीदार रूहन का, जो रूहें बीच बड़ी दरगाह ।

ए मरातबा मोमिनों, जिन वास्ते हुकम हुआ ॥ ७०

ऐसे समर्थ अक्षरब्रह्मने भी परमधाम रङ्गमहलमें रहनेवाली ब्रह्मात्माओंके दर्शनकी अभिलाषा की है. यह ब्रह्मात्माओंका ही महत्व है कि उनके लिए स्वयं श्रीराजजीने अपने आदेशके द्वारा इस नश्वर खेलकी रचना करवाई है.

देख देख मैं देखिया, ए सब करत हक हुकम ।

ना तो अरस दिल एता मता लेयके, छिन रहें न बिना कदम ॥ ७१

मैंने वारंवार यही देखा कि सर्वत्र श्रीराजजीका आदेश ही कार्य कर रहा है. अन्यथा इतनी अपार सम्पदाको हृदयङ्गम करने पर धामहृदया ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके चरणोंके बिना क्षणमात्रके लिए भी नहीं रह सकतीं.

हकें अरस लिख्या मेरे दिल को, क्यों रहे रूह सुन सुकन ।

एक दम ना रहे बिना कदम, पर रूहों ठौर बैठा हक इजन ॥ ७२

श्रीराजजीने मेरे हृदयको परमधाम कहा है. इन वचनोंको सुनकर मेरी आत्मा उनके चरणोंके बिना एक क्षण भी कैसे रह सकती है ? परन्तु आत्माके स्थान पर श्रीराजजीका आदेश कार्य कर रहा है.

हुकम कहे सो हुकमें, अरस बानी बोले हुकम ।

रूहों दिल हुकम क्यों रहे सके, ए तो बैठी तलें कमद ॥ ७३

अब तो श्रीराजजीका आदेश ही ब्रह्मात्माओंके नाम धारण करनेवाले आदेशको परमधामकी बात कह रहा है. वस्तुतः ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीका आदेश कैसे रह सकता है ? ब्रह्मात्माएँ तो स्वयं श्रीराजजीके चरणोंमें बैठी हुई हैं.

खेल तन में हुकम रहे ना सके, हुजत लिए रूहन ।
हुकम हमारे खसम का, क्यों देवे दाग मोमन ॥ ७४

श्रीराजजीका आदेश इस नश्वर शरीरमें भी ब्रह्मात्माओंका अधिकार लेकर
नहीं रह सकता है। क्योंकि अपने प्रियतम धनीका यह आदेश ब्रह्मात्माओंको
कैसे लाञ्छन (दोष) लगा सकता है ?

पर हक अरस लजत तो पाइए, बैठे मांग्या खेल में जे ।
सो हुकमें मांग्या दे हुकम, हकें करी वास्ते हांसी के ॥ ७५

किन्तु परमधामका सुख तभी प्राप्त हो सकता है जब हम इस खेलमें भी
उसकी चाहना करते हैं। अब श्रीराजजीका आदेश ही हमारे हृदयमें बैठकर
यह माँग कर रहा है और श्रीराजजी ही हमारे उपहासके लिए अपने आदेशके
द्वारा हमारी मनोकामनाओंको पूर्ण कर रहे हैं।

ए बातें होसी सब अरस में, हंस हंस पड़सी सब ।
ए हुकमें करी कै हिकमतें, सब वास्ते हमारे रब ॥ ७६

जब इस प्रकारकी सभी बातें परमधाममें होंगी तब हम सभी ब्रह्मात्माएँ हँस-
हँसकर गिरने लगेंगी। श्री राजजीके आदेशने हम ब्रह्मात्माओंके लिए इस
प्रकार अनेक युक्तियाँ की हैं।

हक मुख हुकमें देखहीं, हुकम देखावे खेल ।
हुकम देवे सुख लुदनी, हुकम करावे इसक केल ॥ ७७

हम श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही इस नश्वर खेलमें उनके मुखारविन्दके
दर्शन कर पाएँगी क्योंकि उनका आदेश ही यह खेल दिखा रहा है। अब
यही आदेश हमें जागृत बुद्धिका ज्ञान प्रदान कर परमधामके सुखोंका अनुभव
करवाता है और यही हमारी कामनाओंके अनुरूप श्रीराजजीकी प्रेमसुधाका
पान करवाता है।

हुकमें जोस गलवा करे, हुकमें जोर बढे इसक ।
हुकमें इलम रखे सुख को, हुकम प्याले पिलावे माफक ॥ ७८

श्रीराजजीके आदेशसे ही हममें जोशकी अभिवृद्धि होती है और इसी

आदेशके द्वारा हमारे प्रेमकी शक्ति बढ़ती है. इसी आदेशने हमें सुख प्रदान करनेके लिए तारतम ज्ञान प्रदान किया है. अब यही आदेश हमें अपनी भावनाओंके अनुरूप प्रेमका प्याला पिला रहा है.

हुकम बेहोस ना करे, हुकम जरा जरा दे लजत ।

हुकम पनाह करे सब रुहन, हुकमें जानी जात निसबत ॥ ७९

श्रीराजजीका आदेश हमें मूर्च्छित (बेहोश) होने नहीं देता अपितु शनैः-शनैः आनन्दका अनुभव करवाता है. यही आदेश आत्माओंकी रक्षा करता है. इसीके द्वारा श्रीराजजीके साथके सम्बन्धकी पहचान होती है.

प्याला हुकम पिलावहीं, करे हुकम रखोपा ताए ।

ना तो इन प्याले की बोएसे, तबहीं अरवा उड जाए ॥ ८०

श्रीराजजीका आदेश ही ब्रह्मात्माओंको प्रेमके प्याले पिलाता है और उनको स्थिर रखकर उनकी रक्षा भी करता है. अन्यथा इन प्यालोंकी सुगन्धि मात्रसे ही आत्मा नश्वर शरीरको छोड़ सकती है.

ए प्याला कबूं किन ना पिया, हम रुहें आइयां तीन बेर ।

ए प्याले पेहेले तो पिए, जो हम थे बीच अंधेर ॥ ८१

आज तक इस प्रेमके प्यालेको किसीने भी पान नहीं किया है. हम ब्रह्मात्माएँ ही इस नश्वर जगतके खेलमें तीन बार अवतरित हुई हैं. इससे पूर्व हमने भी व्रज तथा रासमें प्रेमके प्यालोंका तभी पान किया जब हमें परमधामकी सुधि ही नहीं थी.

ए प्याले पिए जाय क्यों जागते, तन तबहीं जाए चिराए ।

बोए भी ना सेहे सके, तो प्याला क्यों पिया जाए ॥ ८२

अब जागृत अवस्थामें प्रेमके इन प्यालोंका पान कैसे किया जाए ? यह तन तत्काल फट जाना चाहता है. अब तो प्रेमकी सुगन्धिका भी सहन नहीं हो सकता तो उसका प्याला कैसे पिया जा सकेगा ?

हुकम जो प्याला देवहीं, सो संजमें संजमें पिलाए ।

पूरी मस्ती न हुकम देवहीं, जाने जिन कांच सीसा फूट जाए ॥ ८३

अब तो श्री राजजीका आदेश ही प्याला भर-भरकर संयमपूर्वक प्रेमसुधाका

पान करवाता है. यह आदेश आत्माओंको पूरी मस्ती भी प्रदान नहीं करता है. क्योंकि यह जानता है कि काचके पात्रकी भाँति उनका शरीर टूट न जाए.

ना तो ए प्याला पीय के, ए कच्चा वजूद न रख्या किन ।

पर हुकम राखत जोरावरी, प्याला पिलावे रखे जतन ॥ ८४

अन्यथा प्रेमका प्याला पीकर इस नश्वर शरीरको कोई भी धारण नहीं कर सका. किन्तु श्रीराजजीका आदेश ही इसे यत्पूर्वक रखकर प्रेमका प्याला पिलाता रहता है.

हुकम मेहर बारीकियां, ए मैं कहूं विध किन ।

नजर हमारी एक विध की, सब विध सुध ना रुहन ॥ ८५

इस प्रकार मैं श्रीराजजीके आदेश तथा उनकी कृपाके सूक्ष्म रहस्योंका वर्णन कैसे करूँ ? क्योंकि हमारी दृष्टि श्रीराजजीके प्रेममें ही टिकी रहती है इसलिए हम ब्रह्मात्माओंको सब प्रकारकी सुधि नहीं रहती है.

हुकम देवे लजत, प्याला जेता पिया जाए ।

हर रुहों जतन करे कै विध, जाने जिन प्याला देवे गिराए ॥ ८६

ब्रह्मात्माओंसे प्रेमसुधाका पान जितना किया जाता है उतना ही सुख उन्हें श्रीराजजीका आदेश प्रदान करता है. यह आदेश सभी ब्रह्मात्माओंका यत्पूर्वक संरक्षण करता है ताकि प्रेमसुधाके पात्रको वे हाथसे न गिराएँ.

जिन जेता हजम होवहीं, ज्यों होए नहीं बेहोस ।

तबहीं फूटे कूपा कांच का, पाव प्याले के जोस ॥ ८७

जिन ब्रह्मात्माओंको जितना प्रेम सुपाच्य हो सकता है यह आदेश उनको उतना ही पान करवाता है जिससे ब्रह्मात्माएँ मूर्च्छित न हो जाएँ. अन्यथा प्रेमपात्रके चतुर्थ अंश मात्रके अनुपानसे ही काचके पात्रकी भाँति यह नश्वर शरीर तत्काल टूट सकता है.

सही जाए न बोए जिन की, सो क्यों सकिए मुख लगाए ।

सो पैदरपै क्यों पी सके, पर हुकम करत पनाए ॥ ८८

जिस प्रेमकी सुगन्धि भी सही नहीं जा सकती तो उससे परिपूर्ण पात्रको

मुखसे कैसे लगाया जा सकता है ? ब्रह्मात्माएँ ऐसे प्रेमका निरन्तर पान कैसे कर सकती हैं ? किन्तु श्रीराजजीका आदेश ही ब्रह्मात्माओंको अपनी शरणमें रखकर यह सब करवाता है.

ए अंग लगे प्याला जिनके, सब खलड़ी जाए उतर ।

ना तो ए प्याला हजम क्यों होवहीं, पर हक राखत पनाह नजर ॥ ८९
यह प्रेमका पात्र ब्रह्मात्माओंके अङ्गको भी स्पर्श कर जाता है तो भी उनके शरीरसे तत्काल चमड़ी उतर सकती है. इसलिए प्रेमसुधाका यह प्याला ब्रह्मात्माओंसे कैसे पच सकता है ? परन्तु श्रीराजजी ही इनको अपनी कृपादृष्टिकी शरणमें रखते हैं.

ए प्याला कोई न पी सके, जुबां लगते मुरदा होए ।

पर हक राखत हैं जीव को, ना तो याकी खेंच काढे खुसबोए ॥ ९०
श्रीराजजीकी इस प्रेमसुधाका पान कोई भी नहीं कर सकता है. जिह्वासे मात्र स्पर्श होने पर ही यह शरीर निष्ठाण हो जाता है. किन्तु श्रीराजजी ही अपने आदेशके द्वारा इस जीवको शरीरमें जीवित रखते हैं. अन्यथा प्रेमकी सुगन्धि मात्र ही प्राणको खींचकर निकाल सकती है.

प्याले पर प्याले पिलावहीं, ताकी निस दिन रहे खुमार ।

देवे तवाफ निस दिन, हुकम मेहर को नहीं सुमार ॥ ९१
श्रीराजजी ही ब्रह्मात्माओंको प्याले भर-भरकर प्रेमसुधाका पान करवाते हैं जिससे उनमें अहर्निश प्रेमकी मस्ती बनी रहे और वे रात-दिन प्रदक्षिणा करतीं रहें. इस प्रकार श्रीराजजीके आदेश तथा कृपाका कोई पारावार नहीं है.

बडा अचरज इन हुकम का, मुरदे राखत जिवाए ।

मौत सरबत निस दिन पीवहीं, सो मुरदे रखे क्यों जाए ॥ ९२
श्रीराजजीका आदेश अत्यन्त आश्वर्यजनक है क्योंकि यह निष्ठाण शरीरको भी जीवित रख सकता है. जो ब्रह्मात्माएँ मृत्युको भी पेय समझकर रात-दिन उसका पान करती हैं उनके निष्ठाण शरीरको कैसे जीवित रखा जा सकता है.

हुकम मुरदों बोलावत, और ऐसी देत अकल ।
करत नजीकी हक के, मुरदे कहावें अरस दिल ॥ १३

श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही ब्रह्मात्माओंके ये निष्प्राण शरीर भी चैतन्यमयी
भाषा बोलते हैं। श्रीराजजीके आदेशने ही उनमें इस प्रकारकी बुद्धि दी है.
वे श्रीराजजीकी निकटताका अनुभव करती हैं। इसीलिए ऐसे चैतन्य विहीन
शरीरके हृदयको भी परमधाम कहा गया है।

हुकम लाख विधों जतन करे, हर रुहों ऊपर सबन ।
हुकम जतन तो जानिए, जो याद आवे अरस वतन ॥ १४

श्रीराजजीका आदेश लाखों प्रकारसे प्रत्येक ब्रह्मात्माकी रक्षा करता है।
ब्रह्मात्माएँ उसके प्रयत्नोंको तभी जान सकती हैं जब उन्हें अखण्ड
परमधामका स्मरण हो जाता है।

जो पेहले आप मुरदे हुए, तो दुनियां करी मुरदार ।
हक तरफ हुए जीवते, उड़ पोहँचे नूर के पार ॥ १५
जिन ब्रह्मात्माओंने सर्वप्रथम मृत्युका वरण कर लिया अर्थात् स्वप्नवत्
जगतकी सम्पूर्ण कामनाओंको छोड़ दिया है उन्होंने ही इस नश्वर जगतको
मृततुल्य समझा है। ऐसी ब्रह्मात्माएँ ही जीवित होकर श्रीराजजीकी ओर
उन्मुख हुई हैं और उनकी सुरता उड़ान भर कर अक्षरसे परे अक्षरातीत धाम
तक पहुँची है।

दुनियां इसक न ईमान, क्यों उडा जाए बिना पर ।
तो दुनी कही जिमी नासूती, रुहें आसमानी जानवर ॥ १६
इस नश्वर जगतके जीवोंके पास प्रेम एवं श्रद्धा रूपी पञ्च नहीं हैं। इसलिए
पञ्चके बिना वे कैसे उड़ान भर सकते हैं? इसीलिए इन जीवोंको नश्वर
जगतके कहा गया है, जबकि ब्रह्मात्माओंको परमधाम तक उड़ान भरने वाले
पक्षियोंकी संज्ञा दी गई है।

ए दुनियां जो खेल की, छोड़ सुरैया आगे ना चलत ।
सो कायम फना क्या जानहीं, जाकी पैदास कही जुलमत ॥ १७
नश्वर जगतके जीव ज्योतिस्वरूपको छोड़कर उससे आगे नहीं जा सकते हैं।

इसलिए वे अखण्ड तथा नश्वरताके रहस्यको कैसे समझ सकते हैं ? क्योंकि उनकी उत्पत्ति ही निराकारसे हुई है.

महामत कहे ऐ मोमिनों, बका हासिल अरस रूहन ।
कह्या दिल जिनों का अरस बका, ऐ मोमिन असल अरस में तन ॥ १८
महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! परमधामकी आत्माओंको ही दिव्य परमधाम प्राप्त है. इसीलिए इनके हृदयको परमधाम कहा है, क्योंकि इनके मूल तन (पर-आत्मा) परमधाममें ही हैं.

प्रकरण २४ चौपाई १८५०

मोमिनों की सरीयत हकीकत मारफत इसक रबद का प्रकरण
इसक रबद खिलवत में, हुआ हक हादी रूहों सों ।
सबों ज्यादा इसक कह्या अपना, तो तिलसम देखाया रूहों को ॥ १
परमधाम मूलमिलावामें श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके मध्य परस्पर प्रेमका सम्बाद हुआ. उस समय सभीने अपने-अपने प्रेमको अधिक कहा. इसीलिए श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको यह मायामय जगतका खेल दिखाया है.

तिन फरेब में रल गैयां, जित पाइए ना इसक हक ।
कहे हक मोहे तब पाओगे, जब ल्योगे मेरा इसक ॥ २
ब्रह्मात्माएँ इस नश्वर जगतमें आकर इस प्रकार निमग्न हुई हैं जहाँ श्रीराजजीका शाश्वत प्रेम नितान्त प्राप्त नहीं है. श्रीराजजीने सचेत करते हुए ब्रह्मात्माओंको यह कहा था कि तुम सभी मुझे तभी प्राप्त करोगी जब हृदयमें मेरा प्रेम धारण करोगी.

यों हकें छिपाइयां खेल में, दे इलम करी खबरदार ।
रबद किया याही वास्ते, ल्याओ प्यार करो दीदार ॥ ३
इस प्रकार श्रीराजजीने ही ब्रह्मात्माओंको नश्वर खेलमें भेजकर उसमें भूला दिया एवं जागृत बुद्धिका ज्ञान देकर उन्हें सचेत भी किया. जिसके लिए हम ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजीसे सम्बाद किया था अब उनके प्रेमको प्राप्त करो एवं उनके दर्शन करो.

मोमिन हक को जानत, नजीक बैठे हैं इत ।

हक कदम हमारे हाथ में, पर हम नजरों ना देखत ॥ ४

ब्रह्मात्माएँ सदैव यही जानती हैं कि श्रीराजजी हमारे निकट ही विराजमान हैं. हमारे हाथोंके द्वारा उनके चरणकमल ग्रहण किए हुए हैं तथापि हम अपनी दृष्टिसे उनके दर्शन नहीं कर सकती हैं.

ए तेहेकीक किया हक इलमें, इनमें जरा न सक ।

यों नजीक जान पेहेचान के, हम बोलत ना साथ हक ॥ ५

श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा यह निश्चय हो गया है एवं इसमें किसी भी प्रकारका सन्देह नहीं है कि हम उनके निकट ही बैठी हैं. उनकी निकटताको पहचानते हुए भी हमारी पर-आत्मा श्रीराजजीके साथ वार्तालाप नहीं कर सकती.

ए फरामोसी फरेबी, हम जान के भूलत ।

हक छिपे हमसों हांसीय को, हाए हाए ए भूल दिल में भी न आवत ॥ ६

यह भ्रमका आवरण मिथ्या है ऐसा जानते हुए भी हम मायामें भूलीं हुई हैं. श्रीराजजी हमारे उपहासके लिए ही हमसे छिपकर बैठे हुए हैं. हाय ! अभी तक हमें अपनी भूलकी सुधि नहीं हुई है.

बैठे मासूक जाहेर, पर दिल ना लगे इत ।

मासूक मुख देखन को, हाए हाए नैना भी ना तरसत ॥ ७

वस्तुतः श्रीराजजी मूलमिलावामें हमारे सम्मुख विराजमान हैं. परन्तु हमारा हृदय उनके चरणोंकी ओर आकृष्ट नहीं है. हाय ! अपने प्रियतमके मुखारविन्दके दर्शनोंके लिए हमारे नेत्र भी नहीं तरसते हैं.

सुनने कान ना दौड़त, मासूक मुख की बात ।

इसक न जानों कहां गया, जो था मासूक सों दिन रात ॥ ८

यह बड़ी विडम्बना है कि अपने प्रियतम धनीके मुखारविन्दकी मधुरवाणी सुननेके लिए हमारे कान भी दौड़ नहीं लगा रहे हैं. न जाने वह प्रेम अब कहाँ चला गया है जिसमें हम रात दिन अपने प्रियतम धनीके साथ निमग्न रहतीं थीं.

रुह अंग ना दौड़े मिलन को, ऐसा अरस खावंद मासूक ।

मेहेबूब जुदागी जानके, अंग होत नहीं टूक टूक ॥ ९

अब ऐसी स्थिति हो गई है कि अपने प्रियतम धनीसे मिलनेके लिए हमारी आत्माके अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी उल्कण्ठित नहीं हो रहे हैं. अपने प्रियतम धनीके वियोगको जानकर भी हमारे नश्वर शरीरके ये अङ्ग-प्रत्यङ्ग खण्ठित नहीं हो रहे हैं.

जो याद आवे ए कदम की, तो तबहीं जावे उड देह ।

कोई बंध पड़ा फरेब का, आवे जरा न याद सनेह ॥ १०

यदि श्रीराजजीके चरणकमलोंका स्मरण हो जाए तो उसी क्षण यह शरीर निष्प्राण हो जाना चाहिए. किन्तु मायाका कोई ऐसा मिथ्या बन्धन आ गया है जिसके कारण श्रीराजजीके शाश्वत प्रेमका स्मरण भी नहीं हो रहा है.

इसक हमारा कहाँ गया, जो दिल बीच था असल ।

तिन दिलें सहूर क्यों छेड़िया, जो विरहा न सहेता एक पल ॥ ११

हमारा वह प्रेम कहाँ चला गया है जो मूल रूपसे हमारे हृदयमें ही रहता था. जो हृदय पल मात्रके लिए भी श्रीराजजीका वियोग सहन नहीं कर सकता था उसने श्रीराजजीके प्रति विचार करना भी क्यों छोड़ दिया है ?

जो दिल से ए सहूर करें, तो क्यों रहें मिले बिगर ।

अरस बेसकी सुन के, अजूँ क्यों रहें नींद पकर ॥ १२

यदि हृदयपूर्वक विचार करें तो श्रीराजजीसे मिले बिना कैसे रह सकते हैं ? परमधामके सन्देह निवारक तारतम ज्ञानको सुनने पर भी अभी तक यह आत्मा निद्राको पकड़कर क्यों अचेतन हो रही है.

बातें सबे सुपन की, करें जागे पीछे सब कोए ।

पर जागे की बातें सबे, सुपने में कबूँ न होए ॥ १३

जागृत होनेके पश्चात् सभी लोग स्वप्नकी बातें किया करते हैं. परन्तु जागृत अवस्थाकी सभी बातें स्वप्नमें कभी भी नहीं होती हैं.

सो जरे जरे जागृत की, सब बातें होत बेसक ।
नींद रेहेत अचरज सों, आए दिल में अरस मुतलक ॥ १४

किन्तु अब तो निश्चय ही जागृत अवस्थाकी एक-एक बात इस स्वप्नमें हो रही है. किन्तु यह बड़ी विडम्बना है कि जब स्वयं श्रीराजजी हमारे हृदयमें आकर विराजमान हो गए हैं तब भी यह अज्ञानता कैसे रह रही है ?

सो कराई मासूकें हमपें, सब अरस बातें सुपने ।
सब गुजरी जो हक हादी रुहों, सो सब करत हम आप में ॥ १५
श्रीराजजीने ही हमसे परमधामकी सम्पूर्ण बातें स्वप्नवत् जगतमें व्यक्त करवाई हैं. जिससे हम नश्वर जगतमें बैठकर श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके मध्य हुए वार्तालापकी चर्चा परस्पर कर रहे हैं.

हुआ जाती सुमरन जिनको, अरस अजीम जैसा सुख ।
निसबत बका नूर जमाल, अजूँ क्यों पकड रहे देह दुख ॥ १६
जिन ब्रह्मात्माओंको अपना जातिस्मरण हो गया है एवं परमधामके अखण्ड सुखोंका अनुभव हो गया है, श्रीराजजीकी ऐसी अङ्गनाएँ अभी तक नश्वर देहके दुःखोंकी ओर क्यों लगी हुई हैं ?

ज्यों जाहेर खडे देखिए, त्यों देखिए इन इलम ।
यों लाड लजत सुख देवहीं, बैठाए अपने तलें कदम ॥ १७
जिस प्रकार जागृत अवस्थामें परमधामके सम्पूर्ण दृश्योंका दर्शन करते थे, उन्हीं दृश्योंको अब तारतम ज्ञानके द्वारा देखनेका प्रयत्न करो. इस प्रकार श्रीराजजी अपने चरणोंमें बैठाकर ब्रह्मात्माओंको अपने प्रेम एवं दुलारके साथ परमधामके सुखोंका अनुभव करवा रहे हैं.

सुपन त्यों का त्यों खडा, लिए नींद वजूद ।
अरस मता सब देख्या बका, देह झूठी इन नाबूद ॥ १८
श्रीराजजीने हमारे स्वप्नको भी चालु रखा है जिससे हमारी सुरताने स्वप्नका शरीर धारण किया है. उसने इसी नश्वर देहके द्वारा अखण्ड परमधामकी सम्पूर्ण सम्पदाओंके दर्शन किए हैं.

जब सुपन से जागिए, तब नींद सबे उड़ जात ।
सो जागे में सक ना रही, करें माहें माहें सुपन बात ॥ १९

जब हम स्वप्नसे जागृत हो जाएँगी तब हमारी अज्ञानरूपी निद्रा भी उड़ जाएगी. अब हमारी पर-आत्माके जागृत होनेमें भी कोई सन्देह नहीं है. वे जागृत होकर परस्पर स्वप्नकी बातें करने लगेंगी.

ऐसा किया हकें सुपन में, जानों जागे में सक नाहें ।
ऐसी हुई दिल रोसनी, फेर बोलत सुपने माहें ॥ २०

श्रीराजजीने इस स्वप्नवत् जगतमें भी तारतम ज्ञानके द्वारा हृदयको इस प्रकार आलोकित कर दिया कि अब जागृत होनेमें लेश मात्र भी कोई सन्देह नहीं है. अब हमारा हृदय इस प्रकार प्रकाशित हुआ है कि हम इस स्वप्नवत् जगतमें भी परमधामकी बातें करतीं हैं.

जानों सुपने नींद उड़ गई, मुरदे हुए वजूद ।
हकें हक अरस देखाइया, सुपन हुआ नाबूद ॥ २१
मानों, अब स्वप्नकी नींद समाप्त हो गई है और हमारे नश्वर तन भी निष्ठाण हो गए हैं. स्वयं श्रीराजजीने अखण्ड परमधामके दर्शन करवाए जिसके कारण हमारा स्वप्न अस्तित्वहीन हो गया है.

फेर सुपन तरफ जो देखिए, तो मुरदे खडे बोलत ।
बातें करें अकल में, ऐसा हुकमें देखाया खेल इत ॥ २२
जब पुनः स्वप्नकी ओर दृष्टिपात करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि ये निष्ठाण शरीर खड़े होकर बुद्धिपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं. श्रीराजजीके आदेशके द्वारा हमने यहाँ पर ऐसा कौतुकपूर्ण खेल देखा है.

कबूं कोई न बोलिया, बका बातें हक मारफत ।
दे मुरदों को इलम अपना, सो बातें हुकम बोलावत ॥ २३
नश्वर जगतमें आज तक कोई भी दिव्य परमधामकी बातें स्पष्टरूपसे नहीं कर सका है. ऐसेमें श्रीराजजीका आदेश इस निष्ठाण शरीरको भी अखण्ड ज्ञान प्रदान कर इससे परमधामकी बातें करवाता है.

हुए वजूद नींद के अरस में, सो नींद दई उड़ाए ।
दे जागृत बातें दिल में, दिल अरसै किया बनाए ॥ २४

पर-आत्माने परमधाममें रहते हुए अपनी सुरताके द्वारा स्वप्नके शरीर धारण
किए हैं. अब तारतम ज्ञानके द्वारा अज्ञानरूपी नींद उड़ा दी गई है. श्रीराजजीने
इस प्रकार हृदयमें जागृति प्रदान कर हमारे हृदयको ही परमधाम बना दिया.

असल मुरदा वजूद, भी हक इलमें दिया मार ।
जगाए दिए बीच अरस के, बातें मुरदा करे समार ॥ २५

श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा हमें यह ज्ञात हुआ कि उनके
आदेशने हमारी पर-आत्माके हृदय पर भ्रमका आवरण डालकर उसे अचेतन
बनाया और उसकी सुरताको इस नश्वर जगतमें जागृत बुद्धि प्रदान कर जागृत
कर दिया एवं स्वप्नवत् शरीरके द्वारा परमधामकी चर्चा करवाई.

यों कै बातें हांसीय को, मासूक करत हम पर ।
वास्ते रबद इसक के, ए हकें बनाई यों कर ॥ २६

इस प्रकार हम ब्रह्मात्माओंका उपहास करनेके लिए श्रीराजजीने इस प्रकारकी
अनेक स्थिति उत्पन्न करवाई. प्रेम सम्वादके कारण ही उन्होंने इस प्रकारकी
स्थिति उत्पन्न की है.

अब जो हिंमत हक देवहीं, तो उठ मिलिए हक सों धाए ।
सब रुहें हक सहूर करें, तो जामें तबहीं देवें उडाए ॥ २७

अब यदि वे हमें साहस प्रदान करेंगे तो हम जागृत होकर दौड़ती हुई उनसे
मिलेंगी. जब सभी ब्रह्मात्माएँ इस प्रकार विचार करने लगेंगी तो उसी क्षण
ये नश्वर शरीर छूट जाएँगे.

सहूर बिना ए रेहेत है, तेहेकीक जानियों एह ।
ए भी हुकम हक बोलावत, हक सहूरें आवत सनेह ॥ २८

यह निश्चित समझ लो कि हृदयपूर्वक विचार न करने पर ही शरीरका
अस्तित्व बना रहता है. यह सब श्रीराजजीका आदेश ही कहला रहा है.
वस्तुतः हृदय पूर्वक विचार करने पर ही प्रेमका आविर्भाव होता है.

सनेह आए झूठ ना रहे, जो पकड़ बैठे हैं हम ।

ए झूठ नजरों तब क्यों रहे, याद आए सनेह खसम ॥ २९

हृदयमें प्रेमका आविर्भाव होने पर यह स्वप्नवत् शरीर टिका नहीं रहेगा जिसे हम अपना मानकर बैठे हुए हैं. जब अपने प्रियतम धनीके प्रेमका स्मरण हो जाए तब आत्माकी दृष्टिमें नश्वर शरीरका अस्तित्व कैसे बना रहेगा ?

हकें इलम भेज्या याही वास्ते, देने हक अरस लजत ।

सो मांगी लजत सब देय के, आखर उठावसी दे हिंमत ॥ ३०

श्रीराजजीने अपना ज्ञान इसीलिए इस जगतमें भेजा कि वे ब्रह्मात्माओंको परमधामके आनन्दका अनुभव करवाना चाहते हैं. हम ब्रह्मात्माओंके द्वारा माँगे गए इस खेलकी सम्पूर्ण चाहना पूर्ण कर अन्तमें वे हमें साहस प्रदान करते हुए जागृत करेंगे.

जो हक न देवें हिंमत, तो पूरा होए न हांसी सुख ।

जो रुह भाग जाए आखर लग, हांसी होए न बिना सनमुख ॥ ३१

यदि श्रीराजजी हमें साहस (शक्ति) प्रदान नहीं करेंगे तो संसारके सुखोंकी हमारी कामना भी पूर्ण नहीं होगी. जो आत्मा अन्तिम समय तक श्रीराजजीसे विमुख ही होती रहेगी, उसे भी उनके सम्मुख तो होना ही होगा क्योंकि सम्मुख हुए बिना उस पर हँसी नहीं होगी.

हक हिंमत देसी तेहेकीक, हांसी होए ना हिंमत बिन ।

ए गुझ बातें तब जानिए, हक सहूर आवे हादी रुहन ॥ ३२

इसलिए श्रीराजजी निश्चय ही हमें साहस प्रदान करेंगे. क्योंकि साहस प्रदान किए बिना हमारा उपहास भी सम्भव नहीं है. इस गूढ़ रहस्यको तभी समझा जा सकता है जब श्यामाजीके अङ्ग स्वरूप ब्रह्मात्माओंके हृदयमें श्रीराजजीके प्रति विवेक जागृत हो जाएगा.

ए बारीक बातें मारफत की, तिन बारीक का बातन ।

ए बातें होए हक हिंमतें, हक सहूर करें मोमिन ॥ ३३

यह परमधामका रहस्य अत्यन्त ही गूढ़ है. श्रीराजजीके द्वारा साहस प्राप्त होने

पर ही इसकी चर्चा हो सकती है। तभी ब्रह्मात्माएँ परस्पर श्रीराजजीकी चर्चा कर सकती हैं।

हिंमत तो भी हुकम, रुह हुजत सो भी हुकम ।

तन हुकम सो भी हुकम, सब हुकम तलें कदम ॥ ३४

वस्तुतः यह साहस भी श्रीराजजीका आदेश ही प्रदान कर रहा है। ब्रह्मात्मा होनेका अधिकार भी उनका आदेश ही ले रहा है। श्रीराजजीके आदेशके कारण ही सुरताओंने नश्वर शरीर धारण किया है और इस प्रकार सभी प्रकारके आदेश श्रीराजजीके चरणोंके अधीन हैं।

इलम इसक सो भी हुकम, सहूर समझ सो हुकम ।

जोस होस सो भी हुकम, आद अंत हुकम तलें हम ॥ ३५

ब्रह्मज्ञान तथा दिव्य प्रेम भी श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही प्राप्त होते हैं। श्रीराजजीकी चर्चा, विवेक तथा ज्ञान भी उनके आदेशसे ही प्राप्त होते हैं। जोश तथा चेतना भी इसी आदेशके अधीन हैं। इसप्रकार आदिसे लेकर अन्त तक हम सभी आदेशके ही अधीन हैं।

बातें हक्सों अरस में, जो करते थे प्यार ।

सो निसबत कछुए ना रही, ना दिल चाहे दीदार ॥ ३६

हम ब्रह्मात्माएँ परमधाममें श्रीराजजीसे प्रेमपूर्वक वार्तालाप करतीं थीं। अब वह सम्बन्ध नितान्त नहीं रहा और न ही श्रीराजजीके दर्शनकी चाहना हृदयमें बनी रही।

ना तो बैठे हैं ठौर इतहीं, इतहीं किया रबद ।

पर ऐसा फरेब देखाइया, जो पोहोंचे ना हमारा सबद ॥ ३७

अन्यथा हम सभी मूलमिलावामें ही बैठी हुई हैं। यहीं पर प्रेमसम्बाद हुआ है। किन्तु श्रीराजजीने ऐसा मिथ्या खेल दिखाया जिसके कारण अब हमारा एक भी शब्द वहाँ तक नहीं पहुँचता है।

इतथें कोई उठी नहीं, बैठा मिलावा मिल ।

बेर साईत एक ना हुई, यो इलमें बेसक किए दिल ॥ ३८

हम ब्रह्मात्माएँ मूलमिलावेमें ही मिलकर बैठीं हुई हैं। कोई भी अपने स्थानसे

उठीं नहीं हैं। परमधाममें इस घटनाका क्षणमात्र भी व्यतीत नहीं हुआ है। इस प्रकार श्रीराजजी प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा हमारा हृदय सन्देह रहित हो गया है।

इसक मिलावा और है, और मिलावा मारफत ।

इलमें लई कै लजतें, इसक गरक वाहेदत ॥ ३९

प्रेमपूर्वक मिलनेसे और ही आनन्दका अनुभव होता है और पहचान पूर्वक मिलनसे और अधिक आनन्दकी अनुभूति होती है। इस प्रकार ज्ञानके द्वारा विभिन्न प्रकारके सुखोंका अनुभव होता है एवं प्रेमके द्वारा एकात्मभावमें निमग्न हो जाते हैं।

ताथें बड़ी हकीकत मोमिनों, बड़ी मारफत लजत ।

मोमिन लीजो अरस दिल में, ए नेक हुकम कहावत ॥ ४०

इसलिए हे ब्रह्मात्माओ ! यथार्थ ज्ञान एवं पूर्ण पहचानसे प्राप्त सुख अपने-अपने स्थानमें महत्वपूर्ण हैं। श्रीराजजीका आदेश ही संक्षिप्तमें यह कहला रहा है। इसे अपने धामहृदयमें ग्रहण करना।

जो कदी इसक आवे नहीं, तो मोमिन बैठ रहें क्यों कर ।

अरस हकसों बेसक होए के, क्यों रहें अरस बिगर ॥ ४१

यदि कभी प्रेमका आविर्भाव ही नहीं हुआ तो ब्रह्मात्माएँ कैसे शान्तिसे बैठेंगी ? तारतम ज्ञानके द्वारा श्रीराजजी तथा परमधामके प्रति निःसन्देह होने पर ब्रह्मात्माएँ परमधामके बिना कैसे रह सकती हैं ?

इसक क्यों ना उपजे, पर रूहों करना सोई उदम ।

राह सोई लीजिए, जो आगूं हादिएं भरे कदम ॥ ४२

ब्रह्मात्माओंके हृदयमें क्यों प्रेमभाव जागृत नहीं होता है ? इसके लिए उनको पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। सभी आत्माओंको उसी मार्गका अनुसरण करना चाहिए जिस मार्ग पर सदगुरु श्री देवचन्द्रजी महाराजने प्रयाण किया है।

ए तिलसम क्योंए ना छूटहीं, जहां साफ न होवे दिल ।

अरस दिल अपना करके, चलिए रसूल सामिल ॥ ४३

जब तक हृदय पवित्र नहीं होगा तब तक यह मिथ्या जगतका मोह नहीं

छुटेगा. इसलिए अपने हृदयको परमधाम बनाकर अपने पथप्रदर्शक श्री देवचन्द्रजी महाराजके निर्देशन पर चलना चाहिए.

पाक न होइए इन पानिएं, चाहिए अरस का जल ।

न्हाइए हक के जमाल में, तब होइए निरमल ॥ ४४

इस भवसागरके जलसे पवित्र नहीं हो सकते हैं, इसके लिए तो परमधामका शाश्वत प्रेमरूपी जल ही चाहिए. श्रीराजजीके अनुपम सौन्दर्यरूपी सागरमें निमग्न होने पर ही हृदय पवित्र हो सकता है.

पाक होना इन जिमिएं, और न कोई उपाए ।

लीजे राह रसूल इसके, तब देवें रसूल पोहोंचाए ॥ ४५

इस नश्वर जगतमें रहकर हृदयको पवित्र बनानेका अन्य कोई उपाय ही नहीं है. जब हम अपने पथप्रदर्शक सदगुरुके मार्गका प्रेमपूर्वक अनुसरण करेंगे तब सदगुर ही गन्तव्य स्थान तक पहुँचा देंगे.

अब कहूँ सरीयत मोमिनों, जिन लई हकीकत हक ।

हक के दिल की मारफत, ए तिन में हुए बेसक ॥ ४६

अब मैं उन ब्रह्मात्माओंके कर्मकी बात करता हूँ जिन्होंने पूर्णब्रह्म परमात्माकी यथार्थता स्वीकार की है. पूर्णब्रह्म परमात्माके प्रेमकी पूर्ण पहचान होने पर ही वे निःसन्देह बनी हुई हैं.

मोमिन उजू जब करें, पीठ देवें दोऊ जहान कों ।

हौज जोए जो अरस में, रुहें गुसल करें इनमों ॥ ४७

जब ब्रह्मात्माएँ प्रार्थनासे पूर्व शारीरिक शुद्धि (वुज) करती हैं तब वे हिन्दू तथा मुस्लिमके कर्ममार्गसे ऊपर उठकर परमधामकी यमुनाजी तथा हौजकौसर तालमें अवगाहन करती हैं.

दम दिल पाक तब होवहीं, जब हक की आवे फिराक ।

अरस रुहें दिल जुदा करें, और सब से होए बेबाक ॥ ४८

जब उनके हृदयमें अपने धनीके वियोगकी आग धधकने लगती है तब उनका हृदय निर्मल होता है. इस प्रकार परमधामकी आत्माएँ लौकिक कर्म-

बन्धनोंसे अपने हृदयको अलग कर लेती हैं और निर्भय होकर लोक-व्यवहारसे निश्चिन्त हो जाती हैं।

चौदे तबकों पीठ देवहीं, ए कलमा कहा तिन ।

कलाम अल्ला यों केहेवहीं, ए केहेनी है मोमिन ॥ ४९

चौदह लोकोंसे विमुख होकर परमात्माकी ओर उन्मुख होना ही उनकी प्रार्थना (कलमाका उच्चारण करना) है। कुरानमें ब्रह्मात्माओंके कथन (वचन) के लिए इस प्रकार कहा गया है।

ला फना सब ला करें, और इला बका ग्रहें हक ।

ए कलमा हकीकत मोमिनों, और हक मारफत बेसक ॥ ५०

ब्रह्मात्माएँ नश्वर जगतका परित्याग करती हैं और अखण्ड परमधामको ग्रहण करती हैं। यही ब्रह्मात्माओंका यथार्थ ज्ञान एवं पूर्णब्रह्म परमात्माकी पूर्ण पहचान है।

नूर के पार नूर तजल्ला, रसूल अल्ला पोहोंचे इत ।

मोमिन उतरे नूर बिलंद से, सो याही कलमें पोहोंचे वाहेदत ॥ ५१

अक्षरधामसे परे अक्षरातीत परमधाम है। रसूल मुहम्मदकी सुरता इसी परमधाममें पहुँची। ब्रह्मात्माएँ भी इसी परमधामसे (जगतमें) अवतरित हुई हैं और ब्रह्मज्ञानके द्वारा ही वे इस अद्वैत परमधाममें पहुँचेंगी।

जब हक बिना कछू ना रखें, तब बूझ भई कलमें ।

जब यों कलमा जानिया, तब बका होत तिनसें ॥ ५२

जब ब्रह्मात्माएँ अपने प्रियतम धनीके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं देखती हैं तभी उनको ब्रह्मज्ञानकी सुधि हुई ऐसा समझना चाहिए। जब वे इस प्रकारका ज्ञान प्राप्त करती हैं तभी उन्हें अखण्ड सुखका अनुभव होगा।

ए मोमिनों की सरीयत, छोड़ें ना हक को दम ।

अरस वतन अपना जान के, छोड़ें ना हक कदम ॥ ५३

ब्रह्मात्माओंका कर्मकाण्ड यही है कि वे पलमात्रके लिए भी श्रीराजजीके

चरणोंका आश्रय नहीं छोड़ती हैं. वे परमधामको अपना अखण्ड घर समझकर श्रीराजजीके चरणोंको छोड़ती ही नहीं हैं.

महंमद ईसा इमाम, बैत बका निसान ।

सोई तीन सूरत महंमद की, देखावें अरस रेहेमान ॥ ५४

कुरानमें सङ्केत रूपमें मुहम्मद, ईसा, इमाम तथा परमात्माके घरका वर्णन किया है. वे तीनों स्वरूप श्रीश्यामाजीके हैं और वे कृपालु परमात्मा तथा परमधामका साक्षात्कार कराते हैं.

दुनी किबला करे पहाड़ को, और हक तरफों में नाहें ।

अरस बका तरफ न राखत, ए देखे फना के माहें ॥ ५५

नश्वर जगतके जीव बाह्यदृष्टिसे पर्वतोंको पूज्यस्थल मानते हैं, परमात्माकी ओर उनकी दृष्टि ही नहीं होती है. परमधामकी ओर उनकी दृष्टि न होनेसे ही वे नश्वर जगतके पर्वतोंको पूज्य मानकर उनकी ओर लगे रहते हैं.

हकें देखाया किबला, बीच पाझए मोमिन के दिल ।

ऊपर तलें न दाएं बाएं, सूरत हमेसा असल ॥ ५६

परमात्माने तो परमधामको ही पूज्य स्थल बताया है. वह अब ब्रह्मात्माओंके हृदयमें है. इसके अतिरिक्त ऊपर-नीचे, दायें-बायें कहीं भी परमधाम दिखाई नहीं देता है. वह तो सर्वदा ब्रह्मात्माओंके हृदय मन्दिरमें ही है.

मजाजी और हकीकी, दिल कहे भांत दोए ।

ए बेवरा हकी सूरत बिना, कर न सके दूजा कोए ॥ ५७

इस जगतमें दो प्रकारके हृदयका वर्णन है. उनमें-से एक असत्यप्रिय (मजाजी) तथा दूसरा सत्यप्रिय (हकीकी) है. इन दोनोंका निरूपण हकी सूरत (मेरे) बिना अन्य किसीसे भी नहीं हो सकता है.

इतहीं रोजा इत बंदगी, इतहीं जगात जारत ।

साथ हकी सूरत के, मोमिनों सब न्यामत ॥ ५८

इन्हीं हकी सूरतके साथ स्वयंको परब्रह्म परमात्माके स्वरूप पर समर्पित कर देना ही ब्रह्मात्माओंके लिए व्रत (रोजा), पूजा-अर्चना (बन्दगी), समर्पण

(जकात) तथा तीर्थदर्शन (जियारत) आदि माना गया है. वास्तवमें ब्रह्मात्माओंकी अमूल्य निधि ही यही है.

मोमिन हक बिना न देखें, एही मोमिनों ताम ।

बंदगी तवाफ सब इतहीं, मोमिनों इतहीं आराम ॥ ५९

ब्रह्मात्माएँ परब्रह्म परमात्माके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं देखतीं हैं. अपने प्रियतमके दर्शन ही उनका आहार है. अपने प्रियतम धनीकी सेवा तथा परिक्रमामें ही ब्रह्मात्माओंको शान्ति (विश्रान्ति) का अनुभव होता है.

खाना पीना सब इतहीं, इतहीं मिलाप मज़कूर ।

इतहीं पूरन दोस्ती, इतहीं वरसत हक का नूर ॥ ६०

अपने प्रियतम धनीके दर्शन ही ब्रह्मात्माओंके लिए खाना-पीना, मिलाप तथा परिचर्चा है. अपने प्रियतम धनीके दर्शनमें ही उनकी पूर्ण मित्रता परिलक्षित होती है. इसी दर्शनके द्वारा ही उनमें श्रीराजजीके दिव्य तेजकी वर्षा होती है.

सरूप ग्रहिए हक का, अपनी रुह के अंदर ।

पूरन सरूप दिल आइया, तब दोऊ उठे बराबर ॥ ६१

इसलिए अपने हृदयके अन्दर श्रीराजजीके स्वरूपको धारण करना चाहिए. जब उनका पूर्ण स्वरूप हृदयमें अङ्कित हो जाता है तब आत्मा तथा पर-आत्मा दोनों एक साथ जागृत हो जाएँगी.

ए सरीयत अपनी मोमिनों, और है हकीकत ।

क्यों न विचार के लेवहीं, हक हादी बैठे तखत ॥ ६२

हे ब्रह्मात्माओ ! यह अपने कर्मकाण्डका सोपान है. इसकी यथार्थता और भी है. तुम क्यों विचार नहीं कर रहीं हो ? श्रीराजजी तथा श्यामाजी अपने हृदय मन्दिरके सिंहासन पर विराजमान हैं.

जो कदी दिल में हक लिया, कछू किया ना प्रेम मज़कूर ।

क्यों कहिए ताले मोमिन, जाको लिख्या बिलंदी नूर ॥ ६३

जिन्होंने अपने हृदयमें श्रीराजजीके स्वरूपको स्थापित कर उनके साथ

प्रेमालाप नहीं किया, उन ब्रह्मात्माओंके भाग्यमें दिव्य परमधाम लिखा हुआ है ऐसा कैसे कहा जाए ?

ए हकीकत मोमिनों, और ले न सके कोए ।

बेसक होए बातें करे, तो मजकूर हजूर होए ॥ ६४

इस यथार्थताको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई ग्रहण नहीं कर सकता है. केवल ब्रह्मात्माएँ ही अपने प्रियतम धनीका सान्तिध्य प्राप्त कर संशय रहित होकर उनके साथ प्रेमपूर्वक वार्तालाप कर सकतीं हैं.

जो तूं ले हकीकत हक की, तो मौत का पी सरबत ।

मुए पीछे हो मुकाबिल, तो कर मजकूर खिलवत ॥ ६५

यदि तुझे पूर्णब्रह्म परमात्माका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना है तो तू सर्वप्रथम मृत्युका सरबत पी ले अर्थात् इस नश्वर जगतके मिथ्याभिमानको मिटा दे. इस प्रकार मिथ्याभिमानको त्यागकर उनके सम्मुख हो जा एवं उनके साथ एकान्त वार्ताका आनन्द प्राप्त कर.

जोलों जाहेरी अंग ना मरे, तोलों जागे ना रुह के अंग ।

ए मजकूर रुह अंग होवहीं, अपने मासूक संग ॥ ६६

जब तक देहाभिमान समाप्त नहीं होता है तब तक आत्मा जागृत नहीं होती है. वस्तुतः आत्मा ही अपने प्रियतमके साथ वार्तालाप करनेमें सक्षम होती है.

कौल फैल आए हाल आइया, तब मौत आई तोहे ।

तब रुह की नासिका को, आवेगी खुसबोए ॥ ६७

जब तेरे वचन, कर्म तथा मनःस्थिति अपने प्रियतम धनीकी ओर उन्मुख हो जाते हैं तभी तेरा देहाभिमान समाप्त हो जाएगा. तदुपरान्त आत्माको परमधामकी सुगन्धि प्राप्त होगी.

रुह नैनों दीदार कर, रुह जुबां हक सों बोल ।

रुह कानों हक बातें सुन, एही पट रुह का खोल ॥ ६८

अब आत्मदृष्टिसे श्रीराजजीके दर्शन कर, आत्माकी वाणीसे उनके साथ

वार्तालाप कर एवं आत्माके कानोंसे ही उनकी वाणीका श्रवण कर. इस प्रकार हृदयके आवरणको दूर किया जा सकता है.

ए सहूर करो तुम मोमिनों, जब फैल से आया हाल ।
तब रुह फरामोसी ना रहे, बोए हाल में नूरजमाल ॥ ६९
हे ब्रह्मात्माओ ! इस पर विचार करो, जब तुम्हारा कथन कर्तव्य कर्ममें परिणत हो जाएगा तब आत्मामें किसी प्रकारका आवरण नहीं रहेगा. उसे श्रीराजजीके दर्शनोंकी सुगन्ध अवश्य आने लगेगी.

बेसक होए दीदार कर, ले जवाब होए बेसक ।
एही मोमिनों मारफत, खिलवत कर साथ हक ॥ ७०
इस प्रकार सन्देह रहित होकर श्रीराजजीके दर्शन करो एवं निःसन्देह होकर उनके प्रत्युत्तरका श्रवण करो. यही ब्रह्मात्माओंके प्रेमकी तथा पूर्ण पहचानकी पराकाष्ठा है कि वह अपने प्रियतम धनीके साथ अन्तरङ्ग वार्तालाप करे.

रुह हक्सों बात विचार कर, दिल परदा दे उडाए ।
रुह बातें वतन की, कर मासूक सों मिलाए ॥ ७१
ब्रह्मात्मा अपने धनीके वचनों पर विचार कर हृदयसे भ्रमरूपी परदाको उड़ा देती है. फिर अपने प्रियतम धनीसे मिलकर अखण्ड परमधामकी चर्चा करने लगती है.

जो गूँझ अपनी रुह का, सो खोल मासूक आगूं ।
यों कर जन्म सुफल, ऐसी कर हक सो तूं ॥ ७२
हे आत्मा ! अब तू श्रीराजजीके समक्ष अपने हृदयकी गुस बातें प्रकट कर. इस प्रकार अपने प्रियतम धनीके साथ व्यवहार कर अपने जीवनको सफल बना.

सब अंग सुफल यों हुए, करी हक्सों सलाह सबन ।
देख बोल सुन खुसबोए सों, जिनका जैसा गुन ॥ ७३
इस प्रकार सभी अङ्ग धन्य-धन्य हो गए हैं, क्योंकि सभीने अपने धनीसे बातें की. इनमें नयनोंने देखकर, रसनाने बोलकर, श्रवण अङ्गोंने सुनकर तथा

नासिकाने सुगन्ध ग्रहण कर सभीने अपने-अपने गुणोंके अनुरूप स्वयंको धन्य बनाया.

जेते अंग आसिक के, सो सारे किए सुफल ।

सोई असल रुह आसिक, जिन मोमिन अरस दिल ॥ ७४

इस प्रकार अनुरागिनी आत्माने अपने सभी अङ्गोंको सफल बनाया. वही आत्मा वास्तवमें अनुरागिनी कहलाती है जिसके हृदयको श्रीराजजीने अपना परमधाम बनाया है.

ए निसबत बिना होए नहीं, मासूक सों मजकूर ।

ए मजकूर इन विधि होवहीं, यों कहे हक सहूर ॥ ७५

श्रीराजजीके साथके सम्बन्धके बिना उनके साथ प्रेमालाप नहीं हो सकता. यह वार्तालाप तो इसी प्रकार सम्भव हो सकता है. इस प्रकार जागृत बुद्धिका (तारतम) ज्ञान स्पष्ट करता है.

मोमिनों हकीकत मारफत, इनमें भी विधि दोए ।

एक गरक होत इसक में, और आरफ लुदंनी सोए ॥ ७६

ब्रह्मात्माओंकी यथार्थता एवं पूर्ण पहचानमें भी दो प्रकारके भाव दिखाई देते हैं. कोई ब्रह्मात्माएँ अपने प्रियतम धनीके प्रेममें मग्न हो जाती हैं तो कोई तारतम ज्ञानमें लीन होकर ब्रह्मज्ञानी हो जाती हैं.

एक इसक दूजा इलम, ए दोऊ मोमिनों हक न्यामत ।

इसक गरक वाहेदत में, इलमें हक अरस लजत ॥ ७७

इस प्रकार प्रेम और ज्ञान दोनों ही ब्रह्मात्माओंकी सम्पत्ति हैं. इनमें-से प्रेमके कारण वे श्रीराजजीके साथ एकात्मभावमें निमग्न हो जाती हैं तो ब्रह्मज्ञानके द्वारा परमधाम तथा श्रीराजजीसे आनन्दका अनुभव करती हैं.

मारफत लुदंनी मोमिनों, बंदा हक का कामिल ।

बड़ी बुजरकी इन की, करें बातें हक सामिल ॥ ७८

ब्रह्मात्माओंको ही तारतम ज्ञानकी पूर्ण पहचान है. ये ही श्रीराजजीकी योग्य

तथा सत्यनिष्ठ सेविकाएँ कहलाती हैं। इनकी महिमा अत्यन्त श्रेष्ठ है। क्योंकि श्रीराजजी इनके साथ प्रेमालाप करते हैं।

सक नाहीं लुदंनीय में, कहे अरस की जाहेर बातन ।

करें हक सों बातें इन विध, ज्यों करें अरस के तन ॥ ७९

तारतम ज्ञानमें किसी भी प्रकारका कोई सन्देह नहीं है। यह तो परमधामका बाह्य तथा आन्तरिक वर्णन कर सकता है। जिस प्रकार परमधाममें पर-आत्मा श्रीराजजीके साथ वार्तालाप करती है उसी प्रकार ब्रह्मात्माएँ भी यहाँ पर तारतम ज्ञानके द्वारा श्रीराजजीके साथ वार्तालाप करती हैं।

हक दिया चाहें लजत, ताए इलम देवें बेसक ।

रुह बातें करे हकसों, देखे हौज जोए हक ॥ ८०

जब श्रीराजजी अपनी आत्माओंको अपार सुख देना चाहते हैं तब सर्वप्रथम उसे ब्रह्मज्ञान देकर सन्देह रहित बना देते हैं। फलस्वरूप ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके साथ वार्तालाप करतीं हुईं हौजकौसर तथा यमुनाजी आदिके भी दर्शन करतीं हैं।

मारफत लुदंनी जिन लई, सो करे हक सहूर ।

सहूर किए हाल आवहीं, सो हाल बीच हक मजकूर ॥ ८१

जिन ब्रह्मात्माओंने तारतम ज्ञानका रहस्य पहचानकर उसे ग्रहण किया है वे ही श्रीराजजीके विषयमें विचार कर सकती हैं। परस्पर विचार विमर्श करने पर ही उनकी मनःस्थिति श्रीराजजीकी ओर उन्मुख हो जाती है। जिससे श्रीराजजीके साथ उनकी अन्तरङ्ग वार्ता होती है।

यों हक कहावत मोमिनों, नजीक हाल है तुम ।

हक बातें किया चाहें, रुह सों वाहेदत खसम ॥ ८२

हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजी इस प्रकार कहला रहे हैं कि तुम्हारी मनःस्थिति तुम्हें उनके निकट पहुँचा रही है। इसलिए अब वे अपनी आत्माओंके साथ एकान्त वार्ता करना चाहते हैं।

पीछे हक सब करसी, रुह सुख लिया चाहे अब ।
सुख लेने को अवसर, पीछे लेसी मोमिन सब ॥ ८३

जागृत होने पर तो श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंके साथ वार्तालाप करेंगे ही किन्तु यह आत्मा अभी यहीं पर आनन्दका अनुभव करना चाहती है क्योंकि यह अवसर आनन्दकी अनुभूतिका है. पीछे तो सभी ब्रह्मात्माएँ आनन्दका अनुभव करेंगी ही.

रुह विरहा छिन एक ना सहें, सो अब चली जात मुदत ।
अरस रुहें यों भूल के, क्यों छोड़े हक मारफत ॥ ८४

वस्तुतः ब्रह्मात्मा एक क्षणका भी विरह सहन नहीं कर सकती. उसके लिए तो दीर्घकाल व्यतीत होता जा रहा है. परमधामकी आत्माएँ इस प्रकार भूलकर श्रीराजजीकी पूर्ण पहचान कैसे छोड़ेंगी ?

मारफत हुई हाथ हक के, क्यों ले सकिए सोए ।
ए दोस्ती तब होवहीं, जब होए प्यार बराबर दोए ॥ ८५

श्रीराजजीकी पहचान भी उन्हींकी कृपासे हो सकती है. उनकी कृपाके बिना हम उन्हें कैसे पहचान कर पाएँगे ? उनके साथकी मित्रता तभी हो सकती है जब दोनों ओरसे प्रेमका भाव समान रूपसे जागृत हो जाए.

मारफत देवे इसक, इसके होए दीदार ।
इसके मिलिए हकसों, इसके खुले पट द्वार ॥ ८६

श्रीराजजीकी पूर्ण पहचान होने पर ही हृदयमें प्रेमभाव होता है एवं उसीके द्वारा उनके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त होता है. इसी प्रेमके द्वारा उनसे मिलन हो सकता है और अन्तरके पट भी खुल सकते हैं.

सोई रबद जो हकसों किया, वास्ते इसक के ।
सो इसक तब आइया, जब हके दिया ए ॥ ८७

इसी प्रेमके लिए ही श्रीराजजीके साथ प्रेम सम्बाद हुआ. वह प्रेम हृदयमें तभी प्रकट हुआ जब स्वयं श्रीराजजीने उसे प्रदान किया.

हांसी करी रुहन पर, दे इलम बेसक ।
मासूक हंस के तब मिले, जब हकें दिया इसक ॥ ८८

निश्चय ही श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको अपना (तारतम) ज्ञान प्रदान कर उनकी हँसी की है. जब उन्होंने अपना प्रेम प्रदान किया तभी ब्रह्मात्माएँ प्रसन्न होकर उनसे प्रत्यक्ष मिल सकीं.

महामत कहे ऐ मोमिनों, सब बातों का ए मूल ।
ए काम किया सब हुकमें, आए इमाम मसी रसूल ॥ ८९

महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! सभी बातोंका यही सार है. यह सम्पूर्ण कार्य श्रीराजजीके आदेशके द्वारा ही हुआ है. उन्हींके आदेशसे इमाम (अन्तिम धर्मगुरु), मसी (श्रीदेवचन्द्रजी) तथा रसूल मुहम्मद इस जगतमें अवतरित हुए हैं.

प्रकरण २५ चौपाई १९३९

कलस का कलस

बसरी मलकी और हकी, कही महंमद तीन सूरत ।
कारज सारे सिध किए, अब्बल बीच आखरत ॥ ९

रसूल मुहम्मदने कुरानमें बशरी, मलकी तथा हकी इस प्रकार तीन स्वरूपोंका वर्णन किया है. उनके द्वारा ही आरम्भसे लेकर अन्त तकके सम्पूर्ण कार्य सिद्ध हुए हैं.

ए तीनों मिल किया जहूर, अब्बल आखर रोसन ।
हक बैठे इन इलम में, तो दिल अरस हुआ मोमन ॥ २

इन तीनों स्वरूपोंने मिलकर आरम्भसे लेकर अभी तक परमधामकी यथार्थता स्पष्ट की है. इन्हींके द्वारा प्रदत्त ज्ञानसे ब्रह्मात्माओंको परब्रह्म परमात्माका साक्षात् अनुभव हुआ है. इसलिए ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है.

ए जुबां मैं हक की, और बोलत है हुकम ।
हक अरस वरनन तो हुआ, जो बाहेदत बका खसम ॥ ३

मेरी जिहाको प्राप्त शक्ति तथा मेरी आत्मा दोनों श्रीराजजीकी हैं एवं उन्हींके

आदेशके द्वारा इस प्रकारकी बातें हो रही हैं। इसी आदेशके कारण ही पूर्णब्रह्म परमात्मा, अखण्ड परमधाम तथा वहाँके अद्वैत भावका वर्णन हो सका है।

गैब खिलत जाहेर तो हुई, जो हकें कराई ए ।

ए खबर नहीं नूर को, करी लुर्दनिएं जाहेर जे ॥ ४

परमधाम-मूलमिलावाके गूढ़ रहस्य तभी स्पष्ट हुए जब स्वयं श्रीराजजीने इनकी स्पष्टता करवाई। जिसकी सुधि स्वयं अक्षरब्रह्मको भी नहीं है उसकी स्पष्टता तारतम ज्ञानके द्वारा हो गई है।

वरनन किया अरस का, सो सब हिसाब अरसै के ।

गिनती सो भी अरस की, ए बातें मोमिन समझेंगे ॥ ५

इस प्रकार परमधामका जो भी वर्णन हुआ है वह लेखा-जोखा तथा गणना परमधामकी ही है। ब्रह्मात्माएँ ही परमधामकी इस गणनाको समझ सकेंगी।

या पहाड़ या तिनका, सो सब चीज विध आतम ।

सब देत देखाई जाहेर, ज्यों देखिए माहें चसम ॥ ६

परमधामके वर्णनमें पर्वत जैसे विशाल तथा तृण जैसे सूक्ष्म वस्तुका जिस प्रकार वर्णन हुआ है वे सभी ब्रह्मात्माओंकी भाँति चेतन स्वरूप हैं। ये सभी प्रकट रूपसे उसी प्रकार दिखाई देते हैं जिस प्रकार चश्माके द्वारा किसी वस्तुको देखते हैं।

और भी खूबी रूह नैन की, चीज दसों दिस की सब देखत ।

पाताल या आसमान की, रूह नजरों सब आवत ॥ ७

ब्रह्मात्माओंके नयनोंकी यह विशेषता है कि इनसे दसों दिशाओंकी सभी वस्तुएँ दिखाई देती हैं। पातालसे लेकर आकाश तककी सभी वस्तुएँ ब्रह्मात्माओंकी दृष्टिमें आ जाती हैं।

रूह का एही लछन, बाहेर अंदर नहीं दोए ।

तन दिल दोऊ एकै, रूह कहियत हैं सोए ॥ ८

ब्रह्मात्माओंका लक्षण यही है कि उनका बाहर और भीतर एक समान पवित्र

होता है. जिनके शारीरिक कर्म तथा हृदयकी पवित्रता एक समान होती है उन्हींको ब्रह्मात्मा समझना चाहिए.

दूर नजीक भी अरस के, सो भी पाइए अरस सहूर ।
नैन चरन अंग तीनों हीं, एक यादै में हजूर ॥ ९

हम परमधामसे कितनी दूर हैं तथा कितने निकट हैं यह तारतम ज्ञानके द्वारा ही जाना जा सकता है. जब ब्रह्मात्माओंके नयन, चरण तथा अन्य अङ्ग एक ही दिशामें होंगे तब वे श्रीराजजीके चरणोंमें ही पहुँची हुई अनुभव करती हैं.

चाल मिलाप या दीदार, ए तीनों रूह के नेक ।
जबहीं याद जो आवहीं, तबहीं होए माहें एक ॥ १०
एकाग्रता, मिलन तथा दर्शन ये तीनों भाव ब्रह्मात्माओंके हैं. इन तीनोंमें जब जिनका स्मरण हो जाता है तब तीनोंमें एकरूपता आ जाती है.

या तो जिमी के दूर लग, या नजीक आगूँ नजर ।
दूर नजीक सब याद में, ए दोऊ बराबर ॥ ११
परमधामकी कोई वस्तु चाहे दूर लगती हो अथवा निकट, जब उसका स्मरण हो जाता है तब वह न दूर रहती है और न ही निकट अपितु समान हो जाती है.

अरस दिल मोमिन तो कह्या, जो हक सों रूह निसबत ।
ना तो अरस दिल आदमी का, क्यों कह्या जाए ख्वाब में इत ॥ १२
ब्रह्मात्माओंके हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि उनका सम्बन्ध श्रीराजजीके साथ है. अन्यथा नश्वर जगतके मनुष्यका हृदय परमात्माका धाम कैसे हो सकता है ?

रूह तन की असल अरस में, अरस ख्वाब नहीं तफावत ।
तो कह्या सेहेरग से नजीक, बीच दुनी ए न्यामत ॥ १३
यद्यपि ब्रह्मात्माओंका मूल शरीर परमधाममें है तथापि उन्होंने धारण किए हुए स्वप्नके शरीरमें एवं उनके मूल शरीरमें कोई अन्तर नहीं है. इसीलिए

इस नश्वर जगतमें भी पूर्णब्रह्म परमात्माको उनके लिए प्राणनलीसे भी अधिक निकट कहा गया है।

दिल मोमिन अरस तन बीच में, उन दिल बीच ए दिल ।

केहेने को ए दिल है, है अरसै दिल असल ॥ १४

ब्रह्मात्माओंका हृदय उनके मूल तन पर आत्मामें है। उनके हृदयमें इस नश्वर शरीरका हृदय भी विद्यमान है। वस्तुतः कहने मात्रके लिए ही यह नश्वर शरीरका हृदय है। वास्तविक हृदय तो पर-आत्माके अन्दर ही विद्यमान है।

तो हक नजीक कह्या रूहन को, और नूर नजीक फिरस्तन ।

और आम खलक देखन को, जो कहे जुलमत से तन ॥ १५

इसीलिए श्रीराजजी ब्रह्मात्माओंसे अत्यन्त निकट हैं इसी प्रकार ईश्वरीसृष्टियोंसे अक्षरब्रह्म भी अति निकट हैं। शेष जीवसृष्टि तो देखने मात्रके लिए हैं क्योंकि उनकी उत्पत्ति ही शून्य-निराकारसे हुई है।

ए तीनों गिरो कही जाहेर, पर ए बीच मारफत राह ।

ए कलाम अल्लाह में बेवरा, योही कह्या रूहअल्लाह ॥ १६

इन तीनोंका विवरण स्पष्ट रूपमें दिया गया है। किन्तु ब्रह्मसृष्टियोंका समूह ही परमात्माकी पहचान (विज्ञान) के मार्गमें है। इस प्रकारका विवरण कुरानमें दिया गया है एवं सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी महाराजने भी इसका स्पष्टीकरण किया है।

पर आम खलक ना समझे, जाकी पैदास कही जुलमत ।

इलम लुदंनी से जानत, रूह मोमिन बीच वाहेदत ॥ १७

किन्तु सामान्य जीव, जिनकी उत्पत्ति शून्य निराकारसे हुई है, इस रहस्यको समझ नहीं सकते हैं। अद्वैत परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही तारतम ज्ञानके द्वारा इसे जान सकतीं हैं।

इलम नुकते की साहेदी, हक सूरत अरस मारफत ।

सो सब बातें फुरमान में, खोले हकी सूरत हकीकत ॥ १८

तारतम ज्ञानके द्वारा ही श्रीराजजीका स्वरूप तथा परमधामका रहस्य स्पष्ट

हो सकता है. इन सभी बातोंका उल्लेख कुरानमें है जिनके रहस्यको हकी स्वरूप (श्री प्राणनाथजी) स्पष्ट करते हैं.

बसरी मलकी और हकी, जो कही महंमद तीन सूरत ।
दो देवे हक की साहेदी, फरदा रोज क्यामत ॥ १९

बशरी, मलकी तथा हकी इस प्रकार रसूल मुहम्मदने तीन स्वरूपोंकी बात कही है. उनमें-से दो आत्मजागृतिके समय पर प्रकट होकर परमात्माकी साक्षी देंगे.

नबी नबुवत कुरान माजजा, ए दोऊ साबित होवें इन सें ।
कुरान न खुले बिना खिताब, ना तो लिख्या सब इनमें ॥ २०

पैगम्बरकी पैगम्बरी तथा कुरानके सङ्केतोंका स्पष्टीकरण दोनों ही इन स्वरूपोंके द्वारा सत्य सिद्ध होंगे. कुरानके गूढ़ रहस्य हकी स्वरूपके बिना स्पष्ट नहीं हो सकते हैं. अन्यथा ये सभी रहस्य तो उसमें उल्लेखित ही हैं.

इन साहेदिएं सब मिलसी, हिन्दू या मुसलमीन ।
मुआ दजाल सब का कुफर, यों सब पाक हुए एक दीन ॥ २१

इन साक्षियोंसे हिन्दू तथा मुस्लिम समुदायके लोगोंके हृदयका अन्तर मिट जाएगा. उनके हृदयका वैमनस्य दूर होने पर वे पवित्र होकर धर्मके एक मार्ग पर चलने लगेंगे.

और भी साहेदी फुरमान में, तबक चौदे जरा नाहिं ।
खेल नाम धर्या सब केहेने को, ए जरा नहीं अरस माहिं ॥ २२

कुरानमें और भी साक्षी दी गई है कि इन चौदह लोकोंका कोई भी अस्तित्व नहीं है. यह नश्वर जगत तो नाम मात्रका है. परमधाममें इसका कुछ भी अस्तित्व नहीं है.

और ठौर न काहूं अरस बिना, अरस न कहूं इंतहाए ।
जो आप कछुए है नहीं, तिन क्यों अरस नजरों आए ॥ २३

परमधामके अतिरिक्त अन्य कोई स्थान ही नहीं है और परमधामका कोई

परावार नहीं है. जिनका स्वयं कोई अस्तित्व ही नहीं है उनकी दृष्टिमें परमधाम कैसे आ सकता है ?

ए अरस देखें रुह मोमिन, जो उतरे नूर बिलंद सें ।

नाहीं क्यों देखे है को, ए तो जाहेर लिख्या किताबों में ॥ २४

इसलिए ब्रह्मात्माएँ ही परमधामके दर्शन कर सकती हैं. जो वहीसे इस जगतमें अवतरित हुई है. धर्मग्रन्थोंमें स्पष्ट उल्लेख है कि नश्वर जगतके जिन जीवोंका कोई अस्तित्व ही नहीं है वे अखण्ड परमधामको कैसे देख सकते हैं ?

बंझा पूत फूल आकास, और ससक सिंग ।

कह्या वेद कतेब में, भंग न कछू अभंग ॥ २५

इस जगतको वेद तथा कतेब आदि ग्रन्थोंमें बन्ध्यापुत्र (बाँझपुत्र), आकाशपुष्ट तथा शशकशृङ्ग (खरगोशके सींग) की उपमा दी गई है. क्योंकि इस नश्वर जगतकी कोई भी वस्तु अखण्ड नहीं है.

यों असल खेल की है नहीं, ए दिल में देखाई देत ।

किया हुकमें महंमद रुहों देखने, तो भिस्त में इनों को लेत ॥ २६

इस प्रकार इस नश्वर खेलकी कोई भी वास्तविकता नहीं है. यह तो मात्र पर-आत्माके हृदयमें दिखाई दे रहा है. श्रीराजजीके आदेशने ही ब्रह्मात्माओं तथा श्यामाजीको दिखानेके लिए इसकी रचना की है. इसीलिए इसे मुक्तिस्थलोंमें स्थान दिया गया है.

हक हुकमें सब बेवरा किया, वास्ते हादी रुहन ।

जो सहूर कीजे मिल महामति, जो लजत लीजे अरस तन ॥ २७

श्रीराजजीके आदेशसे यह निरूपण हुआ कि श्रीश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंको दिखानेके लिए ही इस जगतकी रचना हुई है. महामति कहते हैं, जो आत्माएँ परस्पर मिलकर इस पर विचार करेंगी वे ही यहीं पर परमधामके मूल तनका आनन्द प्राप्त कर सकेंगी.

मता हक ताला ने मोमिनों को दिया

एता मता तुम को दिया, सो जानत है तुम दिल ।
बेसक इलमें ना समझे, तो सहूर करो सब मिल ॥ १
हे ब्रह्मात्माओ ! इतनी अपार सम्पदा तुम्हें प्रदान की है, जिसे तुम हृदयपूर्वक
जानती हो. यदि तारतम ज्ञानको न समझ सको तो परस्पर मिलकर विचार
विमर्श कर लो.

ए तो देख्या बड़ा अचरज, पाए सुख बका अपार ।
भी बेसक हुए हक इलमें, तो भी छूटे ना नींद बिकार ॥ २
बड़े आश्वर्यकी बात है कि परमधामके अपार सुख प्राप्त कर तथा तारतम
ज्ञानके द्वारा सन्देह रहित होने पर भी अभी तक अज्ञानताके विकार नहीं छूट
रहे हैं.

ए बोलावत है हुकम, खुदी भी हुकम की ।
तो हमेसा पाक होए, हक इसक प्याले पी ॥ ३
श्रीराजजीका आदेश ही यह सब कहलवा रहा है और यह वर्णन करनेका
स्वामित्व भी उसीका है. इसलिए हे मेरी आत्मा ! तू सर्वदा पवित्र होकर
अपने धामधनीके शाश्वत प्रेमसुधाका पान कर.

खुदी हक हुकम की, सो तो भूले नहीं कब ।
वह काम सोई करसी, जो भावे अपने रब ॥ ४
यह स्वाभिमान स्वयं श्रीराजजीके आदेशका है इसलिए वह कभी भी भूलाया
नहीं जाता है. यह स्वाभिमान वही कार्य करेगा जो अपने स्वामी श्रीराजजीकी
रुचिके अनुरूप होगा.

हुकम तो है हकका, और खुदी भी ना हुकम बिन ।
खुदी हुकम दोऊ हक के, इत क्या लगे रूहन ॥ ५
यह आदेश श्रीराजजीका है. उनके आदेशके बिना स्वाभिमान उत्पन्न नहीं
होता है. जब स्वाभिमान एवं आदेश दोनों ही श्रीराजजीके हैं तो फिर
ब्रह्मात्माओंका कोई उत्तरदायित्व ही नहीं रहता है.

हक केहेवे नेकों को, दोस्त रखता हों मैं ।
या खुदी या हुकम, टेढी होए नहीं इनों सें ॥ ६

किन्तु श्रीराजजी श्रेष्ठ कार्य करनेवाली आत्माओंके लिए कहते हैं कि मैं उनके साथ मित्रता रखता हूँ इसलिए स्वाभिमान तथा आदेश दोनों ही ऐसी आत्माओंसे विपरीत नहीं होंगे.

हुकमें लिया भेख रूह का, सो भी हांसी खुसाली रूहन ।
क्यों सिर लेना खुदी हुकम, पाक होए पकडे चरन ॥ ७

श्रीराजजीके आदेशने ही इस जगतमें ब्रह्मात्माओंका वेश धारण किया है. वह भी ब्रह्मात्माओंकी प्रसन्नताके लिए है. इसलिए श्रीराजजीका आदेश एवं स्वाभिमानकी ओर क्यों निर्भर हो जाए ? हमें तो पवित्र होकर उनके चरण ग्रहण करने चाहिए.

जब भेख काछा रूहका, फैल सोई किया चाहे तिन ।
नाम धराए क्यों रद करे, हक एती देत बडाई जिन ॥ ८

जब श्रीराजजीके आदेशने ब्रह्मात्माओंका वेश धारण कर लिया है तो उसके आचरण भी ब्रह्मात्माओंके अनुरूप ही होने चाहिए. जब श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको इतना सम्मान दिया है तो उनके आदेशको भी चाहिए कि वह ब्रह्मात्माओंको किसी भी प्रकारका लाज्जन लगने न दे.

ए निस दिन बातें बिचारहीं, सोई हुकम हुजत मोमन ।
पाक हुआ सो जो अरस दिल, जाके हक कदम तलें तन ॥ ९

जो ब्रह्मात्माएँ इस पर अहर्निश विचार करतीं हैं वे ही श्रीराजजीके आदेशके स्वामित्वका अधिकार रखतीं हैं. इन्हीं ब्रह्मात्माओंका हृदय श्रीराजजीका धाम होनेसे पवित्र हुआ है. इनके मूल तन (परात्मा) श्री राजजीके चरणोंमें विराजमान हैं.

हुकम तो तन में सही, और लिए रूह की हुजत ।
हिसा चाहिए तिन का, सो भी माहें बोलत ॥ १०

ब्रह्मात्माओंका अधिकार लेकर श्रीराजजीका आदेश ही नश्वर शरीरमें कार्यरत

है. इसलिए ब्रह्मात्माओंके स्वभावका कुछ अंश उसमें अवश्य होना चाहिए. वह अपनी प्रकृतिके अनुरूप ही ऐसी बातें करता है.

कहा दिल अरस मोमिन का, दिल कहा न हुकम का ।
देखो इनों का बेवरा, हिसे रुह के हैं बका ॥ ११
क्योंकि ब्रह्मात्माओंके हृदयको ही परमधाम कहा है. श्रीराजजीके आदेशका हृदय ही नहीं कहा है. इसलिए इन दोनोंका विवरण तो देखो, ब्रह्मात्माओंका मूलस्वरूप अखण्ड परमधाममें है.

मोमिन तन में हुकम, तामें हिसे रुह के देख ।
दिल अरस हक इलम, रुह की हुजत नाम भेख ॥ १२
यद्यपि ब्रह्मात्माओं द्वारा धारण किए गए नश्वर तनमें श्रीराजजीका आदेश कार्य कर रहा है तथापि उसमें ब्रह्मात्माओंका अंश तो अवश्य है. तारतम ज्ञानसे ज्ञात हुआ कि इन आत्माओंका हृदय श्रीराजजीका परमधाम है, इस आदेशने मात्र ब्रह्मात्माओंके नाम एवं वेशका अधिकार जताया है.

जो कदी रुहें इत है नहीं, तो भी एता मता लिए आमर ।
सो अरस बका हक बिना, ले हुजत रहे क्यों कर ॥ १३
यद्यपि ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें आई नहीं हैं तथापि श्रीराजजीके आदेशने ही उनका उत्तरदायित्व वहन किया है. किन्तु श्रीराजजी तथा दिव्य परमधामके बिना उनका यह आदेश ब्रह्मात्माओंका अधिकार लेकर कैसे रह सकता है ?

एता मता रुह का, हुकम के दरम्यान ।
तिन का जोरा चाहिए, जो हक आगूं होसी बयान ॥ १४
ब्रह्मात्माओंकी अपार सम्पदा श्रीराजजीके आदेशके अन्तर्गत दिखाई देती है. इसलिए यह स्वभाविक ही है कि उनका ही महत्व अधिक होना चाहिए. इसकी चर्चा श्रीराजजीके समक्ष होगी.

हांसी न होसी हुकम पर, है हांसी रुहों पर ।
जाको गुनाह पोहोंच्या खिलवतें, कहे कलाम अल्ला यों कर ॥ १५
परमधाममें श्रीराजजीके आदेश पर कोई हँसी होनी नहीं है, वह तो

ब्रह्मात्माओं पर ही होनी है. क्योंकि कुरानमें भी यही उल्लेख है कि मूलमिलावामें इन्हीं ब्रह्मात्माओं पर विस्मृतिका दोष लगा है.

मोमिन बैठे खेल में, अजूँ बीच खाब ।

गुनाह पेहले पोहोंच्या अरस में, करें मासूक रुहें हिसाब ॥ १६
ब्रह्मात्माएँ अभी तक स्वप्नवत् जगतमें बैठकर स्वप्नका खेल देख रहीं हैं.
श्रीराजजीकी विस्मृतिका दोष उनसे पहले ही परमधाममें पहुँच गया है. अब इसका लेखा-जोखा स्वयं श्रीराजजी करेंगे.

हक हुकम तो है सब में, बिना हुकम कोई नाहिं ।

पर यामें हुकम नजर लिए, और रुह का बड़ा मता या माहिं ॥ १७

सर्वत्र श्रीराजजीका ही आदेश कार्य करता है, उसके बिना तो कुछ है ही नहीं. इस जगतमें ब्रह्मात्माओंके नश्वर तन पर भी इसी आदेशकी ही दृष्टि बनी हुई है एवं उनकी सम्पूर्ण सम्पदा भी इसीके अन्तर्गत समाई हुई है.

जेता हिसा तन में जिनका, सो जोरा तेता किया चाहे ।

ए विचार करे सो मोमिन, हक हुकम देसी गुहाए ॥ १८

इस नश्वर शरीरमें जितना अंश ब्रह्मात्माओंकी पर आत्माका तथा श्रीराजजीके आदेशका है उसीके अनुरूप वे अपने-अपने कार्य करते हैं. जो ब्रह्मात्माएँ इस विषय पर विचार करतीं हैं श्रीराजजीका यह आदेश उन्हींकी साक्षी देगा.

ताथें हुकम के सिर दोस दे, बैठ न सकें मोमन ।

अरस दिल खुदी से क्यों डरें, लिए हक इलम रोसन ॥ १९

इसलिए ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके आदेश पर दोषारोपण कर मौन नहीं रह सकतीं. जिनका हृदय तारतम ज्ञानके द्वारा प्रकाशित हो गया है ऐसी धामहृदया आत्माएँ अपने स्वाभिमानका भय क्यों रखेंगी ?

गुनाह नूर तजल्ला मिनें, पोहोंच्या रुहों का जित ।

कह्या गुनाह कुलफ मुंह मोतिन, दिल महंमद कुंजी खोलत ॥ २०

कुरानमें ऐसा उल्लेख है कि अपने प्रियतम धनीकी विस्मृतिका ब्रह्मात्माओंका दोष परमधाम मूलमिलावा तक पहुँच गया है. परमात्माने रसूल मुहम्मदको

इस प्रकार कहा कि इन मोतीस्वरूप आत्माओंके मुख पर दोषरूपी ताला लगा हुआ है. इसलिए ये मौन हैं. सदगुरु श्री देवचन्द्रजी महाराज द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञानरूपी कुञ्जीके द्वारा वह ताला खुल जाएगा.

हिसाब जिनों हाथ हक के, अरस अजीम के माहिं ।

अरस तन बीच खिलवत, ताको डर जरा कहूँ नाहिं ॥ २१

जिन ब्रह्मात्माओंका लेखा-जोखा परमधाममें स्वयं श्रीराजजीके हाथमें है एवं जिनके मूल तन (परात्मा) मूलमिलावेमें हैं, उनको किसी भी प्रकारका भय नहीं है.

करी हांसी हकें रुहों पर, जिन वास्ते किया खेल ।

रुहों बहस किया इसक का, बेर तीन देखाया माहें लैल ॥ २२

इस प्रकार श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको विस्मृति देकर उनकी हँसी की है. इस खेलकी रचना भी उनके लिए ही हुई है. ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजीके साथ प्रेमके महत्वके विषयमें ही सम्वाद किया था. इसी महत्वको समझानेके लिए उन्हें तीन बार अक्षरब्रह्मकी इस महान रात्रिमें यह खेल दिखाया है.

हक आगूँ कहे महंमद, मोहे अरस में बिना उमत ।

हकें दिया प्याला मेहर कर, कहे मोहे मीठा न लगे सरबत ॥ २३

रसूल मुहम्मदने परमधाममें परमात्माके समक्ष यह कहा कि मुझे अपने समुदायके बिना आपका दिया हुआ कृपारूपी रसका प्याला सुमधुर नहीं लग रहा है.

हकें दोस्त कहे औलिए, भए ऐसे बुजरक ।

इनों को देखे से सवाब, जैसे याद किए होए हक ॥ २४

इन्हीं ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीने अपने मित्र कहा है. इसीलिए इस जगतमें भी इनकी बड़ी महिमा है. इनके दर्शन मात्रसे भी नश्वर जगतके प्राणीको परमात्माके स्मरणके समान फल प्राप्त होता है.

जित पर जले जबराईल, पोहोंच्या न बिलंदी नूर ।

बिना रुहें इसारतें खिलवत, दूजा ए कौन जाने मजकूर ॥ २५

परमधाममें प्रवेश करते समय जिब्रील फरिश्ताके भी पहुँच जलने लगे थे,

जिसके कारण वह प्रवेश नहीं कर सका था. ऐसे दिव्य परमधामके अन्तरङ्ग स्थल मूलमिलावेके गूढ़ रहस्योंको ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कौन जान सकता है ?

अलस्तो बेरब कहा हक ने, तब जवाब दिया रुहन ।
कोई और होवे तो देवहीं, ए फुरमान कहे सुकन ॥ २६
श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंसे कहा, 'क्या मैं तुम्हारा स्वामी नहीं हूँ ?' उस समय ब्रह्मात्माओंने 'अवश्य आप हमारे स्वामी हैं' इस प्रकार उत्तर दिया था. कुरानमें इस प्रकारका भी उल्लेख है कि वहाँ पर ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई होते तो ही तो वे उत्तर देते.

तुम रुहें जात नासूत में, जाओगे मुझे भूल ।
तब तुम ईमान ल्याइयो, मैं भेजौंगा तुम पर रसूल ॥ २७
श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको यह भी कहा, हे आत्माओ ! तुम मृत्युलोकमें जा रही हो. वहाँ जाकर मुझे भूल जाओगी. मैं तुम्हारे लिए अपना सन्देश देकर रसूलको भेजूँगा, तब तुम उस पर विश्वास करना.

तुम माहों माहें रहियो साहेद, इत मैं भी साहेद हों ।
ए जिन भूलो तुम सुकन, मैं फुरमान भेजौं तुमको ॥ २८
तुम परस्पर एक दूसरेकी साक्षी बनना. यहाँ पर मैं भी तुम्हारा साक्षी रहूँगा.
तुम यह बात नितान्त नहीं भूलना कि मैं तुम्हें अपना सन्देश भेजूँगा.
और साहेद किए हैं फिरस्ते, सो भी देवेंगे साहेदी ।
सो रसूल याद देसी तुमें, जो मेरे आगूं हुई इतकी ॥ २९
अन्य फरिश्तोंको भी तुम्हारे लिए साक्षी बनाया है. वे भी तुम्हें साक्षी देंगे.
अभी मेरे समक्ष जो परिचर्चा हुई है उसकी स्मृति तुम्हें रसूल दिलाएँगे.

ऐसी बडाई औलियों, हकें अपने मुख दे ।
कोई याको न जाने मुझ बिना, मैं छिपाए तले कबाए के ॥ ३०
इस प्रकार श्रीराजजीने अपने मित्रस्वरूप ब्रह्मात्माओंको विशेष महत्त्व दिया

है. उन्होंने यह भी कहा कि ब्रह्मात्माओंको मेरे बिना और कोई नहीं जानता है. मैंने इन्हें अपनी शरणमें छिपा कर रखा है.

मांगी हुकमें रूह की हुजतें, दीजे दुनी में लाड लजत ।

सो हक आप मंगावत, कर हाँसी जुदाई बीच वाहेदत ॥ ३१

श्रीराजजीके आदेशने ब्रह्मात्माओंका अधिकार लेकर इस स्वप्नवत् जगतमें श्रीराजजीसे लाड-प्यार माँगा है. वैसे तो यह सब श्रीराजजी ही मँगवा रहे हैं. क्योंकि वे ही ब्रह्मात्माओंको वियोग देकर उनकी हाँसी करनेवाले हैं.

कबूँ न जुदागी बीच वाहेदत, ए इलमें किए बेसक ।

तेहेकीक बैठे तलें कदमों, न जुदे रूहें हादी हक ॥ ३२

तारतम ज्ञानने निःसन्देह बना दिया है कि परमधाममें कभी भी वियोग नहीं होता है. हम निश्चय ही श्रीराजजीके चरणोंमें बैठीं हुई हैं. इस प्रकार हम श्रीराजजी तथा श्यामाजीसे दूर नहीं हुई हैं.

हुआ रबद वास्ते इसक, सबों बडा कहा अपना ।

हकें हाँसी करी हादी रूहोंसों, कहे देखो खेल फना ॥ ३३

प्रेमके लिए ही परमधाममें परिचर्चा हुई है. उस समय सभीने अपने प्रेमको सविशेष कहा. तब श्रीराजजीने श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंका उपहास करते हुए उन्हें नश्वर जगतका खेल देखनेके लिए कहा.

खेल का जोस आया सबों, इसक न रहा किन ।

सब चाहें साहेबी खेल की, हक इसक न नजीक तिन ॥ ३४

अब सभी ब्रह्मात्माओं पर खेलका जोश चढ़ गया है. अब किसीके हृदयमें भी प्रेमका आवेग नहीं रहा. सभी खेलमें अपना प्रभुत्व चाहने लगीं हैं. इसलिए श्रीराजजीका प्रेम उनके निकट नहीं रहा है.

था रबद सबों इसक का, हक देत फेर फेर याद ।

रूहें क्योंए न छोड़ें खेल को, दुख लागया ऐसा कोई स्वाद ॥ ३५

मूलमिलावामें सभीने प्रेमकी परिचर्चा की थी इसलिए श्रीराजजी उसी घटनाको बार-बार याद दिलाते हैं. किन्तु ब्रह्मात्माएँ किसी भी प्रकार इस

नश्वर खेलको नहीं छोड़ रही हैं। उन्हें दुःखरूपी जगतका कोई ऐसा मधुर स्वाद लग गया है।

जब देखिए सामी खेल के, तो बीच पड्यो ब्रह्मांड ।

एती जुदाई हक अरस के, और खेल वजूद जो पिंड ॥ ३६

जब खेलकी ओर दृष्टि डालते हैं तब ज्ञात होता है कि हमारे और श्रीराजजीके मध्य यह पूरा ब्रह्मांड ही आवरण रूप बना हुआ है। इस नश्वर खेलका यह क्षणभङ्गर शरीर ही हमें अखण्ड परमधामसे दूर कर रहा है।

हक इलमें ए पिंड देखिए, ए पिंड बीच अरस तन ।

एक जरा जुदागी ना रही, अरस वाहेदत बीच वतन ॥ ३७

तारतम ज्ञानके द्वारा इस शरीरका अस्तित्व तो देखो, यह तो पर आत्माके हृदयकी कल्पना मात्र है। परमधाम-मूलमिलावेमें श्रीराजजी और हमारे मध्य लेशमात्र भी वियोग नहीं है।

जाहेर नजरों खेल देखिए, कहूं नजीक न अरस हक ।

तरफ भी न पाई किनहूं, बीच इन चौदे तबक ॥ ३८

यदि बाह्यदृष्टिसे इस जगतका खेल देखते हैं तो श्रीराजजी तथा दिव्य परमधाम कोई भी निकट नहीं हैं। इतना ही नहीं इन चौदह लोकोंमें उनकी दिशा भी किसीको प्राप्त नहीं हुई है।

जबथे पैदा भई दुनियां, रही दूर दूर थे दूर ।

फना बका को न पोहोंचहीं, ताथे कोई न हुआ हजूर ॥ ३९

जबसे इस संसारकी रचना हुई है तभीसे यहाँके जीव दिव्य परमधामसे अत्यन्त दूर रहे हैं। नश्वर जगतकी कोई भी वस्तु अखण्ड धाम तक नहीं पहुँच सकती है। इसलिए इस जगतके जीवको परमधामका ज्ञान नहीं हुआ है।

दोऊ गिरो उतरीं दोऊ अरस से, रुहें और फिरस्ते ।

हकें इलम भेज्या इनों पर, सो ले दोऊ अरसों पोहोंचे ए ॥ ४०

ब्रह्मसृष्टि तथा ईश्वरीसृष्टिके दो समुदाय क्रमशः परमधाम तथा अक्षरधामसे

इस जगतमें अवतरित हुए हैं। श्रीराजजीने इनके लिए तारतम ज्ञान भेजा है। उसीको ग्रहण कर ये दोनों अपने-अपने धाममें पहुँचेंगे।

आए फिरस्ते नूर मकान से, अरस अजीम मकान रुहन ।

कलाम अल्ला हक इलम, ए आए ऊपर रुह मोमन ॥ ४१

ईश्वरीसृष्टिका समुदाय अक्षरधामसे अवतरित हुआ है। ब्रह्मात्माओंका मूलघर दिव्य परमधाम है। वस्तुतः परमात्माके वचन एवं ब्रह्मज्ञान ब्रह्मात्माओंके लिए ही अवतरित हुए हैं।

दोऊ गिरोह जो उतरी, दोऊ अरसों से आईं सोए ।

सो आप अपने अरस में, बिना लुढ़नी न पोहोंचे कोए ॥ ४२

ब्रह्मसृष्टि तथा ईश्वरीसृष्टियोंका समुदाय क्रमशः परमधाम तथा अक्षरधामसे इस जगतमें अवतरित हुआ है। दोनोंमें कोई भी जागृतबुद्धिके ज्ञानके बिना अपने-अपने धाममें नहीं पहुँच सकता है।

आप अपने अरस में, जाए ना सके बिना इलम ।

तो फुरमान इलम भेजिया, रुहें दरगाही जान खसम ॥ ४३

ये दोनों समुदाय तारतम ज्ञानके बिना अपने-अपने धाममें जागृत नहीं हो सकते हैं। इसीलिए श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको अपनी अङ्गना समझकर अपना आदेश तथा जागृतबुद्धिका ज्ञान तारतम भेजा है।

तो अरस कह्वा दिल मोमिन, जो पकड़ा इलम हक ।

हक सूरत सुध अरसों की, रुहों रही न जरा सक ॥ ४४

ब्रह्मात्माओंने श्रीराजजी द्वारा प्रदत्त तारतम ज्ञान प्राप्त किया है इसीलिए इनके हृदयको परमधाम कहा है। इन ब्रह्मात्माओंको श्रीराजजीके स्वरूप, अक्षरधाम एवं अक्षरातीत परमधामके विषयमें किसी भी प्रकारका सन्देह नहीं रहा है।

सोई मोमिन जाको सक नहीं, और दिल अरस हक हुकम ।

पट खोले नूर पार के, आए दिल में हक कदम ॥ ४५

ब्रह्मात्माएँ वे कहलाती हैं जिनमें किसी भी प्रकारका सन्देह नहीं है और श्रीराजजीके आदेशसे जिनका हृदय परमधाम बन गया है। स्वयं श्रीराजजीने

अक्षरसे परे अक्षरातीत परमधामके द्वार खोलकर ब्रह्मात्माओंके हृदयमें अपने चरणकमल स्थापित किए हैं।

पेहले पट दे खेल देखाइया, दई फारमोसी हाँसी कों ।

दिया बेसक इलम अपना, तो भी न आवें होस मों ॥ ४६

सर्वप्रथम ब्रह्मात्माओं पर हँसी करनेके लिए श्रीराजजीने उनके हृदयमें भ्रमका आवरण डालकर उन्हें नश्वर जगतका खेल दिखाया। फिर उन्होंने ही जागृत बुद्धिका ज्ञान प्रदान कर उनका सन्देह दूर कर दिया, तथापि ब्रह्मात्माएँ अभी तक सचेत नहीं हो रहीं हैं।

इलमें अंदर जगाइया, तिन में जरा न सक ।

कहे हुई है होसी अरसों की, रुहें बैठी कदम तलें हक ॥ ४७

इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि तारतम ज्ञानने ब्रह्मात्माओंकी अन्तर्दृष्टि खोल दी है। तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत होकर उन्होंने अक्षरधाम तथा परमधामकी पहचान की है। उन्हें यह अनुभव भी हुआ कि वे तो श्रीराजजीके चरणोंमें ही बैठी हुई हैं।

इन बातों सक जरा नहीं, तो दिल अरस कहा मोमन ।

तो भी टले ना बेहोसी, वास्ते हाँसी बीच वतन ॥ ४८

इस विषयमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है, इसीलिए ब्रह्मात्माओंके हृदयको परमधाम कहा है। तथापि अभी तक उनकी मूर्च्छा नहीं टूटी है क्योंकि परमधाममें उन पर हँसी होनी है।

विरहा सुनत रुहें अरस की, तबहीं जात उड तन ।

सो गवाए याद कर कर हकें, जो वीतक अरस वचन ॥ ४९

श्रीराजजीका वियोग सुनते ही परमधामकी आत्माओंके नश्वर शरीर उसी समय छूट जाने चाहिए। किन्तु श्रीराजजीने ही परमधामकी घटनाओंको पुनः पुनः याद करवाकर वारंवार विरहका गायन करवाया है।

मैं जान्या प्रेम आवसी, विरहे के वचनों गाए ।

सो अव्वल से ले अबलों, विरहा गाया लडाए लडाए ॥ ५०

मैंने यह सोचा था कि विरहके इन वचनोंको वारंवार गाने पर हृदयमें प्रेमभाव

जागृत होगा। इसीलिए आरम्भसे लेकर अभी तक मैंने विरहके गीतोंको बड़े प्रेमसे गाया।

सो गाए विरहा न आइया, प्रेम पड़ा बीच चतुराए ।
हांसी कराई हुकमें, वचनों प्यार लगाए ॥ ५१

इतना गायन करने पर भी हृदयमें प्रेमभाव जागृत नहीं हुआ। मुझे ऐसा आभास हुआ कि मेरी चतुराईसे प्रेम दूर हो गया है। श्रीराजजीके आदेशने ही विरहके इन वचनोंके प्रति प्रीति उत्पन्न कर मेरी हँसी करवाई है।

सो गाए गाए हुआ दिल सखत, मूल इसक गया भूलाए ।
मन चित बुध अहंकारें, गुज्जा अरस कह्या बनाए ॥ ५२

अब तो विरहके इन गीतोंको गाते-गाते मेरा हृदय भी कठोर हो गया और धामधनीका मूल प्रेम भी खो गया। तथापि मैं अपने मन, बुद्धि, चित्त तथा अहङ्कारके द्वारा परमधामके अप्रकट रहस्योंका वर्णन कर रहा हूँ।

अरस मता जेता हुता, किया जाहेर नजर में ले ।
हमें न आया इसक सुपने, ए किया वास्ते जिन के ॥ ५३
परमधामके सभी गूढ़ रहस्योंको ध्यानमें रखकर उन्हें प्रकट करनेका प्रयत्न किया तथापि जिसके लिए यह सब किया है वह प्रेम स्वर्जमें भी प्राप्त नहीं हुआ।

चौदे तबक बेसक हुए, इन बानी के रोसन ।
सो इलम ले कायम हुए, सुख भिस्त पाई सबन ॥ ५४
इस तारतम वाणीके प्रकाशसे चौदह लोकोंके लोगोंका संशय मिट गया है। यहाँके प्राणी इस ब्रह्मज्ञानको लेकर अखण्ड हो गए एवं सभीको मुक्तिस्थलोंका सुख प्राप्त हुआ।

हक खिलवत गाए से, जान्या हम को देसी जगाए ।
इसक पूरा आवसी, पर हकें हांसी करी उलटाए ॥ ५५
मेरी यह धारणा थी कि श्रीराजजीके अन्तरङ्गस्थल मूलमिलावाके रहस्योंको

प्रकट करने पर मेरी आत्मामें जागृति आ जाएगी जिसके कारण मेरे हृदयमें प्रेमभाव जागृत होगा. किन्तु श्रीराजजीने मुझ पर हँसी करनेके लिए यह सारी स्थिति ही उलटी कर दी है.

जो देते हम को इसक, तो क्यों सकें हम गाए ।

दिल अरस पोहोंचें रूह इसकें, तो इत क्यों रह्यो रूहों जाए ॥ ५६

यदि श्रीराजजी मुझे शाश्वत प्रेम प्रदान करते तो मुझसे उनका गुणगान कैसे होता ? क्योंकि धाम हृदया ब्रह्मात्माके हृदयमें प्रेम उत्पन्न होते ही उसकी सुरता परमधाम पहुँच जाती है फिर उसका यहाँ पर रहना कैसे सम्भव हो सकता ?

सब अंग हमारे हक हाथ में, इसक माँगें रोए रोए ।

सब अंग हमारे बांध के, हक आप करें हांसी सोए ॥ ५७

यद्यपि हम रो-रोकर श्रीराजजीसे प्रेम माँगते हैं किन्तु हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्ग उनके ही हाथमें हैं. श्रीराजजी हमारे अङ्ग-प्रत्यङ्गोंको अपने अधीन कर हम पर हँसी कर रहे हैं.

हम हुकम के हाथ में, हक के हाथ हुकम ।

इत हमारा क्या चले, ज्यों जाने त्यों करें खसम ॥ ५८

वस्तुतः हम श्रीराजजीके आदेशके अधीन हैं और उनका आदेश उनके ही अधीन है. इसलिए इस जगतमें हमारा क्या वश चल सकता है ? श्रीराजजी जैसा चाहते हैं वैसा ही करते हैं.

महामत कहे ऐ मोमिनों, हकें भूलाए हांसी कों ।

हम दौडे जान्या लें इसक, हम को डारे बका इलम मों ॥ ५९

महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीने हम पर हँसी करनेके लिए ही हमें भ्रमित किया है. हम तो प्रेम प्राप्त करनेके लिए दौड़ रहे थे किन्तु उन्होंने हमें अपने ज्ञानकी ओर मोड़ दिया है.

वरनन कराए मुझपें, हकें सब अपने अंग ।

सो विध विध विवेक सों, सो गाया दिल रुह संग ॥ १

श्रीराजजीने मुझसे अपने सभी अङ्गोंका वर्णन करवाया. मैंने भी अन्तरसे विचार कर उनके सभी अङ्गोंका प्रेमपूर्वक वर्णन किया.

जो जोरा होए इसक का, तो निकसे ना मुख दम ।

सो गाए के इसक गमाइया, जोरा कराया इलम ॥ २

यदि हृदयमें प्रेमका प्रवाह प्रबल हो जाता तो मुखसे एक शब्द भी व्यक्त नहीं हो सकता. किन्तु तारतम ज्ञानने इतना जोर किया कि मैंने श्रीराजजीके गुणोंको गा-गाकर अपना प्रेम ही गँवा दिया.

इलम दिया याही वास्ते, कहूं जरा न रही सक ।

अब्बल से आज दिन लगे, ऐसा कराया हक ॥ ३

श्रीराजजीने इसीलिए मुझे जागृतबुद्धिका ज्ञान प्रदान किया कि मेरे हृदयमें किसी भी प्रकारका सन्देह न रहे. आरम्भसे आज तक श्रीराजजीने मुझसे इस प्रकार वाणी गायन करवाया है.

इसक हमसे जुदा किया, दिया दुनी को सुख कायम ।

वचन गवाए हमपें, जो हमेसगी दायम ॥ ४

इस प्रकार श्रीराजजीने मुझसे अपना प्रेम खींच लिया और मुझे तारतम ज्ञान प्रदान कर मेरे द्वारा अखण्ड परमधामका वारंवार वर्णन करवा कर जगतके जीवोंको अखण्ड सुख दिलाया.

नैन श्रवन या रसना, जो अंग किए वरनन ।

तिन इसक देखाया हक का, और देख्या ना या बिन ॥ ५

मैंने श्रीराजजीके अङ्गोंमें नयन, श्रवण, रसना आदि जिनका भी वर्णन किया है उन सभीने मुझे श्रीराजजीके प्रेमका ही दर्शन करवाया. प्रेमके अतिरिक्त मुझे उनमें कुछ भी दिखाई नहीं दिया.

जो अंग देखे आखर लग, तिनसे देखे चौदे तबक ।

और काहूं न देख्या कछुए, बिना हक इसक ॥ ६

मैंने जिन नेत्रोंसे श्रीराजजीके अङ्गोंके दर्शन किए हैं उन्हींके द्वारा जब चौदह लोकोंकी ओर दृष्टि डाली तो वहाँ पर भी मुझे श्रीराजजीके प्रेमके अतिरिक्त अन्य कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

बूझी तुमारी साहेबी, दिया सब अंगों इसक देखाए ।

तुमारे हर अंगों ऐसा किया, रहे चौदे तबक भराए ॥ ७

हे धामधनी ! मैंने आपकी प्रभुता समझ ली है। आपने अपने सभी अङ्गोंसे अपने प्रेमका दर्शन करवाया है। आपके प्रत्येक अङ्गोंमें मुझे इतना प्रेम दिखाई दिया कि अब मैं चौदह लोकोंमें सर्वत्र आपका ही प्रेम देखने लगा हूँँ।

रसनाएं इसक देखाइया, तिन भर्या जिमी आसमान ।

इसक बिना न पाइए, बीच सकल जहान ॥ ८

आपकी रसनाने इतना प्रेम दिखाया कि वह भूमिसे लेकर आकाश पर्यन्त व्यास हो गया है। इसीलिए पूरे जगतमें आपके प्रेमके अतिरिक्त अन्य कुछ भी दिखाई नहीं देता है।

सब अंग देखे ऐसे हक के, ऐसा दिया इलम ।

हक इसक सबों में पसर्या, इसक न जरा माहें हम ॥ ९

आपने मुझे ऐसा ज्ञान प्रदान किया कि मैंने आपके सभी अङ्गोंके दर्शन किए जिससे सर्वत्र आपका ही प्रेम व्यास दिखाई देने लगा किन्तु मुझमें ही यह प्रेम लेश मात्र भी नहीं रहा।

यों हर अंग हक के, सब सोए किए रोसन ।

आसमान जिमी के बीच में, कछू देख्या न इसक बिन ॥ १०

इस प्रकार श्रीराजजीके प्रत्येक अङ्गोंसे सर्वत्र प्रेम ही प्रकाशित होता हुआ दिखाई देता है। भूमिसे लेकर आकाश पर्यन्त प्रेमके अतिरिक्त अन्य कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

इसक हमारा हक सों, दिया हुकमें आडा पट ।

हक का इसक हम सों, किया दुनियां में प्रगट ॥ ११

हमारा भी प्रेम श्रीराजजीके प्रति है किन्तु उनके आदेशने बीचमें ही आवरण डाल दिया और हमसे इस जगतमें उनके प्रेमको प्रकट करवाया.

यों हांसी हम पर करी, बनाए हमारे अकस ।

इसक लिया खेंच के, होसी एही हांसी बीच अरस ॥ १२

इस प्रकार श्रीराजजीके आदेशने हमारे नश्वर शरीर तैयार कर हमारी हँसी की. उसने हमसे प्रेम ही छीन लिया जिसके कारण परमधाममें हमारी सर्वाधिक हँसी होगी.

हक फेर फेर ऊपर जगावहीं, बिना हुकम न जागे अन्दर ।

फेर फेर बडाई मांगें इत, हक हांसी करें इनों पर ॥ १३

श्रीराजजी हमें ऊपरसे वारंवार जागृत करते हैं किन्तु उनके आदेशके बिना हम अन्दरसे जागृत नहीं हो सकते. हम इस जगतमें वारंवार जगतकी प्रभुता माँगते हैं इसलिए कि वे हम पर अधिक हँसी करेंगे.

मांगें दुनी में हक लजत, सो भी बुजरकी वास्ते ।

इलमें हुए यों बेसक, एक जरा न दुनियां ए ॥ १४

हम इस नश्वर जगतमें श्रीराजजीका प्रेम भी चाहते हैं तो वह भी नश्वर जगतकी मिथ्या प्रतिष्ठाके लिए ही है. अब तो हम तारतम ज्ञानके द्वारा इस प्रकार सन्देह रहित हो गए हैं कि यह सम्पूर्ण जगत नितान्त सार रहित प्रतीत होने लगा है.

यों जान मांगें फना मिने, लजत दुनी में हक ।

यों हुकम हांसी करावहीं, दे अपना इलम बेसक ॥ १५

यह जानते हुए भी हम मिथ्या प्रतिष्ठाके लिए नश्वर जगतमें श्रीराजजीका सुख चाहते हैं. वे सन्देह निवारक तारतम ज्ञान प्रदान करके भी अपने आदेशके द्वारा हमारी हँसी करवा रहे हैं.

आप मंगावें आप देवहीं, ए सब हांसी कों ।
ए सब जाने मोमिन, सक नहीं इनमों ॥ १६
श्रीराजजी स्वयं हमसे इच्छा उत्पन्न करवाते हैं और स्वयं ही इसकी पूर्ति
करते हैं, यह सब हमारे उपहासके लिए है. ब्रह्मात्माएँ इस रहस्यको
भलीभाँति समझती हैं. इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है.

कैयों पेहेचान होवहीं, कैयों नहीं पेहेचान ।
सो सब होत हांसीय को, करत आप सुभान ॥ १७
अनेक आत्माओंको इस रहस्यकी पहचान हो गई है तो कतिपयको इसकी
पहचान नहीं हुई. श्रीराजजी हम पर हँसी करनेके लिए ही यह सब कर रहे
हैं.

ए किया वास्ते इसक बेवरे, सो इसक न आया किन ।
काहूं जोस जरा आइया, काहूं जरा न किस तन ॥ १८
वस्तुतः प्रेमके निरूपणके लिए ही इस नश्वर जगतकी रचना की गई है.
इसीलिए इस जगतमें किसी भी ब्रह्मात्माके हृदयमें प्रेम भाव जागृत नहीं
हुआ. यहाँ पर किसी आत्माको प्रेमका लेशमात्र आवेश आ गया किन्तु
किसीको तो इतना भी नहीं आया है.

वास्ते रबद इसक के, जो किया बीच खिलवत ।
सो हुकम आडा सब दिलों, इसक न काहूं आवत ॥ १९
परमधाम-मूलमिलावेमें प्रेमकी अधिकताके विषयमें ही परिसम्बाद हुआ था.
अब सभी आत्माओंके हृदयमें श्रीराजजीका आदेश ही व्यवधान स्वरूप बना
हुआ है, जिसके कारण किसीके भी हृदयमें प्रेमका आविर्भाव नहीं होता है.

इलम दिया सबन को, किया अरस दिल मोमिन ।
दूर कर सब हिजाब, आप आए अरस दिल इन ॥ २०
अब तो श्रीराजजीने सभी ब्रह्मात्माओंको तारतम ज्ञान प्रदान कर उनके
हृदयको परमधाम बनाया है एवं अज्ञानके आवरणको दूर कर स्वयं वे हमारे
हृदयमें आकर विराजमान हो गए हैं.

पेहेचान सब अरसों की, अरसों बीच की हकीकत ।
सो जरा छिपी ना रखी, सब दई हक मारफत ॥ २१

इस कारण अब हम सभीको सभी धार्मोंकी तथा उनके अन्दरकी सम्पूर्ण यथार्थताका बोध (पहचान) हो गया है. श्री राजजीने हमें अपनी पूर्ण पहचान करवाई है जिससे अब कणमात्रकी यथार्थता भी हमसे छिपी नहीं है.

पर इसक न दिया आवने, वास्ते रबद के ।
हक आएं इसक क्यों न आवहीं, किया हुकर्मे हांसी को ए ॥ २२

किन्तु प्रेमकी अधिकताके विषयमें सम्वाद होनेके कारण उन्होंने हमारे हृदयमें प्रेमभाव जागृत होने नहीं दिया. अन्यथा हमारे हृदय पर स्वयं श्रीराजजीके आगमन होने पर प्रेमभाव क्यों जागृत नहीं होता किन्तु श्रीराजजीके आदेशने ही हम पर हँसी करनेके लिए यह सब व्यवस्था की है.

रुहों लजत मांगी हकपें, अरस की दुनियां माहिं ।
तो इलम दिया सबों अपना, बिना इलम लजत नाहिं ॥ २३

ब्रह्मात्माओंने इस नश्वर जगतमें भी श्रीराजजीसे परमधामके सुखोंकी कामना की. इसीलिए उन्होंने सभी ब्रह्मात्माओंको जागृत बुद्धिका ज्ञान प्रदान किया क्योंकि तारतम ज्ञानके बिना परमधामके सुखोंका अनुभव नहीं हो सकता है.

जो हक देवें इसक, तो इसक देवें सब उडाए ।
सुध न लेवे वार पार की, देवे वाहेदत बीच डुबाए ॥ २४

यदि श्रीराजजी हमें शाश्वत प्रेम प्रदान करते तो प्रेमके जागृत होते ही यह नश्वर जगत हमसे छूट जाता. यह प्रेम हमें नश्वर जगत तथा परमधामकी सुधि लेने ही नहीं देता अपितु अखण्ड परमधामके एकात्मभावमें ही निमग्न कर देता.

जब इलम सबों आइया, सो कछू सखती देवे दिल ।
तिन सखती तन अरस की, पाइए लजत असल ॥ २५

जब सभीको तारतम ज्ञान प्राप्त हो जाता है तब वह उनके हृदयको कुछ कठोर बना देता है. इसी कठोरताके कारण परमधामके शाश्वत सुखोंका अनुभव हो सकता है.

हुकम मांगे देवे हुकम, सो सब वास्ते हांसी के ।

ए बातें होसी सब खिलवतें, इसक रबद किया जे ॥ २६

वस्तुतः श्रीराजजीका आदेश ही हमसे इस प्रकारकी माँग करवाता है और स्वयं इसकी पूर्ति भी करता है. यह सब हम पर हँसी करनेके लिए ही है. हमने अपने प्रेमकी अधिकताके विषयमें श्रीराजजीसे सम्बाद किया था इसलिए मूलमिलावामें जागृत होने पर ये सम्पूर्ण बातें होंगी.

अनेक हकें हिकमत करी, सो इन जुबां कही न जाए ।

होसी हांसी सबों अरस में, जब करसी बातें बनाए ॥ २७

इस प्रकार श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंके उपहासके लिए अनेक युक्तियाँ की हैं जिनका वर्णन जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकता. जब हम परमधाममें जागृत होकर परस्पर अपने-अपने अनुभवोंकी चर्चा करेंगे तब हम सभी पर अवश्य हँसी होंगी.

हकें किया सब हांसीय को, जो जरे जरा माहें खेल ।

इसक रबद के कारने, तीन बेर आए माहें लैल ॥ २८

इस जगतमें पल-पलमें तथा कण-कणमें जो भी व्यतीत हो रहा है, वह सब श्रीराजजीने हमारी हँसीके लिए ही करवाया है. प्रेमकी अधिकताके विषयमें चर्चा करनेके कारण ही आत्माएँ अक्षरब्रह्मकी महान रात्रिमें इस जगतमें तीन बार अवतरित हुई हैं.

हक हांसी बातें जाने हक, या जाने हक इलम ।

इन इलमें सिखाई रुहों, सो बातें अरस में करसी हम ॥ २९

श्रीराजजी जिस प्रकार हमारा उपहास कर रहे हैं, वे स्वयं उसे जानते हैं या उनका ज्ञान जानता है. इसी तारतम ज्ञानने ब्रह्मात्माओंको यह सब सिखाया है कि हम परमधाममें जागृत होने पर खेलके अनुभवकी सभी बातें करेंगे.

एही खुलासा सब बात का, हकें किया हांसी कों ।

रेहेता रबद रुहों इसक का, सब केहेतियां बडा हम मों ॥ ३०

इन सभी बातोंका यही स्पष्टीकरण है कि श्रीराजजीने हम पर हँसी करनेके

लिए ही यह सब किया है. क्योंकि प्रेम परिचर्चाके समय सभी ब्रह्मात्माओंने अपने प्रेमको ही अत्यधिक बताया था.

याही वास्ते खेल देखाइया, इसक गया सबों भूल ।

फेर के सब सुध दई, भेज फुरमान रसूल ॥ ३१

इसी प्रेमका निरूपण करनेके लिए ही जगतका यह नश्वर खेल दिखाया है. हम सभी ब्रह्मात्माएँ अपने प्रेमको ही भूल गई हैं. रसूलके हाथ अपना सन्देश (कुरान) भेजकर उन्होंने हमें पुनः सुधि दी है.

इनमें इसारतें रमूजें, सो खोल न सके कोए ।

कुंजी भेजी हाथ रुहअल्ला, इमाम हाथ खोलाया सोए ॥ ३२

इस सन्देशमें विभिन्न रहस्योंको सङ्केतमें समझाया है. इसलिए उन रहस्योंको कोई भी स्पष्ट नहीं कर सका. इनको खोलनेके लिए सदगुरु श्रीदेवचन्द्रजी महाराजके साथ तारतम ज्ञान रूपी कुञ्जी भेजी और मेरे हाथोंसे इन रहस्योंको स्पष्ट करवाया.

हांसी याही बात की, किए सब खेल में खबरदार ।

तो भी इसक न आवत, हुई हांसी बेसुमार ॥ ३३

इसी बातके लिए हमारा उपहास होगा कि श्रीराजजीने हमें नश्वर खेलमें भी तारतम ज्ञान देकर सचेत करवाया तथापि हमारे हृदयमें प्रेम जागृत नहीं हुआ. इस प्रकार हम पर अपार उपहास होगा.

हक इसक जाहेर हुआ, खेल माहें दम दम ।

और न चौदे तबकों, बिना इसक खसम ॥ ३४

इस नश्वर खेलमें श्रीराजजीका प्रेम क्षण-क्षण प्रकट हो रहा है. इन चौदह लोकोंमें उनके प्रेमके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है.

ऐसा इलम हकें दिया, हुआ इसक चौदे भवन ।

मूल डार पात पसरया, नजरों आया सबन ॥ ३५

श्रीराजजीने ऐसा दिव्य ज्ञान प्रदान किया, जिसके कारण चौदह लोकोंमें सर्वत्र उनका ही प्रेम व्याप्त हुआ दिखाई देने लगा यहाँ तक कि

पातालसे लेकर वैकुण्ठ पर्यन्त यह प्रेम इस प्रकार व्याप्त है कि सर्वत्र वही दृष्टिगोचर हो रहा है।

तले सात तबक जिमीय के, या बीच ऊपर आसमान ।

मूल वृख पात फूल फैलिया, सब हुआ इसक सुभान ॥ ३६

इस मृत्युलोकके नीचे सात पाताल लोक हैं। इसके ऊपर स्वर्गादि छ लोक हैं। इस प्रकार पातालसे लेकर सत्यलोक पर्यन्त वृक्षके मूलसे लेकर शाखाएँ तथा पत्तोंमें भी सर्वत्र श्रीराजजीका ही प्रेम व्याप्त हुआ है।

नजरों आया सबन के, जब पसरया ए इलम ।

तब और न देखे कछू नजरों, बिना इसक खसम ॥ ३७

जब यह प्रेम सर्वत्र व्याप्त हो गया है तब सभीकी दृष्टिमें प्रेम ही प्रेम दिखाई देने लगा। तब सभी लोगोंको श्रीराजजीके प्रेमके अतिरिक्त अन्य कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

हकें अरस कह्या दिल मोमिन, ऐसी दई बुजरकी रुहन ।

दूँढ़ दूँढ़ थके चौदे तबकों, पर बका तरफ न पाई किन ॥ ३८

श्रीराजजीने इस नश्वर जगतमें ब्रह्मात्माओंकी इतनी महिमा प्रतिष्ठित की है कि उन्होंने उनके हृदयको ही अपना परमधाम कह दिया। इन चौदह लोकोंमें अनेक साधकोंने विभिन्न प्रकारसे खोज की किन्तु किसीको भी दिव्य परमधामकी दिशा तक प्राप्त नहीं हुई।

तबक चौदमें मलकूत, ला हवा सुन तिन पर ।

ता पर बका नूर मकान, जो नूर जलाल अक्षर ॥ ३९

इन चौदह लोकोंमें सबसे ऊपरका लोक वैकुण्ठ कहलाता है। उससे आगे शून्य-निराकार है। उससे भी परे अखण्ड अक्षरधाम है जिसके अधिष्ठाता स्वयं अक्षरब्रह्म हैं।

कै ऐसे खेल पैदा फना, होए नूर जलाल के एक पल ।

इन कादर की कुदरत, ऐसा रखत है बल ॥ ४०

इन अक्षरब्रह्मके पलमात्रमें ऐसे अनेकों ब्रह्मण्ड उत्पन्न होकर लय हो जाते

हैं। अक्षरब्रह्मकी शक्ति इतनी समर्थ है कि जिसकी कोई सीमा ही नहीं है।

तरफ अरस अजीम की, कोई जाने ना एक नूर बिन ।

पर गुद्ध मता न जानहीं, जो है नूर जमाल बातन ॥ ४१

इन अक्षरब्रह्मके अतिरिक्त अन्य कोई भी परमधामकी दिशा नहीं जानता है। किन्तु स्वयं अक्षरब्रह्म भी श्रीराजजीकी अन्तरङ्ग लीलाके अप्रकट रहस्योंको नहीं जानते हैं।

सो गुद्ध हक हादीय का, दिया खेल में बीच मोमन ।

तो दिल अरस किया हकें, जो अरस अजीम में इनों तन ॥ ४२

श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंकी अन्तरङ्ग लीलाके गूढ़ रहस्य भी ब्रह्मात्माओंको इस नश्वर जगतमें प्राप्त हुए हैं। इसीलिए इन ब्रह्मात्माओंके हृदयको श्रीराजजीने अपना परमधाम बनाया क्योंकि इनका मूल तन (परात्मा) दिव्य परमधाममें है।

हकें अरस की सुध सब दई, पाई हकीकत मारफत ।

हक हादी रुहें खिलवत, ए बीच असल वाहेदत ॥ ४३

श्रीराजजीने इन ब्रह्मात्माओंको इस नश्वर जगतमें भी परमधामकी सम्पूर्ण सुधि दी है जिससे इनको श्रीराजजी, श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके एकात्मभाव एवं अन्तरङ्ग लीलाके गूढ़ रहस्योंकी यथार्थता एवं पूर्ण पहचान प्राप्त हो गई है।

कहे हुकमें महामत मोमिनों, हक इसक बोले बेसक ।

इसक रबद वाहेदत में, हक उलट हुए आसिक ॥ ४४

महामति श्रीराजजीके आदेशसे कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! श्रीराजजीने जैसा कहा था तदनुसार उनके हृदयका प्रेम ही सर्वश्रेष्ठ है। मूलमिलावामें प्रेम सम्बादके समय श्रीराजजीने जैसे कहा था वे स्वयं इस जगतमें आकर ब्रह्मात्माओंके अनुरागी (आशिक) बन गए।

हक मेहेबूब के जवाब

रुहों मेरे तुमारा आसिक, मैं सुख सदा तुमें चाहों ।
वास्ते तुमारे कै विध के, इसक अंग उपजाओं ॥ १

श्रीराजजी कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! मैं तुम्हारा अनुरागी (आशिक) हूँ और
सर्वदा तुम्हारे सुखोंकी चाहना करता हूँ, तुम्हारे हृदयमें प्रेम प्रकट करनेके
लिए मैं विभिन्न प्रकारके यत्न करता हूँ.

मैं आसिक तुमारा केहेलाया, मैं लिखे इसक के बोल ।
मासूक कर लिखे तुमको, सो भी लिए ना तुम कोल ॥ २
मैं इसीलिए तुम्हारा अनुरागी (आशिक) कहलाया कि मैंने तुम्हारे लिए
प्रेमपूर्ण वचन लिखवाए हैं. मैंने तुम्हें प्रियतमा (माशूका) का सम्बोधन किया
है तथापि तुमने मेरे वचनों पर ध्यान नहीं दिया.

अब्बल बीच और आखर, लिखे तीनों ठौर निसान ।
ए वीतक हम तुम जानहीं, भेजी तुमको पेहेचान ॥ ३
मैंने कुरानके माध्यमसे तुम्हें आरम्भ (ब्रज), मध्य (रास) तथा अन्त
(जागनी) के सभी सङ्केत लिखकर भेजे हैं. यह हमारा वृत्तान्त हम और तुम
ही जानते हैं. तुम्हें इसकी पहचान करवानेके लिए ही यह लिख कर
भिजवाया है.

दो बेर दुनियां नई कर, किन दो बेर दुबाई जहान ।
तुमको लैलत कदर में, दो बेर किन बचाए तोफान ॥ ४
किसने इस सृष्टिका दो बार लय कर दोनों बार नई सृष्टि की है. इस
महिमामयी रात्रि (लैलतुलकद्र) में तुम्हें किसने दो बार बचाया है.

फेर तीसरी बेर दुनी कर, जिनमें होसी फजर ।
सब विध बेसक करके, तुमें खेल देखाया और नजर ॥ ५
पुनः तीसरी बार सृष्टि रचना कर तुम्हें तारतमदृष्टि प्रदान कर यह खेल
दिखाया है जिसमें ब्रह्मज्ञानका प्रभात होगा और तुम सभी जागृत बुद्धिके
ज्ञानके कारण सन्देह रहित हो जाओगे.

तुम जो अरवाहें अरस की, साथ हक जात निसबत ।

ए जो दोस्ती हक हमेसगी, बीच खिलवत के वाहेदत ॥ ६

तुम परमधामकी आत्मा हो तथा मेरी अङ्गस्वरूपा हो. अद्वैत परमधाममें मेरी तुमसे एकात्मभावकी मित्रता है.

कोई तरफ न जाने अरस की, तो मुझे जाने क्यों कर ।

नूर जलाल नूर मकाने, एक इन्हें मेरे तरफ की खबर ॥ ७

इस नश्वर जगतमें कोई भी परमधामकी दिशा नहीं जानता है. इसलिए यहाँके मनुष्य मुझे कैसे जान सकते हैं. अक्षरधामके अधिष्ठाता अक्षरब्रह्मको ही मेरी दिशाकी सुधि है.

दूजा तरफ तो जानहीं, कोई और ठौर बका होए ।

नहीं क्यों जाने तरफ है की, किन तरफ से ठौर ले कोए ॥ ८

दूसरी दिशाकी ओर तो तभी जान सकते हैं यदि कोई अन्य अखण्ड स्थान होता. इस नश्वर जगतके जीव, जिनका कोई अस्तित्व ही नहीं है, अखण्ड धामको कैसे जान सकते हैं ?

खेल कै कोट एक पल में, देख उडावे पैदा कर ।

ऐसी कुदरत नूर जलालपे, नूर मकान ऐसा कादर ॥ ९

अक्षरधामके अधिष्ठाता अक्षरब्रह्म इतने शक्तिसम्पन्न हैं कि वे एक पल मात्रमें ऐसे करोड़ों ब्रह्माण्डोंको उत्पन्न कर लय कर सकते हैं.

ए बातून जो मेरे अरस का, सो सुध नूर को भी नाहें ।

मेरी गुड़ अरस जो खिलवत, तुम इन खिलवत के माहें ॥ १०

परमधामकी मेरी अन्तरङ्ग लीलाओंके रहस्यकी सुधि स्वयं अक्षरब्रह्मको भी नहीं है. परमधामकी एकान्तस्थली मूलमिलावा अत्यन्त गोपनीय है. तुम इसी मूलमिलावेमें बैठी हो.

दोस्ती हक हमेसगी, क्यों भूलाए दई मोमन ।

तुम जो रहें अरस की, मेरे अरस के तन ॥ ११

हे ब्रह्मात्माओ ! मेरी तुमसे सदा सर्वदाकी मित्रता है, उसे कैसे भुलाया

जाए ? तुम परमधामकी आत्माएँ मेरी ही अङ्ग स्वरूपा हो.

अंग हादी मेरे नूर से, तुम रुहें अंग हादी नूर ।

तो अरस कह्या तुम दिल को, जो रुहें वाहेद तन हजूर ॥ १२

श्रीश्यामाजी मेरे ही अङ्गकी तेजस्वरूपा हैं एवं तुम ब्रह्मात्माएँ उनके अङ्गकी तेजरूपा हो. तुम्हारे हृदयको इसीलिए परमधाम कहा है कि तुम्हारे मूलतन (परात्मा) अद्वैत स्वरूपमें मेरे ही निकट हैं.

और भी लिख्या महंमद को, आसमान से तेहेतसरा ।

ए बहु विध बेहेरुल हैवान, जल सिर लग कुफर भरा ॥ १३

रसूल मुहम्मदके द्वारा यह भी सङ्केत भेजा है कि पातलसे लेकर सत्यलोक पर्यन्तके लोक अज्ञानतामें ढूबे हुए मनुष्योंके लिए समुद्रतुल्य हैं. इनमें नास्तिकता एवं वैमनस्यका जल भरा हुआ है.

कै विध के माहें हैवान, कै जिन देव इन्सान ।

बीच मरजिया होए काढी सीप, मिने मोती महंमद पेहेचान ॥ १४

यहाँ पर अनेक लोग पशुवृत्ति वाले हैं, अनेक देवतुल्य हैं तथा अनेक मनुष्यवृत्ति वाले हैं. श्रीश्यामाजीने सदगुरुके रूपमें आकर ऐसे मोह समुद्रमें गोताखोर बनकर गोता लगाया और मोतीकी भाँति तुम ब्रह्मात्माओंकी पहचान की.

सो तुम अजूं न समझे, मैं कर लिख्या मासूक ।

ए सुकन सुन तुम मोमिनों, हाए हाए हुए नहीं टूक टूक ॥ १५

तुम अभी तक यह नहीं समझ सकीं कि मैंने श्रीश्यामाजी और ब्रह्मात्माओंको क्यों अपनी प्रियतमा (माशूका) कहा है. हे ब्रह्मात्माओ ! मेरे इन प्रेमपूर्ण वचनोंको सुनकर तुम्हारा हृदय क्यों विदीर्घ नहीं होता है ?

बसरी मलकी हकी लिखी, आई महंमद तीन सूरत ।

एक अब्बल दो आखर, सो वास्ते तुम उमत ॥ १६

बशरी, मलकी एवं हकी इस प्रकार रसूल मुहम्मदने तीन स्वरूपोंका उल्लेख

किया है. उनमें एक पहले प्रकट होंगे और शेष दो तुम ब्रह्मात्माओंको जागृत करनेके लिए अन्तिम समयमें प्रकट होंगे.

बंदगी मजाजी और हकीकी, ए जो कहियां जुदियां दोए ।

एक फरज दूजा इसक, क्यों न देख्या बेवरा सोए ॥ १७

इसी प्रकार पूजा-अर्चना भी दो प्रकारकी बतलाई हैं. उनमें-से एक मिथ्याभिमानयुक्त (मजाजी) तथा दूसरी सत्यनिष्ठ (हकीकी) है. इसमें प्रथम तो मात्र कर्तव्य समझकर की जाती है जबकि दूसरी प्रेमपूर्ण भावसे की जाती है. इनके विवरणको तुमने क्यों नहीं देखा ?

ए जो फरज मजाजी बंदगी, बीच नासूत हक से दूर ।

होए मासूक बंदगी अरस में, कही बका हक हजूर ॥ १८

मात्र कर्तव्य समझकर की जानेवाली मिथ्याभिमानयुक्त कर्मकाण्डकी उपासना नश्वर जगत तक ही रहती है, परब्रह्मके निकट नहीं पहुँचती है. किन्तु सत्यहृदयसे की जानेवाली सत्यनिष्ठ उपासना परमधामकी कही जाती है. जिससे परमात्माकी निकटताका अनुभव होता है.

दोस्ती कही हक की, तिन में समनून पातसाह ।

पातसाह कौन होए बिना मासूक, देखो इस्म कुरान खुलासा ॥ १९

कुरानमें परमात्माके मित्रोंमें एक समनून नामक राजाका उल्लेख है. मेरी प्रियतमा (ब्रह्मात्माओं) के अतिरिक्त अन्य कौन इस प्रकार श्रेष्ठ हो सकता है. कुरानमें इस नामका स्पष्टीकरण देख लो.

अब्बल दोस्ती हक की, लिखी माहें फुरमान ।

पीछे दोस्ती बंदन की, क्यों करी ना पेहेचान ॥ २०

कुरानमें इस प्रकार उल्लेख है कि सर्वप्रथम परमात्माके साथ मित्रता होनी चाहिए. तत्पश्चात् उनके सेवक (ब्रह्मात्माओं) के साथ होनी चाहिए. तुमने अभी तक इस रहस्यकी पहचान क्यों नहीं की ?

मैं कदीम लिखी मेरी दोस्ती, ए किए न सहूर सुकन ।

तुमको बेसक किए इलमसों, हाए हाए अजूँ याद न आवे रूहन ॥ २१

मैंने अपने अभिन्न अङ्ग ब्रह्मात्माओंके साथ शाश्वत मित्रताकी बात लिखवाई

है. इन वचनों पर भी तुमने विचार नहीं किया. यद्यपि तारतम ज्ञानने तुम्हें सन्देह रहित बना दिया तथापि हे ब्रह्मात्माओ ! तुम्हें अभी तक इस मित्रताका स्मरण नहीं हो रहा है.

दोस्त मेरे मोमिन, और मासूक हादी बेसक ।
तो नाम लिख्या अपना, मैं तुमारा आसिक ॥ २२
मैंने ब्रह्मात्माओंको मेरे मित्र, श्रीश्यामाजीको अपनी प्रियतमा तथा स्वयंको तुम सबके अनुरागीके रूपमें उल्लेख किया है.

मैं लिख्या है तुम को, जो एक करो मोहे साद ।
तो दस बेर मैं जी जी कहूं, कर कर तुमें याद ॥ २३
मैंने यह भी लिखा है कि यदि तुम एक बार मेरा नाम उच्चारण करोगी तो मैं तुम्हें याद करता हुआ दस बार ‘जी हाँ’ करूँगा.

और भी लिख्या मैं तुमको, मैं करत तुमारी जिकर ।
मेरी तुम पीछे करत हो, क्यों कर ना देखी फिकर ॥ २४
मैंने यह भी उल्लेख किया है कि सर्वप्रथम मैं तुम्हें याद करूँगा तदुपरान्त तुम मुझे याद करोगी. अभी तक इस पर तुमने क्यों विचार नहीं किया ?

ए जो मैं लिखी बुजरकियां, सो है कोई तुम बिन ।
जित भेजों मासूक अपना, जो चीन्हे मेरे सुकन ॥ २५
मैंने जितनी महिमा लिखी है वह तुम्हारे बिना अन्य किसकी हो सकती है ?
मेरे इन वचनोंको तुम पहचान सको इसीलिए मैंने तुम्हारे मध्य अपनी प्रियतमा (माशूका) श्री श्यामाजीको भेजा.

मैं किन पर भेजों इसारतें, पढ़ी जाएं न रमूजें किन ।
तुम जानत हो कोई दूसरा, है बिना अरस रूहन ॥ २६
मैं तुम्हारे अतिरिक्त अन्य किनके लिए ये सङ्केत भेजता, किनके द्वारा ये सङ्केत समझे जा सकते हैं ? तुम यह भलीभाँति जानती हो कि तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं है जो इन बातोंको समझ सके.

ए जो औलाद आदम की, सब पूजत हैं हवा ।

सो जाहेर लिख्या फुरमान में, क्या तुम पाया न खुलासा ॥ २७

जो आदमके वंशज मनुष्य हैं वे सभी शून्य निराकारकी उपासना करते हैं।
मेरे आदेशमें यह स्पष्ट उल्लेख है, क्या अभी तक तुम्हें इसका स्पष्टीकरण
नहीं मिला ?

ए जो दुनियां खेल कबूतर, तित भी दिए कुलफ दिल पर ।

पावे हकीकत कलाम अल्हाह की, सो खुले ना लुदंनी बिगर ॥ २८

नश्वर जगतके ये जीव जादूई कबूतरके समान हैं। इनके हृदयमें ताला लगा
हुआ है। इसीलिए कुरानमें निर्दिष्ट मेरे रहस्यपूर्ण वचनोंको प्राप्त करने पर भी
उनको तारतम ज्ञानके बिना इनकी स्पष्टता प्राप्त नहीं हो सकती है।

सो तो दिया मैं तुम को, सो खुले ना बिना तुम ।

जो मेरी सुध द्यो औरों को, तित चले तुमारा हुकम ॥ २९

यह तारतम ज्ञान मैंने तुम्हें प्रदान किया है। अब तुम्हारे बिना अन्य किसीसे
भी ये गूढ़ रहस्य स्पष्ट नहीं होंगे। जब तुम मेरी सुधि सभी जीवोंको देने
लगोगी तब उन पर तुम्हारा आदेश चलने लगेगा।

ए सुकन हकें अव्वल कहे, अरस में महंमद कों ।

केतेक जाहेर कीजियो, बाकी गुझ रखियो दिल मों ॥ ३०

इस प्रकारके वचन पहलेसे ही परमात्माने रसूल मुहम्मदको कहे थे। साथमें
यह भी कहा था कि इनमें-से कतिपय वचनोंको स्पष्ट करना एवं शेष
वचनोंको अपने हृदयमें गुस रखना।

सरा सुकन कराए जाहेर, गुझ रखे बका बातन ।

मूदूया रख्या द्वार मारफत का, वास्ते पेहेचान अरस रहन ॥ ३१

इसीलिए रसूल महम्मदने कर्मकाण्डके सभी वचन प्रकट किए एवं दिव्य
परमधामकी बातें गुस रखीं। उन्होंने परमात्माकी पहचानके द्वार इसीलिए बन्द
रखे थे कि सर्वप्रथम ब्रह्मात्माएँ ही परमात्माकी पहचान कर सकें।

पट बका किने न खोलिया, कै अवतार हुए तिथंकर ।

हक इलम बिना क्यों ना खुले, कै लाखों हुए पैगम्बर ॥ ३२

आज तक अनेकों अवतार तथा तीर्थङ्कर इस जगत पर प्रकट हुए. किन्तु किसीने भी अखण्डके द्वार नहीं खोले हैं. चाहे लाखों पैगम्बर क्यों न प्रकट हो गए हों किन्तु जागृतबुद्धिके ज्ञानके बिना ये द्वार खुल नहीं सकते.

अरस बका पट खोलसी, आखर वखत मोमन ।

साहेब जमाने की मेहर से, दिन करसी बका रोसन ॥ ३३

अन्तिम समयमें ब्रह्मात्माएँ प्रकट होकर परमधामके द्वार खोलेंगी एवं अन्तिम समयमें प्रकट हुए जगतके स्वामी परमात्माकी कृपासे अज्ञानताके आवरणको दूर कर ब्रह्मज्ञानका प्रभात करेंगी.

राह देखाई तौहीद की, महंमद चढ उतर ।

सोए तुमारे वास्ते, क्यों न देखो सहूर कर ॥ ३४

रसूल मुहम्मदने सुरता द्वारा परमधाममें पहुँचकर एवं पुनःजगतमें लौट कर अद्वैतका मार्ग बताया है. यह सब तुम्हारे लिए ही है. इस पर क्यों विचार नहीं कर रही हो ?

और जो पैद जुलमत से, सो तुम जानत हो सब ।

ए क्यों छोड़ें हवा को, जिनों असल देख्या एही रब ॥ ३५

नश्वरजगतके अन्य जीव शून्य निराकारसे उत्पन्न हुए हैं. उनकी उत्पत्तिको भी तुम भलीभाँति जानतीं हो. वे शून्य-निराकारको कैसे छोड़ सकते हैं ? क्योंकि उन्होंने उसीको अपना परमात्मा माना है.

इलम लुदंनी तुमपें, जिन पेहेले पाई खबर ।

और न कोई वाहेदत बिना, तो इत आवेंगे क्यों कर ॥ ३६

तुम्हारे पास जागृतबुद्धिका ज्ञान है. तुम्हें सर्वप्रथम परमधामकी सुधि प्राप्त हुई है. तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई भी अद्वैत परमधाममें नहीं है. इसलिए वे परमधाममें कैसे आ सकते हैं ?

म्याराज हुआ महंमद पर, सो कौल अरस बका के ।

सो साहेदी के दो एक सुकन, बीच मुहककों पसरे ॥ ३७

रसूल मुहम्मदको परमात्माके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ. इसलिए उन्होंने कुरानमें परमात्मा द्वारा दिए गए वचनोंका उल्लेख किया. उनमें-से दो चार शब्द ही उनके अनुयायियोंमें प्रसरित हुए हैं.

बका सुकन सब म्याराज के, जाहेर किए सब में ।

सब अरस बका मुख बोलहीं, और सुकन ना गिरोह सें ॥ ३८

अब ब्रह्मात्माओंने इस जगतमें प्रकट होकर उक्त दर्शनकी बातें तथा अखण्ड परमधामका विवरण प्रकट कर दिया है. इसलिए ब्रह्मात्माएँ अब अखण्ड परमधामके अतिरिक्त अन्य किसी भी शब्दका उच्चारण नहीं करेंगी.

सो खासी गिरो महंमदकी, तामें ए बात होत निस दिन ।

मुख छोटे बडे याही सुकन, और बोले न या बिन ॥ ३९

इन्हीं ब्रह्मात्माओंको श्यामाजीका विशेष समुदाय कहा है. उनमें दिन रात परमधामकी ही चर्चा होती है. वे छोटे-बड़े सभी अपने मुखसे परमधामके अतिरिक्त अन्य कोई चर्चा नहीं करते हैं.

बका सबद मुख सब के, सो इलम सब में गया पसर ।

सबद फना को न देवे पैठने, ऐसा किया वखत रूहों आखर ॥ ४०

अब तो जागृत बुद्धिका ज्ञान सर्वत्र फैल गया है. इसलिए परमधामके अतिरिक्त अन्य कोई चर्चा ही नहीं हो रही है. इस अन्तिम समयमें ब्रह्मात्माओंने ऐसी स्थिति बनाई कि नश्वर जगतके किसी भी शब्दको उन्होंने अपने हृदयमें प्रवेश करने नहीं दिया.

सबद फना गए रात में, किया बका सबदों फजर ।

कुफर अंधेरी उड गई, बोल पाइए न बका बिगर ॥ ४१

इस नश्वर जगतमें अज्ञानको व्यक्त करनेवाले सभी शब्द अन्धकारमयी रात्रिमें विलीन हो गए हैं. अब अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी सूर्यके उदय होनेसे नव प्रभात हो गया एवं वैमनस्यताका अन्धकार दूर हो गया. इसलिए परमधामके एकात्मभावके अतिरिक्त शेष सारे शब्द गौण एवं मौन हो गए हैं.

ए कह्या था अव्वल, रसूलें इत आए ।
सो रहेर रुहअल्ला इमाम, फजर करी बनाए ॥ ४२

रसूल मुहम्मदने पहले ही आकर यह बात कही थी उसीके अनुसार अब श्रीश्यामाजीने ब्रह्मात्माओंके मार्गदर्शक (सदगुरु) के रूपमें प्रकट होकर ज्ञानका प्रभात कर दिया है.

अव्वल कह्या इलम ल्यावसी, आया तिनसे ज्यादा बेसक ।
सो नीके लिया मोमिनों, पाई अरस मारफत हक ॥ ४३

रसूलने पहले कहा था कि श्रीश्यामाजी ब्रह्मज्ञान लेकर प्रकट होंगी. अब तो उससे भी अधिक कार्य हो गया है. ब्रह्मात्माओंने इस दिव्य ज्ञानको भलीभाँति ग्रहण किया. जिसके कारण उन्हें दिव्य परमधाम तथा पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचान हो गई.

ए इलम लिए ऐसा होत है, आप बेसक होत हैयात ।
और कायम हुए देखे सबको, पावे दीदार बातून हक जात ॥ ४४

इस ब्रह्मज्ञानको प्राप्त करने पर ही ऐसा होता है कि आत्मा जागृत होकर अखण्ड स्थानको प्राप्त करती है. इस प्रकार संसारके सामान्य जीव भी सभीको अखण्ड होते हुए देख कर आत्म-दृष्टिसे ब्रह्मात्माओंके दर्शन प्राप्त करेंगे.

देखी अपनी भिस्त आप नजरों, जो होसी बका परवान ।
सब करम काटे हक इलमसों, ए देखी बेसक मेहर सुभान ॥ ४५

इस ब्रह्मज्ञानके कारण सभी जीवोंको अपने मुक्तिस्थलों (बहिष्ठ) के सुख भी परमधामके सुखोंके समान दिखाई देंगे. इस प्रकार इस ब्रह्मज्ञानने कर्मके सभी बन्धन नष्ट कर दिए. यह सब श्रीराजजीकी अपार कृपाका ही परिणाम है.

हक तरफ जाने नूर अक्षर, और दूजा न जाने कोए ।
पर बातून सुध तिन को नहीं, हक इलम देखावे सोए ॥ ४६

आज तक अक्षरब्रह्मके अतिरिक्त अन्य किसीने भी पूर्णब्रह्म परमात्माकी

दिशाको नहीं जाना था. स्वयं अक्षरब्रह्मको भी परमधामके गूढ़ रहस्योंकी सुधि नहीं थी. अब जागृत बुद्धिके ज्ञानने वह सम्पूर्ण सुधि प्रदान की है.

कै सुख कायम इन इलम के, आवें न माहें हिसाब ।

हक सुराही बका खिलवत में, ए इलम पिलावे सराब ॥ ४७

इस ब्रह्मज्ञानमें अनेक प्रकारके सुख समाविष्ट हैं, जिनकी गणना नहीं हो सकती है. यह दिव्य ज्ञान ही श्रीराजजीकी अन्तरङ्ग लीलाकी प्रेमसुधाका पान करवाता है.

सो मैं भेज्या तुमें मोमिनों, देखो पोहोंच्या इसक चौदे तबक ।

ऐसा इसक मेरा तुमसों, इनमें पाइए न जरा सक ॥ ४८

हे ब्रह्मात्माओ ! मैंने तुम्हरे लिए यह ब्रह्मज्ञान भेजा है. तुम इसके द्वारा देखो कि मेरा प्रेम चौदह लोकोंमें विस्तृत हो गया है. तुमसे मेरा प्रेम इतना अधिक है कि इसमें कोई संशय ही नहीं है.

यों किया वास्ते ईमान के, आवे आखर रूहन ।

सो आए हुआ सबों रोसन, जाहेर बका अरस दिन ॥ ४९

ब्रह्मात्माओंमें श्रद्धा जागृत हो जाए इसीलिए मैंने ऐसा किया है. अब ब्रह्मज्ञानके प्रकाशसे सबका हृदय आलोकित हो गया एवं दिव्य परमधामकी पहचान होनेसे ब्रह्मज्ञानका प्रभात हो गया.

अव्वल से बीच अब लग, तरफ पाई न बका की ।

महंपद एता ही बोलिया, जासों ईसा पावें साहेदी ॥ ५०

सृष्टिके आदि कालसे लेकर आज तक किसीको भी परमात्माकी दिशा प्राप्त नहीं हुई थी. रसूल मुहम्मदने भी इस विषयमें इतना ही कहा जिससे सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीको साक्षी प्राप्त हो सके.

सो लई रूहअल्ला साहेदी, दूजी साहेदी आप दई ।

त्यों करी इमामें जाहेर, ज्यों सब में रोसन भई ॥ ५१

सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने वह साक्षी ली एवं पूर्णब्रह्म परमात्माके दर्शन कर स्वयं उनकी साक्षी दी. सद्गुरुने इस ब्रह्मज्ञानको प्रकट किया जिससे इसके

प्रकाशने सबके हृदयको आलोकित कर दिया.

लई ईसे महंमद की साहेदी, बका जाहेर किया इमाम ।

हक हादी रुहन की, करी खिलवत जाहेर तमाम ॥ ५२

सदगुरु श्री देवचन्द्रजीने रसूल मुहम्मदकी साक्षी लेते हुए ब्रह्मात्माओंके पथप्रदर्शक बनकर दिव्य परमधामकी लीलाओंको प्रकट किया. उन्होंने श्रीराजजी, श्यामाजी एवं ब्रह्मात्माओंकी सभी अन्तरङ्ग लीलाओंको व्यक्त किया.

इन आखर दिनों इमाम, बानी बोले न बका बिन ।

सो सिर ले सुकन गिरोहने, कायम किए सबन ॥ ५३

अन्तिम धर्मगुरु आत्म जागृतिके इन दिनोंमें परमधामके अतिरिक्त अन्य कोई वाणी उच्चारण नहीं करते हैं. उनके समुदायने भी इन वचनोंको शिरोधार्य कर समस्त जगतको अखण्ड कर दिया है.

दुनियां चौदे तबक के, दिए इलमें मुरदे उठाए ।

ताए मौत न होवे कबहूं, लिए बका मिने बैठाए ॥ ५४

अचेतन बने हुए चौदह लोकोंके प्राणी भी इस दिव्य ज्ञानके प्रतापसे सचेत हो गए हैं. अक्षरब्रह्मने उनको अपनी स्मृतिमें अङ्कित कर लिया है. इसलिए अब उनकी कभी भी मृत्यु नहीं होगी.

बडाई इन इलम की, क्यों इन मुख करों सिफत ।

सो आया तुममें मोमिनों, जाको सबद न कोई पोहोंचत ॥ ५५

इस प्रकार तारतम ज्ञानकी महिमाका वर्णन शब्दोंके द्वारा कैसे करूँ ? हे ब्रह्मात्माओ ! ऐसा ब्रह्मज्ञान तुम्हें प्राप्त हुआ है जिसकी जगतमें कोई उपमा ही नहीं है.

और सराब मेरी सुराही का, सो रख्या था मोहोर कर ।

सो खोलने बोहोतों किया, पर क्यों खोले कबूतर ॥ ५६

आज तक मेरे हृदयका प्रेम मोहरबन्दकी भाँति सुरक्षित था. अनेक लोगोंने

उसे प्रकट करनेका प्रयत्न किया किन्तु जादूई कबूतरके समान नश्वर जगतके जीव इस प्रेमको कैसे प्रकट कर सकते हैं ?

सो मैं रख्या तुमारे वास्ते, सो तुमहीं ल्यो दिल धर ।
लिखे फूल प्याले तुम ताले, अछूत पियो भर भर ॥ ५७

हे ब्रह्मात्माओ ! मैंने तुम्हारे लिए ही यह प्रेम सुरक्षित रखा है. अब तुम इसे जी भरकर ग्रहण करो. तुम्हारे सौभाग्यमें प्रेमके ये प्याले लिखे हुए हैं. अब इन अस्पर्शित (अछूते) प्यालोंको भर-भर कर प्रेम सुधाका पान करो.

सराब मेरी सुराही का, सो रुहों मस्ती देवे पूरन ।
दे इलम लुदंनी लजत, हक बका अरस तन ॥ ५८

मेरे हृदयरूपी प्रेमपात्रका यह प्रेम तुम्हें पूर्ण मस्ती प्रदान करेगा और जागृतबुद्धिका तारतम ज्ञान भी दिव्य परमधामके अपार सुखोंका अनुभव करवाएगा.

जो बैठे हैं होए पहाड ज्यों, सो उड़ाए असराफीलें सूर ।
सूरें खोले मगज मुसाफ के, हुए जाहेर तजल्ला नूर ॥ ५९

अज्ञानताके कारण बड़े-बड़े पर्वतोंकी भाँति मिथ्याभिमान लेकर जो लोग आज तक इस जगतमें बैठे थे, अस्ताफील फरिश्ताने शङ्खुनाद कर उनके मिथ्याभिमानको उड़ा दिया है. उसके शङ्खुनादसे कुरानके गूढ़ रहस्य भी स्पष्ट हो गए हैं जिसके कारण दिव्य परमधामकी पहचान प्रकट हो गई.

तब उडे काफर हुते जो पाहाड से, हुए मोमिनों बान चूर ।
लगे और बान अरस इलमें, तिन हुए कायम नूर हजूर ॥ ६०

लोगोंके हृदयमें पर्वतोंकी भाँति बने हुए मिथ्याभिमानको ब्रह्मात्माओंकी दिव्यवाणीने अब चकनाचूर कर दिया है जिससे उनके हृदयमें ब्रह्मज्ञानकी वाणी चुभने लगी. इसलिए वे लोग भी अक्षरब्रह्मके अन्तर्गत अखण्डमुक्ति स्थलके अधिकारी बन गए.

जो लिखी सिफतें फुरमान में, सो सब तुम अरस रुहन ।
और सिफत तो होवहीं, जो कोई होवे वाहेदत बिन ॥ ६१
कुरानमें जिन ब्रह्मात्माओंकी महिमा लिखी गई है वह सब तुम्हारी ही है.

तुम्हारे अतिरिक्त अद्वैत भूमिकामें अन्य कोई होता तभी उसकी प्रशंसा हो सकती.

चौदे तबक पढ़ पढ़ गए, किन खोली नहीं किताब ।

इसारतें रमूजें क्यों खुले, देखो किन खोलाई दे खिताब ॥ ६२

इन चौदह लोकोंमें अनेक मनुष्य पढ़ते हुए चले गए किन्तु किसीने भी कुरानके गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट नहीं किया. वैसे तो ये गूढ़ रहस्य उनसे कैसे खुल सकते ? देखो, किनको इस पदकी शोभा प्रदान कर किनसे ये रहस्य स्पष्ट करवाए हैं.

मुक्ता हरफ तुम वास्ते, अखत्यार दिया हादी पर ।

जो चौदे तबक दुनी मिले, तो माएने होए न हादी बिगर ॥ ६३

कुरानके कुछ शब्द (अलीफ-लाम-मीम जैसे मुक्तआत) तुम्हारे लिए हैं उनको खोलनेका अधिकार अन्तिम समयके धर्मगुरुको दिया गया है. उनके अतिरिक्त चौदह लोकोंके सभी प्राणी मिलकर भी इन रहस्योंको स्पष्ट नहीं कर सकते हैं.

जाहेर खिताब हादी पर, दिया वास्ते मोमिन ।

सो मुक्ता हरफ के माएने, होए न लुदंनी बिन ॥ ६४

तुम्हारे लिए ही इन गूढ़ शब्दोंका रहस्य स्पष्ट करनेका दायित्व सदगुरुको दिया गया है. इन शब्दों (मुक्तआत) का अर्थ तारतम ज्ञानके बिना स्पष्ट नहीं हो सकता है.

सो दिया लुदंनी तुम को, तुम खोलो मुक्ता हरफ ।

मैं अरस किया दिल मोमिन, जाकी पाई न किन तरफ ॥ ६५

अब यह जागृत बुद्धिका ज्ञान तुम्हें प्रदान किया है ताकि तुम उन गूढ़ रहस्योंको स्पष्ट कर सको. मैंने तुम्हारे ही हृदयको अपना परमधाम बनाया है जिसकी दिशाका आज तक किसीको भी पता नहीं था.

ए जाहेर तुमारा माजजा, पढ़े हरफ कर पढ़ते थे ।

ए भेद हक हादी रूहों, बीच खिलवत का जे ॥ ६६

यह चमत्कारिक शक्ति स्पष्ट रूपमें तुम्हारे पास ही है. अन्यथा आज तक

कुरानके जानकार लोग भी इनको मात्र शब्दके रूपमें ही पढ़ा करते थे. इन शब्दोंमें तो श्रीराजजी श्यामाजी तथा ब्रह्मात्माओंके अन्तरङ्ग स्थान मूलमिलावाका गूढ़ रहस्य छिपा हुआ है.

सो रख्या तुमारे वास्ते, ए खोलो तुम मिल ।
दुनी पावे ना इन तरफ को, सो बीच अरस तुमारे दिल ॥ ६७
हे ब्रह्मात्माओ ! ये शब्द अभी तक तुम्हारे लिए ही सुरक्षित रखे हुए थे.
अब तुम सब मिलकर इनके रहस्योंको प्रकट करो. नश्वर जगतके जीव जिस परमधामकी दिशा तक प्राप्त नहीं कर सकते हैं वह परमधाम तुम्हारा हृदय बन गया है.

हक बका मता जाहेर किया, पर ए समझ्या नाहीं कोए ।
कह्या हरफै के बयान में, बिना तालें न पेहेचान होए ॥ ६८
रसूल मुहम्मदने इस जगतमें आकर परमधामकी सम्पदा प्रकट तो कर दी किन्तु उसे कोई भी समझ नहीं पाया. उन्हींके शब्दोंमें यह भी कहा है कि सौभाग्यके बिना इस सम्पदाकी पहचान नहीं हो सकती है.

ए बयान पुकारे जाहेर, इत पोहोंचे ना दुनी सहूर ।
ए हादी जाने या अरस रुहें, हक खिलवत का मजकूर ॥ ६९
कुरानमें यह स्पष्ट उल्लेख है किन्तु जगतके जीव उसका अध्ययन करते हुए भी उस पर विचार नहीं करते हैं. श्रीश्यामाजी तथा ब्रह्मात्माएँ ही दिव्य परमधामकी अन्तरङ्ग लीलाओंका रहस्य समझ सकती हैं.

तरफ भी किन पाई नहीं, पावे तो जो दूसरा होए ।
तुम तो बीच वाहेदत के, और जरा न कित कहूं कोए ॥ ७०
इस नश्वर जगतमें किसीको भी परमधामकी दिशा प्राप्त नहीं हुई है. तुम्हारे अतिरिक्त अन्य कोई दिव्य परमधामका होता तभी उसे परमधामकी दिशा प्राप्त हो सकती. तुम तो स्वयं अद्वैत परमधामकी हो वस्तुतः अद्वैतके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है.

तुम जानो हम जाहेर, होएं जुदे हक बिगर ।
हम तुम अरस में एक तन, तुम जुदे होए सको क्यों कर ॥ ७१

हे ब्रह्मात्माओ ! तुमने यह सोचा था कि श्रीराजजीसे वियुक्त होकर ही हम इस जगतमें प्रकट हो जाएँ, किन्तु परमधाममें हम सभी एक ही अङ्गस्वरूप हैं इसलिए तुम मुझसे कैसे अलग हो सकती हो ?

दुनी जुदें तुमें तो जानहीं, जो तुम जुदे हो मुझ से ।
हम तुम होसी भेलें जाहेर, अपन वाहेदत हैं अरस में ॥ ७२
यदि तुम मुझसे भिन्न होती तो ही जगतके जीव तुम्हें अलग समझते.
परमधाममें मैं तथा तुम सभी अद्वैत भावमें हैं. इसलिए इस जगतमें भी हम दोनों एक साथ प्रकट हुए हैं ऐसा समझा जाएगा.

मैं तेहेत कबाए तुम को रखे, कोई जाने ना मुझ बिन ।
तुम को तब सब देखसी, होसी जाहेर बका अरस दिन ॥ ७३
मैंने तो तुम्हे अपने आँचलमें छिपा कर रखा है ताकि मेरे अतिरिक्त अन्य कोई भी तुम्हें न जान सके. जब अखण्ड परमधामका ज्ञानरूपी सूर्य प्रकट होगा तभी नश्वर जगतके जीव तुम्हें देख पाएँगे.

जब पेहेले मोक्षो सब जानसी, तब होसी तुमारी पेहेचान ।
हम तुम अरस जाहेर हुए, दुनी कायम होसी निदान ॥ ७४
जब जगतके जीव सर्वप्रथम मेरी पहचान करेंगे तदुपरान्त उन्हें तुम्हारी पहचान होगी. अब तो हम और तुम दोनों ही प्रकट हो गए हैं. अब निश्चय ही नश्वर जगतके जीव अखण्ड हो जाएँगे.

मैं तुमारा मासूक, तुम मेरे आसिक ।
और तुम मासूक मैं आसिक, ए मैं पुकार्या माहें खलक ॥ ७५
मैं तुम्हारा प्रियतम (माशूक) हूँ तुम मेरी अनुरागिनी (आशिक) हो. मैंने इस जगतमें आने पर कहा कि तुम मेरी प्रियतमा (माशूका) हो एवं मैं तुम्हारा अनुरागी (आशिक) हूँ.

है को नाहीं कीजिए, सो तो कबूँ न होए ।
नाहीं को है कीजिए, सो कर न सके कोए ॥ ७६

सत्यको कोई मिथ्या करना चाहें तो वह कभी नहीं हो सकता है. इसी प्रकार जो मिथ्या है उसे सत्य भी नहीं किया जा सकता है.

हक आप काजी होए बैठसी, सो क्या सहूर न किए सुकन ।
ला सरीक न बैठे किन में, ना कोई वाहेदत बिन ॥ ७७

कुरानमें इस प्रकारका उल्लेख है कि परमात्मा स्वयं न्यायाधीश होकर बैठेंगे. इन वचनों पर क्यों अभी तक विचार नहीं किया. नश्वर जगतके देवोंमें- से तो कोई भी इस पद पर बैठ ही नहीं सकता है. क्योंकि अद्वैत स्वरूप परमात्माके अतिरिक्त अन्य किसीका अस्तित्व ही नहीं है. मैं अपनी अङ्गस्वरूपा ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीके पास नहीं बैठ सकता.

सहूर बिना सब रेहे गया, और सहूर लुदंनी माहे ।
सो तो सूरत हकीयों, और वाहेदत बिना कोई नाहे ॥ ७८

विचार न करने पर ये सब रहस्य अभी तक गूढ़ रह गए हैं. किन्तु यथार्थ विवेक तो जागृत बुद्धिके ज्ञानमें ही निहीत है. यह सब दायित्व हकीस्वरूप तथा अद्वैतस्वरूपा ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य किसीमें नहीं है.

चौदे तबक इतना नहीं, जाके कीजे टूक दोए ।
बिना वाहेदत कछू ना रख्या, क्यों ना देख्या लिख्या सोए ॥ ७९

यह चौदह लोकयुक्त ब्रह्माण्ड इतना भी नहीं है कि जिसके टुकड़े किया जा सके. अद्वैत भूमिके अतिरिक्त अन्य किसीका अस्तित्व ही नहीं है, इन स्पष्ट वचनोंको तुमने क्यों ध्यान नहीं दिया ?

दई कुंजी सनाखत तुम को, मैं भेज्या मासूक रसूल ।
बेसक करियां दे इलम, सो भी गैयां तुम भूल ॥ ८०

मैंने तारतम ज्ञानके द्वारा तुम्हें स्वयंकी पहचान करवाई है. मैंने यह ब्रह्मज्ञान तुम्हें अपनी प्रियतमा श्यामजीके हाथ भेजा. इस तारतम ज्ञानने तुम्हारे सभी सन्देह मिटा दिए तथापि तुम अभी तक भूली हुई रह गईं.

तुम बैठे जिमी नासूती, आडा मलकूत जबरूत ।
सात आसमान हवा बीच में, मैं बैठा ऊपर लाहूत ॥ ८१

तुम इस नश्वर जगतमें बैठी हुई हो. तुम्हारे और मेरे मध्य वैकुण्ठ एवं
अक्षरधाम व्यवधान स्वरूप हैं. इस मृत्युलोकसे ऊपर सातस्वर्ग तथा उनके
ऊपर शून्य-निराकार आदि हैं. उनसे भी परे दिव्य परमधाममें मैं बैठा हुआ
हूँ.

सो दूर राह आसमान लग, बीच ऐसे सात आसमान ।

सो भी राह फिरस्तन की, ऊपर जुलमत ला मकान ॥ ८२

इस मृत्युलोकसे ऊपर सत्यलोक तक सात लोक बतलाए गए हैं. मृत्युलोकसे
सत्य लोक तकके मार्ग पर देवी-देवताएँ विचरण करते हैं. सत्य लोकसे
आगे मोहतत्त्व तथा शून्य निराकार है.

नूर मकान हुआ तिन पर, राह चले ना नूर पर ।

जित पर जले जबराईल, तित वजूद आदम पोहोंचे क्योंकर ॥ ८३

उससे परे अक्षरधाम है. इस अक्षरधामसे आगे जानेमें कोई भी समर्थ नहीं
हुआ है. जहाँ पर जाते हुए जिब्रील फरिश्ताके पहुँच भी जलने लगे थे, वहाँ
पर सामान्य मनुष्य कैसे पहुँच सकते हैं ?

तित पोहोंच्या मेरा मासूक, कै गुझ बातें करी हजूर ।

सो फिरया तुम रुहों वास्ते, आए जाहेर करी मजकूर ॥ ८४

मेरे प्रिय मुहम्मद वहाँ पहुँचे एवं उन्होंने मेरे निकट आकर कुछ गुह्य बातें
कीं. फिर वे तुम ब्रह्मात्माओंके लिए लौटे और उन्होंने मेरे आनेकी बात
प्रकट की.

मैं तुमपें भेजी रुह अपनी, अपन एते पडे थे बीच दूर ।

मैं इलम भेज्या बेसक, तुमें दम में लिए हजूर ॥ ८५

पुनः मैंने तुम्हारे पास अपनी अङ्गरूपा श्रीश्यामाजीको भेजा. क्योंकि मेरे
और तुम्हारे मध्य बड़ी दूरी बनी हुई थी. मैंने श्यामाजीके साथ तारतम ज्ञान
भेजा. जिसके द्वारा तुम्हारे सन्देहोंको दूर कर पल मात्रमें मैंने तुम्हें अपनी
निकटताका अनुभव करवाया.

राह सेहेरग से देखाई नजीक, दई हादिएं हकीकत ।

पुल सरात से फिराए के, पोहोंचाए अरस वाहेत ॥ ८६

श्रीश्यामाजीने प्रकट होकर इतनी दूरके मार्गको प्राणनलीसे भी अति निकट दिखा दिया. उन्होंने तुम्हें यथार्थ ज्ञान देकर लौकिक मार्ग (पुलेसिरात) से हटाकर अखण्ड परमधामका मार्ग स्पष्ट कर दिया.

ऐसे परदेस में बैठाए के, इन विध लिखी गुहाए ।

इन धनी की गुहाई ले ले, हाए हाए उडत ना अरवाए ॥ ८७

इस प्रकार तुम सभी ब्रह्मात्माओंको परदेश स्वरूप नश्वर जगतमें बैठाकर मैंने इस प्रकारकी अनेक साक्षियाँ दीं. हाय ! इन साक्षियोंको लेकर भी तुम अब तक समर्पित नहीं हो रही हो.

मैं साख देवाई दोऊ हादियों पें, सो तुमें मिले सब निसान ।

अब तो बोले सब कागद, योही बोली सब जहान ॥ ८८

मैंने रसूल मुहम्मद तथा सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी दोनोंकी साक्षी इसीलिए दिलाई कि तुम्हें परमधामके सभी सङ्केत प्राप्त हो जाएँ. अब तो सभी धर्मग्रन्थोंके गूढ़ रहस्य स्पष्ट हो गए हैं जिससे सभी लोग एकमत होकर परमधामकी ही बात करने लगे हैं.

अब पाँचों तत्व पुकारहीं, आई रोडे बीच आवाज ।

सो सब किए तुम कायम, वास्ते तुमारे राज ॥ ८९

अब ये पाँचों तत्व (पृथ्वी, जल, तेज, वायु तथा आकाश) पुकार-पुकार कर तुम्हारी साक्षी देंगे, जैसे रसूल मुहम्मदकी साक्षी काबोके कङ्कड़-पथरोंने दी थी. अब तो तुमने अपने प्रभुत्वके लिए नश्वर जगतके इन सभी जीवोंको अखण्ड सुख प्रदान कर दिया है.

इसक सबों में अति बड़ा, बका भोम चेतन ।

दायम नजर तलें नूर के, पेहेचान सबों पूरन ॥ ९०

परमधामकी चैतन्यमयी भूमिमें शाश्वत प्रेम ही सर्वाधिक महान है. इसी प्रेमकी पहचान होने पर ही नश्वर जगतके जीव भी अक्षरब्रह्मके हृदयमें अङ्गित होकर अखण्ड हो जाएँगे.

सोए करें तुमारी बंदगी, एही इनों जिकर ।

इनों सिर हक एक तुम्हीं, और कोई ना वाहेदत बिगर ॥ ११

ये सभी जीव अब तुम्हारी पूजा करेंगे. यही इनकी स्तुति-प्रार्थना होगी. उनको अखण्ड मुक्ति दिलाने वाले एक मात्र परमात्मा तुम ही हो. तुम्हारे अतिरिक्त अन्य किसीने यह कार्य नहीं किया है.

ए कायम सब आगे ही किए, तुम हादी रुहों वास्ते ।

जो देखो अंदर विचार के, तो रुह साहेदी देवे ए ॥ १२

श्रीश्यामाजी तथा तुम ब्रह्मात्माओंकी महिमाके लिए ही मैंने पहलेसे ही इन जीवोंको अखण्ड कर दिया था. यदि हृदयपूर्वक विचार करोगी तो तुम्हारी आत्मा इसकी साक्षी देगी.

जिन हरबराओ मोमिनों, हुकम करत आपे काम ।

खोल देखो आँखें रुह की, जिन देखो दृष्टि चाम ॥ १३

हे ब्रह्मात्माओ ! तुम घबराओ नहीं यह आदेश स्वयं ही अपना कार्य कर रहा है. अब तुम आत्मदृष्टिको खोलकर देखो, मात्र चर्मचक्षुसे मत देखो.

राज रोज रुहन का, जब पोहोंच्या इत आए ।

तखत बैठे साह कहावते, देखो क्यों डारे उलटाए ॥ १४

जब ब्रह्मात्माओंके प्रभुत्वका दिन प्रकट हो गया है तब देखो, राजसिंहासन पर बैठकर सम्राट कहलाने वालेको कैसे नीचे पटक दिया

[यह प्रसङ्ग औरङ्गजेबका है. उसने राजमदमें आकर श्रीप्राणनाथजीके वचनोंका प्रतिकार किया. फलस्वरूप मुगल साम्राज्यका अन्त हुआ.]

पैगाम दिए तुम जिनको, जो कहावते थे सुलतान ।

सो पटके उसी हुकमें, जिन फेर्या हादी फुरमान ॥ १५

तुमने जिनके पास परमात्माका सन्देश पहुचानेका साहस किया था वह सम्राट कहलाने वाला औरङ्गजेब अपनी सत्ताके मदमें चूर था. जिसने अन्तिम धर्मगुरुका आदेश नहीं माना उसे उसी आदेशने सिंहासनसे नीचे पटक दिया.

भरत खंड सुलतान कहावते, सो दिए सब फंदाए ।

इन विध उरझे आपमें, जो किनहूं न निकस्यो जाए ॥ ९६

भारतवर्षका सप्ताट कहलाने वाला भी इस प्रकार सांसारिक मदमें फँस गया। जो इस प्रकार अपने ही अहङ्कारके पासमें उलझ जाते हैं उनको कोई भी उबार नहीं सकता है।

उलट पलट दुनियां भई, तो भी देखत नाहीं कोए ।

काढ ईमान कुफर दिया, ए जो सबे दुनी दीन दोए ॥ ९७

ऐसे दुष्टोंके अत्याचारोंसे चारों ओर उथल-पुथल मच गई। तथापि किसीने विचारपूर्वक नहीं देखा कि दोनों समुदायों (हिन्दू तथा मुस्लिम) के लोगोंके हृदयसे श्रद्धा एवं विश्वासको हटाकर किस प्रकार उसमें वैमनस्यता भर दी है।

हुकमें वेद कतेब में, लिखे लाखों निसान ।

सो मिले कौल देखे तुम, हाए हाए अजूं न आवे ईमान ॥ ९८

इस प्रकार मेरे आदेशने वेद तथा कतेब ग्रन्थोंमें लाखों सङ्केत दिए हैं। अब वे सारे चिह्न स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होने लगे हैं। किन्तु खेदकी बात है कि यह सब देखकर भी अभी तक तुम्हारे हृदयमें विश्वास उत्पन्न नहीं हुआ है।

चाक चढ़ी सब दुनियां, आजूज माजूज हुए जोर ।

सो तुम अजूं न देखत, एता पड़या आलम में सोर ॥ ९९

नश्वर जगतके सभी जीवोंके ऊपर दुष्ट मनका प्रभुत्व हो गया है। याजूज तथा माजूज (दिवस तथा रात्रि) का यह दुश्क्र सबकी आयुको क्षीण कर रहा है। जगतमें चारों ओर बड़ा कोलाहल मच गया है। इतना होने पर भी तुम्हारी दृष्टि अभी तक क्यों नहीं खुलती है ?

हुकम ल्याया जो हकीकत, सो क्यों कर ना देख्या सहूर ।

ल्याया तुमारे अरस में, हुकम जबराईल जहूर ॥ १००

तुम्हारे लिए परमधामकी यथार्थता लेकर मेरा आदेश प्रकट हुआ है उस पर क्यों विचार नहीं कर रहे हो ? यह आदेश ही जिब्रील फरिशताके द्वारा तुम्हारे हृदयधाममें ज्ञान प्रकाशित कर रहा है।

सेजदा जित सरीयत का, तित आए लिखाई पुकार ।
एते किन वास्ते लिखे, ए तुम अजहूं न किया विचार ॥ १०१

जहाँ पर मात्र कर्मकाण्डके आधार पर ही नमन किया जाता था ऐसी मक्काकी भूमिसे उत्तराधिकार पत्र (वसीयतनामा) लिखवाकर भिजवाए गए. ये किसने किसके लिए भिजवाए हैं इस सम्बन्धमें अभी तक तुमने विचार नहीं किया.

[मक्काके मौलवियों (धर्मगुरुओं) ने औरङ्गजेबके नाममें समय-समय पर वसीयतनामें भिजवाए थे. उनमें उल्लेख था कि अब यहाँ पर बरकत नहीं रही है, धर्मका ध्वज हिन्दुस्तान आ गया है. यहाँ पर कुरानके प्रति आस्था तथा फकीरोंकी दुआमें शक्ति नहीं रही है. यह प्रसङ्ग इस ओर सङ्केत करता है कि रसूल मुहम्मदके कथनानुसार आत्म-जागृतिका समय आ गया है और इस युगके परमात्मा प्रकट हो गए हैं.]

किन लिखाए सखत सौगंद, जो सरीयत सामी बल ।
तिन सब को किए सरमंदे, हाए हाए अजूं याद न आवे असल ॥ १०२

बड़े कठोर शब्दमें प्रतिज्ञा करवाते हुए वे उत्तराधिकार पत्र उस समय सम्राट्के पास किन्होंने भेजे हैं, जहाँ पर मात्र कर्मकाण्डकी ही प्रबलता थी. किसलिए ऐसा लिखकर उन लोगोंको लज्जित किया है ? बड़े खेदकी बात है, इतने स्पष्ट सङ्केत होने पर भी तुम्हें अपने मूलकी स्मृति नहीं हो रही है.

दुनी बरकत सफकत फकीरों, और अल्ला कलाम ।
उठाए दुनी से जबराईल, ल्याया अपने मुकाम ॥ १०३

जिब्रील फरिस्ता मक्कासे वैभव (बरकत), एवं फकीरोंकी दया (शफकत) तथा कुरानका महत्व उठाकर अपने स्थान भारतमें इमाम महदीके पास ले आया.

महंमद मेहेदी ईसा अहंमद, बडा मेला इसलाम ।
जित सूर फूक्या असराफीलों, होसी चालीस सालों तमाम ॥ १०४

महदी मुहम्मद, ईसा तथा अहमद (सद्गुरु) का शुभागमन जिस भूमिमें हो

गया है एवं जहाँ पर आकर इस्त्राफील फरिशताने शङ्खनाद किया है वहाँ पर चालीस वर्षों तक अन्तिम धर्मगुरुका शासन चलेगा.

किन उठाए हिन्दू ठौर सेजदे, किन मिलाए आख्तर निसान ।

किन खडे किए मोमिन, कराए पूरन पेहेचान ॥ १०५

किसने हिन्दुओंकी उपासना सम्बन्धी अन्धविश्वासको दूर किया एवं परब्रह्मकी पूर्ण पहचान करवाकर ब्रह्मात्माओंको जागृत किया है ? आत्मजागृतिके समयके सङ्केतोंकी तुलना किसने की है ? इस रहस्य पर विचार करो.

ए झङ्डा किने खडा किया, ए जो हकीकी दीन ।

ए लाखों लोक हिन्दूअन के, इन को किनने दिया यकीन ॥ १०६

सत्यधर्म (श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म) का ध्वज किसने खड़ा किया ? तथा लाखों हिन्दुओंको किन्होंने परब्रह्म परमात्माके प्रति विश्वास दिलाया ? इस बात पर विचार करो.

ए जो द्वार अरस अजीम का, किन खोल्या कुंजी ल्याए ।

इलम लुदंनी मसी बिना, और काहूं न खोल्या जाए ॥ १०७

किन्होंने तारतम ज्ञानरूपी कुञ्जी लाकर परमधामके द्वारा खोले ? वस्तुतः सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीके तारतम ज्ञानके बिना किसीसे भी यह स्पष्ट नहीं हो सकता है.

ए जो बुजरकी महंमद की, म्याराज हुआ इन पर ।

महंमद साहेदी इसे मेहेदी बिना, कोई दूजा देवे क्यों कर ॥ १०८

जिन रसूल मुहम्मदको परमात्माके दर्शन हुए उनका महत्त्व एवं उनकी साक्षी सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी (ईसा) एवं इमाम महदीके बिना अन्य कौन किस प्रकार दे सकता है ?

उठे दीन सखत वखत में, पसर्या सबों में कुफर ।

करें रुहें कुरबानी इन समें, ए क्यों होए रसूल रब बिगर ॥ १०९

जब सर्वत्र वैमनश्यता ही फैली हुई है ऐसे कठिन समयमें ब्रह्मात्मात्मा एँ

स्वयंको समर्पित कर दें यह परब्रह्म परमात्माका सन्देश उनके अतिरिक्त अन्य किससे प्राप्त हो सकता है ?

किन सुख देखाए अरस के, बहु विध बिना हिसाब ।
अनभव अपना देख के, हाए हाए अजूँ न उड़ा खाब ॥ ११०

किन्होंने अपने अनुभवके द्वारा देखकर परमधामके असंख्य सुखोंको इस जगतमें प्रकट किया है. हाय ! इतना सब समझने पर भी अभी तक ब्रह्मात्माओंका मोहभङ्ग नहीं हुआ है.

उतर आए कही रुहअल्ला, सुख सब अरसों हकीकत ।
पाई हक सूरत की अनभव, दई निसबत मारफत ॥ १११

श्रीश्यामाजीने इस जगतमें प्रकट होकर सभी धारोंकी यथार्थता स्पष्ट कर दी. उन्होंने परब्रह्म परमात्माके स्वरूपका अनुभव कर उनके साथके सम्बन्धोंकी पूर्ण पहचान करवाई.

बहु विध भेज्या फुरमान, तिन में सब अरसों न्यामत ।
खिलवत वाहेदत सुध भई, और सुध दई क्यामत ॥ ११२

इस प्रकारके अनेक आदेश भिजवाए हैं जिनमें सभी धारोंकी सम्पदके विषयमें विभिन्न प्रकारके सङ्केत दिए गए हैं. उनके रहस्य स्पष्ट होने पर आत्मजागृतिके समयकी तथा दिव्य परमधामके एकात्मभावकी सम्पूर्ण सुधि प्राप्त हुई है.

दोऊ हादियों दई साहेदी, मिलाए दिए निसान ।
तो भी लजत न पाई रुहों ने, हाए हाए जो एती भई पेहेचान ॥ ११३

सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी एवं रसूल मुहम्मद दोनोंने परब्रह्मकी साक्षी देकर परमधामके सङ्केत स्पष्ट कर दिए. तथापि खेद है कि इतनी पहचान होने पर भी ब्रह्मात्माओंको परमधामके आनन्दका अनुभव नहीं हुआ.

हौज जोए की साहेदी, और जिमी बाग जानवर ।
दई जुदी जुदी दोऊ साहेदी, तो भी दिल गल्या नहीं पथर ॥ ११४

सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी तथा रसूल मुहम्मदने परमधामकी यमुनाजी,

हौजकौसर ताल, भूमि, वन-उपवन, पशु-पक्षी आदिकी अलग-अलग साक्षियाँ दीं। तथापि ब्रह्मात्माओंके पाषाण हृदय द्रवित नहीं हुए.

दोए अरस कहे दोऊ हादियों, कही अरसों की मोहोलात ।

कही अमरद और किसोर, ए अरस सूरत हक जात ॥ ११५

सदगुरु एवं रसूल दोनोंने अक्षरधाम तथा परमधामका वर्णन करते हुए वहाँके भव्य प्रासादोंकी शोभाका वर्णन किया एवं पूर्णब्रह्म परमात्माके किशोर स्वरूप (अमरद सूरत) की बात की.

भेज्या बेसक दास्त हैयाती, तुम पैं मेरे हाथ हबीब ।

किए चौदे तबक मुरदे जीवते, तुम को ऐसे किए तबीब ॥ ११६

सदगुरुने इस प्रकार कहा था कि स्वयं श्रीराजजीने तारतम ज्ञानरूपी अखण्ड औषधि मेरे हाथ भेजी है. जिसके द्वारा तुमने वैद्य बनकर चौदह लोकोंके अचेतन जीवोंको चेतनायुक्त बना दिया है.

न थी हिंमत आप उठे की, सो तुम उठाए चौदे तबक ।

ऐसा किया बैठ नासूत में, तुमें इनमें रही न सक ॥ ११७

तुममें स्वयं जागृत होनेकी कोई शक्ति नहीं थी. किन्तु तुमने तारतम ज्ञानके द्वारा चौदह लोकोंके जीवोंको अखण्ड मुक्ति स्थलोंमें पहुँचा दिया. इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस नश्वर जगतमें बैठकर भी तुमने इतना विशेष कार्य किया है.

ऐसे बेसक होए के, तुमें अजूँ न अरस लजत ।

एता मता ले दिल में, हाए हाए तुमें दरदा भी न आवत ॥ ११८

किन्तु आश्वर्यकी बात है कि इस प्रकार सन्देहरहित होने पर भी तुम्हें अभी तक परमधामके आनन्दका अनुभव नहीं हो रहा है. परमधामकी इतनी सम्पदाको हृदयझम करने पर भी तुम्हारे हृदयमें विस्मृतिकी वेदना नहीं हो रही है.

हाए हाए ए देख्या बल जुलमत का, दिल ऐसा किया सखत ।

ना तो एक साख मिलावते, अरस अरवा तबहीं उडत ॥ ११९

खेदकी बात है कि इस अज्ञानरूप अन्धकारमें भी इतनी विशेष शक्ति है कि

जिसने ब्रह्मात्माओंके हृदयको बड़ा कठोर बना दिया है. अन्यथा मात्र एक ही साक्षी प्राप्त करने पर भी परमधामकी आत्मासे तत्काल नश्वर शरीर छूट जाता है.

स्याबास तुमारी अरवाहों को, स्याबास हैडे सखत ।

स्याबस तुमारी बेसकी, स्याबास तुमारी निसबत ॥ १२०

धन्य है तुम्हारी आत्माको, धन्य है तुम्हारे कठोर हृदयको, धन्य है तुम्हारी निःसन्देहताको एवं धन्य है तुम्हारे अपने धनीके साथके सम्बन्धको.

धंन धंन तुमारे ईमान, धंन धंन तुमारे सहूर ।

धंन धंन तुमारी अकलें, भले जागे कर जहूर ॥ १२१

तुम्हारा विश्वास भी धन्य है, तुम्हारा चिन्तन भी धन्य है, तुम्हारी बुद्धि भी धन्य है, जिसके द्वारा तुम स्वयं जागृत होकर ब्रह्माज्ञानका प्रकाश फैला रही हो.

अरस बताए दिया तुमको, और बताए दई वाहेदत ।

सहूर इलम कुंजी सब दई, बैठाए माहेखिलवत ॥ १२२

तुम्हारे लिए परमधाम तथा वहाँके एकात्मभावका रहस्य स्पष्ट कर दिया गया. इस पर विचार करनेके लिए तारतम ज्ञानरूपी कुञ्जी देकर तुम्हें जागृत कर परमधाममें बैठनेका अनुभव करवाया.

एता मता जिन दिया, तिन आप देखावत केती बेर ।

पर तुमें राखत दोऊ के दरम्यान, ना तो क्यों रहे मोह अंधेर ॥ १२३

हे ब्रह्मात्माओ ! जिन्होंने तुम्हें यह सम्पूर्ण सम्पदा प्रदान की है उनको अपने स्वरूपका दर्शन करानेमें कितना समय लग सकता है ? किन्तु तुम्हारी दृष्टिको परमधाम तथा नश्वर जगत दोनोंके मध्य स्थिर किया है अन्यथा यह मोहरूपी अन्धकार अभी तक कैसे रह सकता ?

बडाई तुमारी बका मिने, निपट दई निहायत ।

तुमें खुदा कर पूजसी, ऐसी और न काहूं सिफत ॥ १२४

परमधाममें तुम्हारी जैसी महिमा है वही इस जगतमें भी प्रकट कर दी है.

नश्वर जगतके जीव तुम्हें परमात्मा समझ कर तुम्हारी पूजा करेंगे. ऐसी महिमा अन्य किसीको भी प्राप्त नहीं हुई है.

ऐसी हुई न होसी कबहूं, जो तुम को दई साहेबी ।

ए सुध अजूं तुमें ना परी, सुध आगूं तुमें होएगी ॥ १२५

तुम्हें जो प्रभुता दी गई है, वैसी प्रभुता अभी तक न किसीको प्राप्त हुई है और न ही भविष्यमें प्राप्त होगी. किन्तु अभी तक तुम्हें यह सुधि नहीं हुई है, अब निकट भविष्यमें ही इसकी पहचान हो जाएगी.

तुम खेल में आए वास्ते, करी कायम जिमी आसमान ।

तिन सब के खुदा तुम को किए, बीच सरभर लाहूत सुभान ॥ १२६

तुम इस नश्वर जगतके खेलमें आई हो. इसीलिए इस ब्रह्माण्डको भी अखण्ड कर दिया है. यहाँके सभी जीवोंके परमात्माके रूपमें तुम्हें उस प्रकार प्रतिष्ठित कर दिया, जैसी प्रतिष्ठा दिव्य परमधाममें पूर्णब्रह्म परमात्माकी है.

सो भी पूजें तुमारे अकस को, तुम आए असल वतन ।

तिन सबकी लजत तुमे आवसी, सब तलें तुमारे इजन ॥ १२७

नश्वर जगतके वे जीव तुम्हारे नश्वर तनकी ही पूजा करेंगे. तुम तो मूल घर परमधाममें जागृत हो जाओगी. जब यहाँके सभी जीव तुम्हारे आदेशके आधीन होंगे तब तुम्हें उसका आनन्द प्राप्त होगा.

ए सब बातें ले दिल में, और दिलको लिख्या अरस ।

भिस्त करी तुम कायम, होसी तामें बडा तुमें जस ॥ १२८

इन सब बातोंको हृदयङ्गम कर तुम्हारे हृदयको परमधाम कहा गया है. तुम्हारे द्वारा जिन जीवोंको मुक्ति स्थलोंमें स्थान प्राप्त हुआ है वहाँ भी तुम्हारी कीर्ति फैलेगी.

तुम दई भिस्त बका ब्रह्मांड को, तिनमें जरा न सक ।

किए नाबूद से आपसे, तो भी गुन जरा न देख्या हक ॥ १२९

तुमने ब्रह्माण्डके जीवोंको मुक्तिस्थलका सुख प्रदान किया है, इसमें कोई सन्देह नहीं है. किसने तुम्हारे नश्वर शरीरको भी मुक्तिस्थलोंमें परमात्माके

रूपमें प्रतिष्ठित कर दिया तथापि तुम अपने धनीके गुणोंकी पहचान न कर सकी.

सो तुमें याद आवसी, ओ तुमें करसी याद ।

तुमें पूजें जिमी बका मिनें, अजूँ इनका केता ल्योगे स्वाद ॥ १३०

वे नश्वर जीव तुम्हें याद आएँगे और वे भी तुम्हें याद करते रहेंगे. वे तो मुक्तिस्थलोंमें भी तुम्हारी पूजा करेंगे तथापि तुम अभी भी इस नश्वर जगतके सुखोंका कितना स्वाद लेती रहोगी ?

तुम मांगी है बुजरकी, तिनसों कोट गुनी दई ।

दे साहेबी ऐसे अघाए, चाह चितमें कहूँ न रही ॥ १३१

तुमने जो श्रेष्ठता माँगी थी उससे करोड़ों गुणा अधिक महत्ता तुम्हें प्राप्त हुई है. तुम्हें इतना अधिक महत्त्व देकर इस प्रकार तृप्त कर दिया कि अब चित्तमें किसी भी प्रकारकी चाहना शेष नहीं रहेगी.

क्यों देवें तुमको साहेबी, बीच जिमी फना मिने ।

तिनसे तुमारी उमेदें, होए न पूरन तिने ॥ १३२

तुम्हें इस नश्वर जगतमें इतनी अधिक महत्ता क्यों दी जाती ? जिनसे तुम्हारी चाहना कभी भी पूर्ण नहीं हो सकती है.

तुम मांगी बीच ख्वाब के, जित आगे अकल चलत नाहें ।

धनी देवें आप माफक, याकी सिफत न होए जुबांए ॥ १३३

तुमने तो नश्वर जगतमें ही महत्ता माँगी थी, इससे आगे तुम्हारी बुद्धि चली ही नहीं किन्तु श्रीराजजी अपने अनुरूप ही गरिमा प्रदान करते हैं. जिसकी प्रशंसा जिह्वाके द्वारा नहीं हो सकती है.

तुम आए तिन जिमीय में, जिनमें न काहूँ सबर ।

पेहले बिन मांगे दई तुमको, अब होसी सब खबर ॥ १३४

तुम्हारा आगमन ऐसी भूमिमें हुआ है जहाँ पर कभी भी सन्तुष्टि नहीं होती है. इसलिए धामधनीने तुम्हें माँगनेसे पूर्व ही गरिमा प्रदान की है, जिसकी पहचान अब हो जाएगी.

खेल देखाया तिन वास्ते, उपजे तुमको चाह ।
ए खेल देख के मांगोगे, जानों होवें हम पातसाह ॥ १३५
तुम्हें नश्वर जगतका यह खेल इसलिए दिखाया है कि तुम्हारे हृदयमें चाहना
उत्पन्न हो जाए और इसे देखकर तुम माँग करोगी कि हम इस जगतके सम्राट
बन जाएँ.

सो कै पातसाह जिमी पर, करें पातसाही बीच नासूत ।
कै तिन पर इन्द्र ब्रह्मा फिरस्ते, तापर पातसाह माहें मलकूत ॥ १३६
इस नश्वर जगतकी भूमिमें अनेक सम्राटोंने अपना साम्राज्य जमाया. इसके
ऊपरके लोकोंमें इन्द्र, ब्रह्मा आदि अनेक देवी-देवताओंका साम्राज्य है.
सबसे ऊपर वैकुण्ठमें भगवान विष्णुका साम्राज्य है.

कै कोट मलकूत जात हैं, जबरूत के एक पलक ।
ए सब पातसाही फना मिने, इनों का खुदा नूर हक ॥ १३७
ऐसे करोड़ों वैकुण्ठ अक्षर ब्रह्मके पलमात्रमें उत्पन्न होकर मिट जाते हैं. नश्वर
जगतका सम्पूर्ण साम्राज्य इस प्रकार क्षणभद्रुर है. इन सभीके स्वामी स्वयं
अक्षरब्रह्म हैं.

नूर जलाल आवें दीदारें, जो आपन बैठे माहें लाहूत ।
तिन चाहा देखों रुहों इसक, तुमें तो देखाया नासूत ॥ १३८
ऐसे अक्षरब्रह्म भी पूर्णब्रह्म परमात्माके दर्शनके लिए अक्षरातीत धाममें आते
हैं जहाँ पर हम ब्रह्मात्माएँ बैठी हैं. ऐसे अक्षरब्रह्मने भी ब्रह्मात्माओंका प्रेमभाव
देखनेकी चाहना की. इसलिए तुम्हें इस नश्वर जगतका खेल दिखाया है.

तुमें नासूत देख दिल उपज्या, करें पातसाही फना में हम ।
मैं दई पातसाही बका मिने, सो अब देखोगे सब तुम ॥ १३९
श्रीराजजी कहते हैं, इस नश्वर जगतको देखकर तुम्हारे हृदयमें ऐसी चाहना
उत्पन्न हुई कि हम इसी नश्वर जगतके सम्राट बन जाएँ. मैंने तो तुम्हें दिव्य
(मुक्ति स्थलोंका) साम्राज्य दिया है जिसको अब तुम जागृत होकर अनुभव
कर पाओगी.

ए सुध तुमको ना हुती, तो तुम थोड़ा मांग्या निपट ।
कै कोट गुना दिया तुमको, खोल देखो अंतर पट ॥ १४०

पहले तुम्हें इसकी सुधि नहीं थी। इसीलिए तुमने थोड़ा-सा (नश्वर जगतका साम्राज्य) माँगा। मैंने तुम्हें करोड़ों गुण अधिक प्रदान किया है। अब तुम अपनी अन्तर्दृष्टिको खोलकर देखो।

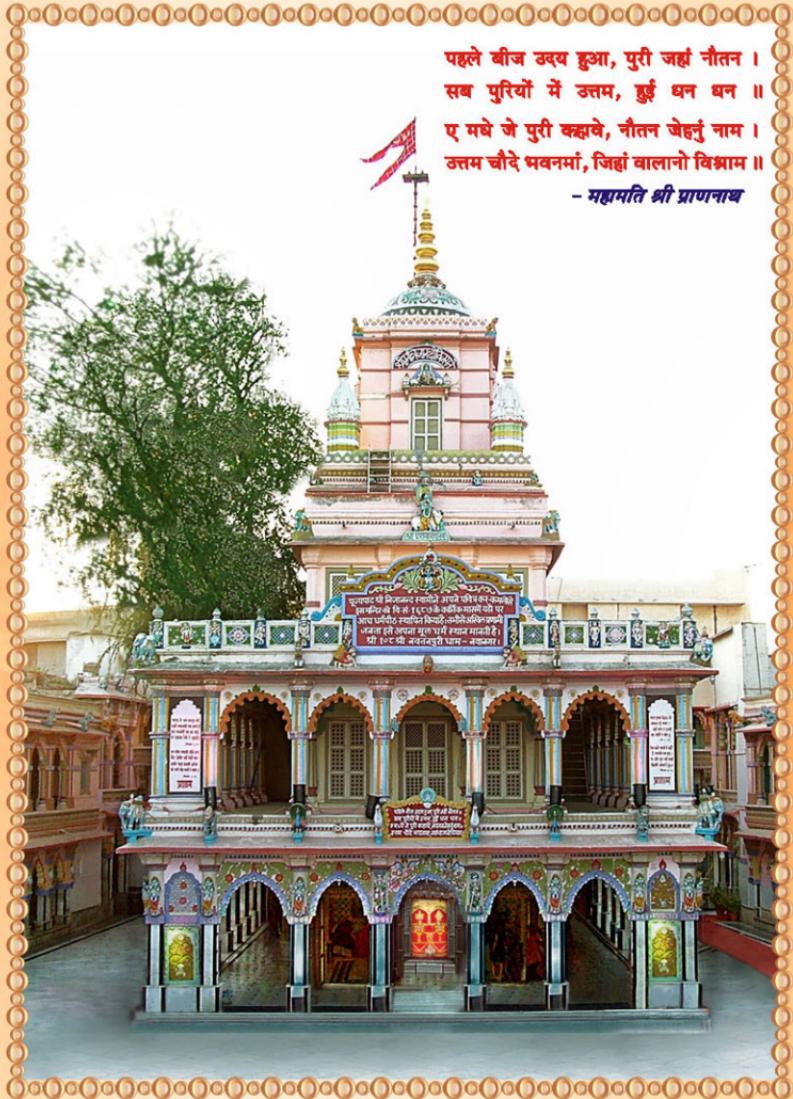
जैसी तुमारी साहेबी, करी मेहेर तिन माफक ।
सुध हुए खुसाली होएसी, जो करी अपने मासूक हक ॥ १४१
जैसी तुम्हारी गरिमा है उसीके अनुरूप तुम पर कृपा की है। इसकी सुधि होने पर ही तुम्हें प्रसन्नता होगी कि अपने प्रियतम धनीने हम पर कितनी बड़ी कृपा की है।

देखो अचरज महामत मोमिनों, जो बेसक हुए हो तुम ।
तुमें किन दई एती बुजरकी, दिल अरस कर बैठे खसम ॥ १४२
महामति कहते हैं, हे ब्रह्मात्माओ ! यदि तुम सन्देह रहित हो गई हो तो इस आश्चर्यको देखो, जिन्होंने तुम्हें इतनी बड़ी गरिमा प्रदान की है वे पूर्णब्रह्म परमात्मा तुम्हारे हृदयको परमधाम बनाकर उसीमें विराजमान हो गए हैं।

प्रकरण २९ चौपाई २२११

श्री सिनगार ग्रन्थ सम्पूर्ण

कुल प्रकरण ४६३ चौपाई १६३७६



श्री ५ नवतनपुरीधाम, जामनगर